सामाजिक अनुसंधान विधियाँ एवं क्षेत्र-प्रविधियाँ

(RESEARCH METHODS & FIELD TECHNIQUES)



डॉ एम. एम लवानिया
एम. ए., पीएच. डी
भूतपूर्व अध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग
दयानन्द कॉलेज, अजमेर

एवं

प्रो बी. एम. जैन

रिसर्च : दिल्ली

TOPICS FOR STUDY

1. Relationship between Facts and Theory, Basic Principles of Scientific Procedure Concepts, Hypothesis Universe.

2. Methods of Collection of Data—Observation Interview Questionnaire, Schedule and Case Study Method Illustrative Studies 1st, 5th and 15th Case Studies from Spicer's Human Problems in Technological Change'

3. Logical and Mechanical Considerations in the Design of Research, Criteria of reliability and validity, Pure and applied research T. m research and r's problems

4. Statistical Procedure-average and index numbers Coding Tabulation Analysis Reporting and Sampling

5. Psychological Methods such as Scaling Rating Projective Techniques Content and Response Analysis

Published by Research Publications in Social Sciences
2 34 Ansari Road, Daryaganj, New Delhi-2 and Tripolia Jaipur-2
Printed at Gopal Art Printers Jaipur

दो शब्द

'सामाजिक अनुसंधान विधियाँ एवं क्षेत्र-प्रविधियाँ' का द्वितीय संस्करण आपके हाथों में सौंपते हुए विशेष प्रसन्नता है। प्रथम संस्करण का शिक्षा जगत मे जो स्वागत हुआ वह उत्साह-वर्धक है। प्रस्तुत संस्करण मे विषय-सामग्री को न केवल अधिक सटीक और स्पष्ट बनाया गया है वरन् उसका विस्तार भी किया गया है। सामाजिक अनुसंधान जैसे जटिल एवं गम्भीर विषय को तभी समझा जा सकता है जब उसके विभिन्न पहलुओं को वैज्ञानिक रूप मे सरल भाषा मे उदाहरण सहित प्रस्तुत किया जाय। इस पुस्तक मे विषय-सामग्री का संयोजन और स्पष्टीकरण इसी मुख्य बात को ध्यान मे रखते हुए किया गया है। 'टू द पोइन्ट मेथड' अपनाते हुए अनावश्यक विस्तार से बचा गया है। इस प्रकार पुस्तक विद्यार्थियों के लिए महत्त्वपूर्ण रूप से उपयोगी होते हुए भी बोझिल नहीं है। विषय-सामग्री का विवेचन प्रामाणिक स्रोतो और नवीनतम शोधो के आधार पर किया गया है। पुस्तक के अन्त मे विभिन्न प्रश्न-पत्रो के आधार पर अभ्यासार्थ प्रश्न भी दिए गए हैं ताकि छात्रो को प्रश्न-शैली का समुचित बोध हो सके।

विश्वास है कि यह संस्करण पहले से भी अधिक स्वागतयोग्य सिद्ध होगा। त्रुटियाँ मेरी अपनी हैं, सुधार के सुझाव सहर्ष आमन्त्रित हैं। जिन आधिकारिक विद्वानो की कृतियो से सहायता ली गई है उनके प्रति मैं हृदय से आभारी हूँ। सुरुचिपूर्ण प्रकाशन के लिए प्रकाशक बन्धु बधाई के पात्र हैं।

—लेखकद्वय

अनुक्रमणिका

परिचय
(INTRODUCTION)

अनुसंधान का प्रयोजन वैज्ञानिक प्रणालियो द्वारा प्रश्नो के उत्तर खोजना है। इन प्रणालियो को इसीलिए विकसित किया गया है ताकि एकत्रित तथ्य या सूचना विश्वसनीय और तर्कसंगत हो। यहाँ यह गारटी नही दी जा सकती कि प्रत्येक अनुसधान जो सामग्री प्रदान करता है वह न्यायसगत, विश्वसनीय और पक्षपात रहित होगी। परन्तु वैज्ञानिक अनुसंधान प्रणालियो मे निष्कर्षों के वैषयिक और योग्य होने मे हम विश्वास प्रकट कर सकते हैं।

प्रत्येक अनुसधान किसी प्रश्न या समस्या को लेकर प्रारम्भ किया जाता है। क्यो, क्या, कैसे, कब और किन शब्दो को यदि हम अनुसधान के प्राण कहे तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी। अनुसधान के कार्य मे हम इनके बिना एक कदम भी आगे नही बढ सकते। अत जो शोध कार्य को हाथ मे लेना चाहते हैं, उनके लिए यह परमावश्यक है कि वे इसके महत्त्व को समझें और जब कभी कठिनाई महसूस हो रही हो तो इनका सहारा लें। ये सकटकालीन स्थिति मे विशेष रूप से सहायक हैं। उदाहरण के लिए सेब पृथ्वी पर ही क्यो गिरते हैं, आकाश मे क्यो नही तैरते ? आकाश मे रात को तारे क्यो टिमटिमाते हैं ? क्या गरीबी दूर करने से अपराध समाप्त हो सकते हैं ? जब वह अपना मानसिक सतुलन खो बैठे तब मनुष्य का व्यवहार कैसा होगा ? क्या सामाजिक पिछडापन हमारी प्रगति मे बाधक है ? क्या मजदूरो मे असन्तोष इसीलिए है कि उनका पूर्ण शोषण किया जा रहा है ? क्या कानून द्वारा विवाह की उम्र बढाने से जनसख्या-वृद्धि मे कमी हो सकती है ? आदि।

प्रश्नो की प्रवृति सदैव एक जैसी नही रहती। यदि प्रश्नो का उत्तर अनुसधान द्वारा दिया जाना है तो प्रश्नो मे एक सामान्य विशेषता होनी चाहिए। उनकी प्रकृति ऐसी होनी चाहिए जिससे निरीक्षण या प्रयोग द्वारा वाछित सूचना प्राप्त हो सके। कई 'निर्णयो के प्रश्न' ऐसे होते हैं, जिनका उत्तर केवल सामग्री के आधार पर नही दिया जा सकता क्योकि, उनमे सूचना और मूल्य दोनो ही निहित रहते हैं। "क्या भारत सरकार को परिवार नियोजन सभी के लिए अनिवार्य कर देना चाहिए ?" इस प्रश्न का उत्तर केवल तथ्यपूर्ण सामग्री पर ही निर्भर नही करता, जैसे—जनसख्या-वृद्धि को रोकने मे सहायक, वरन् व्यक्तिगत मूल्यो पर भी निर्भर करता है। व्यक्ति अपने

धार्मिक, नैतिक एवं व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के मूल्यों को लेकर परिवार नियोजन का बहिष्कार कर सकता है।

इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी प्रश्न हैं जिनका उत्तर केवल सामग्री या सूचना के आधार पर ही दिया जा सकता है न कि अनुसंधान द्वारा, क्योंकि सामाजिक अनुसंधान में सार्वभौमिक अनुमापन (Universal Scaling) का विकास नहीं हुआ है। विशेष रूप से ऐसे प्रश्नों का जिनका सम्बन्ध मनोविज्ञान से है, उत्तर प्राप्त करना एक विकट समस्या है। यद्यपि इस क्षेत्र में भी कुछ पैमानों का विकास किया गया है, परन्तु अभी तक वे पूर्ण विश्वसनीय एवम् विशुद्ध नहीं हैं।

अनेक प्रश्नों के उत्तर, वैज्ञानिक पद्धति द्वारा दिए जा सकते हैं। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि अनुसंधान सदैव एक निश्चित उत्तर दे।[1] आधुनिक अनुसंधान इस दिशा में अग्रसर हो रहा है कि नवीनतम प्रविधियों, यन्त्रों एवम् साधनों द्वारा जटिल से जटिल समस्याओं का समाधान निकाला जा सके। प्राचीन समय में हमें ऐसा लगता था कि हमने कुछ प्राप्त कर लिया है एवं हम 'पूर्णता की स्थिति' (Stage of Completeness) में हैं, परन्तु आधुनिक युग में हमारा ऐसा सोचना ही बंद हो गया है क्योंकि हमारे समक्ष असंख्य समस्याएँ हैं जिनका समाधान होना शेष है।[2]

जहाँ तक अनुसंधान में समस्याओं का प्रश्न है वे सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों ही हो सकती हैं। किसी अन्वेषण (Investigation) का सम्बन्ध व्यावहारिक समस्या से हो सकता है या 'विशुद्ध' अनुसंधान से या दोनों के गुणों के सम्मिश्रण से। कोई भी अन्वेषणकर्ता (*Investigator*) यदि वह यह ध्यान रखे कि प्रत्येक पहलू का सामूहिक अनुसंधान कार्य' में प्रतिनिधित्व होना चाहिए तो वह किसी भी समस्या के एक या अनेक पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित कर सकता है।

अनुसंधान पद्धति का महत्त्व
(Importance of Research Methods)

यद्यपि अनुसंधान, प्रश्नों के अंतिम उत्तर प्रदान नहीं कर सकता, तथापि अनुसंधान के उत्तरों में विशुद्धता की अभिवृद्धि के लिए कई प्रविधियों का विकास किया जा रहा है। अतः स्पष्ट है कि अनुसंधान पद्धति का इस भौतिक संसार में महत्त्व है। अनुसंधान पद्धति से सुपरिचित होने का लाभ विशेष रूप से उन लोगों

1 "Research is oriented towards seeking answers, it may or may not find them. Characteristically, modern science and specially social science, is an unfinished process."—*Sellitz Jahoda Deutsch and Cook*, Research Methods in Social Relations, p. 4

2 "Whereas ancient science had the appearance of something completed to which the notion of progress was not essential, modern science progresses into the infinite." —*Jaspers*

को है जिन्होंने सामाजिक विज्ञान या समाजशास्त्र में ही अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करने का निश्चय किया है। जहोदा, कुक, ड्यूश (Deutsch) और सेलिज (Selltiz) लिखते हैं—

"अनुसधान प्रविधियाँ, उसके (अनुसधान विद्यार्थी) औद्योगिक यन्त्र हैं। उसे इन्हे प्रयोग करने के लिए ही कुशलता विकसित करने की आवश्यकता नही है बल्कि उनके पीछे सन्निहित तर्क को भी समझना है।"[1]

अनुसधान पद्धतियो का ज्ञान केवल उन विद्यार्थियो के लिए ही लाभप्रद नही है जो अनुसधान कार्य करना चाहते हैं बल्कि उन लोगो के लिए भी उपयोगी है जो प्रशासनिक सेवा मे उच्च पदो पर कार्य करने के इच्छुक हैं, जो व्यापार में पारगत होने के अभिलाषी हैं, जो सामाजिक कार्यों मे रुचि रखते हैं एवम् जो सुधारात्मक गतिविधियो मे सक्रिय हैं। उदाहरण के लिए एक प्रशासक पदोन्नति पाकर एक मुख्य प्रशासक के रूप मे कार्य करता है तो उसके सामने प्रतिवेदनो के मूल्याकन की समस्या आती है। उसको प्रतिवेदनो पर अपने निर्णय देने होते हैं, उन पर आलोचनात्मक टिप्पणियाँ भी लिखनी होती हैं, तथा कई बार ऐसे भी निष्कर्ष निकालने होते हैं जिससे आम व्यक्ति भी असन्तुष्ट न हो। साथ ही सरकार भी कठिनाई में न पड़े और न कानून एवम् व्यवस्था की समस्या ही पैदा हो। यह तभी सम्भव है जब उसे वैज्ञानिक पद्धतियो का ज्ञान हो या उसने पहले अनुसधान प्रणालियों का भली-भाँति अध्ययन किया हो। इसी भाँति जनमत विशेषज्ञ, सूचना प्रसारण अधिकारी, व 'मार्केट विश्लेषणकर्त्ता' भी इन पद्धतियों का उपयोग सरकारी एव गैर-सरकारी आवश्यकताओ के लिए करते हैं।[2]

चाहे हम अनुसधान पद्धतियो एवम् उसके परिणामो का उपयोग अपनी सरकारी या गैर-सरकारी सेवाओं में न करें, फिर भी हम सभी इस वैज्ञानिक युग में 'अनुसन्धान परिणामो के उपभोक्ता' (Consumers of research result) हैं। हमारे विश्वविद्यालय या महाविद्यालयों मे जो पाठ्यक्रम रखा गया है वह अनुसन्धान परिणामों पर ही आधारित है। उदाहरण के लिए यदि हम यह कहे कि स्विट्जरलैंड में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की सफलता के कारण वहाँ की जनसख्या का सीमित होना, नागरिकों का उच्च कोटि का राष्ट्रीय चरित्र, दलबन्दी का अभाव, देशभक्ति एव परम्पराएँ आदि अनुसधान परिणाम ही हैं। चूँकि भारतवर्ष मे ये सभी तत्त्व

1. "Research techniques are the tools of his trade He need not only to develop skill in rising them but also to understand the logic behind them "
—*Jahoda, Cook, Deutsch and Selltiz* op. cit , p. 6

2. "The market analyst, the public opinion expert, the investigator of communication and propaganda–all are gathering facts for governmental and business needs. A knowledge of social research is useful for interpreting and weighing such reports."
—*Goode and Hatt* Methods in Social Research.

विद्यमान नहीं हैं, अत हम प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की हमारे देश मे स्थापना नही कर सकते। उपर्युक्त निर्णय तथ्यो के आधार पर लिया गया है एव स्विट्जरलैंड मे प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र (Direct Democracy) पर जो अनुसन्धान कार्य हुए हैं, उन ग्रन्थो से हमने अपने ज्ञान एव अनुभव म वृद्धि की है।

हमारे दैनिक जीवन मे भी अनुसन्धान के मूल्यांकन की आवश्यकता है। आधुनिक सचार एव प्रसार के साधनों के विकास के फलस्वरूप राजनीतिक प्रश्नो, सामाजिक समस्याओ एव आर्थिक चुनौतियो के सम्बन्ध मे जागरूकता बढ रही है। जो व्यक्ति यह जानता है कि अनुसन्धान किस प्रकार किया जाता है, वह अपना मत उपर्युक्त विषयों पर अधिक विशुद्धता और विश्वास के साथ प्रकट कर सकता है। बुद्धिमत्तापूर्ण निर्णय तभी दिए जा सकते है जब व्यक्ति में प्रकाशित प्रतिवेदना एव मौखिक भाषणों को समझने की योग्यता हो। सरकारी व अर्द्ध सरकारी एव गैर-सरकारी सस्थाओ द्वारा प्रकाशित बयानो का सही मूल्यांकन भी तभी हो सकता है जब अनुसन्धान पद्धति का ज्ञान हो। आधुनिक सभ्यता मे निर्णय वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित होते हैं।[1]

अनुसंधान पद्धतियो की व्यावहारिक उपयोगिता के अतिरिक्त ये 'एक नवीन बौद्धिक यत्र (A new intellectual tool) प्रदान करते हैं। इस यत्र की सहायता से हम दिन प्रतिदिन प्रयोग में लाए जाने वाले कथनो की सत्यता या असत्यता सिद्ध कर सकते हैं। हम किसी कथन को ज्यो का त्यों या ब्रह्म वाक्य के रूप में स्वीकार नही कर सकते। हम उसका आधार ढूंढने का प्रयास करेंगे, उसके समर्थन मे दिए गए प्रमाणों (Evidences) का विश्लेषण करेंगे सम्बन्धित परिस्थितियो का सही व भली-भाँति अध्ययन करेंगे और उसके बाद अपना मत व्यक्त करेंगे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सामाजिक विज्ञानो म अनुसधान पद्धति पर अधिक बल दिया जा रहा है। यह समाज विज्ञान मे स्वस्थ विकास का लक्षण है।[3]

सामाजिक अनुसधान : अर्थ एव परिभाषाएं
(Meaning and Definitions of Social Research)

'श्रीमती यग (Pauline V Young) के अनुसार, सामाजिक अनुसधान एक ऐसी वैज्ञानिक योजना है जिसका उद्देश्य तार्किक तथा क्रमबद्ध विधियो द्वारा

1 'This is a civilization in which decision are increasingly based upon scientific fact and those who cannot understand how the facts are reached will be unable to separate fact from speculation and wish
—*Goode and Hatt* op cit, p 1

2 'The increasing emphasis upon research method, is then, a sign of healthy development within the young science of Sociology '
—*Goode and Hatt* op cit, p 2

नवीन या प्राचीन तथ्यों को ज्ञात करना और उनकी क्रमबद्धताओं (Sequences) अन्तर्सम्बन्धों (Inter-relationships) के कारण की व्याख्याओं तथा उनको संचालित करने वाले स्वाभाविक नियमों का विश्लेषण करना है।'[1] मोजर के अनुसार, "सामाजिक घटनाओं तथा समस्याओं के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए की गई व्यवस्थित छान बीन को ही सामाजिक अनुसंधान कहते हैं।"[2] जी० एम० फिशर के शब्दों में, "किसी समस्या को हल करने या एक परिकल्पना (Hypothesis) की परीक्षा करने, या नये घटनाक्रम अथवा उनमें नये सम्बन्धों को खोजने के उद्देश्य से उपयुक्त पद्धतियों का सामाजिक परिस्थिति में जो प्रयोग किया जाता है, उसे 'सामाजिक अनुसंधान' कहते हैं।"[3]

इन परिभाषाओं से पता चलता है कि सामाजिक अनुसंधान (1) वैज्ञानिक कार्यक्रम है, (2) इसमें तर्क प्रधान और क्रमबद्ध विधियों का प्रयोग होता है, (3) यह कार्य-कारण के सम्बन्ध को स्थापित करता है, (4) इस अनुसंधान द्वारा नवीन ज्ञान की प्राप्ति होती है (5) यह सामाजिक घटना से सम्बन्धित रहता है। यह मनुष्यों के व्यवहार एवं विभिन्न परिस्थितियों में उनकी मनोवृत्तियों, आदतों और भावनाओं का बोध करवाता है, (6) इसने यह सिद्ध कर दिया है कि भौतिक घटनाओं की भाँति ही सामाजिक घटनाएँ भी निश्चित व नियमों द्वारा संचालित होती हैं, एवं (7) इसमें सूक्ष्म छान-बीन को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

सामाजिक अनुसंधान के प्रेरक तत्व
(Motivating Factors of Social Research)

श्रीमती यंग ने सामाजिक अनुसंधान के चार प्रेरक-तत्त्वों का वर्णन किया है—

1. जिज्ञासा (Curiosity) —यंग के अनुसार, "जिज्ञासा मानव मन का मौलिक गुण है तथा मनुष्य के पर्यावरण की खोज के लिए एक बहुत बड़ी चालक शक्ति है।" जबसे मनुष्य जन्म लेता है उसमें जिज्ञासा स्वाभाविक होती है। जब वह अपने को नवीन वातावरण में पाता है, नई परिस्थितियों से टकराता है और

1 "Social research is a scientific undertaking which by means of logical and systematised methods, aims to discover new facts or old facts, and to analyse their sequences, inter relationships, causal explanations and the natural laws which govern them " —*Pauline V Young* op cit., p 14

2 "Systematised investigation to gain new knowledge about social phenomenon and surveys, we call social research "
—*C A Moser* Survey Methods in Social Investigation, p 3

3 "Social Research The application of social situation of exact procedures for the purpose of solving a problem or testing a hypothesis, or discovering new phenomena or new relations among phenomena."
—*G. M Fisher*, in Fairchild (ed Dictionary of Sociology), p 291

समुचित वातावरण के घेरे में घिरा रहता है तब नई चीज को समझने का प्रयास करता है। यही बात सामाजिक क्रियाओं और अनुसंधान के पीछे भी है।

2. कार्य-कारण के सम्बन्धों का पता लगाने की इच्छा (Desire to find out relationships between cause and effect)—मनुष्य में कार्य-कारण सम्बन्ध का पता लगाने की तीव्र इच्छा होती है। समाज में यदि कोई घटना घटित होती है तो वह उन कारणों का पता लगाने की कोशिश करता है, जिनके फलस्वरूप वह घटना घटित हुई। उदाहरण के लिए जघन्य अपराध, चोरी, बलात्कार आदि। इन घटनाओं के पीछे कई कारण हो सकते हैं—जैसे चोरी का कारण गरीबी हो सकता है तो अपराधों के पीछे सामाजिक वातावरण उत्तरदायी हो सकता है।

3. नवीन परिस्थितियों का उत्पन्न होना (The rise of new conditions)—जीवन में विभिन्न प्रकार की परिस्थितियाँ पैदा होती हैं, जिनके फलस्वरूप नवीन समस्याएँ खड़ी हो जाती हैं। एक समाज-शास्त्री इनके विवेचन एवं विश्लेषण में सक्रिय हो जाता है। वह समुदायों, संघों आदि का अध्ययन करता है, उनकी आदतों और रिवाजों का गहराई से विश्लेषण करता है और अन्त में तथ्यों सहित प्रतिवेदन प्रस्तुत करता है। इस प्रकार नवीन घटनाएँ और परिस्थितियाँ उसके अनुसंधान की पृष्ठभूमि बन जाती हैं।

4. नवीन प्रणालियों की खोज तथा प्राचीन प्रणालियों की परीक्षा (The discovery of new methods and the examination of old methods)—सामाजिक अनुसंधान के अन्तर्गत खोज के साधनों में अनुसंधान करने की आवश्यकता बराबर होती है। इससे अनुसंधान को अधिक शुद्ध एवं उपयोगी बनाया जा सकता है। ऐसा अनुसंधान मात्र सामाजिक घटनाओं का अनुसंधान न होकर सामाजिक अनुसंधान प्रणालियों का अनुसंधान होता है। इसकी आवश्यकता, समाज में उत्पन्न हुई नवीन समस्याओं और आधुनिक यन्त्रों तथा साधनों की प्रगति के कारण है।

सामाजिक अनुसंधान की आधारभूत मान्यताएँ
(Basic Assumptions of Social Research)

1. कार्य कारण का सम्बन्ध (Relationship of cause and effect)—सामाजिक अनुसंधान में यह मान कर चला जाता है कि सामाजिक घटनाओं के बीच कार्य-कारण का सम्बन्ध है। यदि यह कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित नहीं होता है तो सामाजिक घटनाओं को नहीं समझा जा सकता। उदाहरणार्थ जहाँ निर्धनता होगी वहाँ अपराध भी होंगे। अत. यदि अपराधों को दूर करना है तो सर्वप्रथम गरीबी को दूर करना होगा। यदि जनसंख्या-वृद्धि के कारण अज्ञानता व अशिक्षा है तो लोगों को परिवार-नियोजन का ज्ञान करवाना होगा, इसके महत्व को समझना होगा तभी जनसंख्या-वृद्धि पर परिवार नियोजन के तरीकों द्वारा रोक लगाई जा सकती है।

2 निष्पक्षता की सम्भावना (Possibility of Impartiality)—सामाजिक अनुसधान मे अनुसधानकर्त्ता और विषय दोनो ही सम्मिलित हैं। किसी विषय की जानकारी तभी सम्भव है, जब अनुसधानकर्त्ता निष्पक्षतापूर्वक उसका अध्ययन करे। उसकी स्वय की भावनाएँ, पूर्व धारणाएँ तथा व्यक्तिगत विचार अनुसधान मे परिलक्षित नही होने चाहिएँ। प्राय देखा गया है कि अनुसधानकर्त्ता अपने निरीक्षण और लेखन मे तटस्थ होता है। वह वस्तुस्थिति का अवलोकन कर, उसके विभिन्न पहलुओ की बारीकी से छानबीन कर, निर्णय पर पहुँचने की कोशिश करता है।

3 सामाजिक घटनाओं मे क्रमबद्धता (Sequence in Social Events)—सामाजिक घटनाएँ अनायास नही घटती हैं। इन घटनाओ के पीछे निश्चित नियम व क्रमबद्धता होनी है। यदि उनमे क्रमबद्धता न हो तो हम किसी भी प्रकार उनका पूर्वानुमान नही लगा सकते। यह कहना बिलकुल गलत होगा कि प्रत्येक घटना एक दूसरे से सर्वथा स्वतन्त्र और पृथक् है। जैसे ही हमे क्रम का पता लगता है, हम सही रूप मे भविष्यवाणियाँ कर सकते हैं।

4 आदर्श प्रतिरूपो की सम्भावना (Possibility of Ideal type)—इसमे सामाजिक तथ्यो को आदर्श प्रतिरूपो मे बाँटा जा सकता है। इन आदर्श प्रतिरूपो के अन्तर्गत कुछ व्यक्तियो का अध्ययन कर उनकी विशेषताओ को सभी वर्गों पर लागू किया जा सकता है। यदि हम मजदूर वर्ग, विद्यार्थी वर्ग या स्त्री वर्ग को लें तो हमे इन पृथक् पृथक् वर्गों मे उनकी रुचियो के सम्बन्ध मे, व्यवहार व विचारो के सम्बन्ध मे काफी समानता एव सामजस्य मिलेगा। इस प्रकार एक औसत मजदूर या स्त्री का अध्ययन समस्त मजदूर समुदाय या स्त्री वर्ग के गुणावगुणो का ज्ञान करा सकता है।

5 निदर्शन की सम्भावना (Possibility of Sample)—प्रतिनिधित्व-पूर्ण निदर्शन पद्धति के आधार पर प्राप्त निष्कर्ष समग्र वर्ग पर लागू किए जा सकते हैं क्योंकि मानव समुदाय विशाल है अत प्रत्येक व्यक्ति का सूक्ष्म अध्ययन और जानकारी विस्तृत रूप मे सम्भव नही है। अत निदर्शन प्रणाली का प्रयोग किया जाना आवश्यक है जिससे अनुसधान कार्य सुगम एव शीघ्र हो जाता है।

अनुसधान पद्धति को पढ़ने के कारण
(Reasons of Studying Research Method)

अनुसधान प्रक्रिया और तक्नीकी एव पद्धतीय क्षमता के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध है। अनुसधान कार्य की गहनता, सूक्ष्मता एव परिशुद्धता को दृष्टि मे रखते हुए यह अनिवार्य हो जाता है कि हम इसका सचालन शुद्ध एव सही ढग से करें। इस बात की आवश्यकता विशेष रूप से अब अनुभव की जा रही है, जबकि सामाजिक विज्ञानो के अनुसधान कार्य पर बल दिया जा रहा है। सामाजिक-वैज्ञानिक (Social

Scientists) इस बात का पूरा प्रयत्न कर रहे हैं कि जो भी अनुसंधान सामाजिक विज्ञानों में किए जाएँ, वे व्यवस्थित, तार्किक एवं उपयोगी हों ताकि भविष्य में किए जाने वाले अनुसंधान का समस्त कार्य स्वयं पद्धतिशास्त्री (Methodologist) पर निर्भर करता है। लेखक इस सन्दर्भ में एक कथा का जिक्र करता है। यह कहानी एक कनखजूरा (Centipede) से सम्बन्धित है। कनखजूरा के चलने-फिरने के व्यवहार को जानने के लिए उससे यह पूछा गया कि उसने किस क्रम में अपने पैरों को घुमाया। उसने यद्यपि अपने चलने फिरने की क्षमता खो दी तथापि कनखजूरा समुदाय की क्षमता एवं फुर्ती की जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रश्न किए गए। उनमें से कुछ के उचित उत्तर मिले। इन उत्तरों के आधार पर अन्वेषणकर्त्ता ने अपने कार्य को आगे जारी रखा और काफी श्रम किया। परिणामस्वरूप उसने घूमने-फिरने के व्यवहार के सम्बन्ध में सामान्य सिद्धान्तों का निरूपण किया। यहाँ पर यह स्मरण कराना आवश्यक है कि सर्वप्रथम जो जाँच-पड़ताल (Inquiry) इस सम्बन्ध में की गई, वह एक अनुसंधानकर्त्ता द्वारा की गई। इस अनुसंधानकर्त्ता ने जिस प्रविधि एवं पद्धति से अन्वेषण किया, उसी कारण उसे अपने कार्य में सफलता मिली। अर्थात् पद्धति (Method) के ज्ञान के अभाव में अन्वेषण-कार्य लाभप्रद एवं फलदायक सिद्ध नहीं हो सकता।

इसमें संदेह नहीं कि आज भी जो शोध कार्य हो रहे हैं, विशेषतः सामाजिक विज्ञानों में, अनुसंधानकर्त्ता शब्दावली का प्रयोग स्वतन्त्र एवं बेहूदे ढंग से करते हैं। आधुनिक प्रत्यक्षवाद (Positivism) के परिणामस्वरूप अब अवधारणाओं एवं कथन के अर्थों के स्पष्टीकरण पर बल दिया जा रहा है। कार्ल हेम्पल (Carl Hempel) ने अपने अभिनव मोनोग्राफ[1] में अवधारणाओं एवं सामान्य कथनों के स्पष्टीकरण में बड़ा योग दिया है। उन्होंने इस बात को भी प्रदर्शित किया है कि आधुनिक तर्कशास्त्र में Explication की क्या भूमिका होती है। Explication का मुख्य कार्य दिन-प्रतिदिन की भाषा और वैज्ञानिक भाषा के बीच की खाई को पाटना है। इसका उद्देश्य दोहरे अर्थों व असंगतियों को दूर कर उनके अर्थों की स्पष्टता एवं परिशुद्धता में वृद्धि करना है।[2] सामाजिक विज्ञानों में Explication की विशेष रूप से आवश्यकता है। प्राकृतिक वैज्ञानिक अपने विज्ञान कार्य के लिए 'परिशुद्ध' एवं 'तीक्ष्ण' (Sharp) शब्दावली की खोज कर लेता है। जहाँ तक सामाजिक विज्ञानों का प्रश्न है, हम सामान्य बोलचाल की भाषा को प्रयुक्त करने में अभ्यस्त हो गए हैं। दिन-

1 International Encyclopaedia of Unified Science, Vol II, No 7, University of Chicago Press

2 "Explication aims at reducing the limitations, ambiguities, and inconsistencies of ordinary usage of language by propounding a reinterpretation intended to enhance the clarity and precision of their meanings as well as their ability to function in the processes and theories with explanatory and predictive force."

—Ibid, p. 12.

प्रतिदिन प्रयुक्त की जाने वाली अस्पष्ट एवं भ्रांतिपूर्ण होती हैं। अतः सामाजिक वैज्ञानिकों को इस दिशा में कदम रखना जरूरी है कि वे अपने अनुसंधान के लिए स्पष्ट, भ्रांतिहीन, शुद्ध एवं सर्वमान्य शब्दावली का विकास करें। इसके विकास के लिए Research Methodology की भूमिका निःसंदेह महत्त्वपूर्ण है।

यह प्रश्न स्वाभाविक है कि शोध-पद्धति (Research-Methodology) को पढ़ने के क्या कारण हैं ? उत्तर देने से पूर्व यहाँ इस तथ्य को स्पष्ट करना अनिवार्य है कि अनुसंधान-पद्धति का प्रयोग प्राकृतिक विज्ञानों और सामाजिक विज्ञानों में भिन्नता रखता है। प्राकृतिक वैज्ञानिक को जिसके प्रशिक्षण की आवश्यकता रहती है उसी का प्रशिक्षण आधुनिक सामाजिक वैज्ञानिक के लिए उपयुक्त नहीं बैठता। जिन परिस्थितियों में प्राकृतिक वैज्ञानिकों को कार्य करना होता है, सामाजिक वैज्ञानिक के लिए वे परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं हो सकती। जिन यंत्रों एवं साधनों को प्राकृतिक विज्ञानों में प्रयुक्त किया जाता है यह आवश्यक नहीं है कि वे ही यंत्र या साधन सामाजिक विज्ञानों में भी उसी प्रकार प्रयोग में लाए जाएँ। यह सत्य है कि आधुनिक वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग सामाजिक अनुसंधानों में किया जाने लगा है, परन्तु उनकी अपनी सीमाएँ हैं। अतः शोध रीति को पढ़ने के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं—

1. **अनुसंधान की परिशुद्धता में वृद्धि करने के लिए (To enhance the accuracy of research)**—एक नौजवान अनुसंधानकर्ता को प्रारम्भ में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है। जो विद्यार्थी अपने जीवन को अनुसंधान कार्यों में लगाना चाहते हैं, या जिन पदों–अध्यापन, प्रशासन, सामाजिक कार्य आदि पर जाने के इच्छुक हैं, उनके लिए यह आवश्यक है कि वे अनुसंधान पद्धति या प्रविधियों से पूर्व-परिचित हों। सलिज, जहोदा, ड्यूस और कुक का कथन है कि "अनुसंधान प्रविधियाँ उसके (अनुसंधान-विद्यार्थी) व्यवसाय के उपकरण हैं।"[1] अनुसंधान के परिणामों का सही मूल्यांकन तभी हो सकता है, जब अनुसंधानकर्ता शोध-पद्धति से भली-भाँति परिचित हो। उसमें पर्याप्त आत्म विश्वास तभी उत्पन्न हो सकता है जब वह एक निश्चित पद्धति से अग्रिम चरणों की ओर बढ़ता है। उसके निष्कर्ष परिशुद्ध एवं उपयोगी तभी सिद्ध हो सकते हैं जबकि उसने पूर्ण योग्यता एवं सूझबूझ के साथ शोध-पद्धति के ज्ञान का प्रयुक्त किया हो।

2 **औपचारिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए (To provide formal training)**—अनुसंधान पद्धति, सामाजिक वैज्ञानिकों को एक प्रकार से औपचारिक प्रशिक्षण प्रदान करने का कार्य सम्पन्न करती है। प्रत्येक बौद्धिक क्रिया में अनुशासित चिंतन के विकास का अपना स्वय का तरीका होता है। एक प्राकृतिक वैज्ञानिक

[1] "Research techniques are the tools of his trade."
—Selltiz, Jahoda, Deutsch and Cook op. cit, p 6

अनुसंधान कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व गणित एवं उससे सम्बन्धित इकाइयों का अध्ययन भली भाँति करता है, ताकि अग्रिम अनुसंधान कार्य सहज हो सके। उसी प्रकार एक समाज वैज्ञानिक अपने अनुसंधान कार्य के लिए लेटिन या ग्रीक भाषा का अध्ययन कर सकता है जो उसके शोध-कार्य से सम्बन्धित (Relevant) हो। इस प्रकार अपने साथ अध्ययन के लिए उसे एक प्रकार से औपचारिक प्रशिक्षण मिल जाता है।

3 अपने क्षेत्र में घटित नवीन विकास को समझने के लिए (To understand the new developments that have occured in his field)—अनुसंधान पद्धति के अध्ययन का एक मुख्य कारण यह है कि केवल वही अनुसंधानकर्ता अपने क्षेत्र में हुए नवीन विकासों को समझ सकता है जो अनुसंधान प्रविधियों एवं पद्धतियों से पूर्व-परिचित हो। उसे यह ज्ञान होना अनिवार्य है कि कौनसी पद्धति लाभदायक है, किन सारणियों का प्रयोग किया जाना चाहिए, कैसी अनुसूचियाँ तैयार की जानी चाहिए, किन किन घटनाओं का अवलोकन किया जाना चाहिए, एवं सत्यता या प्रामाणिकता के लिए कौन कौन से निदर्शन प्रयोग में लाने चाहिए आदि। जब अनुसंधानकर्त्ता को इन समस्त पद्धतियों का ज्ञान होगा तभी वह नवीन समस्याओं या विकास को एवं उसकी अच्छाइयाँ, बुराइयाँ, लाभ एवं दोषों को समझ सकेगा।

4 उद्देश्य प्राप्ति में सहायक (Helpful in achieving objective in view)—अनुसंधान पद्धति के ज्ञान द्वारा छिपे सत्य को, जो स्रोत सामग्री में है, प्राप्त किया जा सकता है। उसे अपने उद्देश्य की प्राप्ति में अनावश्यक रूप से भटकना नहीं पड़ेगा। उसका कार्य आसान हो जाता है अन्यथा कई बार यह देखने में आता है कि अनुसंधानकर्ता अपने पथ से विचलित हो जाता है, भ्रम एवं संदेह का शिकार हो जाने के कारण वह सत्य से कोसों दूर चला जाता है। वह पुन. अपने शोध-कार्य को दोहराता है, नवीन साधनों का प्रयोग करता है, नई शब्दावली को ढूँढता है, नई परिस्थितियों में कार्य करता है परन्तु अन्त में निराशा ही हाथ लगती है। अत. यदि अनुसंधानकर्त्ता को सही ढंग से अपने उद्देश्य को पाना हो तो उसे पहले से ही अनुसंधान पद्धति का ज्ञान कर लेना चाहिए।

5. अन्तरअनुशासनीय कार्य की सहायता द्वारा सामाजिक विज्ञानों की प्रगति (Advancement of Social Sciences through the aid of interdisciplinary work)—लेजारसफेल्ड और रोजनबर्ग (Lazarsfeld and Rosenberg) की मान्यता है कि जिस अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान पद्धति के अन्तर्गत अन्तरअनुशासनीय उपागम का ज्ञान है, वह इसका उपयोग अपने अनुसंधान में करके न केवल अपने ही कार्य को अधिक विश्वसनीय और वैज्ञानिक बनाता है बल्कि सामाजिक विज्ञानों की प्रगति को भी आगे बढ़ाता है। उदाहरणार्थ एक अर्थशास्त्री ने, जो व्यापार चक्र (Business-Cycles) का अध्ययन करता है सामाजिक प्रणालियों के विश्लेषण के लिए कई सूक्ष्म और जटिल तरीकों का विकास किया है। उसी प्रकार समाजशास्त्री

भी सामाजिक प्रणालियों को समझाने के लिए अर्थशास्त्री के उपकरणों की बात करता है। समाजशास्त्री और सामाजिक मनोवैज्ञानिक प्रश्नावली निर्माण की कला मे पारंगत हो गए हैं। अर्थशास्त्री जब इन अनुसूचियो या प्रश्नावलियों का प्रयोग करता है तो इस आधार पर करता है कि वे भली-भाँति परीक्षित हो चुकी हैं। इतिहासकार, पत्र-पत्रिकाओं के उद्धरणों एव अन्य प्रलेखों का प्रयोग अपने कार्य के लिए करता है परन्तु ये वस्तु विश्लेषण (Content analysis) की आधुनिक प्रविधियाँ हैं। गत पचास वर्षों से भी अधिक समय से अर्थशास्त्री सूचकांक निर्माण की तार्किकता की ओर ध्यान देने लगे हैं।

अत स्पष्ट है कि अनुसधानकर्त्ता सामाजिक विज्ञानो के अन्य अनुशासनो से अनेक महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त करता है, जो स्वय के अनुसधान के लिए सगतपूर्ण एव उपयोगी है। इस प्रकार जो विषयो के बधन पहले थे, वे अब नही रहे हैं। 'दो और लो' (Give and Take) के सिद्धान्त पर समाज चल रहा है।

6 ज्ञान के एकीकरण एवं संग्रहीकरण मे सहायक (Helpful in the Integration and codification of Knowledge)—अनुसधानकर्त्ता, पद्धतीय विश्लेषण के ज्ञान द्वारा यह जान लेता है कि कौन से तथ्य उपयोगी हैं तथा कौन से अनावश्यक या व्यर्थ। विश्लेषण पद्धति द्वारा कई नवीन तथ्य सामने आते हैं जिनके फलस्वरूप नए सिरे से सिद्धान्त निरूपण मे सहायता मिलती है। जैसाकि अन्तरअनुशासनीय उपागम से स्पष्ट है कि विभिन्न अनुशासनो के ज्ञान एव सहयोग से सामाजिक विज्ञानो की प्रगति सम्भव है। पद्धतीय आत्म आलोचना एव विश्लेषण से जो *नवीन ज्ञान प्राप्त होता है, उसका सग्रह अग्रिम अनुसधानो के लिए उपयोगी सिद्ध* हो सकता है।

7. आत्मनिष्ठवाद एव पक्षपात से बचाने के लिए (To save from subjectivism and predilection)—अनुसधान पद्धति विज्ञान यह बतलाता है कि वैषयिक परिणामो को प्राप्त करने के लिए अनुसधानकर्त्ता को निष्पक्ष एव स्वतन्त्र होना चाहिए। अनुसधान पद्धति मे प्रत्येक चरण पर बल दिया जाता है कि शोध निष्कर्ष तभी विश्वसनीय एव उपयोगी हो सकते हैं जब अनुसधानकर्त्ता पक्षपात एव पूर्व-धारणाओ से परे हो।

8 नवीन मूल्यो के मापने के लिए सशोधित प्रविधियो को प्रस्तावित करता है (It suggests improved techniques to measure new values)—अनुसधान पद्धति को पढने का यह कारण भी प्रमुख है कि जब अनुसधानकर्त्ता नया-नया कार्य शुरू करते हैं, उस बीच जिन नवीन मूल्यो का स्वरूप सामने आता है, उनके मापन के लिए भी वह सशोधित प्रविधियो के प्रयोग को प्रस्तावित करता है। जिसे अनुसधान पद्धति का ज्ञान नही है, वह उत्पन्न नवीन समस्या का सामना नही कर सकता। ऐसी स्थिति मे सचालित अनुसधान कार्य अभीष्ट परिणाम नही दे सकता। अत. अनुसधान क्षेत्र मे प्रवेश करने वाले विद्यार्थियो को अनुसधान पद्धति का ज्ञान पहले ही करना आवश्यक है।

उपर्युक्त बिंदुओं से स्पष्ट है कि अनुसंधानकर्त्ता को अनुसंधान पद्धति का ज्ञान होना अनिवार्य है। परन्तु इसका अर्थ लकीर का फकीर होना नहीं है। अनुसंधान पद्धति में दिए गए चरणों (Steps) का अनुपालन ज्यों का त्यों नहीं किया जा सकता। प्रत्येक अनुशासन की अपनी स्वयं की विशेषताएँ हैं, स्वयं की सीमाएँ हैं तथा स्वयं की आवश्यकताएँ हैं। अतः हम समस्त सामाजिक विज्ञानों के लिए एक ही अनुसंधान पद्धति प्रस्तावित नहीं कर सकते। अनुसंधान पद्धति का प्रयोग समस्याओं एवं आवश्यकताओं के अनुरूप ही किया जाना चाहिए।

लेजारसफील्ड और रोजनबर्ग के मतानुसार हमें सामाजिक विज्ञानों में जो दरारें (Gaps) नजर आ रही है उनकी स्थिति मालूम करनी चाहिए एवं साथ ही, सामान्य बोध कथनों को पुनः निरूपित करना चाहिए। जब अनुसंधानकर्त्ता पूर्ण परिपक्व हो जाता है तो वह पद्धतीय प्रतिबिम्ब से बहुत ही कम ले पाता है क्योंकि उसको उस ज्ञान की विशेष आवश्यकता नहीं रहती तथापि इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि अनुसंधान पद्धति का ज्ञान प्रारम्भ में अनुसंधानकर्त्ता को एक अच्छी पृष्ठभूमि प्रदान करता है।

वैज्ञानिक अभिगमन का महत्व
(Significance of Scientific Approach)

जहाँ एक ओर तकनीकी विशुद्धता एवं पद्धतीय ज्ञान पर बल दिया जा रहा है वहीं दूसरी ओर समाज विज्ञानों में वैज्ञानिक अभिगमन पर बल देना भी स्वाभाविक है। इसका निम्नलिखित महत्व है—

(i) वैज्ञानिक अभिगमन से अध्ययन समस्या के समझने एवं निरूपण में सहायता मिलती है। कभी-कभी अनुसंधान में समस्या की प्रकृति को भली-भाँति नहीं समझा जाता है और अनुसंधान कार्य शुरू कर दिया जाता है जिससे अग्रिम चरणों में कठिनाई आती है।

(ii) तथ्यों को समझने में आसानी रहती है।

(iii) इससे उपयोगी तथ्यों को एकत्र करने में सहायता मिलती है तथा जो सामग्री अनुसंधान कार्य के लिए उपयोगी नहीं है उसको वैज्ञानिक अभिगमन द्वारा जाँच की जा सकती है।

(iv) यह हमें कई प्रकार की भ्रांतियों और हानिप्रद उपकल्पनाओं से बचाता है।

(v) अनुसंधान-कार्य को तार्किक एवं व्यवस्थित रूप से संचालित करने में सहायता देता है।

(vi) समय व धन की बर्बादी से बचाता है।

(vii) इसकी सहायता से वैषयिक एवं विश्वसनीय निष्कर्ष निकलते हैं व व्यक्तिगत अभिनीति को स्थान नहीं मिलता।

अतः आधुनिक अनुसंधान में वैज्ञानिक-अभिगमन का पर्याप्त महत्व है।

1

तथ्य और सिद्धान्त में सम्बन्ध, वैज्ञानिक प्रणाली के आधारभूत सिद्धान्त, अवधारणाएँ, उपकल्पना एवं समग्र

(Relationship of Facts and Theory, Basic Principles of Scientific Procedure, Concepts, Hypothesis and Universe)

'तथ्य' और 'सिद्धान्त' मे सम्बन्ध

(Relationship of Facts and Theory)

सामाजिक विज्ञानो के अध्ययन के लिए विभिन्न अवधारणाओ (Concepts), पदो (Terms) और शब्दो का प्रयोग किया जाता है। इनके विभिन्न पक्षो की सही जानकारी तभी सम्भव हो सकती है, जब हम सप्रत्ययो की और अर्थ के बारे मे स्पष्ट हो। आज जो कुछ भ्रम हमे इन विज्ञानो मे स्पष्टत प्रतीत होता है उसका एकमात्र कारण यह है कि हमे *प्रत्येक शब्दावली के अर्थ का वास्तविक ज्ञान नही* है। सामाजिक वैज्ञानिको के लिए यह एक बहुत बडा चुनौती है कि वे न केवल स्वय प्रयुक्त अवधारणाओ या सप्रत्ययो के बारे मे स्पष्ट हो, बल्कि उन पर यह दायित्व भी है कि वे सामाजिक विज्ञानो के अनुसन्धान मे कार्यरत विद्यार्थियो के लिए इस सबध मे मार्ग भी प्रशस्त करे। विज्ञान की यह कसौटी है कि वह सदैव स्पष्टता (Clarity) पर जोर देती है। स्पष्टता से तात्पर्य है जिन पदो, शब्दो या सम्प्रत्ययो का हम प्रयोग करते हैं, वे अनुसन्धान कार्य सचालित करने से पूर्व ही *अनुसन्धानकर्ता को स्पष्ट* होने चाहिए। विज्ञान मे हम तथ्य और सिद्धात का प्रयोग करते हैं। किन्तु अब इनका प्रयोग, समस्त विज्ञानो मे—चाहे वे प्राकृतिक हो या सामाजिक होने लगा लगा है। इनके बिना सामाजिक वैज्ञानिक अनुसन्धान कार्य मे एक कदम भी आगे नहीं बढ सकता। यदि वह बढने का प्रयास भी करता है तो उसका परिणाम उसे उम

1. *Goode & Hatt*. Methods in Social Research, p 17

समय भुगतना पड़ेगा, जब वह निष्कर्ष पर पहुँचने का प्रयास करेगा। यह खेद का विषय है कि आज न केवल विद्यार्थी वरन् विषय के ज्ञाता भी 'तथ्य' और 'सिद्धान्त' जैसे सत्प्रययों के बारे में स्पष्ट नहीं हैं। चाहे, अनुसन्धान पर बड़ी-बड़ी पुस्तकें क्यों न लिखी गई हों, किन्तु जब तक आधारभूत बातों के सम्बन्ध में भ्रम रहेगा, सम्पूर्ण अनुसन्धान कार्य व्यर्थ ही सिद्ध होगा। अत: तथ्यों और सिद्धान्त की परिभाषाओं और उनके सम्बन्ध को बतलाने से पूर्व, यह बात अनुसन्धानकर्ता के मस्तिष्क में स्पष्ट होनी चाहिये, जैसाकि गुडे तथा हाट्ट कहते हैं।

(1) सिद्धांत और तथ्य एक दूसरे के पूर्णत: विरोधी ही नहीं हैं, बल्कि न सुलझने योग्य ढङ्ग से परस्पर गुथे हुए हैं (That the theory and fact are not diametrically opposed but inextricably intertwined),

(2) सिद्धांत कोई विचार या कल्पना नहीं है (That theory is not speculation),

(3) वैज्ञानिक सिद्धांत और तथ्य दोनों से अत्यधिक सम्बन्धित हैं (That scientists are very much concerned with both theory and fact).

'तथ्य' की परिभाषाएं और विशेषताएं
(Definitions and Characteristics of Fact)

वैज्ञानिक अपने अनुसन्धान में तथ्यों को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान करता है। वह अवलोकन और परीक्षण द्वारा तथ्यों को एकत्रित करता है एवं उनके आधार पर निष्कर्ष की ओर अग्रसर होता है। एक व्यक्ति, तथ्यों का अर्थ इस बात से लेता है जो स्पष्ट, निश्चित और सही हो। परन्तु एक वैज्ञानिक उनकी व्याख्या निश्चित एवं स्वीकार्य मापदण्डों के आधार पर करता है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित परिभाषाएँ दी जा सकती हैं—

"तथ्य एक अनुभवाश्रित सत्यापन योग्य अवलोकन है।"[1] —गुडे तथा हाट्ट

"तथ्य, वह घटना है जिसमें अवलोकनों एवं मापों के विषय में अत्यधिक सहमति पायी जाती है।"[2] —फैयरचाइल्ड

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार तथ्य की परिभाषा यह है "किसी कार्य का घटित होना, किसी घटना का घटित होना अवश्य ही घटित या सही स्वीकार करने वाली बात, अनुभव की सत्य बात, स्थिति की वास्तविकताएँ, किसी निष्कर्ष का आधार मानी जाने वाली बात, सत्य या विद्यमान वास्तविकता।

"तथ्य स्वत: में एक अमूर्तिकरण ही है।"[3]

1 'Fact is an empirically verifiable observation'.
—*Goode & Hatt* Methods in Social Research, p 8

2 *Fairchild* Dictionary of Sociology

3 "A fact by itself is an abstraction"
—*Thomas and Znaniecki* The Polish Peasant in Europe and America.

अमेरिकन कॉलेज डिक्शनरी के अनुसार, "तथ्य—वास्तव मे क्या घटित हुआ है ?"[1]

"तथ्यो को भौतिक, मानसिक या संवेदनात्मक घटनाओ के रूप मे देखा जाना चाहिए जिनकी निश्चितता को ठहराया जा सके और जिन्हे सत्य स्वीकार किया जाता है।"[2] —पी वी. यंग

'तथ्यों' की विशेषताएँ

(1) इनमे सत्यता विद्यमान होती है।

(2) इनकी सत्यता की पुन परीक्षा की जा सकती है।

(3) इनको समझा जा सकता है एव इनका अनुभव किया जाना सम्भव है।

(4) जिन तथ्यो को अनुभव द्वारा प्राप्त किया जाता है वे स्वय अनुभव के निर्माण मे सहायक होते हैं।

(5) तथ्य, घटना के समस्त पक्षो का उद्घाटन नही करता वरन् किसी एक या सीमित पक्ष का ज्ञान करवाता है।

(6) कुछ तथ्य ऐसे होते हैं जिनका अवलोकन सम्भव नही भी हो सकता है, परन्तु उनका अनुभव किया जाता है।

(7) चूंकि तथ्य वास्तविकता एव अनुभव पर आधारित होते हैं अत इनकी सत्यता पर वैज्ञानिक एकमत होते हैं। यदि वे इसको चुनौती देते हैं तो वह चुनौती केवल सैद्धान्तिक या Academic नही हो सकती। अत चुनौतीदाता को बहुत ही सोच समझकर कदम उठाना पडता है तथा अपने पक्ष मे तथ्यो को एकत्र करना होता है।

सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री दुर्खीम सामाजिक तथ्यो को वास्तविक मानते थे जो हमारे जीवन एव व्यवहार पर प्रभाव डालते हैं। उनका मत था कि सामाजिक तथ्यो का निरपेक्षता से ही अध्ययन किया जा सकता है।

'सिद्धांत' की परिभाषाएं और विशेषताएँ
(Definitions and Characteristics of Theory)

सामान्यत 'सिद्धात' का अर्थ कल्पना, उपकल्पना एव अवास्तविक विचार से लिया जाता है। जब कोई विद्यार्थी या सामाजिक वैज्ञानिक भी सिद्धात की बात

1 "What has really happened"? —*American College Dictionary*

2. "Facts must be seen as physical, mental or emotional occurrences or phenomena which can be affirmed with certainty and are accepted as true in a given world of discourse." —*P. V. Young* : Scientific Social Surveys and Research, p 30

करते हैं तो प्राय वे यही कहा करते हैं—"सिद्धात एक कोरी कल्पना है, सिद्धात की बात करना वास्तविकता का गला घोटना है, सिद्धात और ससार का क्या लेन देन इत्यादि इत्यादि। इन अज्ञानता के कारण कभी-कभी यह भी देखने में आया है कि लोग सिद्धात के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए पूर्ण अनिच्छा प्रकट करते हैं। जब राजनीतिज्ञ के समक्ष सिद्धात का नाम लिया जाता है तो वह तुरन्त जवाब देता है—"महाशयजी, वास्तविकता की बात करो, हमें सिद्धात से क्या लेना-देना है।" आज की राजनीति और व्यावहारिकता की बात करता है। ऐसी भ्रामक व्याख्याएँ न केवल उनकी अज्ञानता का प्रतीक हैं बल्कि वे बड़ी ही हानिप्रद हैं, विशेष रूप से उन विद्यार्थियों के लिए जो अनुसधान की ओर चरण बढ़ाना चाहते हैं। अत सिद्धांत की वैज्ञानिक परिभाषाएँ देने के लिए प्रयत्न किए गए हैं।

(1) "सिद्धांत को तथ्यों के परस्पर सम्बन्धों या उनको किसी अर्थपूर्ण विधि से व्यवस्थित करने की सज्ञा दी जाती है।"[1] —गुडे एव हाट्ट

(2) "एक वैज्ञानिक द्वारा अपने निरीक्षणों के आधार पर तर्क वाक्यों के रूप म सुझायी गयी तार्किक रूप से परस्पर सम्बन्धित अवधारणाएँ ही सिद्धांत का निर्माण करती हैं।"[2] —मर्टन

(3) "सिद्धात किसी अनुशासन की विषय-वस्तु की वास्तविकता का प्रतिबिम्ब होना है।"[3] —आर्नोल्ड एम. रोज

(4) "वैज्ञानिक सिद्धात सामान्य अवधारणाओं के उस समूह को कहते हैं जो अनुभवाश्रितता (Empiricism) के सन्दर्भ के तार्किक रूप में परस्पर सम्बन्धित हो।"[4] —टालकट पारसंस

(5) समाजशास्त्रीय शब्दकोष के अनुसार "सामाजिक सिद्धात, सामाजिक घटना से सम्बन्धित एक ऐसा सामान्यीकरण है जो पर्याप्त रूप में वैज्ञानिकतापूर्वक स्थापित हो चुका है एव समाजशास्त्रीय व्याख्याता के लिए एक विश्वसनीय आधार बन सकता है।"[5]

1 "To the scientist, theory refers to the relationships between facts, or to the ordering of them in some meaningful way" —*Goode and Hatt* op cit, p 8

2 The logically interrelated concepts combined into propositions suggested by his Scientist s observations constitute a theory —*Robert K. Merton* quoted in Modern Sociological Theories.

3 "It (theory) will include any kind of 'image of reality' concerning the subject matter of the discipline —*Arnold M Rose* "The Relations of Theory and Method in Sociological Theories, Inquiries and Paradigrams.

4 *Talcott Parsons* The Structure of Social Action.

5 "Any generalization concerning social phenomena that is sufficiently established scientifically to serve as a reliable basis for sociological interpretation —*Fairchild* Dictionary of Sociology, p 294.

(6) "सिद्धात विचारपूर्ण वाक्यो के उस समूह को कहते हैं जिनका उद्देश्य सही तथ्यो का एकत्रीकरण करना होता है।"[1] —डेविड ईस्टन

'सिद्धात' की विशेषताएँ

(1) सिद्धात का निर्माण तथ्यो की तार्किक व्यवस्था से होता है।

(2) तथ्य, सिद्धात निर्माण की मुख्य इकाई है।

(3) सिद्धात अपने को अमूर्त रूप मे प्रकट करता है।

(4) सिद्धात साध्य न होकर साधन मात्र है। एक साधन के रूप मे, इसके द्वारा किसी घटना को समझा जा सकता है।

(5) सिद्धात मे अनेकों पद, अवधारणाएँ, कल्पनाएँ एव उपकल्पनाएँ निहित होती हैं।

(6) इसमे तथ्यो का सक्षिप्तीकरण एव स्पष्टीकरण करने का गुण है।

(7) सामान्यतः सिद्धात का निर्माण अनुसन्धानो के आधार पर किया जाता है।

(8) एक सिद्धांत के पभाव अनेक पक्षो में प्रकट हो सकते हैं।

(9) कभी-कभी सिद्धात, तथ्यो पर आधारित नही भी हो सकते हैं। इसका कारण है कि उनका निर्माण किसी विशेष उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किया जाता है कभी सिद्धात स्वय दुर्बल हो तो ऐसी स्थिति मे वे तथ्यो से परे होते हैं।

जिन्सबर्ग ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'Reason & Unreason in Society' मे निम्नलिखित सिद्धान्त बताये हैं—

(1) सस्थाओ एव अन्य सामाजिक स्वरूपो को जन्म देने वाली अवस्थाओ के निर्धारक सामान्यीकरण।

(2) वास्तविक सामाजिक घटनाओ के महत्त्व और अनुभव पर आधारित सह-सम्बन्ध।

(3) सस्थाओं मे होने वाले परिवर्तनों का दूसरी सस्थाओं मे होने वाले परिवर्तनो से पारस्परिक सम्बन्ध दिखलाने वाले सामान्यीकरण।

(4) अनेक प्रकारो की घटित होने वाली घटनाओ की पुनरावृत्ति से सम्बन्धित सामान्यीकरण।

(5) सम्पूर्ण मानवता के विकास की प्रमुख दिशाओ से सम्बन्धित सामान्यीकरण।

(6) मानव-व्यवहार मे सम्बन्धित मान्यताओ की अन्तर्वस्तु को प्रकट करने वाले नियम।

1. "Theory consist of a set of propositions that are designed to synth... data contained in an unorganized body of singular propositions."
—*David Easton* The Politic...

'तथ्य' और 'सिद्धान्त' की भूमिका एवं उनमें पारस्परिक सम्बन्ध
(The Role of Fact and Theory and Their Mutual Relationship)

तथ्य और सिद्धान्त दोनों का अपना महत्त्व है। दोनों ही अपने-अपने क्षेत्रों मे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

'तथ्य' की भूमिका (The Role of Fact)

गुडे एवं हाट्ट के अनुसार, "Fact is the very core of theory. Theory can advance and progress only in the light of facts. Facts provide new direction, new dimension and new vision to the theory. Theory cannot conceive of unprecedented commitment to research without the presence of facts."[1]

'तथ्य' सिद्धान्त के प्राण और रक्त हैं। जो प्रगति हमे विधान में चाहे वह सामाजिक विज्ञान हो या प्राकृतिक, नजर आ रही है, वह नए-नए तथ्यों के प्रकाश मे आने का परिणाम है। तथ्य चूंकि अनुभव पर आधारित होते हैं तथा जिनका प्रयोग वास्तविक संसार मे होता आया है, अतः वे सिद्धान्त के निखरे स्वरूप मे अत्यन्त सहायक हैं।

तथ्य के महत्त्व को निम्नांकित रूप से प्रदर्शित किया जा सकता है[1]—

(1) तथ्य सिद्धान्त के प्रारम्भीकरण मे सहायक होते हैं।
(2) तथ्य विद्यमान सिद्धान्त का निर्माण करते हैं।
(3) वे उन सिद्धान्तो को अस्वीकार करते हैं, जो तथ्यों से मेल नही खाते हैं।
(4) वे सिद्धान्त के Focus और Orientation मे परिवर्तन करते हैं।
(5) सिद्धान्त को स्पष्ट एव पुनः परिभाषित करते हैं।

सिद्धान्त का प्रारम्भ तथ्यों से होता है। तथ्यों ने सिद्धान्त निर्माण मे सराहनीय योग दिया है। जीवन मे अनेक घटनाएं घटित होती हैं, जिनका हम अवलोकन जाने या अनजाने मे करते हैं। यही अवलोकन (Observation) कभी-कभी आश्चर्य मे डालने वाले सिद्धान्त का निर्माण करते हैं जिन्हे हम खोज (Discovery) के नाम से पुकारते हैं। उदाहरणार्थ, वृक्ष से पृथ्वी पर गिरते फलो को लोगों ने बहुत बार देखा है। इसे पीढ़ी दर पीढ़ी देखते आए हैं, परन्तु न्यूटन ही ऐसा व्यक्ति था जिसने स्वयं से पूछा कि क्या कारण है कि वृक्ष से फल टूटकर पृथ्वी पर ही गिरते हैं। इसका पता लगाने के लिए उसने अथक् परिश्रम किया और अन्त मे पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के नियम का पता लगाया। हाँ, यह आवश्यक है कि अवलोकनकर्ता जिज्ञासु होना चाहिए अन्यथा केवल अवलोकन मात्र से सिद्धान्त का निर्माण नही होगा। मर्टन ने 'तथ्यों के अवलोकन को' अपूर्वकल्पित, असगत व

1 *Goode and Hatt* Methods in Social Research, p. 8

महत्त्वपूर्ण आधार सामग्री कहा है।"[1] मर्टन का कहना है कि "जो तथ्य कभी-कभी हमें असगत नजर आते हैं, वे अन्त में बड़े ही उपयोगी सिद्ध होते हैं और उनके द्वारा सिद्धान्त का विकास सम्भव हो पाया है।" इसी प्रकार सभी को पता है कि जिह्वा की गल्तियाँ, सयोग (Accident) के अनिश्चित अन्य तत्त्वों (Factors) के कारण भी होती हैं। लेकिन फ्रायड ने स्वय अपने अनुभव का उपयोग कर इन सामान्य अवलोकनों से एक व्यवस्थित और लाभप्रद सिद्धान्त का प्रारम्भ किया। तथ्य तभी सहायक हो सकता है जब विद्यार्थी दोनों के सम्भावित अन्तर्सम्बन्ध के बारे में चौकन्ना हो।[2]

जब नये नये तथ्य प्रकाश में आते हैं तो स्वाभाविक है कि सिद्धान्त का पुनर्निर्माण किया जाए। यदि आधुनिक युग को हम अनुसधान, खोज एव विशिष्टीकरण के युग की सज्ञा देते हैं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं है। न्यूटन आइन्सटाइन (Einstein) आदि ने जिन सिद्धान्तों का निर्माण किया था, उनमें आधुनिक वैज्ञानिकों ने अपने प्रयोगों एव खोजों के आधार पर सशोधन किया है। सुविख्यात अर्थशास्त्री कीन्स के सिद्धान्त को चुनौतियाँ दी जा रही हैं एव नए सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जा रहा है। राजनीति-विज्ञान में भी व्यवहारवादी दृष्टिकोण ने परम्परावादी दृष्टिकोण को चुनौती देकर नये मानक स्थापित किए हैं।

पारसस एव मर्टन जैसे समाजशास्त्रियों ने मेक्स वेबर, दुर्खीम, मेनहीम आदि सामाजिक वैज्ञानिकों के पुराने सिद्धान्तों में परिवर्तन या पर्याप्त सशोधन किया है। नवीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन कर, आधुनिक वैज्ञानिकों ने प्राचीन सिद्धान्तों को अस्वीकार किया है। सिद्धान्तों को तथ्यों के साथ समन्वय स्थापित करना होता है और यदि वह ऐसा नहीं कर पाता है तो सरचना में स्थान नहीं दिया जा सकता। अनुसधानकर्त्ता को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि वह जिन तथ्यों के आधार पर सिद्धान्त को अस्वीकार कर रहा है, उनका आगे अवलोकन और परीक्षण किया जाना चाहिए। बाल अपराध के लिए हम वश या दूषित रक्त जैसे तत्त्वों को उत्तरदायी मानते थे परन्तु अब नवीन तथ्यों के प्रकाश में आने से हमने बाल अपराध के पुराने कारणों में सशोधन कर दिया है। जो सशोधन किये गये हैं, वे प्रयोगों और निरीक्षणों पर आधारित हैं।

इस प्रकार सिद्धान्त के पुनर्निर्माण द्वारा हम उसके Focus में परिवर्तन करते हैं। तथ्यों के प्रकाश में सिद्धान्त के पुनर्निर्माण को ही हम नवीन Focus की सज्ञा देते हैं। यदि हम एक बार यह भली भाँति जान लेते हैं कि बाल अपराध

1 'The unanticipated anamolous and strategic detum"
—*Robert K Merton* Social Theory and Social Structure, p 93

2 'The fact can initiate theory only if the student is alert to the possible interplay between the two" —*Goode and Hatt* op cit, p 14

प्रवृत्ति को नैतिक अर्थ मे नहीं समझा जा सकता बल्कि सामाजिक क्रियाओं (Social dimensions) के अर्थ मे समझ सकते हैं तो हम इस कारक का और आगे पता लगाने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार हम आगे के अध्ययन द्वारा नये-नये तथ्यो का पता लगाते हैं। तथ्य वैज्ञानिक खोज की दिशा भी बदल सकते हैं।

नवीन तथ्य जो वर्तमान या प्राचीन सिद्धान्त के अनुकूल नही हैं वे वैज्ञानिक को इस बात के लिए बाध्य करते हैं कि उन सिद्धान्तों को स्पष्ट एव पुन परिभाषित करें। नये तथ्य सिद्धान्त को और अधिक स्पष्ट करते हैं क्योकि वे इसकी अवधारणाओं पर और अधिक प्रकाश डालते हैं। वे नवीन सैद्धान्तिक समस्याएँ भी उत्पन्न कर सकते हैं जिससे सिद्धान्त को पुन परिभाषित करना आवश्यक हो जाता है। जिन अवधारणाओं को सही और स्पष्ट स्वीकार किया जाता रहा है, वे नवीन तथ्यो के फलस्वरूप भ्रामक और अस्पष्ट सिद्ध हुए हैं।[1]

इन सभी परिभाषाओं और स्पष्टीकरण के आधार पर नवीन परिकल्पनाओं की खोज की जा सकती है। नवीन परिकल्पनाएँ उस क्षेत्र मे और अधिक योगदान भी दे सकती हैं। अन्त में, नवीन खोज मानव सभ्यता की प्रगति की कुंजी मे एक अध्याय के रूप में जुड़ जाती है।

सिद्धान्त की भूमिका (The Role of Theory)

वैज्ञानिक एव सामाजिक अनुसधानो मे सिद्धान्त का एक अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है। सिद्धान्त की अनुपस्थिति मे हम सामाजिक मूल्यो या समाज के दर्शन का ज्ञान नही कर सकते। सिद्धान्त (Theory) सामाजिक विषय की नैतिक आधारशिला है और अनुसधान इस आधारशिला को मजबूत करने की प्रक्रिया है। सिद्धान्त के निम्नलिखित महत्त्व हैं—

(1) यह सकलन योग्य तथ्यो की अविसीमा को परिभाषित करता है।
(2) यह सम्बन्धित घटनाओं को व्यवस्थित वर्गीकृत और अन्तर-सम्बन्धित करने के लिए एक अवधारणीय योजना (Concep ual Scheme) प्रदान करता है।
(3) यह तथ्यो को अनुभवाश्रित सामान्यीकरणो (Empirical Generalization) और सामान्यीकरण की व्यवस्थाओं (Systems of Generalization) को सक्षेप मे प्रस्तुत करता है
(4) यह तथ्यो के सम्बन्ध मे भविष्यवाणी करता है।
(5) यह ज्ञान सम्बन्धी न्यूनताओं को इगित करता है।

1 "The concepts that have been accepted as simple and obvious turn out to be elusive, vague, and ill-defined when we fit them to the facts It is not that the facts do not fit It is rather that they are much richer, more precise and definite, than concept or theory
—*Goode and Hatt* op cit, p 16

सैद्धान्तिक व्यवस्था का मुख्य कारण यह है कि वह जिन तथ्यों का अध्ययन करता है उनके प्रसारण को सीमित करे। किसी भी घटना या दृश्य का अध्ययन विविध तरीकों द्वारा किया जा सकता है। अतः सिद्धान्त किसी घटना के कुछ पक्षों पर अपना ध्यान केन्द्रित करता है न कि उसके सभी पक्षों पर। इससे समय व्यर्थ नहीं होता। दूसरी बात यह है कि यह व्यावहारिक दृष्टि से भी उपयोगी है। किसी विषय या क्षेत्र के बारे में विस्तार से जानकारी नहीं की जा सकती तथा साथ ही साथ अनुपयोगी सामग्री से बचने के लिए भी यह आवश्यक है कि कुछ महत्वपूर्ण बातों पर ही ध्यान विशेष रूप से केन्द्रित किया जाए। ऐसा करने से अनुसंधानकर्त्ता वांछनीय तथ्यों तक पहुँचने में सफल हो जाता है। इस प्रकार सिद्धान्त यह मार्ग-दर्शन है कि कौन कौन से तथ्य न्याय संगत एवं उचित हैं।

सिद्धान्त का अन्य महत्वपूर्ण कार्य संप्रत्ययीकरण (Conceptualization) और वर्गीकरण है। प्रत्येक विज्ञान अवधारणाओं के ढांचे द्वारा संगठित होता है। इससे यह पता लग जाता है कि किन मुख्य प्रणालियों का अध्ययन करना है। यदि किसी ज्ञान को संगठित करना है तो एक ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये जो अवलोकन योग्य हो। परिणामस्वरूप, किसी भी विज्ञान में मुख्य कार्य यह है कि वर्गीकरण की प्रणाली एवं अवधारणाओं की संरचना का विकास किया जाए। सिद्धान्त-निर्माण के पश्चात् अनुसंधानकर्त्ता उन घटनाओं एवं कारकों को अच्छी तरह से वर्गीकृत करने तथा उनमें समानता एवं असमानता स्थापित करने में सफल हो सकता है।

सिद्धान्त का एक और कार्य अध्ययन-वस्तु के सम्बन्ध में जानकारी का संक्षिप्तीकरण करना है। इस सारांश को दो मुख्य श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है (i) अनुभवाश्रित सामान्यीकरण, (ii) स्वीकार योग्य वाक्यों के बीच सम्बन्धों की व्यवस्था।

एक वैज्ञानिक उन तथ्यों को एकत्रित करता रहता है, जो अनुभवाश्रित सामान्यीकरणों में व्यक्त किए गए हैं। जैसे—एक समाजशास्त्री विभिन्न वर्गों में पायी जाने वाली आदतें, उनके व्यवहार और रीति रिवाजों के सम्बन्ध में तथ्यों को एकत्रित करता है, एक मनोवैज्ञानिक मनुष्य के आवेगों, संवेदनाओं और उसके विभिन्न व्यवहार का अध्ययन करता है तथा उस सम्बन्ध में तथ्यों को प्राप्त करता है। ये तथ्य बड़े उपयोगी होते हैं जिनको सारांश में सरल या जटिल सैद्धान्तिक सम्बन्धों में व्यक्त किया जाता है। वह इन तथ्यों को बड़ी सावधानी से समानताओं और असमानताओं के आधार पर संक्षेप में श्रेणियों में वर्गीकृत करता है। इन तथ्यों के के आधार पर ही वह अपने अनुसंधान-कार्य में अग्रसर होता है, इसी प्रकार और नवीन तथ्यों की खोज करता है और उनका भी इसी प्रकार वर्गीकरण करता चला जाता है। इस तरह तथ्यों की व्याख्या करने में सिद्धान्त बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका

प्रदा करते हैं। सिद्धान्त के साये में ही हम तथ्यों को समझ सकते हैं एवं उनकी व्याख्या कर सकते हैं।[1]

सिद्धान्त द्वारा तथ्यों के विषय में पूर्वानुमान लगाया जा सकता है। सिद्धान्त निर्माण पूर्व अनुभवों के आधार पर किया जाता है और उस सिद्धान्त के सहारे भविष्यवाणी सरलता से की जा सकती है। इस भविष्यवाणी के कई तथ्य होते हैं। इस सम्बन्ध में गुडे तथा हाट द्वारा उद्धृत उदाहरण महत्वपूर्ण है। पश्चिमी तकनीकी (Western Technology) के प्रसार एवं उसके लागू होने से मृत्यु-दर में गिरावट आई है इसी आधार पर हम यह भविष्यवाणी भी कर सकते हैं कि यदि इसी प्रकार की पश्चिमी तकनीकी का प्रसार अन्य देशों में किया जाए तो मृत्यु दर में गिरावट या कमी आ सकती है। अवलोकन या निरीक्षण के आधार पर सामान्यीकरण किया जाता है और इसके पीछे सिद्धान्त कार्य करता है। एक निर्धारित सिद्धान्त गलत भी हो सकता है, क्योंकि यह किसी घटना के अवलोकन के बारे में भविष्यवाणी करता है। लेकिन जो भविष्यवाणियाँ समाजशास्त्र या सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में की जाती हैं वे पूर्ण शुद्ध नहीं हैं, क्योंकि अभी भी इस क्षेत्र में अधिक विकास और प्रगति की आवश्यकता है।

'सिद्धान्त' ज्ञात तथ्यों का सारांश प्रस्तुत करता है और उन तथ्यों का पूर्वानुमान कराता है जिनका अवलोकन नहीं किया गया है अतः इससे आगे सिद्धान्त यह भी बतलाने का प्रयत्न करता है कि ऐसे कौनसे क्षेत्र (Areas) रह गए हैं जिनका अन्वेषण (Exploration) अभी तक नहीं किया गया है।

ज्ञान के क्षेत्र में कमियों को तभी बताया जा सकता है जब तथ्यों का भली भाँति स्पष्टीकरण एवं वर्गीकरण किया गया हो। गुडे तथा हाट्ट अपराधशास्त्र (Criminology) से उदाहरण लेते हुए कहते हैं कि अपराध (जैसे—हत्या लूट, चोरी सेंध इत्यादि) के सम्बन्ध में जो सिद्धान्त विकसित किया गया है वह मुख्यतः निम्न वर्ग के इर्द-गिर्द विकसित किया गया है। अधिकांशतः जो अपराध मध्यम वर्ग के लोगों के द्वारा किए जाते हैं उनकी ओर किसी का ध्यान नहीं गया है और मुख्यतः उस 'सफेद कालर वर्ग (White Collor Class) के प्रति तो गया ही नहीं है। सदरलैंड (*Sutherland*) ने अपराधशास्त्रीय सिद्धान्त में एक बड़ी कमी देखी जो इस बात को इंगित करती है कि इस प्रकार के अपराध के बारे में हम कितने अज्ञानी हैं। इसके तुरन्त पश्चात् कई अनुसंधानकर्त्ताओं ने इस क्षेत्र में शोध-कार्य करना प्रारम्भ कर दिया है।

लेकिन इन कमियों का पता तब तक नहीं चल सकता जब तक तथ्यों को सुव्यवस्थित एवं सुसंगठित नहीं किया गया हो। अतः सिद्धान्त यह बतलाता है कि हमारे ज्ञान में कहाँ-कहाँ कमियाँ हैं।

1 Facts are seen within a framework rather than [illegible] ated [illegible] hion
Goode and Hatt op [illegible] p 10

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि तथ्य और सिद्धान्त परस्पर एक दूसरे से गुथे हुए है। किसी का भी अस्तित्व एक दूसरे की अनुपस्थिति या अभाव मे नही रह सकता। गुडे और हाट के अनुसार, "तथ्य और सिद्धान्त एक दूसरे के विरोधी कभी भी नही हो सकते। अत. इनके सम्बन्ध मे उत्पन्न भ्रम को अब दूर कर लिया जाना चाहिए। इनमे सतत् और स्थायी रूप से चोली दामन का साथ है।"

वैज्ञानिक विधि की परिभाषाएं
(Definitions of the Scientific Method)

आज के वैज्ञानिक युग मे प्रत्येक समस्यामूलक तथ्य की परीक्षा व समाधान वैज्ञानिक ढग से किया जाता है। सामाजिक अनुसधानो मे तो इसका महत्व और भी अधिक है क्योकि इनमे तथ्य और घटनाएँ बडी ही विचित्र, परिवर्तनशील एव जटिल प्रकृति की होती हैं। इन पद्धतियो के उपयोग न करने पर हमारे निष्कर्ष बड़े भ्रमपूर्ण हो जाते हैं। एक बात ध्यान देने योग्य और है कि अनुसधानकर्त्ता को वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग सामाजिक अनुसधान मे बडी सतर्कता से करना पडता है। यदि वह इसका प्रयोग निष्पक्ष दृष्टि और आत्मविश्वास से नही करता है तो उद्देश्य-प्राप्ति मे उसे विफलता एव नैराश्य का सामना करना पडेगा। वैज्ञानिक पद्धति अपने आप मे एक स्पष्ट पद्धति है, जिसका प्रयोग अनुसधानकर्त्ता पर निर्भर है।

साधारणत वैज्ञानिक पद्धति वह पद्धति है जिसे एक वैज्ञानिक किसी विषय-वस्तु के अध्ययन के लिए प्रयोग मे लाता है। वैज्ञानिक विधि की परिभाषाएँ लेखको द्वारा विभिन्न प्रकार से दी गई हैं। विद्वान् लेखको के अतिरिक्त अन्य स्रोत भी इसमे शामिल हैं।

एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के अनुसार, "वैज्ञानिक पद्धति एक सामूहिक पद है जो उन विभिन्न प्रक्रियाओ के विषय मे उल्लेख करता है जिनकी सहायता से विज्ञान बनते हैं। व्यापक अर्थ मे कोई भी अध्ययन पद्धति जिसके द्वारा वैज्ञानिक अथवा निष्पक्ष और व्यवस्थित ज्ञान प्राप्त किया जाता है, एक वैज्ञानिक पद्धति कहलाती है।"[1]

कोहन एव नेगेल के अनुसार, "वैज्ञानिक पद्धति की सर्वप्रथम विशेषता यह होती है कि इससे वास्तविक तथ्यो को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है न कि इच्छित तथ्यो का। इसकी द्वितीय विशेषता यह है कि प्रत्येक अनुसधान स्वय मे विशिष्ट होता है।"

1 "Scientific method is a collective term denoting the various processes by the aid of which the sciences are built up. In a wider sense, any method of investigation by which scientific or other impartial and systematic knowledge is required is called a scientific method."

—Encyclopaedia Britannica, Vol XX, p 127

लुण्डबर्ग के शब्दो मे, "वैज्ञानिक विधि में समको का क्रमबद्ध अवलोकन, वर्गीकरण तथा व्याख्या सम्मिलित हैं। हमारे प्रतिदिन के निष्कर्षों तथा वैज्ञानिक विधि में मुख्य अन्तर औपचारिकता की मात्रा, दृढता, सत्यापन किए जा सकने की योग्यता तथा व्यापक रूप मे प्रामाणिकता में निहित होता है।"[1]

कार्ल पियर्सन के मतानुसार, "वैज्ञानिक विधि मे निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं – (अ) तथ्यो का सतर्क एव शुद्ध वर्गीकरण तथा उनके सहसम्बन्ध और क्रम का निरीक्षण, (ब) सृजनात्मक कल्पना द्वारा वैज्ञानिक नियमो की खोज, (स) आत्म आलोचना तथा सामान्य बुद्धि के व्यक्तियो के लिए समान महत्त्व की अन्तिम कसौटी।"[2]

वोल्फ के अनुसार, "व्यापक अर्थ मे कोई भी अनुसधान पद्धति जिसके द्वारा विज्ञान का निर्माण हुआ हो अथवा उसका विस्तार किया जा रहा हो, वैज्ञानिक विधि कहलाती है।"[3]

स्प्रोट के अनुसार, "वैज्ञानिक पद्धति में प्रयोगीकरण, उपकल्पना व अध्ययन यन्त्रों मे विश्वास करना आवश्यक है।"

इन विभिन्न परिभाषाओं का यदि विश्लेषण करें तो हम कह सकते हैं कि वैज्ञानिक पद्धति में निम्नलिखित विशेषताएँ तथा तत्त्व सन्निहित हैं—

(1) तथ्यो का सतर्कतापूर्ण सम्यक विभाजन।

(2) तथ्यो के पारस्परिक सम्बन्धो का स्पष्टीकरण।

(3) सृजनात्मक कल्पना के आधार पर वैज्ञानिक नियमो का निर्धारण।

(4) वस्तुनिष्ठता या निष्पक्षता—अनुसधानकर्त्ता अपने अध्ययन मे व्यक्तिगत भावनाओ एव पूर्व कल्पनाओ को न आने दें, तथा न ही वे स्वार्थवश तथ्यों को तोडें या मरोडें।

1 "Scientific method consists of systematic observation class fication and interpretation of datas The ma n difference between our day today generalisations and the conch sions usually recognised as scientific method lies in the degree of formality regorousness, verifiability, and the general validity of the latter" —*Lundberg* Social Research

2 "The scientific method is marked by the following features (a) careful and accurate classification of facts of observation of their corelation and sequence (b) the discovery of scientific laws by aid of creative imagination (c) self criticism and the final touchstone of equal validity for all normally constituted minds —*Karl Pearson* Grammar of Science

3 "In a wide sense any mode of investig ion by which science has been built up a d is being developed is entitled to be ca led a scientific method" —*A Wolfe* Essentials of Scientific Method

(5) सत्यापनशीलता (Verifiability)—इसमे कोई भी व्यक्ति निर्धारित विधियों का उपयोग करके किसी भी समय निष्कर्षों की जाँच कर सकता है।

(6) निश्चितता—वैज्ञानिक विधियाँ पूर्णत सुनिश्चित होती हैं, जिसके पश्चात् कोई व्यक्ति उन विधियो का अनुसरण कर सही निष्कर्ष पर पहुँच सकता है।

(7) सामान्यता (Generality)—इसके द्वारा ऐसे तथ्यो या नियमो का ढूँढने का प्रयास किया जाता है जो सदैव समान अवस्थाओ मे प्रामाणिक हो सकें।

(8) पूर्वानुमान (Predictability)— यदि किसी घटना या समस्या के कारणो प्रभावो का वैज्ञानिक अध्ययन कर लिया जाए तो उसके आधार पर अनुसधानकर्ता वैसी ही परिस्थितियो मे सही भविष्यवाणी कर सकता है।

सामान्य बोध और विज्ञान
(Common Sense and Science)

व्हाइटहैड (Whitehead) का मत है कि सामान्य बोध सृजनात्मक विज्ञान में एक बुरा स्वामी (Bad master) है। इसका एकमात्र मापदड यह है कि नवीन विचार, पुराने की तरह प्रतीत होंगे।[1]

फ्रेड एन० कर्लिंगर के अनुसार, "ज्ञान के मूल्याकन के लिए सामान्य बोध प्राय एक बुरा स्वामी हो सकता है।"[2]

सामान्य बोध और विज्ञान मे क्या समानताएँ हैं और क्या भिन्नताएँ ? एक दृष्टि से दोनो ही समान लगते हैं। तदनुसार विज्ञान सामान्य बोध का व्यवस्थित और नियन्त्रित विस्तार है, क्योकि, जैसा कोनेंट ने कहा है कि यह सप्रत्ययो (Concepts) और सप्रत्ययी योजनाओ (Conceptual Schemes) की एक शृखला या अनुक्रम है जो मानव जाति के व्यावहारिक लाभो और उपयोगो के लिए सतोषजनक है।[3] लेकिन ऐसी धारणाएँ (Concepts) आधुनिक विज्ञान को पथभ्रष्ट करती हैं, विशेष रूप से मनोविज्ञान और शिक्षा को। गत शताब्दी के शिक्षावेत्ताओ के सामान्य बोध सिद्धान्त के अनुसार यह स्वत प्रामाणिक बात थी कि दड (Punishment) शिक्षाशास्त्र (Pedagogy) का आधारभूत यत्र था। आधुनिक शताब्दी मे हमारे समक्ष यह प्रमाण है कि प्राचीन सामान्य बोध का दड प्रेरणा सिद्धान्त' बिल्कुल झूठा है किन्तु वास्तव मे, ज्ञान-वृद्धि मे पारितोषिक (Reward) दड से अधिक प्रभावशाली है।

1 "Its sole criterion for judgment is that the new ideas shall look like the old ones" —An Introduction to Mathematics, p 157

2 "Common sense may often be a bad master for the evaluation of knowledge." —Fred N Kerlinger Foundations of Behavioural Reserch p 3

3 J Conat Science and Common Sense, p. 32-33.

इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि सामान्य बोध का विज्ञान में महत्त्व नहीं है। गुडे एवं हाट्ट के अनुसार विज्ञान का कार्य है कि वह सामान्य बोध विचारों का सही तरीके से परिभाषित करे और उसका अच्छे ढंग से परीक्षण करे।[1]

सामान्य बोध और विज्ञान में अन्तर—फ्रेड एन० कर्लिंगर के अनुसार सामान्य बोध और विज्ञान में मुख्यतः पाँच अंतर हैं—

(1) सम्प्रत्ययी योजनाओं (Conceptual Schemes) और सैद्धान्तिक प्रकारों (Theoretical Structures) के प्रयोग विलक्षण रूप से भिन्न हैं। जब सड़क पर चलता हुआ एक मनुष्य सिद्धान्तों (Theories) और धारणाओं (Concepts) का प्रयोग करता है तो साधारणतया स्वतन्त्र (Loose fashion) में करता है। उदाहरणार्थ वह बीमारी को पाप के लिए दंड मान सकता है, आर्थिक गिरावट (Economic depression) या संकट के लिए यहूदियों को उत्तरदायी ठहरा सकता है किन्तु दूसरी ओर, वैज्ञानिक सुव्यवस्थित तरीके से अपने सैद्धान्तिक ढाँचे (Theoretical Structures) का निर्माण करता है, उसका परीक्षण आंतरिक अनुरूपता (Internal consistency) के लिए करता है और उसके विभिन्न पहलुओं का अनुभवाश्रित परीक्षण (Empirical Test) करता है। वह इस बात को भी भली भाँति समझता है कि जिन धारणाओं का वह प्रयोग कर रहा है, वे मनुष्य द्वारा निर्मित शब्द हैं जो वास्तविकता में घनिष्ठ सम्बन्ध प्रकट कर भी सकती हैं और नहीं भी।

(2) वैज्ञानिक अपने सिद्धान्तों और उपकल्पनाओं (Hypotheses) का परीक्षण व्यवस्थित और प्रायोगिक रूप में करता है। यद्यपि सड़क पर चलता हुआ मनुष्य भी अपने सामान्य बोध द्वारा अपनी उपकल्पनाओं का परीक्षण करता है तथापि कहना यह चाहिए कि वह उपकल्पनाओं का परीक्षण चुनने योग्य रूप (Selective fashion) में करता है। वह प्रमाण को प्रायः इसलिए चुनता है कि यह उपकल्पना के अनुरूप है। उदाहरणार्थ काले लोग सुरीले होते हैं। यदि कोई व्यक्ति इसमें विश्वास रखता है तो वह अपने मत को, इस बात पर ध्यान देकर कि कई काले लोग गायक हैं प्रमाणित कर सकता है। इसके अपवादों की ओर कोई ध्यान न देकर एक सामान्य नियम बना देता है कि सभी काले लोग गायक होते हैं। सामाजिक वैज्ञानिक इस 'चयन प्रवृत्ति' (Selection Tendency) को एक आम मनोवैज्ञानिक तथ्य समझकर अपने अनुसन्धान का रक्षा अपनी ही पूर्व धारणाओं (Preconception) और पूर्व स्नेहों (Predilections) से करता है। वह किसी सम्बन्ध (Relation) का पता अपनी आराम कुर्सी पर बैठे-बैठे नहीं करता वरन् उसका

1 "To put common sense ideas into precisely defined concepts and subject the proposition to test is an important task of science
—*Goode & Hatt*, op cit, p 56.

परीक्षण अपनी प्रयोगशाला मे या किसी क्षेत्र मे जाकर करता है। वह 'ऐसा मानकर चलना चाहिए' वाले सिद्धान्तो से न तो सन्तुष्ट होता है और न उस पर कठोरता पूर्वक चलता ही है। वह इन सम्बन्धों (Relations) के व्यवस्थित, नियन्त्रित और अनुभवाश्रित (Empirical) परीक्षण पर जोर देता है।

(3) तीसरा भेद नियत्रण के मत या अभिप्राय (Notion of control) से है। वैज्ञानिक अनुसधान मे नियन्त्रण के कई अर्थ हैं। वैज्ञानिक उन चलो (Variables), जिनकी कारण रूप मे स्वय ने कल्पना की है, के अलावा उन दूसरे चलो (Variables) को भी मानने से इकार करता है जो कि परिणामो के कारण सम्भव हो सकते हैं। जबकि एक आम आदमी (Layman) अपनी आँखो देखे दृश्य की व्याख्या को नियमित तरीके से नियंत्रित करने की तनिक भी परवाह नही करता। वह सामान्यत. प्रभाव के असम्बद्ध स्रोतो (Extraneous sources of influence) को नियन्त्रित करने के लिए कोई प्रयत्न नही करता बल्कि उन व्याख्याओ (Explanations) को स्वीकार करने की ओर प्रवृत्त होता है जो उसकी पूर्व धारणाओ और अभिनीतियो (Biases) के अनुरूप हो। यदि उनका यह विश्वास है कि अपराध गदी बस्तियो से ही उत्पन्न होते है तो वह यह मानने के लिए कभी तैयार नही होगा कि साफ बस्तियो मे भी अपराध (Delinquency) हो सकते हैं। दूसरी ओर वैज्ञानिक यह खोजने की कोशिश करता है और अपराध के मामलो को विभिन्न प्रकार के पडोसो (Neighbourhoods) मे नियन्त्रित करता है। अत इन दोनो (Layman and Scientists) के दृष्टिकोणो और क्रियाओ मे गहन अन्तर है।

(4) चौथा अन्तर जो शायद इतना तीव्र नही है, वैज्ञानिक दृश्यो (Phenomena) के बीच सम्बन्धों (Relations) को जानने के लिए सतत् रूप से व्यस्त रहता है। जहाँ तक आम व्यक्ति का प्रश्न है वह अपने सामान्य बोध (Common Sense) का प्रयोग दृश्य की स्वय व्याख्याओ के लिए करता है, परन्तु एक वैज्ञानिक चेतन रूप मे और व्यवस्थित ढग से सम्बन्धो का पीछा करता है। कर्लिंगर के शब्दो मे "आम आदमी का इन सम्बन्धों से पूर्वग्रहण (Preoccupation) ढीला (Loose), अव्यवस्थित और अनियन्त्रित है।"[1]

हरलॉक (Hurlock) ने जिस सम्बन्ध (Relation) का एक अध्ययन मे परीक्षण किया था, उसका उदाहरण यहाँ सगतिपूर्ण है। पारितोषिक प्रलोभन ज्ञान-वृद्धि मे दड के बनिस्पत अधिक सहायक है। उन्नीसवी शताब्दी के शिक्षक, माता पिता और अभिभावक की यह धारणा थी की निषेधार्थक सहायता (Negative re-enforcement) या दड सीखने मे अधिक प्रभावशाली एजेंट था। आधुनिक शताब्दी के शिक्षक (Educators) और माता-पिता की यह धारणा है कि

1 The layman's preoccupation with relations is loose unsystematic, uncontrolled" —*F N Kerlinger*, op cit, p. 4

अनिषेधार्थक सहायता (Positive re-enforcement) या पारितोषिक (Reward) विद्या की वृद्धि में अधिक प्रभावशाली है। दोनों यह कह सकते हैं कि उनके दृष्टिकोण सिर्फ सामान्य बोध (Only Common sense) हैं कि वे यह कह सकते हैं कि अगर आप एक बच्चे का इनाम दें (या दंड दें) तो वह अच्छे ढंग से सीखेगा। दूसरी ओर वैज्ञानिक व्यक्तिगत रूप में एक दृष्टिकोण या दूसरे दृष्टिकोण का समर्थन कर सकता है या दोनों में किसी का भी नहीं। सम्भवतः वह दोनों सम्बन्धों के व्यवस्थित और नियन्त्रित परीक्षण के लिए जोर देगा जैसा कि हरलॉक (Hurlock) ने किया।

(5) अन्तिम भेद जो सामान्य बोध और विज्ञान में है वह यह है कि दोनों दृष्टित दृश्यों (Observed pheromena) की अलग अलग व्याख्या (Explanations) देते हैं। जब वैज्ञानिक दृष्टित दृश्य की व्याख्या देने का प्रयास करता है तो वह आत्म विषयक व्याख्या (Metaphysical explanation) का खंडन करता है। तात्विक (Metaphysical) व्याख्या एक ऐसी धारणा (Proposition) है जिसका परीक्षण नहीं किया जा सकता। उदाहरणार्थ, इस प्रकार की बातें कि मनुष्य गरीब हैं और भूखे मर रहे हैं—इसलिए कि ईश्वर ऐसा चाहता है, या कठिन विषयों का अध्ययन बच्चे के नैतिक चरित्र को सुधारता है, तात्विक है। इन प्रस्तावनाओं (Propositions) का परीक्षण नहीं किया जा सकता, अतः ये आत्मविषयक (Metaphysical) हैं।

विज्ञान का सामान्य बोध से कोई सम्बन्ध नहीं है। इसका अर्थ यह भी नहीं कि वैज्ञानिक ऐसे कथनों का तिरस्कार कर देगा या जीवन से उन्हें निकाल देगा, या यह कह देगा कि वह सत्य नहीं है या अर्थहीन है। इसका यही अर्थ है कि एक वैज्ञानिक के रूप में उसका इन कथनों से सम्बन्ध नहीं है। संक्षेप में करलिंगर के शब्दों में "विज्ञान उन बातों से सम्बन्धित है जिनको सार्वजनिक रूप से अवलोकन और परीक्षण किया जा सकता हो। यदि ऐसी प्रस्तावनाओं (Propositions) या प्रश्नों में अवलोकन या परीक्षण नहीं होता है, तो वे वैज्ञानिक प्रश्न नहीं हैं।"

वैज्ञानिक चिन्तन के चरण
(Steps in Scientific Thinking)

"ब्रह्माण्ड (Universe) दृश्यों (Phenomena) की अपरिमित विविधता को प्रस्तुत करता है, जिनका कि अध्ययन करता है, लेकिन विज्ञान इनमें से कुछ ही तक अपने को सीमित रखता है।"[1]

1. "The Universe presents an infinite variety of phenomena to be studied, but science limits itself to a few of these."

—*Goode and Hatt*, op cit, p 41

विज्ञान तथ्यो या वास्तविकताओ के अध्ययन के लिए अपनी स्वय की शब्दावली का विकास करता है जैसाकि स्पष्ट है विज्ञान एक 'क्रमबद्ध ज्ञान' (Systematic Knowledge) है अतः इसमे तथ्यो की खोज व्यवस्थित ढग से की जाती है। एक वैज्ञानिक अपने चिन्तन मे आवश्यक रूप से जिन प्रक्रियाओ को प्रयोग मे लाता है, उन्हे चरणो (Steps) की सज्ञा दी गई है। प्रमुख चरण निम्नांकित हैं –

(1) समस्या का विश्लेषण—सर्वप्रथम, वैज्ञानिक चिन्तन मे समस्या का स्पष्टीकरण किया जाता है। समस्या के समस्त पहलुओ का अध्ययन किया जाता है, उससे सम्बन्धित घटनाओ का विश्लेषण किया जाता है। समस्या से सम्बन्धित सामग्री, जैसे लेख, पुस्तकें, पत्र पत्रिकाएँ आदि से जानकारी प्राप्त करने की कोशिश की जाती है। इनको आधार समझ कर समस्या का भली भाँति अध्ययन किया जाता है जिससे इसका स्पष्ट खाका सामने आ जाता है।

(2) उपकल्पना का निर्माण—चूँकि अनुसन्धानकर्त्ता समस्या से सम्बन्धित समस्त तथ्यो को एकत्रित नही कर सकता, अतः वह अपने मस्तिष्क मे सम्भावित कार्य-कारण का सम्बन्ध स्थापित कर लेता है। वह एक ऐसा सिद्धान्त बनाने का प्रयास करता है जिसके बारे मे वह कल्पना का सहारा लेता है ताकि वह सिद्धान्त उसके अध्ययन का आधार सम्भव हो सके। इस उपकल्पना से उसे कार्य मे आगे बढने मे सहायता मिलती है। इस कल्पना या विचार को ही प्राक्कल्पना कहा जाता है। जब यह उसके दिमाग मे स्पष्टतया बैठ जाती है तो वह उसकी प्रामाणिकता को सिद्ध करने के लिए सम्बन्धित तथ्यो को एकत्रित करने की कोशिश करता है। व्यवहारत यदि प्राक्कल्पना (Hypothesis) इन तथ्यो या एकत्रित सामग्री के आधार पर फिट हो जाती है तो इसका स्थान सिद्धान्त ले लेता है। यदि इसकी सार्थकता फिट नही हो पाती है तो उसे छोड़ दिया जाता है।

(3) निरीक्षण अथवा प्रयोगीकरण—उपकल्पना के निर्माण के पश्चात् वैज्ञानिक उसकी सत्यता को सिद्ध करने के लिए तथ्यो का एकत्रीकरण करता है। इसकी सिद्धि के लिए वह स्वय की इन्द्रियो से उसका निरीक्षण करता है। निरीक्षण के पश्चात् यदि वह प्रयोग करना उचित एव आवश्यक समझता है, तो प्रयोग द्वारा तथ्य को साबित करने की कोशिश करेगा। वैज्ञानिक चिन्तन मे इसके महत्व को इसीलिए कम नही किया जा सकता क्योकि निरीक्षण व प्रयोग के बिना वह आगे बढ नहीं सकता। लोगो द्वारा फैलाई गई भ्रान्तियाँ, कही सुनी बातें पूर्वानुमानों तथा पक्षपात से सम्बन्धित बातो पर विश्वास नही बल्कि वह स्वय वस्तु स्थिति का अवलोकन करे और आगे उसकी सत्यता के लिए प्रयोग करे ताकि वह अपने उद्देश्य की प्राप्ति में सफलता प्राप्त कर सके।

(4) तथ्य-सकलन—वैज्ञानिक चिन्तन मे अगला चरण यह है कि अनुसन्धान-कर्त्ता जिन तथ्यो का अवलोकन और अनुभव करता है या जिन पर प्रयोग किए गए हैं, उनसे सम्बन्धित तथ्यो को इकट्ठा करना रहे। तथ्य सकलन की अनेक विधियाँ हैं। पूर्व प्रकाशित पुस्तको एव प्रकाशित ग्रन्थो से भी वह तथ्यो को इकट्ठा कर सकता है। इसके अलावा अन्य मुख्य विधियाँ ये हैं—(अ) पूर्व निर्धारित प्रश्नावली,

(ब) विवरणात्मक साक्षात्कार, (स) अनुसूची द्वारा, (द) अवलोकन पद्धति द्वारा, (इ) डाक द्वारा। इन तथ्यों के आधार पर ही वह आगे बढ़ता है।

(5) सामग्री का वर्गीकरण व विश्लेषण—जिस सामग्री को एकत्रित किया गया है उसकी अनेक प्रकार से जाँच या विवेचना की जाती है। संकलित सामग्री का वर्गीकरण किया जाता है। इन्हें आगे अपने अपने विषयों के अनुरूप बाँट दिया जाता है। सामग्री का वर्गीकरण करने से समस्या का विश्लेषण आसानी से किया जा सकता है। इन संकलित तथ्यों में जिन तथ्यों को वैज्ञानिक उचित व आवश्यक नहीं समझता उनको छोड़ दिया जाता है। अन्त में, वह तथ्यों का संकलन करके, उनका भली भाँति विश्लेषण करता है।

(6) सामान्यीकरण—जब वैज्ञानिक या अनुसन्धानकर्ता तथ्यों का विश्लेषण कर लेता है तो उसे तथ्य चयन में कठिनाई नहीं होती। इससे कार्यवाहक प्राक्कल्पना का प्रमाणित किया जा सकता है। यदि वह पूर्णतया सफल हो गई तो प्रयोगों द्वारा उसकी सत्यता की जाँच की जाती है और अन्त में सामान्य नियम का निरूपण किया जाता है।

वैज्ञानिक पद्धति और मूल्यों का अध्ययन
(The Scientific Method and the Study of Values)

विज्ञान स्वयं सिद्ध प्रमाण (Postulates) एवं धारणाओं (Assumptions) पर आधारित है। मौलिक रूप से ये सम्प्रत्यय (Concepts) विज्ञान के विकास व प्रगति में सहायक हैं परन्तु साथ साथ इनको सिद्ध करना बहुत ही कठिन है या यों कहिए कि मूलतः इनको प्रामाणिक अर्थ में सिद्ध नहीं किया जा सकता। गुडे और हाट्ट ने स्पष्ट किया है कि विज्ञान का सम्बन्ध प्रदर्शन (Demonstration) से है न कि उकसाने (Persuasion) से। प्रतीतीकरण (Persuasion) व्यवस्थित हो सकता है और वैज्ञानिक खोजों (Findings) का उपयोग कर सकता है। प्रतीतीकरण का कार्य यह है कि वह यह मालूम करे कोई बात अच्छी है या बुरी, सही है या गलत। प्रदर्शन (Demonstration) का कार्य केवल इतना ही है कि क्या कोई चीज व्याप्त है? क्या उसका अस्तित्व है? इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि विज्ञान का सम्बन्ध हमारे जीवन के मूल्यों से नहीं है। विज्ञान का सम्बन्ध 'क्या' 'कैसे' और 'क्यों' से है तथा यह पता लगाने का प्रयत्न करता है कि कोई कथन (Statement) झूठा है या सत्य। परन्तु विज्ञान स्वयं कुछ आधारभूत मान्यताओं पर आधारित है जिनके आधार पर वह मूल्यों की प्राप्ति के लिए मार्ग निर्देशन करता है।

गुडे और हाट्ट ने विज्ञान के निम्नलिखित आधार बताए हैं उन्हीं के सन्दर्भ में हम यह स्पष्ट कर सकते हैं कि वैज्ञानिक पद्धति और मूल्यों का क्या सम्बन्ध है और व एक दूसरे को किस प्रकार प्रभावित करते हैं—

(1) हम संसार की जानकारी कर सकते हैं।
(2) हम संसार की जानकारी अपनी इन्द्रियों द्वारा कर सकते हैं।
(3) घटनाओं या दृश्यों में सम्बन्ध (Relationship) है।

विज्ञान के ये आधारभूत पूर्वानुमान (Postulates) प्रमाण योग्य नहीं हैं,

परन्तु सत्य (True) हैं। इस अर्थ में विज्ञान मूल्यात्मक (Evaluat e) दृष्टिकोण पर आधारित है।

विज्ञान का मुख्य कार्य तथ्यो की खोज करना है। वह तथ्यो की खोज के लिए उपकल्पना, धारणा सामग्री सकलन, अवलोकन और परीक्षण का सहारा लेना है। प्रयोगशाला मे एकाग्रचित हो, बार बार प्रयोग करता है और अन्त मे आ आरम्भ उपकल्पना को प्रामाणिक रूप मे सिद्ध करता है। तो क्या इसका अर्थ यह है कि एक वैज्ञानिक का कार्य अनुसधान द्वारा तथ्यो की खोज ही है? क्या वह सामाजिक विभिन्न परिस्थितियो से अपने को बिलकुल अलग कर सकता है? क्या सामाजिक आर्थिक व राजनीतिक मूल्य उसके लिए अर्थहीन हैं? या यो कहिए कि जिन्हे हम 'मूल्य' (Value) की सज्ञा देते हैं, उनका सम्बन्ध विज्ञान से नही है। ये प्रश्न अपने आप मे बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं। वैज्ञानिक अपने को सामाजिक व सास्कृतिक वातावरण से अलग नही कर सकता। यदि वह अपना शोध कार्य भी कर रहा है तो उस पर जीवन के मूल्य (Values of Life) प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डालेंगे ही।

मूल्य कार्य करने के लिए प्रेरित करते हैं। विज्ञान का आधारभूत मूल्य यह है कि न जानने से, जानना अच्छा है (It is better to know than not to know)। इस विचार से एक वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्ति की चाह मे लीन रहता है। ज्ञान का महत्व एक साधारण व्यक्ति और वैज्ञानिक दोनो के लिए है। जैसे-जैसे एक वैज्ञानिक, वैज्ञानिक पद्धति द्वारा ज्ञान के क्षेत्र मे वृद्धि करता है, वह उसका छिपाना नहीं चाहता, बल्कि उसका विस्तार जनता मे भी चाहता है ताकि उसका लाभ आम जनता के हित मे हो।

अत ज्ञान एक मूल्य है। जो तत्व (Factors) ज्ञान के मार्ग मे बाधा पहुँचाते हैं वे अवाछनीय (Undesirable) हैं। वैज्ञानिक को इसके लिए बडा सतर्क रहना पडता है कि कही उसकी भावनाएँ, आवेग इत्यादि उसके उद्देश्य को क्षति पहुँचाने मे योगदान न दें। वह तथ्यो को झूठ के लिए तोड मरोड नही सकता, क्योकि विज्ञान का प्रत्येक कार्य एक खुले प्रदर्शन के समान है। यदि कोई पक्षपातपूर्ण होकर तथ्यो को गलत ढङ्ग से पेश करने की कोशिश करता है तो वह स्वय अपने अनादर या अपमान को निमन्त्रण दे रहा है। किसी प्राचीन सिद्धान्त को यदि वैज्ञानिक चुनौती देता है तो बहुत सोच समझकर ही वह ऐसा करता है तदनन्तर उस सिद्धात को गलत सिद्ध करने के लिए वह बार-बार अनुसधान करता है ताकि वह जनता का तथा अन्य वैज्ञानिको का कोपभाजन न बने। अत पूर्ण ईमानदारी सिर्फ नैतिकता की ही बात नही है, बल्कि आवश्यकता (Necessity) की भी बात है।

इस ज्ञान की परिधि मे विज्ञान को पूर्ण स्वतन्त्रता की आवश्यकता रहती है। यदि किसी प्रकार के बन्धन या प्रशासन द्वारा अडचनें पैदा की जाति हैं, तो

वैज्ञानिक तथ्यों की खोज में अग्रसर नहीं हो सकता। यह ठीक है कि एक वैज्ञानिक अपनी जिज्ञासा के कारण नई चीज को प्राप्त करने की कोशिश करता है, परन्तु मात्र जिज्ञासा ही प्रेरक तत्त्व नहीं है। एक मनुष्य को वैज्ञानिक बनने के लिए कौन प्रेरित करता है? इसका सीधा उत्तर है—मूल्य निर्णय (Value judgements)।

आधुनिक सभ्यता के युग में विज्ञान का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है। किसी युग में दर्शनशास्त्रियों तथा चर्च के नेताओं को बहुत आदर दिया जाता था, तो आज के युग में हमारी सरकारें तथा राजनीतिज्ञ वैज्ञानिकों को बहुत आदर देते हैं। इसका कारण यह है कि इनका मूल्य सामाजिक और राजनीतिक आवश्यकताओं की दृष्टि से बहुत बढ़ गया है। विज्ञान शक्ति व आदर का महत्त्वपूर्ण साधन बन गया है क्योंकि वैज्ञानिक को समाज में प्रतिष्ठा, इज्जत व उच्च स्थान प्राप्त होता है अतः वह इन मूल्यों द्वारा प्रेरित होकर अपने अनुसंधान में सफलता प्राप्त करने की कोशिश करता है।

लेकिन वैज्ञानिक मूल्यों और अन्य मूल्यों में अन्तर है। दोनों में संघर्षमय स्थिति पैदा हो सकती है। हमारे राजनैतिक और सामाजिक मूल्यों के विरुद्ध विज्ञान छानबीन करता है, और कई प्रयोग करता है। वह विद्यमान मूल्य का परीक्षण कर उसकी सत्यता की जाँच करता है। इसका कारण यह है कि हमारे समाज में अनेक झूठी मान्यताएँ समाज के अभिन्न मूल्य बन गई हैं, जैसे—नीग्रो में सिर्फ मजदूर बनने से अधिक बुद्धिमानी नहीं है। विज्ञान इस प्रकार के अन्धविश्वासों को नष्ट करने की कोशिश करता है। वंश सम्बन्धी प्राचीन धारणाओं को जीव-विज्ञान तथा मनोविज्ञान ने गलत सिद्ध किया है। जो प्राचीन धारणाएं जीवन के अभिन्न मूल्य बन गए थे वे वैज्ञानिक तरीकों द्वारा गलत सिद्ध किए जा रहे हैं।

अतः वैज्ञानिक पद्धति द्वारा समस्याओं का समाधान कर, मूल्यों को प्राप्त किया जाता है। विभिन्न मूल्यों के क्या परिणाम होंगे, इसकी जानकारी भी वैज्ञानिक पद्धति द्वारा की जा सकती है। इससे यह लाभ होता है कि हमें कौन से मूल्य स्वीकार और कौन से मूल्य अस्वीकार (Reject) करने चाहिएँ यह स्पष्ट हो जाता है।

वैज्ञानिक पद्धति द्वारा एक ओर उन मूल्यों के परिणामों का पता लग जाता है जिनका सम्बन्ध विज्ञान से है और दूसरी ओर उन मूल्यों के परिणामों का पता भी लगाया जाता है जिनका सम्बन्ध अवैधानिक मूल्यों से है। वैज्ञानिक पद्धति, आधुनिक युग में अधिक प्रचलित होती जा रही है क्योंकि इसमें जो तरीके अपनाए जाते हैं वे तकनीकी व यांत्रिक हैं। जैसे-जैसे नवीन साधनों का विकास हो रहा है, मूल्यों के बारे में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त हो रही है। जो मूल्य मात्र अन्धविश्वासों, भावनाओं और तर्कहीन धारणाओं पर आधारित थे, उनका आधार अब वैज्ञानिक होता जा रहा है। अतः वैज्ञानिक पद्धति ने मूल्यों के सम्बन्ध में रचनात्मक योगदान दिया है। कुछ मूल्य कम महत्त्व के हो सकते हैं और कुछ मूल्य

जीवन से भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो सकते हैं और कोई भी वैज्ञानिक पद्धति उन मूल्यो की सत्यता का परीक्षण नही कर सकती है। यह केवल वैज्ञानिक रूप से उन मूल्यो द्वारा उत्पन्न परिणामो के बारे मे बतला सकती है। अत वैज्ञानिक पद्धति हमे यह बतला सकती है कि उद्देश्यो को किस प्रकार प्राप्त किया जाता है, परन्तु यह नही बतला सकती है कि 'कैसे उद्देश्य' प्राप्त किए जाने चाहिए।

सप्रत्यय या अवधारणाएँ
(Concepts)

किसी भी क्षेत्र मे ज्ञान की प्राप्ति के लिए उसके सप्रत्ययो या अवधारणाओ (Concepts) की गहन जानकारी व पूर्ण स्पष्टता आवश्यक है। इसकी सही जानकारी के अभाव मे, हम गलत निष्कर्षों पर पहुँच सकते है। इनके द्वारा विषय का विकास व उसमे अनुसधान सम्भव हो जाता है। सप्रत्ययों द्वारा ही उपकल्पनाओ का परीक्षण किया जाता है व सिद्धान्तो का निर्माण भी। अत इसका अध्ययन व ज्ञान अनुसधानकर्त्ता को पहले ही कर लेना चाहिये ताकि वह रास्ते मे आने वाली बाधाओ व अस्पष्टताओ से बचा रहे। अस्पष्ट विचारो से अनुसधान जानकारी अपर्याप्त होगी।[1]

सप्रत्यय की परिभाषाएं और विशेषताएं
(Definitions and Characteristics of Concept)

सप्रत्यय या अवधारणा को विभिन्न शब्दो द्वारा परिभाषित किया गया है। पी० वी० यग के अनुसार, 'सामाजिक विश्लेषण की प्रक्रिया मे अन्य तथ्यो से अलग किए गए तथ्यो के एक नए वर्ग को एक सप्रत्यय का नाम दिया जाता है।''[2] दी कान्साइज ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार, अवधारणा (Concept) वस्तुओ के एक वर्ग का विचार अथवा सामान्य विचार होता है।'' मिचेल के शब्दो मे, 'अवधारणा एक विवरणात्मक गुण या सम्बन्ध की ओर सकेत करने वाला एक पद है।''[3] श्रेग, क्लेरेंस (Scharge, Clarence) के मतानुसार अवधारणाएँ वे शब्द या सकेत होते हैं जो सिद्धान्त की शब्दावली प्रदान करते हैं और इसकी विषय वस्तु का ज्ञान करवाते हैं।' गुडे और हाट्ट के अनुसार, 'अवधारणाएँ अमूर्तिकरण होती है और यथार्थता के केवल विशेष पहलुओ का प्रतिनिधित्व करती है।'[4]

1 'Vague ideas will lead to inadequate and uninterpretable research findings '
—*Lobovitz and Hagedous* Introduction to Social Research p 16

2 ' Each new class of data that has been isolated from the others in the process of social analysis is given a name, a label a concept ''
—*Paul V Young* op cit, p 101

3 ' Concept is a term referring to a descriptive property or relation '

4 ' Concepts are abstractions and represent only certain aspects of reality ''
—*Goode & Hatt*

उपर्युक्त विभिन्न परिभाषाओ से सप्रत्यय अथवा अवधारणा की निम्नलिखित प्रमुख विशेषताओ का सकेत होता है—

(1) अवधारणा, तथ्यो के समूह या वर्ग के सम्बन्ध मे जानकारी प्रदान करती है।

(2) यह अमूर्तिकरण या सामान्यीकरण होती है।

(3) यह स्वय घटना नही होती, बल्कि घटनाक्रम को प्रगट करती है। "यह प्रत्यक्ष ज्ञान तथा विविध अनुभवो द्वारा उत्पन्न की गई तार्किक रचना होती है।"[1]

(4) यह वास्तविकताओ व प्राप्त तथ्यो पर आधारित विचार होता है। इसमे कोरी कल्पना व आदर्श को स्थान नही है क्योकि विचार स्पष्टीकरण मे ये बाधा पहुँचाते हैं।

(5) विभिन्न विज्ञानो मे प्रयुक्त किए जाने से अवधारणाओं के अर्थ भी विभिन्न होते हैं। वैज्ञानिको द्वारा काम मे लाई गई अवधारणाएँ सामान्यतया जटिल होती हैं तथा विशेष अर्थ व परिस्थिति म उपयुक्त होती हैं जिन्हें साधारण व्यक्ति नही समझ सकता।

(6) सप्रत्यय (Concept) परिवर्तनशील हैं। समय की आवश्यकता, नए तथ्यो का ज्ञान, साधन व यत्रो मे आधुनिक विकास, बुद्धिजीवी सम्मेलन इत्यादि बातें ऐसी हैं जो समयानुकूल इनके अर्थ को बदलते रहते हैं।

(7) सप्रत्यय को चर' (Variables) तब कहा जाता है, जब हम इसको उसकी विशेषताओ के आधार पर वर्गीकृत करने हेतु प्रयोग मे लाते हैं। चर (Variable) अवधारणा की माप्य विमिति है।[2] उदाहरण के लिए आदमियो की ऊँचाई या आदमी व औरत मे जैविक भेद।

(8) अवधारणाएँ, वास्तविकता को स्पष्ट करने के लिए वैज्ञानिक द्वारा प्रयोग में लाई जाती हैं। परन्तु कई बार ऐसा भी होता है कि वे वास्तविकता के उन पहलुओ को उपेक्षित करदें, जिनकी वैज्ञानिक जानकारी चाहता है। यह तभी होता है जब जल्दी मे, बिना सोचे-समझे ऐसे सप्रत्ययो का त्रुटिपूर्ण चयन कर लिया जाता है। अत वैज्ञानिक को चाहिये कि वह ऐसी परिस्थितियो से बचने का प्रयत्न करे। उसे प्रारम्भ मे ऐसे सप्रत्ययो का चयन करना चाहिए, जो सदेहपूर्ण, अस्पष्ट व असगत न हो।

(9) मिचेल ने अवधारणाओ (Concepts) के चुनाव की तीन कसौटिया बतलाई है—

(i) सूक्ष्मता और परिशुद्धता (Precision)

1 " Concepts are logical constructs created from sense, impressions, percepts, or even fairly complex experience

2 "A variable is a measurable dimension of a concept

—*Lobovitz and Hagedorn*

(ii) अनुभवाश्रित आधार (Empirical anchorage)

(iii) प्रस्तुत समस्या को समझ सकने योग्य सिद्धान्तो के निर्माण मे लाभप्रद सिद्ध होने की क्षमता।

(10) अवधारणाओ से उत्पन्न सदेह व अस्पष्टताओ को दूर करने के लिए उन्हे उचित रूप मे परिभाषित किया जाना चाहिए।

(11) गुडे और हाट्ट के अनुसार ये समस्त मानव सम्पर्क तथा विचार की आधारशिला है।[1]

(12) सप्रत्यय, घटनाओ के वर्गों का विभाजन तथा घटनाओ के वर्णन और विश्लेषण मे सहायक होते हैं।

(13) सप्रत्ययो को मापा जा सकता है। वह जितना अधिक अमूर्त (Abstract) होगा उसे उतना ही कठिनाई से मापा जायेगा और जितना कम अमूर्त होगा उतना ही सरलता से मापा जा सकेगा।

(14) इसके अर्थ के सम्बन्ध मे वैज्ञानिक एकमत नही हैं, अत स्पष्टता को दूर करने के लिए अनुसधानकर्ता नए-नए प्रयोग करेगा जिससे ज्ञान की उन्नति होती है।

(15) यह स्वय मे सवेदनशील व भावुक नही होता। जिस समय अवलोकन या व्याख्या का कार्य किया जाता है तो यह प्रभावित करता है। जब तक इस सम्बन्ध मे कोई विचार ही न हो तो आशा करना कि अध्ययन के साधन ही उसे सुलझायेंगे, व्यर्थ है।

(16) अनुसधानकर्त्ता को अवधारणीय यन्त्रो को सीखना चाहिए ताकि यदि अवधारणा मे कोई दोष आ गया हो तो उसके सहारे दूर किया जा सकता है।

सप्रत्ययो के उदाहरण
(Examples of Concepts)

सप्रत्ययो के अनेक उदाहरण समाज विज्ञान, राजनीति विज्ञान व अन्य साहित्यो मे मिलते हैं। कुछ अत्यन्त प्रचलित ये हैं—शक्ति (Power), प्रभाव (Influence), सत्ता (Authority) नौकरशाही (Bureaucracy), सामाजिक सरचना (Social structure), प्राथमिक समूह (Primary group), सामाजिक वर्ग (Social class), समिति (Committee) सामाजिक नियन्त्रण (Social control), स्तर (Status), इत्यादि।

सामाजिक विज्ञानो और प्राकृतिक विज्ञानो मे काम आने वाले सप्रत्ययो मे पर्याप्त भेद है। सामाजिक सप्रत्यय काफी लचीले और बहुवर्शीय होते हैं, जबकि प्राकृतिक विज्ञानो मे सप्रत्यय काफी और समान अर्थ को प्रकट करने वाले होते हैं।

1 " They are the foundation of all human communication and thought "
—*Goode & Hatt*

वैज्ञानिक संसूचना (Communication) में अस्पष्टता की कमी के कई कारण बतलाए गए हैं जो गुडे तथा हाट्ट के अनुसार इस प्रकार है—

(1) सम्प्रत्यय का विकास भाजित (Shared) अनुभव होता है। शाब्दिक (Verbal) परिभाषाओ से हम जर्मन अनुभव को नही पहुँच सकते और इसी प्रकार अमेरिकन अनुभव को अन्य देशो मे नही पहुँचा सकते। वैज्ञानिक शब्दो का अर्थ एक साधारण व्यक्ति तो समझ ही नही सकता। उसको टाईट्रेशन (Titration) का अर्थ जानने के लिए कई प्रारम्भिक तत्त्वों का ज्ञान रसायन शास्त्र मे करना होगा। फिर कुछ शब्द जो भौतिक विज्ञान व रसायन शास्त्र के सामाजिक विज्ञानो मे काम में लाए जा रहे हैं। इससे और भी सभ्रम (Confusion) बढता है जब कोई कला का विद्यार्थी उनको अपनी पुस्तकों मे पढता है। अत इनको सक्रिया (Operation) मे भाग लेने से ही सीखा जा सकता है।

(2) विभिन्न पद (Terms) उसी घटना का उल्लेख कर सकते हैं अत अनुसधानकर्त्ता को प्रतिवेदन लिखते समय बडा सावधान व सतर्क होना चाहिये कि वे परस्पर व्याप्त (Overlap) न हो जायें।

(3) एक शब्द का तत्काल अनुभविक निर्देश्य (Empirical referent) नही भी हो सकता है।

(4) सम्प्रत्ययो के अर्थ बदल सकते हैं। उदाहरणार्थ स्तर (Status) के लिए हम पद या ओहदा (Rank), भूमिका (Role), स्थिति (Position) इत्यादि काम मे लाते हैं। राजनीति विज्ञान मे 50 वर्ष पहले किया गया शब्दो का प्रयोग अब काफी बदल गया है। समाजशास्त्र मे नवीन सामाजिक परिस्थितियो मे प्राचीन प्रचलित शब्दो का प्रयोग अब नये अर्थों मे किया जा रहा है, उन्हें काफी Mould कर दिया गया है। फिर भी स्थिति कोई सकटमय नही है। समस्याएं उठ खडी होती हैं और जैसे-जैसे विज्ञान विकसित होता है, ये अवधारणीय कठिनाई गायब होती नजर आ रही हैं। आजकल परिचालन परिभाषा (Operational definition) किसी घटना को परिभाषित करने मे काम मे लाई जाती है। परिचालन (Operational) परिभाषायें, सम्प्रत्यय को व्यावहारिक सचार मे जोडती है जो कि उपकल्पनाओ के परीक्षण व सिद्धान्त रचना के लिए बहुत आवश्यक है। सम्प्रत्यय बिल्कुल स्पष्ट होने चाहिएं ताकि उपकल्पनाओ के परीक्षण मे व सिद्धांतो के सरचना मे काम मे आ सके।

उपकल्पना : अर्थ एव परिभाषाएं
(Hypothesis Meaning and Definitions)

शोध विषय के बारे मे प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् शोधकर्त्ता अपने मस्तिष्क मे एक ऐसा सिद्धात बना लेता है जिसके बारे मे वह कल्पना करता है कि यह सिद्धात शायद उसके अनुसधान का आधार सिद्ध हो सकता है। यद्यपि एसे काल्पनिक निष्कर्ष को वह अन्तिम मानकर नही चलता तथापि उनकी प्रामाणिकता

अपने अनुभव तथा वास्तविक तथ्यों द्वारा सिद्ध की कोशिश करता है। जार्ज कैसवेल (George Caswell) के अनुसार, उपकल्पना अध्ययन विषय से सम्बद्ध अस्थाई तथा काल्पनिक निष्कर्ष है।

लुण्डबर्ग के शब्दों में, "उपकल्पना एक सामयिक तथा कामचलाऊ सामान्यीकरण अथवा निष्कर्ष है जिसकी सत्यता की परीक्षा करना शेष रहता है। अपने बिल्कुल प्रारम्भिक चरणों में, उपकल्पना कोई मनगढ़न्त, अनुमान, कल्पनापूर्ण विचार अथवा सहज्ञान, इत्यादि कुछ भी हो सकता है जो क्रिया अथवा अनुसंधान का आधार बन जाता है।"[1]

एमोरी एस० बोगार्डस के मतानुसार "परीक्षित किए जाने वाले विचार को ही उपकल्पना कहते हैं।"[2] गुडे तथा हाट्ट के अनुसार, "उपकल्पना एक ऐसी मान्यता है जिसकी सत्यता सिद्ध करने के लिए उसका परीक्षण किया जा सकता है।"[3]

गुडे तथा स्केट्स के मत में "एक उपकल्पना अवलोकन किए गए तथ्यों अथवा दिशाओं का विवेचन करने तथा अध्ययन को आगे मार्गदर्शित करने के लिए निर्मित तथा अस्थाई रूप में ग्रहण की गई बुद्धिमत्तापूर्ण कल्पना अथवा निष्कर्ष होते हैं।"[4]

बर्नार्ड तथा फिलिप्स के शब्दों में, "वे उपकल्पना (Hypothesis) किसी घटना में विद्यमान सम्बन्धों के विषय में अस्थाई कथन हैं। उपकल्पनाओं को 'प्रकृति से पूछे गए प्रश्न' कहा जाता है और वे वैज्ञानिक अनुसन्धान में प्राथमिक महत्त्व के यन्त्र होते हैं।"[5]

1 "A hypothesis is a tentative generalization, the validity of which remains to be tested In its most elementary stages, the hypothesis may be any hunch, guess, imaginative idea or intuition whatsoever which becomes the basis of action of investigation"

—*G A Lundberg* Social Research, p 9

2 "A hypothesis is a proposition to be tested "

—*Emory S , Bogardus* Sociology, p 551

3 'It (hypothesis) is a proposition which can be put to test to determine its validity '.

—*Goode & Hatt*

4 "A hypothesis is a shrewd guess or inference that is formulated and provisionally adopted to explain observed facts or conditions and to guide in further investigation "

—*Carter V Goode & Scates* Methods of Research, p 90

5 "Tentative statements about relationships among phenomena hypotheses have been called 'questions put to nature' and are fundamental in scientific research"

—*Philips, Bernard*

पी० वी० यंग के अनुसार, 'एक कार्यवाहक उपकल्पना एक कार्यवाहक केन्द्रीय विचार है जो उपयोगी अध्ययन का आधार बन जाता है।"[1]

वेबस्टर ने अपने 'अंग्रेजी भाषा के नये अन्तर्राष्ट्रीय शब्द कोष' में लिखा है, "उपकल्पना एक विचार, दशा या सिद्धांत होता है, जो सम्भवतः बिना किसी विश्वास के साथ मान लिया जाता है ताकि उससे तार्किक परिणाम निकाले जा सकें और ज्ञात अथवा निर्धारित किये जाने वाले तथ्यों की सहायता से इस विचार की मान्यता की जाँच की जा सके।'

उपकल्पना की विशेषताएँ
(Characteristics of Hypothesis)

प्रस्तुत परिभाषाओं के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि उपकल्पना एक पूर्वविचार, प्राथमिक कल्पना, अमूर्तीकरण, निष्कर्ष अथवा सामान्यीकरण होता है जो सामाजिक तथ्यों की खोज करने के लिये तथा उनके विषय में विश्वसनीय ज्ञान प्रदान करता है

(1) उपकल्पना मार्गदर्शन के लिए उपयोगी है। इसके बिना अनुसन्धानकर्ता विषय से कोसों दूर भटक जायेगा।

(2) यह तथ्यों पर आधारित अस्थाई हल है।

(3) उपकल्पना का स्पष्ट होना आवश्यक है तो अस्पष्टता, वैज्ञानिक ज्ञान व प्रकृति के प्रतिकूल है, अतः यदि अस्पष्ट है तो उपकल्पना अवैज्ञानिक व अनुपयोगी होगी।

(4) विशिष्टता इसका लक्षण है। यदि यह सामान्य हुई तो निष्कर्ष पर पहुँचना सम्भव नहीं है। अतः यह अध्ययन विषय के किसी विशेष पहलू में संबंधित होनी चाहिये अन्यथा सत्यता की जाँच करना मुश्किल हो जायेगा।

(5) उपलब्ध पद्धतियों और साधनों सम्बन्धित होनी चाहियें, अन्यथा यह उपयोगी सिद्ध न होगी। गुडे तथा हाट्ट (Goode & Hatt) के मत में, "जो सिद्धान्तशास्त्री यह भी नहीं जानता कि उसकी उपकल्पना की परीक्षा के लिए कौन कौन-सी पद्धतियाँ उपलब्ध हैं, वह व्यावहारिक प्रश्नों के निर्माण में असफल रहता है।'

(6) जिसमें मूल्य या आदर्श निर्णय का पुट न हो, वही उपकल्पना वैज्ञानिक व सार्थक सिद्ध हो सकती है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि अनुसन्धानकर्त्ता को आदर्श प्रस्तुत करने का प्रयत्न ही नहीं करना चाहिए बल्कि आशय तो यह है कि ऐसे आदर्शों जिनका परीक्षण व अवलोकन किया जा सके और जो परीक्षण करने पर सही उतरते हों।

1 " a provisional central idea which becomes the basis for fruitful investigation is known as a working hypothesis"

—*Pauline V Young* Scientific Social Surveys and Research, p 96.

(7) उपकल्पना प्राय अतिशयोक्तिपूर्ण भाषा मे व्यक्त नही होनी चाहिये। उसमे प्रयोगसिद्धता का गुण होना चाहिये।

(8) यह समस्या के प्रमुख सिद्धात से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धी होनी चाहिये।

(9) उपकल्पना, पूर्व-निर्मित सिद्धातो से सम्बन्धित होनी चाहिये। गुडे तथा हाट्ट के अनुसार, "एक विज्ञान तभी सचयी वन सकता है यदि वह उपलब्ध तथ्यो तथा सिद्धात समूह पर पूर्णतया लागू होता है।"

(10) उचित उपकल्पना द्वारा इकट्ठे किये जाने वाले तथ्य उपयोगी होते हैं।

उपकल्पना-निर्माण की कठिनाइयाँ

उपयोगी उपकल्पना निर्माण मे मुख्य कठिनाइया निम्न उपस्थित होती हैं—

(1) स्पष्ट सैद्धान्तिक ज्ञान का अभाव।

(2) सैद्धान्तिक ज्ञान को उपयोग मे लाने मे कठिनाई क्योकि यह अमूर्त होना है।

(3) अनुसन्धान की नई प्रणालियो व पद्धतियो के सम्बन्ध मे अज्ञानता।

(4) उपकल्पना के आधार मे वैज्ञानिकता व तार्किकता का सामान्यत अभाव, क्योकि सामाजिक विज्ञानो के अनुसन्धान विषयो की प्रकृति मे लचीलापन है।

उपकल्पना के स्रोत
(Sources of Hypothesis)

उपकल्पना के सामान्यत दो प्रकार के स्रोत हैं— (i) व्यक्तिगत स्रोत (Individual Source)—इसके अन्तर्गत, अनुसधानकर्त्ता की स्वय की विचारधारा, कल्पना मनोभावना, दृष्टिकोण तथा अन्तर्दृष्टि आते हैं।

(ii) बाह्य स्रोत (External Source)—इसमे दर्शन, समाज-शास्त्र, मानव शास्त्र, साहित्य, काल्पनिक विचार इत्यादि जिनका सम्बन्ध मनुष्य व उनके विभिन्न पहलुओ से है।

गुडे तथा हाट्ट के अनुसार, उपकल्पना निर्माण के निम्न प्रमुख स्रोत माने गए हैं—

(1) सामान्य सस्कृति (General culture)

(2) वैज्ञानिक सिद्धान्त (Scientific theories)

(3) समरूपताएँ (Analogies)

(4) व्यक्तिगत अनुभव (Personal idiosyncratic experiences)

(1) सामान्य सस्कृति (General Culture)—सस्कृति, उपकल्पना निर्माण के लिए विभिन्न स्रोत प्रदान करती है। सस्कृति, समाज मे रहने वाले लोगो के विचार तथा दृष्टिकोण पर विस्तृत प्रभाव डालती है। कोई इसके प्रभाव से बच नही सकता। प्रत्येक देश की सस्कृति अलग अलग होती है, अत उसकी छाप

उपकल्पना पर अवश्य पड़ेगी। भारतीय संस्कृति में दार्शनिकता व आदर्शवाद प्रधान है, अतः उपकल्पना पर उसका प्रभाव अवश्य पड़ेगा तथा उस विषय पर उपकल्पना निर्माण में बड़ी सहायता मिलती है। नैतिक आदर्शों के कारण हमारे यहाँ पर संयुक्त परिवार प्रथा पर अधिक जोर दिया जाता है जबकि अमेरिका की संस्कृति में भौतिकवाद की प्रधानता है। अतः एकाकी परिवार को महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

संस्कृति लक्षणों (Cultural traits) के अन्तर्गत लोक-विश्वास, लोक-साहित्य, लोककथाएँ, लोकगीत, लोक-कहावतें तथा अन्य मान्यताओं पर जोर दिया जाता है जो उपकल्पना को प्रभावित करते हैं। समय के साथ साथ संस्कृति में भी परिवर्तन पाया जाता है। इसके साथ-साथ बाह्य संस्कृतियाँ भी एक दूसरे को प्रभावित करती हैं। अंग्रेजों के भारत में शासन करने से हमारी संस्कृति पर काफी प्रभाव पड़ा है और हम उनकी संस्कृति को किसी न किसी रूप में अपनाने की कोशिश कर रहे हैं। जब ये जीवन के अंग बन जाते हैं तब वे उपकल्पना के निर्माण में प्रभावकारी होते हैं।

(2) वैज्ञानिक सिद्धान्त (Scientific Theories)—कई उपकल्पनाओं की स्रोत स्वयं विज्ञान है। विज्ञान में अनेक विषयों से सम्बन्धित सामान्यीकरण प्रचलित होते हैं, जिन्हें उपकल्पना का स्रोत माना जा सकता है। इन प्रचलित सिद्धान्तों का पुनः निरीक्षण किया जाता है, जिससे उनमें यदि कोई दोष हो तो दूर किए जा सकें। इससे सामाजिक अध्ययन को नवीन दिशा मिलती है। नई उपकल्पनाओं का जन्म होता है।

(3) समरूपताएँ (Analogies)—वुल्फ के शब्दों में, "समरूपता उपकल्पना निर्माण तथा घटना में किसी कामचलाऊ नियम की खोज में अत्यन्त उपयोगी पथप्रदर्शक है।"[1] कभी-कभी समरूपताएँ, उपकल्पना के निर्माण में सहयोग प्रदान करती हैं। ये समरूपताएँ मनुष्य और पशुओं में भी देखी जा सकती हैं। प्लेटो ने तो अपनी पुस्तक 'रिपब्लिक' (Republic) में ऐसी उपमाओं (Analogies) का बहुत प्रयोग किया है। इसी प्रकार 'परिस्थिति विज्ञान' (Ecology) के अन्तर्गत समान क्षेत्रों तथा परिस्थितियों में निवास करने वाले व्यक्तियों में सामान्य क्रियाएँ तथा रूप देखने को मिलते हैं। पौधों में नर-मादा का यौन व्यवहार स्त्री पुरुषों के यौन-सम्बन्धों को बतलाने की ओर संकेत करता है।

(4) व्यक्तिगत अनुभव (Personal Experiences)—अनुसन्धानकर्ता का स्वयं का अनुभव उपकल्पना निर्माण का स्रोत बन जाता है। यह उसके समस्या के प्रति दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। जीवन में घटित होने वाली घटनाओं से मनुष्य को व्यक्तिगत अनुभव होता है—अनुभव अच्छा या बुरा मधुर अथवा कड़ुवा भी हो सकता है, परन्तु उससे बहुत कुछ सीखकर वह सम्बन्धित अध्ययन की

1 "Analogy is a very fruitful guide to the formation of hypothesis or tentative orders of phenomena." —A. Wolfe.

उपकल्पना निर्माण मे उसका उपयोग करता है। उदाहरणार्थ न्यूटन ने पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति सिद्धान्त तथा डार्विन को 'अस्तित्व के लिए संघर्ष (Struggle for existence) के सिद्धान्त पर पहुँचने मे व्यक्तिगत अनुभवो के आधार पर उपकल्पनाएँ बनानी पडी थी। आजकल नैतिकता मे गिरावट, छात्रो मे बढती हुई अनुशासनहीनता तथा असन्तोष, देश मे व्यापक भ्रष्टाचार, प्रशासन मे ईमानदारी का अभाव, कार्य मे सुस्ती, राजनीतिक दलो द्वारा विद्यार्थियो का राजनीतिक उद्देश्यो के लिए यन्त्र के रूप मे दुरुपयोग, जनता का प्रजातन्त्र मे विश्वास या अविश्वास इत्यादि मे व्यक्तिगत अनुभवो के आधार पर अनेक उपकल्पनाओ का निर्माण किया जा सकता है।

उपकल्पनाओं के प्रकार
(Types of Hypotheses)

सामान्यत उपकल्पनाओ के दो प्रकार माने गए हैं—

(i) अशुद्ध तथा मौलिक—यह वर्णनात्मक होती है। यह किसी सिद्धान्त की स्थापना नही करती बल्कि पिछले परिणामो पर बल देती है।

(ii) विशुद्ध—यह बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। जटिल तथ्यो को सम्बन्धित उपकल्पनाओ के रूप मे देखा जा सकता है।

गुडे तथा हाट्ट के अनुसार, इन्हे इन मुख्य श्रेणियो मे बाँटा जा सकता है—

(क) अनुभवात्मक समानताओ से सम्बन्धित कथन—हमारे दैनिक जीवन मे विद्यमान मान्यताओ, विचारो व मानवीय व्यवहार पर आधारित हैं। इसमें अनेक कहावतें तथा किस्से भी शामिल होते हैं, जिनका लोगो ने अनुभव किया है

(ख) जटिल आदर्श रूप से सम्बन्धित कथन—इसके अन्तर्गत तथ्यो को सकलित किया जाता है तथा बाद मे तर्कपूर्ण क्रम को आदर्श मानकर सामान्यीकरण पर पहुँचा जाता है। फिर इसी को आधार मानकर अन्य तथ्यो की जाँच द्वारा उनकी सत्यता सिद्ध की जाती है।

उपकल्पना का महत्त्व
(Importance of Hypothesis)

आधुनिक विज्ञानो मे उपकल्पना का अपना अद्वितीय स्थान है। इसे विज्ञान इसीलिए अस्वीकार नही करते कि यह विशिष्ट सविधान के अभिसमय के समान है बल्कि इसकी उपयोगिता से बाध्य होकर इसे न केवल स्वीकार करते हैं वरन् सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान करते हैं। जो भी विज्ञान, चाहे वह प्राकृतिक हो या सामाजिक, जो अपने को वैज्ञानिक होने का दावा करता है, उपकल्पना के सहारे के बिना उसका अस्तित्व ही सम्भव नही है। जहोदा तथा कुक के अनुसार, 'उपकल्पनाओ का निर्माण तथा प्रामाणिक अध्ययन का उद्देश्य है।'[1] अत मार्गदर्शन के लिए उपकल्पना समुद्रो मे जहाजो को रास्ता दिखाने वाले 'प्रकाश-स्तम्भ'

1 "The formulation and verification of hypothesis is a goal of scientific inquiry"

—*Jahoda and Cook* Research Methods in Social Relations, p 39.

जो अध्ययनकर्त्ता प्रकाशित या अप्रकाशित प्रलेखो, पत्र, डायरी, पाण्डुलिपि इत्यादि से प्राप्त करता है। श्रीमती यग के शब्दो मे, "द्वितीयक तथ्य सामग्री वह है जिसे मौलिक स्रोता से एक बार प्राप्त करने के बाद एकत्र किया गया है तथा जिसका प्रकाशित अधिकारी (Promulgating authority) उनसे भिन्न है जिसने प्रथम स्तर पर सामग्री इकट्ठी करने को नियन्त्रित किया था।"[1]

द्वितीयक तथ्य-सामग्री के दो मुख्य स्रोत हैं—

(i) व्यक्तिगत प्रलेख (Personal documents)—जिनमे व्यक्तिगत डायरियाँ, पत्रो तथा संस्मरणो को सम्मिलित किया जाता है, एव

(ii) सार्वजनिक प्रलेख (Public documents)—जिनमे पुस्तकें, प्रतिवेदन रिकार्ड रिकार्डालय इत्यादि सम्मिलित किये जाते हैं।

सावधानियाँ (Precautions)

(i) जिस सामग्री का संकलन किया जा रहा है वह वर्तमान अध्ययन के लिये उपयोगी है या नहीं इसका अनुसन्धानकर्त्ता को पूर्ण ध्यान होना चाहिये।

(ii) वह जिस द्वितीयक सामग्री को एकत्र कर रहा है वह उसके अध्ययन विषय के लिए पर्याप्त होनी चाहिए।

(iii) उसे यह भी देखना चाहिए कि इकाइयाँ सजातीय है या नहीं।

तथ्य-सामग्री के स्रोत

(Sources of Facts)

तथ्य-सामग्री को एकत्र करने के लिए अनेक स्रोतो को प्रयोगो मे लाया जाता है। यह अनुसधानकर्त्ता पर निर्भर करता है कि वह किन किन स्रोतो से अपने अध्ययन से सम्बन्धित तथ्य-सामग्री का एकत्र करना चाहता है यह अनुसधान की आवश्यकता पर निर्भर करता है कि कौन-कौन से स्रोत आवश्यक हैं या अनावश्यक संगत हैं या असगत। उसे इस बात पर अवश्य ध्यान देना चाहिए कि सामग्री-स्रोत विश्वसनीय तथा सुलभ होने चाहिए ताकि वह अन्धेरे मे न भटकता रहे।

विभिन्न विद्वानो और लेखको ने तथ्य सामग्री के इन स्रोतो को दो भागो मे विभाजित किया है। श्रीमती यग के अनुसार 'सामान्यत स्रोतो का प्रलेखीय और क्षेत्रीय स्रोतो मे विभाजित किया जाता है।'[2] प्रलेखीय स्रोतो ■ प्रकाशित और अप्रकाशित प्रलेख प्रतिवेदन सांख्यिकी, पाण्डुलिपि पत्र, डायरियाँ इत्यादि सम्मिलित हैं। क्षेत्रीय स्रोत म उन जीवित व्यक्तियो को सम्मिलित किया जाता

1 Secondary data as those compiled from original sources and of which the promulgating authority is different from that which controlled the collection of data at first hand —*Pauline V Young*

2 Generally sources are divided into documentary and field sources " —*Pauline V Young* Scientific Social Surveys and Research, p 136

है जिनको सामाजिक परिस्थितियो के बारे म ज्ञान व उनमे हुए परिवर्तन की जानकारी हो।

लुण्डबर्ग (Lundberg) के अनुसार तथ्य सामग्री के दो प्रमुख स्रोत निम्न हैं—

(i) ऐतिहासिक स्रोत (Historical sources)—जिनमे प्रलेख, शिलालेख, खुदाई से प्राप्त वस्तुएँ एवम् भूतत्वीय स्तरें इत्यादि सम्मिलित हैं।

(ii) क्षेत्रीय स्रोत (Field sources)— जिनमे जीवित व्यक्तियो से प्राप्त सूचनाएँ एव क्रियाशील व्यवहारो का प्रत्यक्ष अवलोकन शामिल है।

प्रोफेसर बेगले (Begley) के अनुसार दो प्रमुख स्रोत ये हैं—

(i) प्राथमिक स्रोत जिनक अन्तर्गत समस्या से सम्बन्धित व्यक्ति व प्रत्यक्ष निरीक्षण आते हैं।

(b) द्वितीयक स्रोत, जिनके अन्तर्गत सरकारी व गैर सरकारी सस्थाओ प्रकाशित या अप्रकाशित प्रलेखो आदि को सम्मिलित किया जाता है।

अत स्पष्ट है कि तथ्य सामग्री के प्रमुख स्रोत दो ही हैं—प्राथमिक एव द्वितीयक।

प्राथमिक स्रोत
(Primary Sources)

प्राथमिक स्रोत वे हैं जिनसे अनुसधानकर्त्ता स्वय प्रथम बार तथ्यो अथवा विभिन्न सूचनाओ को सकलित करता है। वह इन तथ्यो का सकलन अपनी आवश्यकतानुसार करता है। तथ्यो क सकलन मे उसका व्यक्तिगत लगाव (Personal attachment) भी काफी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करना है। जिस सम्बन्ध में तथ्यो को सकलन करना है उनका भलीभाँति निरीक्षण करके वह व्यर्थ को छोड उपयोगी सामग्री को प्राप्त करने की कोशिश करता है। पीटर एच मैन के शब्दो मे 'प्राथमिक स्रोत हमे प्रथम स्तर पर सकलित की गई तथ्य सामग्री प्रदान करते हैं अर्थात् जिन लोगो ने उनको इकट्ठा किया है उनके द्वारा प्रस्तुत की गई सामग्री के य मौलिक स्वरूप हैं।[1]

प्राथमिक स्रोतो के प्रकार
(Types of Primary Sources)

श्रीमती यग (Pauline V Young) क अनुसार प्राथमिक स्रोतो के अन्तर्गत प्रत्यक्ष निरीक्षण, साक्षात्कार अनुसूची, प्रश्नावली तथा अन्य व्यक्ति आदि आते हैं। इन्हे दो भागो मे विभाजित किया जा सकता है—

1 Primary sources provide data gathered at first hand that is to say they are original sets of data produced by the people who collected them

—*Peter H Mann*

(1) प्रत्यक्ष स्रोत (Direct Sources), तथा

(2) अप्रत्यक्ष स्रोत (Indirect Sources)

(1) प्रत्यक्ष स्रोत (Direct Sources)—अनुसंधानकर्त्ता स्वयं अध्ययन-स्थल पर जाकर अपनी समस्या से सम्बन्धित घटनाओं तथा व्यवहारों का निरीक्षण करता है। वह समुदाय के विभिन्न लोगों से सम्पर्क स्थापित कर उनसे सामग्री प्राप्त करता है तथा घटनास्थल का स्वयं अपनी आँखों से निरीक्षण करता है। वह सामाजिक घटनाओं और कार्यक्रमों में स्वयं कहाँ तक भाग ले सकता है या केवल दर्शक के रूप में बना रहता है यह अवलोकन के विभिन्न प्रकारों पर निर्भर करता है।

निरीक्षण को हम निम्नलिखित भागों में बाँट सकते हैं—

(i) सहभागी निरीक्षण (Participant Observation)—इसमें निरीक्षण-कर्त्ता समूह में अपनत्व का अनुभव करता है। उसकी भावनाएँ व दृष्टिकोण, समूह की भावनाओं व दृष्टिकोण से मिल जाते हैं। इसका लाभ यह है कि वह समूह के रीति रिवाजों व व्यवहारों को बहुत नजदीक से समझ पाता है। वह केवल दर्शक मात्र ही नहीं रहता बल्कि एक सक्रिय निरीक्षणकर्त्ता बन जाता है। समुदाय के लोगों को पता ही नहीं चलता कि निरीक्षणकर्त्ता उनके व्यवहार रीति रिवाजों आदि का अध्ययन कर रहा है अतः उसके अध्ययन में उन लोगों के स्वाभाविक व्यवहार के कारण पक्षपात दोष नहीं आ सकता।

(ii) असहभागी निरीक्षण (Non-participant Observation)—इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्त्ता स्वयं सक्रिय भाग न लेकर तटस्थ भाव से कार्यक्रमों का निरीक्षण करता है, वह समूह के कार्यक्रमों, व्यवहारों आदि से पृथक् रहकर ही निरीक्षण करता है।

(iii) अर्द्ध-सहभागी निरीक्षण (Quasi participant Observation)—इस प्रकार के निरीक्षण में सहभागी व असहभागी दोनों निरीक्षणों के गुण पाए जाते हैं। इसमें अनुसन्धानकर्त्ता कुछ कार्यों में भाग लेता है, परन्तु अनेक कार्यों में तटस्थ निरीक्षणकर्त्ता के रूप में समूह का अध्ययन करता है।

उपर्युक्त निरीक्षण के प्रकारों पर ध्यान देने से पता चलता है कि अनुसन्धान-कर्त्ता जो सामग्री प्राप्त करता है उसमें पक्षपात या मिथ्या झुकाव की गुंजाइश कम रहती है।

प्रत्यक्ष स्रोत में निरीक्षण के अतिरिक्त अनुसंधानकर्त्ता कभी कभी समस्याओं के बारे में जानकारी समुदाय के लोगों से सीधी बातचीत द्वारा भी प्राप्त करता है। इसके दो तरीके अपनाये जाते हैं—(क) साक्षात्कार (Interviews) तथा (ख) अनुसूचियाँ (Schedules)।

(क) साक्षात्कार (Interviews)—प्राथमिक सूचना प्राप्त करने का यह प्रमुख स्रोत है। इसके अंतर्गत, अनुसन्धानकर्त्ता स्वयं स्थानीय लोगों से सम्पर्क स्थापित करके बातचीत द्वारा सम्बन्धित तथ्यों को प्राप्त करता है। चूँकि स्थानीय

लोगो का स्थानीय समस्याओ से घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है तथा समस्या से सम्बन्धित अन्य स्रोतो का भी ज्ञान होता है, अतः उनसे निजी स्तर पर वार्तालाप द्वारा विश्वसनीय व लाभप्रद सामग्री प्राप्त की जा सकती है। यदि किसी ऐतिहासिक स्थल के बारे में जानकारी प्राप्त करनी हो तो, अनुसधानकर्त्ता बुजुर्गों, स्थानीय जानकारो, सम्बन्धित पुजारियो, भोपो व मठाधीशो से साक्षात्कार द्वारा प्रथम स्तर की जानकारी प्राप्त कर सकता है। हाँ, अनुसधानकर्त्ता को यह ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि यदि व्यक्ति साक्षात्कार स्वीकार करने से इंकार करता है तो उस पर इस सम्बन्ध मे दबाव नही डालना चाहिए क्योकि वह बिना दिलचस्पी के, परेशान होकर विश्वसनीय व सगतपूर्ण जानकारी नही देगा। अत स्थान, परिस्थितियाँ, समुदाय के लोगों की प्रकृति इत्यादि को ध्यान मे रखते हुए ही उसे इस पद्धति को अपनाना चाहिए।

(ख) अनुसूचियाँ (Schedules)—अनुसूची मे प्रश्न तथा खाली सारणियाँ दी हुई होती हैं। अनुसधानकर्त्ता स्वयं सूचनादाताओ के पास जाकर उनसे प्रश्न पूछकर उत्तर इन अनुसूचियो मे भर देता है। अनुसूची का उद्देश्य, सूचनादाताओ से उत्तर पाकर, अनुसन्धान मे वैषयिकता (Objectivity) लाना है। यह पद्धति बडी ही लाभप्रद व उपयोगी है। इसमे प्रश्नो को तोड-मरोडकर नही पूछा जा सकता। प्रश्नो का क्रम एकसा रहता है। प्रश्नो के लिखित रूप मे होने के कारण, अनुसधान कर्त्ता को अनावश्यक रूप से इन्हें याद नही करना पडता है, अन्यथा वह कुछ प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करना भूल भी सकता है। साक्षात्कार की विधि बडी जटिल-सी लगती है। उत्तरदाता प्रत्यक्ष रूप से पूछे गये प्रश्नो का जवाब देने से इन्कार कर सकता है या वह मनोवैज्ञानिक रूप से प्रभावित हो जाता है। इस प्रकार के दोष अनुसूची पद्धति मे नही पाये जाते हैं। अनुसूचियो से प्राप्त सूचना निष्पक्ष होने के कारण बडी उपयोगी रहती है। यह स्रोत तभी लाभप्रद सिद्ध हो सकता है जब अध्ययन क्षेत्र बहुत विस्तृत न हो। इस स्रोत द्वारा अनुसन्धानकर्त्ताओ ने बडी महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त की है। यह स्रोत काफी लोकप्रिय होता जा रहा है। इसके द्वारा अशिक्षित लोगो से भी सूचना प्राप्त करने मे कठिनाई नही रहती है, कुछ स्थानीय भाषा के कारण थोड़ी कठिनाई अवश्य आ सकती है जिसका निवारण वहाँ के स्थानीय पढे लिखे लोगो के द्वारा किया जा सकता है।

(2) अप्रत्यक्ष स्रोत (Indirect Sources)—इसके अन्तर्गत, अनुसधानकर्त्ता स्वय प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदाताओ से सम्पर्क स्थापित नही कर पाता है। अप्रत्यक्ष स्रोतो में मुख्यतः प्रश्नावलियो (Questionnaires) को तथा अति गोपनीय माने जैसे मत-पत्रों को सम्मिलित किया जाता है।

(i) प्रश्नावली (Questionnaire)—अनुसन्धानकर्त्ता विषय से सम्बन्धित जानकारी प्रश्नावली द्वारा सरलतापूर्वक प्राप्त कर सकता है। जब अनुसधान का

क्षेत्र व्यापक होना है अथवा सूचनादाता दूर दूर बिखरे होते है, ऐसी स्थिति मे प्रश्नो की एक सूची डाक द्वारा उसके पास पहुँचा दी जाती है। सूचनादाता उस प्रश्नावली को भरकर अभीष्ट जानकारी अनुसंधानकर्ता को देता है। यह विधि उन अनुसंधानों मे तो और भी लाभदायक है, जहाँ सूचना को बार-बार प्राप्त करना होता है। प्रश्नावली द्वारा प्राप्त सूचना मे डाक-खर्च व पहली बार की गई छपाई के अतिरिक्त कोई अधिक व्यय नही होता है। यह स्रोत तभी लाभप्रद हो सकता है जबकि उत्तरदाता पढे लिखे हो व उनमे सहयोग की भावना हो अन्यथा प्रश्नो के जवाब उनसे न तो दिए जा सकते हैं और न समय पर प्रश्नो के उत्तर ही मिल पाते हैं। इसका प्रयोग गम्भीर व महत्त्वपूर्ण अनुसधानो मे नही किया जाता है क्योकि प्रश्नावलियो द्वारा सूचना भ्रमपूर्ण व असत्य हो सकती है। हमारे देश मे यह स्रोत अधिक प्रमाणित सिद्ध नहो हो पाया है। मिल्ड्रेड पार्टन ने, अप्रत्यक्ष स्रोतो में निम्न साधनो का उल्लेख किया है—

(2) दूरभाष साक्षात्कार (Telephone Interviews)— इसके अन्तर्गत, अनुसधानकर्त्ता दूरभाष के माध्यम से उत्तरदाताओ से सम्बन्ध स्थापित कर सामग्री प्राप्त करता है। यह विधि अनुसधानकर्त्ता बडे बडे शहरो मे अपनाता है जहाँ समय का अभाव है। इससे न केवल समय की बचत होती है बल्कि अनेक कठिनाइयाँ दूर हो जाती हैं जैसे अक्सर साक्षात्कार स्वीकृत करने म लोग हिचकिचाते हैं तथा अनुसधानकर्त्ता स्वय भी आमने सामने साक्षात्कार मे झेंप जाता है। किन्तु यह विधि जहाँ आकडे प्राप्त करने हो अनुपयुक्त रहती है।

(3) रेडियो अपील (Radio Appeal)—सूचना प्रसारण का एक अच्छा साधन रेडियो है। रेडियो द्वारा कई प्रकार के कार्यक्रम समय समय पर प्रसारित किए जाते हैं जो श्रोताओ एव दिलचस्पी लेने वाले विभिन्न व्यवसाय के लोगो को आकर्षित करते हैं। इससे रेडियो श्रोता, अध्ययनकर्त्ता को सम्बन्धित जानकारी दे सकते हैं। परन्तु यह स्रोत विश्वसनीय नही है, क्योकि श्रोता जो अपनी राय पत्रो द्वारा भेजते हैं, उसमे कई अनर्गल बातें होती हैं।

(4) पैनल पद्धति (Panel Techniques)— इस पद्धति के अन्तर्गत कुछ लोगों का पैनल (दल) बना दिया जाता है जो अनुसधानकर्त्ता को जनता के रुख रुचि एव वैचारिक भावनाओ की सूचना सामग्री प्रदान करते हैं। यह स्रोत काफी विश्वसनीय है। इसका दोष यह है कि पैनल मे कार्य करने वाले सदस्यो मे मनमुटाव व वैमनस्य की भावना बढती है जिससे वे एक दूसरे की निन्दा करते हैं, आरोप व प्रत्यारोप लगाते हैं। इसका कुप्रभाव अनुसधानकर्त्ता पर पडता है। इससे उसे निष्पक्ष जानकारी प्राप्त नही हो पाती।

प्राथमिक स्रोतों के गुण (Merits of Primary Sources)

(i) स्वाभाविकता (Naturalness)—इन स्रोतो के अन्तर्गत, अनुसधानकर्त्ता

उत्तरदाताओं से घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित कर सकता है अतः जो जानकारी लोगों से उसे व्यक्तिगत सम्पर्क से प्राप्त होगी उसमें कृत्रिमता का समावेश नहीं होगा। उदाहरण के लिए जब अनुसंधानकर्त्ता सहयोगी निरीक्षणकर्त्ता के रूप में समुदाय के कार्यक्रमों में भाग लेकर जो सामग्री प्राप्त करता है वह निष्पक्ष होगी क्योंकि समुदाय के लोग स्वाभाविक रूप में अपने कार्यक्रमों को प्रस्तुत करते हैं।

(ii) **वास्तविकता (Reality)**—इस स्रोत द्वारा किसी तथ्य की वास्तविकता का ज्ञान होता है। जब अनुसंधानकर्त्ता समुदाय के व्यक्तियों के साथ बहुत घुल-मिल जाता है तब वे व्यक्ति भी अनुसंधानकर्त्ता में अपनत्व की झलक देखते हैं। दोनों के मध्य मानो कोई अन्तर ही नहीं है ऐसे वातावरण में वे मनोवैज्ञानिक रूप से नियंत्रित न होकर, अधिक स्वतन्त्र हो जाते हैं जिससे कई महत्त्वपूर्ण तथा गोपनीय मामलों की भी यथार्थ स्थिति का पता लग जाता है।

(iii) **वैषयिकता (Objectivity)**—प्राथमिक स्रोतों में वैषयिकता का पाया जाना एक बड़ा गुण है। इसके अन्तर्गत सूचना प्राप्त करने की जो पद्धतियाँ अपनाई गई है, वे भी वैषयिकता लाने में सहायक हैं। उदाहरण के लिए अनुसूची पद्धति द्वारा अनुसंधानकर्त्ता लिखित प्रश्नों के उत्तर उत्तरदाता से प्राप्त करता है। इसमें ऐसी कोई बात नहीं हैं कि उत्तरदाता पक्षपातपूर्ण होकर उनका उत्तर देगा। सिर्फ सावधानी यह बरतनी पड़ती है कि प्रश्न अस्पष्ट, टेढ़े-मेढ़े व भ्रामक नहीं होने चाहिए।

(iv) **विश्वसनीयता (Reliability)**—प्राथमिक स्रोतों में अधिकांश सामग्री निकट सम्बन्ध स्थापित करके प्राप्त की जाती है अतः वह काफी विश्वसनीय होती है। अनुसंधानकर्त्ता को स्वयं पर भी विश्वास होता है कि उसने जो जानकारी प्राप्त की है वह स्वाभाविक रूप में है न कि किसी दबाव के फलस्वरूप प्राप्त की हुई। बहुत नजदीक से किए हुए अध्ययन में धोखे की गुंजाइश नहीं के बराबर रहती है।

(v) **कम खर्चीला (Less expensive)**—इस स्रोत से सामग्री प्राप्त करने में अधिक व्यय नहीं होता है। अनुसूचियों के द्वारा वह दूर-दूर स्थानों पर निवास करने वाले लोगों से सम्पर्क स्थापित कर सामग्री को प्राप्त कर सकता है। जब बार-बार सूचना को प्राप्त करना होता है तो प्रश्नावली-पद्धति श्रेष्ठ होती है। इसमें अनुसंधानकर्त्ता को घटनास्थल पर जाने या व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करने की आवश्यकता नहीं होती है तथा इससे समय की भी बचत होती है।

दोष (Demerits)

(i) अनुसंधानकर्त्ता के सामने यह कठिनाई आती है कि वह साक्षात्कार लेते वक्त अपनी अभिनति (Bias) पर किस प्रकार नियन्त्रण प्राप्त करे।

(ii) अनुसूची द्वारा जो तथ्य-सामग्री प्राप्त की जाती है, इसमें भी कई कठिनाइयाँ आती हैं। अनपढ़ इसका महत्त्व नहीं समझते हैं अतः या

तो वे उत्तर देने मे ही सकोच करेंगे या अधिक जोर दिया गया तो ऊटपटाग जवाब दे देंगे।

(iii) अनुसधानकर्त्ता प्राथमिक स्रोतो से सामग्री प्राप्त करने मे स्वतन्त्र होने के कारण, उनका दुरुपयोग करता है। यदि उसे अधिक स्वतन्त्रता नही मिलती तो वह शायद इसका प्रयोग बडी सावधानी से करता।

द्वितीयक स्रोत
(Secondary Sources)

'द्वितीयक स्रोत' शब्द से ऐसा प्रतीत होता है कि इसका अधिक महत्त्व नहीं है किन्तु व्यवहार मे ऐसा नही है। अनुसधानकर्त्ता केवल प्राथमिक स्रोतो पर ही अपने अनुसधान सामग्री के लिए निर्भर नही रह सकता बल्कि द्वितीयक स्रोत भी उसे मूल्यवान महत्त्वपूर्ण एव आवश्यक सामग्री प्रदान करते तथा उसके अनुसधान के घटे हुए या अधूरे कार्य को पूरा करने मे सहायक है।[1] द्वितीयक स्रोत वे स्रोत हैं जिनमें प्रकाशित और अप्रकाशित प्रलेख या समस्त लिखित सामग्री सम्मिलित है।

प्राचीन युग मे प्राथमिक स्रोतो का ही अधिक प्रचलन था। अनुसधानकर्त्ता इसको ही महत्त्वपूर्ण एव प्रामाणिक मानकर चलता था परन्तु अब द्वितीयक स्रोतो की जैसे-जैसे उसको जानकारी मिलती रहती है, वह अपनी अनुसधान सामग्री के लिए इन स्रोतो पर पर्याप्त निर्भर होता जा रहा है।

द्वितीयक स्रोतों के अन्तर्गत आने वाले ऐतिहासिक प्रलेखो, जीवन इतिहास, ऐतिहासिक डायरियो का महत्त्व किसी प्रकार भी कम नहीं है। इतिहास की उपेक्षा सामाजिक अनुसधानो मे नही की जा सकती। जॉन ए० मैज (John A Madge) का मत है "इतिहासवेत्ता को समाजशास्त्रियो की श्रेणी से बाहर कर देना कोई बुद्धिमता का कार्य नही है, केवल नाम मात्र के समाजशास्त्री ही प्रलेखों (Documents) के उपयोग का त्याग करते हैं, चाहे वे सामाजिक अथवा प्राचीन।" अतः पूर्व इतिहास के बिना किसी घटना के महत्त्व को नही समझ सकते। यदि सामाजिक सस्थाओ घटनाओ का अध्ययन करना है तो ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को जानना आवश्यक होगा

द्वितीयक स्रोतो को हम दो भागो मे विभाजित कर सकते है—

(i) व्यक्तिगत प्रलेख (Personal Documents)

(ii) सार्वजनिक प्रलेख (Public Documents)

व्यक्तिगत प्रलेख (Personal Documents)

व्यक्तिगत प्रलेख उस लिखित साक्ष्यो को कहते हैं जिसमे एक व्यक्ति द्वारा अपने स्वय के बारे मे या सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व सास्कृतिक घटनाओं के

1 "This (Secondary Source) is important in order to avoid duplication of work and to suggest methods of approach pitfalls, to avoid the difficulties involved." —G A Lundberg Social Research, p 122

बारे मे वर्णन अपने दृष्टिकोण से किया हुआ हो। व्यक्तिगत प्रलेखो मे सामान्यत स्वय लेखक के विचार, मनोवृत्तियाँ, आवेग, भावनाओ एव दृष्टिकोण का समावेश होता है। जॉन मेज के शब्दो मे, 'अपने सकुचित अर्थ मे, व्यक्तिगत प्रलेख किसी व्यक्ति के द्वारा स्वयं के निजी कार्यों अनुभवो एव विश्वासो का एक स्वत लिखित प्रथम पुरुष वर्णन है।'[1] इससे स्पष्ट होता है कि (i) व्यक्तिगत प्रलेख स्वय व्यक्ति द्वारा लिखे हुए होते हैं या यो कहिए उसकी स्वय की रचना होती है, (ii) इन प्रलेखो मे उसकी मनोवृत्तियो व किसी घटना विशेष के बारे मे दृष्टिकोण का पता चलता, (iii) ये रचनाएँ व्यक्ति के स्वय के अनुभवो पर निर्भर हैं, (iv) इसमे लेखक के व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप दृष्टिगोचर होती है।

व्यक्तिगत प्रलेखो का आजकल फैशन ही चल गया है। इनको लिखने वाले महान् व्यक्ति लेखक दार्शनिक उच्चकोटि के नेता साहित्यकार, कवि, कूटनीतिज्ञ इत्यादि होते हैं। इन प्रलेखों में विस्तृत सामग्री प्राप्त होने के कारण अनुसधानकर्त्ता को यह सुविधा व स्वतन्त्रता रहती है कि वह जितनी सामग्री अर्थपूर्ण व उपयोगी समझे, उसका सकलन कर सकता है। चूँकि य प्रलेख व्यक्तिगत अनुभवो पर आधारित होते हैं, अत हमे लेखक के आन्तरिक भावो का पता चलता है कि उसका दृष्टिकोण किसी घटना के सम्बन्ध मे एक विशेष प्रकार का क्यो रहा है? उसकी आन्तरिक गहराइयो मे छानबीन करने का उसे अवसर मिलता है, जो शायद उसे अन्य स्रोतो से नही मिलता। मोजर के शब्दो मे, 'व्यक्तिगत प्रलेख अपने बिना मागे रूप में बहुत मूल्यवान होते हैं। किसी विशेष सामाजिक सवक्षण में भी वे उसकी प्रारम्भिक खोज तथा उपकल्पना-निर्माण के साधन के रूप मे अच्छा मार्गदर्शन कर सकते हैं।'[2]

व्यक्तिगत प्रलेखो को लिखने के कारण
(Causes of writing Personal Documents)

आलपोर्ट ने व्यक्तिगत प्रलेखो को लिखने के कतिपय निम्नलिखित मुख्य कारण बताए हैं—

1 कार्य के औचित्य को सिद्ध करने के लिए।
2 अपने दोष बुराइयो आदि को स्वीकार करने के लिए।

1 'In its narrow sense the personal document is a spontaneous first person description by an individual, of his own actions, experiences and beliefs"
—*John Madge*, The Tools of Social Science

2. "By and large, personal documents are at their most valuable when unsolicited. Even in the typical social survey, they can be illuminating in the exploratory stages as a means of orientation and a source of hypothesis".
—*C.A Moser*: Survey Methods in Social Investigation, p 116

3 व्यक्तिगत अनुभवों को साहित्यिक रूप देकर आनन्द उठाने के लिए।
4 मानसिक तनावों व संघर्षों (Tensions and Conflicts) से छुटकारा पाने के प्रयोजन से।
5 किसी सौंपे हुए कार्य पूर्ति के लिए।
6 योग्यता प्रदर्शन के लिए।
7 धन व सम्मान पाने के लिए।
8 जनकल्याण की भावना से प्रेरित होकर।

(i) व्यक्तिगत प्रलेख स्रोत
(Sources of Personal Documents)

व्यक्तिगत प्रलेख निम्नलिखित प्रमुख स्रोतों से प्राप्त किए जा सकते हैं —
(i) जीवन इतिहास (Life histories)
(ii) डायरियाँ (Diaries)
(iii) पत्र (Letters)
(iv) संस्मरण (Memoirs)

(i) जीवन इतिहास (Life histories)—जॉन मेज के शब्दों में "जीवन इतिहास का सच्चे अर्थ में तात्पर्य विस्तृत आत्मकथा से है। सामान्य अर्थ में इसका प्रयोग ढीले ढाले तौर पर होता है तथा किसी भी जीवन सम्बन्धी सामग्री के लिए इसका उपयोग किया जा सकता है।"[1]

महान् पुरुषों द्वारा लिखित आत्मकथाओं में न केवल व्यक्तिगत जीवन की सही झाँकी ही मिलती है बल्कि समाज से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन भी मिलता है। जवाहरलाल नेहरू व महात्मा गांधी द्वारा लिखित आत्मकथाएँ भारतीय संस्कृति स्वाधीनता आन्दोलन व संघर्ष की जीती जागती आत्मकथाएँ हैं। इन आत्मकथाओं के अध्ययन से पता चलता है कि भारतवर्ष का कौन सा स्वर्णिम युग रहा कौन-कौन सी विकट समस्याएँ किन किन युगों में आईं उस समय देश की क्या राजनीतिक आर्थिक स्थिति थी इत्यादि।

जीवन इतिहास के सामान्यतः तीन प्रकार हैं—

(i) स्वतः प्रेरित आत्मकथा (Spontaneous Autobiography)—व्यक्ति अपनी इच्छा से भूत की बातों का स्मरण कर जीवन की घटनाओं का क्रमिक रूप से ब्यौरा लिखता है।

(ii) ऐच्छिक आत्म-वृत्त प्रमाण (Volunteered Self records)—ये प्रायः किसी प्रकाशक मित्रों, अनुसन्धानकर्ताओं या सरकार से पुरस्कार मिलने या उनके कहने पर लिखे जाते हैं।

1 "The term life history in its strict sense relates to the comprehensive autobiography Its common usage appears however to be fairly loose and life-history may prove to be almost any kind of biographical material
—*John Madge* The Tools of Social Science

(iii) सकलित जीवन इतिहास (Compiled Life-history)—ये वे जीवनियाँ हैं जिन्हें व्यक्ति स्वय नही लिखता है। उसके द्वारा दिए गए भाषण प्रकाशित लेख, साक्षात्कार प्रेस स्टेटमेंट इत्यादि को सकलित करके अन्य व्यक्तियो द्वारा उसके जीवन इतिहास को तैयार किया जाता है।

इन जीवन कथाओ मे न केवल विवरणात्मक सामग्री होती है, बल्कि बड़े ही रोचक, हृदयस्पर्शी दृष्टान्त भी पढने को मिलते है जो अत्यधिक महत्त्व के होते हैं। हमे एक प्रकार की नैतिकता एव आदर्शों की ट्रेनिंग (प्रशिक्षण) भी मिलती है। यह तत्कालीन सामाजिक, सास्कृतिक व आर्थिक घटनाओ के सम्बन्ध मे जानकारी प्राप्त करने का श्रेष्ठ साधन है।

इन जीवनियो का इतना महत्त्व होते हुए भी इनकी कुछ सीमाएँ हैं—

(i) इसमे लेखक के व्यक्तित्व के बारे मे विस्तृत जानकारी मिलती है, अन्य घटनाओ का तो सक्षेप मे ही वर्णन मिलता है, जो अनुसन्धानकर्त्ता के अनुसन्धान सामग्री का आधार नही बन सकती।

(ii) जीवनियो के प्रकाशन का उन्हे पहले से ही पता लग जाता है अत वे कई बातो को छुपा देते हैं जिससे आत्मकथा या जीवनी का उद्देश्य निरर्थक हो जाता है।

(iii) लेखक का राजनीतिक झुकाव भी इस मार्ग मे बाधक हो सकता है जिसके कारण वह तथ्यो का उद्घाटन नही करना चाहता।

(iv) प्रकाशक अपने स्वार्थवश उनके बारे मे कही बढा-चढाकर लिखते हैं तो कही घटनाओ को तोड-मरोड कर प्रस्तुत करते हैं।

(v) लेखक केवल उसी घटना को सम्मिलित करने की कोशिश करता है जो उसके दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण है।

(ii) डायरियाँ (Diaries) —बहुत से लोग डायरियो मे जीवन की विभिन्न घटनाओ को प्रस्तुत करते है। इनमे घटनाओ के प्रति अपनी प्रतिक्रियाओ व भावनाओ का समावेश होता है। जीवन के कटु अनुभव, विशेष परिस्थिति मे स्वय की मनःस्थिति, अचूक प्रतिक्रियाएँ, रोष, सुख दुःख, मनोभाव इत्यादि का वर्णन अक्सर डायरियो मे मिलता है। गोपनीय से गोपनीय बातो का भी डायरियो मे जिक्र मिल जाता है। इस अर्थ मे डायरियाँ आत्मकथाओ की अपेक्षा अधिक विश्वसनीय होती हैं। जॉन मेज के अनुसार, 'डायरियाँ सबसे अधिक रहस्योद्घाटन करने वाली होती हैं क्योकि जनता के समक्ष प्रस्तुत होने का भय न होने के कारण, तथ्यो को तोडा मरोडा नही जाता है। ये डायरियाँ लेखक के अनुभवो तथा क्रियाओ का निष्पक्ष एव स्पष्ट वर्णन करती हैं।"[1]

1 "Diaries are often the most revealing, especially when they are intimate journals, both because they are less constricted by the fear of public showing and because they reveal with greatest clarity what experiences and actions seemed most significant at the time of their occurrence "

—*John Madge*,

इसके बावजूद इनमें निम्नलिखित दोष पाए जाते हैं—

(i) अधिकांशतः जीवन के संघर्ष पक्ष को बढ़ा चढ़ाकर प्रकट किया जाता है तथा जीवन का सामान्य एवं शांतिपूर्ण पक्ष प्रायः बिल्कुल ही छोड़ दिया जाता है।

(ii) स्पष्ट वर्णन नहीं मिलता क्योंकि लेखक कई बार स्वयं के समझने के लिए सांकेतिक भाषा में लिख देता है।

(iii) घटनाओं में क्रमबद्धता नहीं रहती। जैसाकि कई बार डायरियों को महीनों-महीनों तक नहीं लिखा जाता क्योंकि बीमारी, घरेलू समस्याएँ, आपत्तियाँ, उलझनें, अन्य व्यस्त कार्यक्रम इत्यादि इतने हावी हो जाते हैं कि वह लिख ही नहीं पाता है।

(iv) कृत्रिमता की संभावना इनमें भी है क्योंकि डायरी लेखक सचेत रहते हैं कि एक दिन ये डायरियाँ प्रकाशित हो सकती हैं या होंगी। अतः इनमें निष्पक्षता भी नहीं आ पाती। फिर भी डायरियाँ अधिक प्रामाणिक व विश्वसनीय मानी जाती हैं।

(iii) पत्र (Letters)—चूँकि पत्र व्यक्तिगत होते हैं अतः इनके माध्यम से लेखक के वास्तविक विचारों, भावनाओं एवं दृष्टिकोणों का पता आसानी से लग जाता है। सामाजिक जीवन जैसे विवाह, प्रेम, तलाक या यौन पर लिखे गये पत्र तो वास्तविकताओं का चित्रण करते ही हैं। राजनीतिज्ञों द्वारा लिखे गये गुप्त पत्र देश की विदेशी नीति का रहस्योद्घाटन करते हैं। राष्ट्राध्यक्षों के मध्य के पत्र व्यवहार से पता चल सकता है कि देशों के आपसी सम्बन्ध कैसे रहे हैं, मधुर या कटु। पत्र शिक्षा व प्रशिक्षण के सभी अच्छे साधन हैं जैसे नेहरूजी द्वारा लिखित 'पुत्री के नाम लिखे गये पिता के पत्र'।

इनमें निम्नलिखित दोष पाए जाते हैं—(i) गोपनीय होने के कारण ये आसानी से उपलब्ध हो नहीं पाते। (ii) घटनाओं का क्रमिक रिकार्ड नहीं मिलता। (iii) कई महत्त्वपूर्ण व अनुसंधान से सम्बन्धित पत्र प्राप्त नहीं हो सकते क्योंकि कई तो गुम ही हो जाते हैं कुछ बिल्कुल फटी हालत में होते हैं जिन्हें पढ़ा भी नहीं जा सकता। (iv) पत्र भी अविश्वसनीय हो सकते हैं। कई बार भावनाओं में बहकर बहुत कुछ लिख दिया जाता है बाद में अफसोस भी प्रकट किया जाता है। अतः क्षणिक भावनाओं पर आधारित पत्र तथ्यों का उद्घाटन नहीं करते।

(iv) संस्मरण (Memoirs)—कई बार लोगों द्वारा जीवन की घटनाओं, विभिन्न यात्राओं तथा महत्त्वपूर्ण परिस्थितियों के संस्मरण अनुसंधानकर्त्ता को महत्त्वपूर्ण सामग्री प्रदान करते हैं। संस्मरण किसी देश व समाज की आर्थिक, सांस्कृतिक व शैक्षणिक परिस्थितियों के बारे में वास्तविक चित्रण प्रस्तुत करते हैं। प्राचीन काल के यात्रा वर्णनों व संस्मरणों ने ऐतिहासिक महत्त्व की सामग्री प्रदान की है। ह्वेनसांग, फाह्यान, इब्नबतूता के वर्णन भारतीय सभ्यता व संस्कृति के बारे में प्रथम

स्तर की महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं। इस प्रकार के विवरणों से हमें रीति रिवाज, रहन-सहन धर्म, वंश व भाषा व राजनीतिक परिस्थितियां, सामाजिक वातावरण आदि के बारे में उपयोगी सामग्री प्राप्त होती है। आजकल बड़े-बड़े राष्ट्र नेताओं जैसे चर्चिल, नेहरू इन्दिरा गाँधी आदि के संस्मरण बड़े ही महत्वपूर्ण हैं।

दोष (Defects)—(i) संस्मरण अधिकांशतः व्यक्ति प्रधान होते हैं।

(ii) कई बार घटनाओं का वर्णन बढ़ा-चढ़ा कर किया जाता है।

(iii) इसमें भी घटनाओं का क्रम नहीं रहता।

(iv) साधारणतः भाषा की दृष्टि से सुन्दर रूप में प्रस्तुत किए जाने का प्रयत्न रहता है।

व्यक्तिगत प्रलेखों का महत्त्व (Significance of Personal Documents)—सामाजिक अनुसंधान में व्यक्तिगत प्रलेखों का पर्याप्त महत्त्व है। प्रलेखों के माध्यम से भावनाओं आवेगों व दृष्टिकोणों का स्पष्ट रूप से पता चलता है। इनके द्वारा घटनाओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण सफलतापूर्वक किया जा सकता है। प्रलेखों का महत्त्व और भी बढ़ जाता है जब ये प्रकाशन की दृष्टि से नहीं लिखे गए हों क्योंकि उनमें अधिक सरलता, वास्तविकता व विश्वसनीयता का समावेश होता है। तुलनात्मक अध्ययन के लिए, व्यक्तिगत प्रलेख बड़े महत्वपूर्ण हैं।

व्यक्तिगत प्रलेखों की सीमाएँ (Limitations)—व्यक्तिगत प्रलेखों की स्वयं की कुछ सीमाएँ हैं—

(i) व्यक्तिगत होने के कारण इनको आसानी से उपलब्ध नहीं किया जा सकता। हर व्यक्ति की इतनी पहुँच नहीं होती है।

(ii) व्यक्तिगत प्रलेख गोपनीय होने के कारण, लेखक उनको देने में भी हिचकिचाता है क्योंकि अपनी प्रतिष्ठा का उसे पूर्ण ख्याल रहता है।

(iii) कई प्रलेखों में घटनाओं का क्रमबद्ध रूप में नहीं लिखा जाता है क्योंकि स्वयं लेखक की सीमाएँ होती हैं। अतः हमें पता ही नहीं चल सकता कि वे किस संदर्भ में लिखा गई हैं।

(iv) इनमें कल्पना व आदर्श को अधिक स्थान मिलता है जो वास्तविकता को छिपा देते हैं।

(v) स्वयं लेखक का दृष्टिकोण पक्षपातपूर्ण हो सकता है क्योंकि उसे यह चेतना रहती है कि इन्हें प्रकाशित किया जाएगा अतः वे निष्पक्ष दृष्टि से नहीं लिख पाते।

(vi) कभी कभी मात्र विद्वता दिखाने के लिए ही ये लिख दिए जाते हैं जिसके कारण वास्तविक प्रयोजन गौण हो जाता है।

(vii) व्यक्तिगत होने के कारण समूचे समाज का प्रतिनिधित्व नहीं करते। अतः यही कहा जा सकता है कि यदि अनुसंधानकर्त्ता स्वयं कुछ सावधानी बरते तो इनका उपयोग अपने अनुसंधान में कर सकता है।

सार्वजनिक प्रलेख (Public Documents)

सार्वजनिक प्रलेख उन्हे कहते हैं जिन्हे कोई सरकारी या गैर-सरकारी संस्था तयार करती है। इन्हे प्रकाशित या अप्रकाशित रूप मे जनता के लाभ के लिए उपलब्ध कराया जाता है। देश मे विभिन्न प्रकार के आयोजन व कार्यक्रम रखे जाते हैं जिनका रिकार्ड सरकार अपने पास रखती है। योजनाएँ जैसे परिवार नियोजन प्रौढ शिक्षा तकनीकी प्रगति औद्योगिक विकास इत्यादि के सम्बन्ध मे कई कार्यक्रम समय समय पर होते रहते हैं इनके सम्बन्ध मे आँकडे व सूचनाएँ सुरक्षित रखी जाती हैं कुछ समय बाद सरकारी या गैर सरकारी संस्थाएँ भी अलग से आँकडे व सूचनाएँ रखती हैं।

सार्वजनिक प्रलेखो को भी दो श्रेणियो मे विभाजित किया जाता है—

(क) प्रकाशित प्रलेख (Published Documents)

(ख) अप्रकाशित प्रलेख (Unpublished Documents)

(क) प्रकाशित प्रलेख (Published Documents)—केवल उन्ही प्रलेखो को प्रकाशित किया जाता है जो आम जनता द्वारा प्रयोग किए जा सकते हैं। ये सार्वजनिक स्थानो जैसे सार्वजनिक वाचनालयो विद्यालयीय व महाविद्यालयीय पुस्तकालयो मे उपलब्ध हो सकते हैं। सार्वजनिक प्रलेख निम्न प्रकार के हैं—

(i) रिकार्ड (Record)—विभिन्न सरकारी तथा गैर सरकारी सगठन या संस्थाएँ अपनी आवश्यकताओ के लिए अनेक सूचनाओ का रिकार्ड रखती हैं। इन रिकार्डो द्वारा सामाजिक घटनाओ के बारे मे जानकारी प्राप्त हो सकती है। अपराधियो बदनाम चरित्रो व समाज विरोधी तत्वो के रिकार्ड सरकार के पास रहते हैं जिनकी जानकारी अनुसंधानकर्ता अपने अध्ययन हेतु प्राप्त कर सकता है। विभिन्न प्रकार की समितियाँ व सम्मेलन प्रतिवेदन प्रकाशित करते रहते हैं और कुछ का रिकार्ड दफ्तरो मे प्राप्त हो सकता है। प्राइवेट कम्पनी के डायरेक्टर (निदेशक) अपनी अपनी कम्पनियो की सभाएँ बुलाते हैं जिनमे लाभ नुकसान का ब्यौरा दिया जाता है। कई प्रस्ताव आते हैं जो महत्त्व के होते हैं उनको रिकार्ड के रूप मे रख लिया जाता है।

(ii) प्रकाशित आँकडे (Published Statistics)—सरकार तथा प्राइवेट संस्थाएँ समय समय पर आँकडे प्रकाशित करती हैं सूचना व प्रसारण मन्त्रालय द्वारा विभिन्न महत्त्वपूर्ण विषयो पर आँकडे प्रकाशित किए जाते हैं जिनसे पता चलता है कि हमने विभिन्न क्षेत्रो मे क्या उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं क्या हमारे उद्देश्य हैं तथा हम किस रफ्तार से प्रगति के पथ पर बढ रहे हैं। ये आँकडे भारत 1970 1971, 1972 1973 1974 1975 1976 प्रत्येक साल प्रकाशित होते हैं जिसम लगभग सभी विषयो पर आकडो का सकलन मिलता है।

(iii) पत्र-पत्रिकाओं की रिपोर्ट (Report of the Newspapers and Magazines)—विभिन्न प्रकार की दैनिक साप्ताहिक, मासिक द्वैमासिक, त्रैमासिक,

अर्द्धवार्षिक व वार्षिक पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं जिनमें सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक व अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं का ब्यौरा मिलता है। अनुसंधानकर्त्ता अपने कार्य सम्बन्धी सामग्री को इनके माध्यम से प्राप्त कर सकता है। इनके सम्पादकीय लेख बहुत महत्त्वपूर्ण होते है जिनसे जनमत का पता लगाया जा सकता है।

(iv) विविध सामग्री (Miscellaneous Material)—पत्र, पत्रिकाओं, पुस्तकों व उपन्यासों में विविध प्रकार की प्रकाशित सामग्री का लाभ अनुसंधानकर्त्ता अपने अनुसंधान में उठा सकता है। कई उपन्यास जिनका उद्देश्य सामाजिक समस्याओं को प्रस्तुत कर उनका समाधान बताना होता है वे सामाजिक अनुसंधानकर्त्ता के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। कई चलचित्र सामाजिक बुराइयों के भंडाफोड़ करने एवं उनमें सुधार करने के लिए किए गए प्रयत्नों को दर्शाते हैं जिनसे भी सम्बन्धित जानकारी प्राप्त होने में सुविधा रहती है।

(ब) अप्रकाशित प्रलेख (Unpublished Documents)—इनके अन्तर्गत निम्नलिखित प्रलेख सम्मिलित हैं—

(i) गोपनीय रिकार्ड (Confidential Records)—वे रिकार्ड होते हैं जो सार्वजनिक होते हुए भी परिस्थितियों वश प्रकाशित नहीं किए जा सकते। जन-हित सुरक्षा व व्यवस्था व देश के हितों को ध्यान में रखते हुए, इनका प्रकाशन नहीं किया जाता। न्यायालयों के रिकार्ड, सैनिक दफ्तरों के रिकार्ड, जो प्रतिरक्षा सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण है, बोर्ड तथा विश्वविद्यालयों के परीक्षाफल रिकार्ड विभिन्न कम्पनियों तथा बैंकों के रिकार्ड जो गोपनीय प्रकृति के होते हैं उन्हें प्रकाशित नहीं किया जाता है। सम्बन्धित सूचना उसी स्थिति में दी जा सकती है जब स्वयं अधिकारी को विश्वास हो जाता है कि प्राप्त सूचना का उद्देश्य मात्र अनुसंधान कार्य के लिए है, या प्रमाणित प्रतिलिपियों जैसे जन्म तिथि, संसद की कार्रवाई इत्यादि की आवश्यकता है।

(ii) दुर्लभ हस्तलेख (Rare Manuscripts)—जो हस्तलेख विद्वान विचारकों, लेखकों व प्रतिभाशाली साहित्यकारों द्वारा लिखे गए हैं, वे किसी कारण वश, जैसे अकस्मात मृत्यु या प्रकाशक द्वारा मुद्रित न करने के कारण अप्रकाशित रह जाते हैं। हस्तलेख स्वयं द्वारा लिखे हुए होने के कारण या तो पढ़ने योग्य नहीं होते अथवा वे किसी कारण विकृत या बर्बाद हो जाते हैं। इन हस्तलेखों से बहुत महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हो सकती है। कई दुर्लभ हस्तलेख विभिन्न संग्रहालयों में पाए जाते हैं जिनका प्रयोग अनुसंधान के सम्बन्ध में सूचना प्राप्त करने हेतु किया जाता है।

(iii) शोध रिपोर्ट (Research Report)—ये रिपोर्ट विद्यार्थियों द्वारा विश्वविद्यालयों में एम. ए. या पी एच डी डिग्री प्राप्त करने के लिए प्रस्तुत की जाती है। इनका प्रकाशन बहुत मुश्किल से हो पाता है। व्यक्ति स्वयं इनका प्रकाशन आर्थिक परिस्थितियों के कारण नहीं करवा पाता है। प्रकाशक को जब तक लाभ

सार्वजनिक प्रलेख (Public Documents)

सार्वजनिक प्रलेख उन्हें कहते हैं जिन्हें कोई सरकारी या गैर-सरकारी संस्था तैयार करती है। इन्हें प्रकाशित या अप्रकाशित रूप में जनता के लाभ के लिए उपलब्ध कराया जाता है। देश में विभिन्न प्रकार के आयोजन व कार्यक्रम रखे जाते हैं जिनका रिकार्ड सरकार अपने पास रखती है। योजनाएँ, जैसे परिवार-नियोजन प्रौढ़ शिक्षा, तकनीकी प्रगति, औद्योगिक विकास इत्यादि के सम्बन्ध में कई कार्यक्रम समय समय पर होते रहते हैं, इनके सम्बन्ध में आँकड़े व सूचनाएँ सुरक्षित रखी जाती हैं। कुछ समय अर्द्ध सरकारी या गैर सरकारी संस्थाएँ भी अलग से आँकड़े व सूचनाएँ रखती हैं।

सार्वजनिक प्रलेखों को भी दो श्रेणियों में विभाजित किया जाता है—

(क) प्रकाशित प्रलेख (Published Documents)

(ख) अप्रकाशित प्रलेख (Unpublished Documents)

(क) प्रकाशित प्रलेख (Published Documents)—केवल उन्हीं प्रलेखों को प्रकाशित किया जाता है जो आम जनता द्वारा प्रयोग किए जा सकते हैं। ये सार्वजनिक स्थानों जैसे सार्वजनिक वाचनालयों, विद्यालयीय व महाविद्यालयीय पुस्तकालयों में उपलब्ध हो सकते हैं। सार्वजनिक प्रलेख निम्न प्रकार के हैं—

(i) रिकार्ड (Record)—विभिन्न सरकारी तथा गैर-सरकारी संगठन या संस्थाएँ अपनी आवश्यकताओं के लिए अनेक सूचनाओं का रिकार्ड रखती हैं। इन रिकार्डों द्वारा सामाजिक घटनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त हो सकती है। अपराधियों बदनाम चरित्रों व समाज-विरोधी तत्त्वों के रिकार्ड सरकार के पास रहते हैं जिनकी जानकारी अनुसंधानकर्त्ता अपने अध्ययन हेतु प्राप्त कर सकता है। विभिन्न प्रकार की समितियाँ व सम्मेलन प्रतिवेदन प्रकाशित करते रहते हैं और कुछ का रिकार्ड दफ्तरों में प्राप्त हो सकता है। प्राइवेट कम्पनी के डायरेक्टर (निदेशक) अपनी अपनी कम्पनियों की सभाएँ बुलाते हैं, जिनमें लाभ नुकसान का ब्यौरा दिया जाता है। कई प्रस्ताव आते हैं, जो महत्त्व के होते हैं उनको रिकार्ड के रूप में रख लिया जाता है।

(ii) प्रकाशित आँकड़े (Published Statistics)—सरकार तथा प्राइवेट संस्थाएँ समय समय पर आँकड़े प्रकाशित करती हैं। सूचना व प्रसारण मंत्रालय द्वारा विभिन्न महत्त्वपूर्ण विषयों पर आँकड़े प्रकाशित किए जाते हैं, जिनसे पता चलता है कि हमने विभिन्न क्षेत्रों में क्या उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं, क्या हमारे उद्देश्य हैं तथा हम किस रफ्तार से प्रगति के पथ पर बढ़ रहे हैं। ये आँकड़े भारत 1970 1971, 1972 1973, 1974 1975, 1976, प्रत्येक साल प्रकाशित होते हैं जिसमें लगभग सभी विषयों पर आँकड़ों का सकलन मिलता है।

(iii) पत्र-पत्रिकाओं की रिपोर्ट (Report of the Newspapers and Magazine)—विभिन्न प्रकार की दैनिक, साप्ताहिक, मासिक, द्वैमासिक, त्रैमासिक,

अर्द्धवार्षिक व वार्षिक पत्र-पत्रिकाएं प्रकाशित होती हैं जिनमे सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक व अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओ का ब्यौरा मिलता है। अनुसधानकर्त्ता अपने कार्य सम्बन्धी सामग्री को इनके माध्यम से प्राप्त कर सकता है। इनके सम्पादकीय लेख बहुत महत्त्वपूर्ण होने है जिनसे जनमत का पता लगाया जा सकता है।

(iv) विविध सामग्री (Miscellaneous Material)—पत्र पत्रिकाओ, पुस्तको व उपन्यासो मे विविध प्रकार की प्रकाशित सामग्री का लाभ अनुसधानकर्ता अपने अनुसधान में उठा सकता है। कई उपन्यास, जिसका उद्देश्य सामाजिक समस्याओ को प्रस्तुत कर उनका समाधान बताना होता है वे सामाजिक अनुसधानकर्त्ता के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। कई चलचित्र सामाजिक बुराइयो के भडाफोड करन एव उनमे सुधार करने के लिए किए गए प्रयत्नो को दर्शाते हैं जिनसे भी सम्बन्धित जानकारी प्राप्त होने मे सुविधा रहती है।

(ब) अप्रकाशित प्रलेख (Unpublished Documents)—इनके अन्तगत निम्नलिखित प्रलेख सम्मिलित हैं—

(i) गोपनीय रिकार्ड (Confidential Records)—वे रिकार्ड होने हैं जो सार्वजनिक होते हुए भी परिस्थितियो वश प्रकाशित नही किए जा सकते। जन हित सुरक्षा व व्यवस्था व देश के हितो को ध्यान मे रखते हुए, इनका प्रकाशन नही किया जाता। न्यायालयो के रिकार्ड सैनिक दफ्तरो के रिकार्ड जो प्रतिरक्षा सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण है बोर्ड तथा विश्वविद्यालयो के परीक्षाफल रिकार्ड विभिन्न कम्पनियो तथा बैंको के रिकार्ड जो गोपनीय प्रकृति के होते हैं उन्हे प्रकाशित नही किया जाता है। सम्बन्धित सूचना उसी स्थिति मे दी जा सकती है जब स्वय अधिकारी को विश्वास हो जाता है कि प्राप्त सूचना का उद्देश्य मात्र अनुसधान कार्य के लिए है, या प्रमाणित प्रतिलिपियो जैसे जन्म तिथि, ससद की कारवाई इत्यादि की आवश्यकता है।

(ii) दुर्लभ हस्तलेख (Rare Manuscripts)—जो हस्तलेख विद्वान विचारको, लेखको व प्रतिभाशाली साहित्यकारो द्वारा लिखे गए हैं, व किसी कारण वश जैसे अकस्मात मृत्यु या प्रकाशक द्वारा मुद्रित न करने के कारण अप्रकाशित रह जाते हैं। हस्तलेख स्वय द्वारा लिख हुए होने के कारण या तो पढने योग्य नही होते अथवा वे किसी कारण विकृत या बबाद हो जाते है। इन हस्तलेखो से बहुत महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हो सकती है। कई दुर्लभ हस्तलेख विभिन्न सग्रहालयो म पाए जात हैं जिनका प्रयोग अनुसधान के सम्बन्ध म सूचना प्राप्त करन हेतु किया जाना है।

(iii) शोध रिपोर्ट (Research Report)—ये रिपोर्ट विद्यार्थियो द्वारा विश्वविद्यालयो म एम ए या पी एच डी डिग्री प्राप्त करने के लिए प्रस्तुत की जाती हैं। इनका प्रकाशन बहुत मुश्किल से हो पाता है। व्यक्ति स्वय इनका प्रकाशन आर्थिक परिस्थितियो के कारण नही करवा पाता है। प्रकाशक को जब तक लाभ

होता नहीं दिखाई देता, वह इन शोध-कार्यों को प्रकाशित नहीं करता। इसका परिणाम यह होता है कि इन अप्रकाशित शोध-रिपोर्ट का उपयोग विश्वविद्यालयों तक सीमित रहता है।

द्वितीयक स्रोतों के गुण, दोष एवं सावधानियाँ
(Merits, Demerits and Precautions of Secondary Sources)

गुण (Merits)

(i) भूत एवं ऐतिहासिक महत्व के तथ्य द्वितीयक स्रोतों [redacted] ही प्राप्त हो सकते हैं न कि प्राथमिक स्रोतों से।

(ii) व्यक्तिगत डायरियों तथा संस्मरणों से व्यक्ति के मनोभावों, प्रकृति तथा आंतरिक गहराइयों का पता स्पष्ट रूप से चलता है, अतः मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के लिए इनसे प्राप्त सामग्री अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होती है।

(iii) जो सूचना साधारणतः किसी अध्ययनकर्ता को नहीं मिल सकती, वह सरकारी रिकार्ड द्वारा आसानी से प्राप्त हो जाती है।

(iv) आत्मकथाओं से प्राप्त सूचना विश्वसनीय व लाभप्रद होती है, क्योंकि इनके अन्तर्गत विविध सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक पक्षों का वर्णन निष्पक्ष दृष्टि से किया जाता है।

(v) इन स्रोतों से प्राप्त सामग्री के फलस्वरूप समय व धन की बचत होती है।

दोष (Demerits)

(i) व्यक्तिगत प्रलेखों द्वारा प्राप्त सामग्री व्यक्तित्व के बारे में विस्तृत जानकारी देती है न कि सामाजिक घटनाओं के विशेष रूप की।

(ii) व्यक्तिगत प्रलेखों में कई बार बातें बढ़ाचढ़ाकर लिखी जाती हैं जो निष्पक्ष व विश्वसनीय नहीं हो सकती।

(iii) निंदा व आलोचना के भय से लेखक सत्य का उद्घाटन अपनी आत्मकथाओं व पत्रों में नहीं करता अतः इनसे वास्तविकता का पता लगाना मुश्किल है।

(iv) प्रायः घटनाओं का जिक्र क्रमहीन होता है, अतः वे विशेष उपयोगी नहीं हो सकती।

(v) सरकारी आँकड़ों पर विश्वास नहीं किया जा सकता। कई बार आँकड़ों व वास्तविकताओं के बीच मेल नहीं खाता।

(vi) कई गोपनीय रिकार्ड उपलब्ध ही नहीं हो पाते, अतः अभीष्ट जानकारी मिलना दुर्लभ हो जाता है।

सावधानियाँ (Precautions)

अनुसंधानकर्ता को द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त आँकड़ों का सावधानीपूर्वक

प्रयोग करना चाहिए। आँकड़ो को प्रयोग में लाने से पहले उनकी विश्वसनीयता की जाँच करनी अत्यावश्यक है। सरकारी आँकड़ों को ज्यों का त्यों नहीं मान लेना चाहिए, *क्योंकि वे काल्पनिक भी हो सकते हैं, अतः इनकी पुनर्परीक्षा कर लेनी* चाहिए। डॉ० बाउले के शब्दों में, "प्रकाशित आँकड़ों को बिना उनका अर्थ तथा सीमाएँ समझे हुए ज्यों का त्यों स्वीकार कर लेना जोखिम से मुक्त नहीं है और यह सदैव आवश्यक है कि उन पर आधारित किए जाने वाले तर्कों की आलोचना कर ली जाय।"

प्रो० चैपिन (Chapin) के अनुसार प्रलेखों की आलोचनात्मक परीक्षा निम्न प्रकारों से की जा सकती है—

बाह्य विशेषताओं की आलोचना—

(i) लेखक की आलोचनात्मक परीक्षा—उसकी विचारधारा, व्यक्तित्व, रचनाएँ इत्यादि।

(ii) स्रोतों का आलोचनात्मक वर्गीकरण करना चाहिए।

(iii) अनुसंधानकर्ता को अत्यन्त सूक्ष्म दृष्टि से बचना चाहिए।

आन्तरिक विशेषताओं की आलोचना—

(i) लेखक के कथन का वास्तविकता अर्थ ज्ञात करना।

(ii) कथन में निष्ठा की मात्रा का पता लगाना।

(iii) लेखक पर कथन को असत्य लिखने के लिए दबाव का प्रयोग किया गया है या नहीं।

(iv) कथन में यथार्थता की मात्रा।

(v) लेखक की निरीक्षण क्षमता।

(vi) लेखक की लापरवाही या उदासीनता।

(vii) लेखक के सूचना स्रोतों की प्रामाणिकता की जाँच।

(viii) लेखक मूक-दर्शक या प्रशिक्षित निरीक्षक के रूप में।

इन आधारों पर जाँच कर लेने से, आँकड़ों की विश्वसनीयता के बारे में निश्चित किया जा सकता है। अनुसंधान में परिशुद्धता, निरपेक्षता व यथार्थता तभी आ सकती है, जब आँकड़ो तथा तथ्य-सामग्री के स्रोतों की भली-भाँति जाँच या परीक्षा की जाये।

तथ्य-सामग्री संकलन की विधियाँ
(Methods of Collections of Data)

सामाजिक अनुसंधान का आधार विश्वसनीय तथ्य हैं। अनुसंधानकर्ता अपनी समस्या से सम्बन्धित स्रोतों का पता लगाने के पश्चात् तथ्यों (Data) का संकलन करना चाहता है। क्योंकि तथ्य-सामग्री (Data) के अभाव में उसका सम्पूर्ण अनुसंधान निरर्थक है, अतः वह यह निश्चित करता है कि किन-किन स्रोतों से सामग्री या

सूचनाएँ प्राप्त करने में आसानी रहेगी। सामग्री स्रोत प्राथमिक व द्वैतीयक दोनों हो सकते हैं। स्रोतों के निर्धारण के बाद, वह उन प्रविधियों (Techniques) के बारे में सोचता है जिनके द्वारा सम्बन्धित तथ्यों को संकलित किया जा सकता है। तथ्यों के संकलन की कोई एक प्रविधि प्रचलित नहीं है कई प्रविधियाँ प्रयोग में लाई जा सकती हैं। किन प्रविधियों को काम में लाया जाए, यह इस बात पर निर्भर करता है कि जिन स्रोतों से सामग्री को प्राप्त करना है, वे प्राथमिक महत्त्व के हैं या द्वैतीयक महत्त्व के। अब हम उन प्रविधियों का अध्ययन करेंगे, जिनके द्वारा तथ्य-सामग्री का संकलन किया जाता है।

अवलोकन
(Observation)

भौतिक विज्ञानों में सत्यता की जाँच करने के लिए अवलोकन या निरीक्षण को कम महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं दिया गया है। एक वैज्ञानिक किसी तथ्य को तब तक स्वीकार नहीं करेगा, जब तक वह अपनी आँखों से उसको न देख ले। वह निरीक्षण द्वारा कुछ सन्देह और भ्रांतियों को दूर कर सत्य के निकट पहुँचने की कोशिश करता है। प्रो. गुडे एवं हाट के शब्दों में, "विज्ञान निरीक्षण से आरम्भ होता है और इसके सत्यापन के लिए अन्त में निरीक्षण पर ही लौट कर आना पड़ता है।"[1]

प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति ही सामाजिक विज्ञानों में भी अवलोकन के महत्त्व को कम नहीं आँका जा सकता। निरीक्षण पद्धति का प्रयोग समाज-वैज्ञानिकों द्वारा वर्ग समुदाय, स्त्री पुरुषों, संस्थाओं के अध्ययन के लिए किया जा रहा है। जैसे-जैसे आधुनिक यन्त्रों का सामाजिक अनुसन्धान में प्रयोग होता जा रहा है, अवलोकन पद्धति को उतना ही महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया जा रहा है। ऐसी अनेक पद्धतियों की खोज हुई है जिनके द्वारा निरीक्षण अधिक विश्वसनीय होता जा रहा है।

परिभाषाएँ (Definitions)

'निरीक्षण' अंग्रेजी शब्द 'Observation' का पर्यायवाची है, जिसका अर्थ 'निरीक्षण करना' है। अंग्रेजी शब्दकोष के अनुसार, "कार्य-कारण अथवा पारस्परिक सम्बन्ध को जानने के लिए घटनाओं को ठीक अपने उसी रूप में देखना और उनका आलेखन करना, अवलोकन कहलाता है।"

सी. ए. मोजर के शब्दों में, "ठोस अर्थ में अवलोकन का अर्थ कानों तथा वाणी की अपेक्षा आँखों का अधिक प्रयोग है।"[2]

1 "Science begins with observation and must ultimately return to observation for its final validation."
—*Goode and Hatt* : Methods in Social Research, p. 119

2. "In the strict sense, observation implies the use of the eyes rather than of the ears and the voice."
—*C. A. Moser* : Survey Methods in Social Investigation, p. 168

पी वी यंग के मतानुसार, "प्रवलोकन आँखों द्वारा विचारपूर्वक अध्ययन की प्रणाली के रूप में काम में लाया जाता है जिससे कि सामूहिक व्यवहार और जटिल सामाजिक संस्थाओं के साथ-ही साथ सम्पूर्णता की रचना करने वाली पृथक् इकाइयों का अध्ययन किया जा सके।"[1]

प्रवलोकन की विशेषताएँ (Characteristics of Observation)

1. मानव-इन्द्रियों का प्रयोग—प्रवलोकन में मानव-इन्द्रियों का प्रयोग होता है। इसमें आँख, कान, व वाणी का प्रयोग कर सकते हैं परन्तु नेत्रों के प्रयोग पर अधिक बल दिया जाता है। मोजर के अनुसार, "सच्चे अर्थ में अवलोकन में कानों तथा वाणी की अपेक्षा नेत्रों का उपयोग ही विशेष रूप से सम्मिलित है।"

2 प्राथमिक सामग्री को प्राप्त करना (To Obtain Primary Data)—प्रवलोकन की मुख्य विशेषता घटनास्थल पर जाकर वस्तुस्थिति को देख, प्राथमिक सामग्री का संकलन करना है।

3 सूक्ष्मता (Minuteness)—निरीक्षण के अन्तर्गत मात्र देखना ही नहीं है वरन् घटना का गहरा एवं सूक्ष्म अध्ययन करना भी है। सूक्ष्म अध्ययन से वह उद्देश्य की प्राप्ति में सफल हो जाता है अन्यथा इधर उधर भटकता रहेगा।

4. कारण और परिणाम के सम्बन्ध का पता लगाना (To find out the Relationship of cause and effect)—प्रवलोकन का शाब्दिक अर्थ देखना या निरीक्षण करना है, वैज्ञानिक अर्थ में इसका उद्देश्य कारण-परिणाम के सम्बन्ध का पता लगाना है। निरीक्षणकर्त्ता स्वयं घटना (Phenomenon) को देखकर आवश्यक कारणों तथा परिणामों के मध्य सम्बन्ध स्थापित करता है।

5. व्यावहारिक या अनुभवाश्रित अध्ययन (Empirical Study)—प्रवलोकन कल्पना पर आधारित न होकर अनुभव पर आधारित है। अनुभवाश्रित अध्ययन चाहे किसी संस्था का हो या समुदाय का, सामाजिक अनुसन्धान में बड़ा उपयोगी है।

6. निष्पक्षता (Impartiality)—चूँकि अध्ययनकर्त्ता स्वयं अपनी आँखों से घटना का निरीक्षण करता है व उसकी भलीभाँति जाँच करता है, अतः उसका निर्णय दूसरों के निर्णय या कहने-सुनने पर आधारित नहीं होता है। स्वयं का सूक्ष्म व गहन अध्ययन उसे अभिनति से बचाता है।

प्रवलोकन या निरीक्षण के प्रकार (Kinds of Observation)

1. सहभागी अवलोकन (Participant Observation)—संक्षेप में सहभागी प्रवलोकन का अर्थ है कि अनुसंधानकर्त्ता स्वयं किसी समूह का अंग बन जाता है। वह

1 "Observation—a deliberate study through the eye may be used as one of the methods for scrutinizing collective behaviour and complex social institutions as well as the separate units composing a totality."

—*P. V. Young*. Scientific Social Surveys and Research, p. 129.

समूह की समस्त क्रियाओं में सक्रिय सदस्य होकर भाग लेता है और सूक्ष्मता से उसकी आदतों, व्यवहार व रीति रिवाजों का निरीक्षण करता है। इस प्रकार के निरीक्षण द्वारा वह वास्तविक व निष्पक्ष तथ्यों का सकलन करता है।

2 असहभागी अवलोकन (Non-Participant Observation)—इसके अन्तर्गत निरीक्षणकर्त्ता, समुदाय की क्रियाओं में भागीदार नहीं बनता बल्कि केवल दूर से निरीक्षण कर गहराई तक पहुँचने की कोशिश करता है। इस पद्धति की यह विशेषता है कि निरीक्षणकर्ता स्वतन्त्र और निष्पक्ष अध्ययन एक तटस्थ के रूप में करता है।

3 अर्द्ध-सहभागी निरीक्षण या अवलोकन (Quasi-Participant Observation)—अर्द्ध-सहभागी अवलोकन सहभागी व असहभागी निरीक्षणों का मध्य मार्ग है। इसके अन्तर्गत, अवलोकन-कर्त्ता कुछ साधारण कार्यों में भाग लेता है और शेष का एक तटस्थ द्रष्टा के रूप में निरीक्षण करता है। विलियम व्हाइट का कथन है कि समाज की जटिलता के कारण पूर्ण एकीकरण अव्यावहारिक है, अत अर्द्ध तटस्थ नीति ही उत्तम है।

4 अनियन्त्रित अवलोकन (Non-Controlled Observation)—इसके अन्तर्गत घटना तथा अवलोकनकर्ता पर किसी प्रकार का नियन्त्रण नहीं होता। प्रारम्भ में इसी प्रणाली को प्रयोग में लाया जाता था और उसी के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते थे। सामाजिक अनुसन्धान की प्रकृति भी कुछ इस प्रकार की है कि सदैव नियन्त्रित अवलोकन सम्भव नहीं हो सकता। घटनास्थल पर जाकर ही सामाजिक घटनाओं का सामान्यत. अध्ययन किया जाता है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इसका मुख्य दोष यह है कि अनियन्त्रित परीक्षण भावनाओं की प्रबलता पर आधारित है जो किसी सत्य एवं ठोस निष्कर्षों पर पहुँचने में बाधा पहुँचाती है। इस प्रकार के निरीक्षण में अभिनति या पक्षपात प्रवेश कर जाता है। श्री. जे बर्नार्ड्स (J. Bernards) के शब्दों में, 'आँकड़े इतने वास्तविक एवं सजीव होते हैं और उनके बारे में हमारी भावनाएँ इतनी दृढ़ होती हैं कि कभी-कभी विस्तार के लिए अपने भावों की पुष्टि से गलती करने लगते हैं।'[1] फिर भी अनियन्त्रित निरीक्षण को उस समय प्रयोग किया जाता है जब सामाजिक घटना की प्रकृति बड़ी जटिल होती है।

5. नियन्त्रित अवलोकन (Controlled Observation)—अनियन्त्रित अवलोकन के दोषों के कारण, नियन्त्रित अवलोकन का विकास एवं प्रगति हुई है।

1. "The data are so real and vivid and therefore our feelings about them are so strong that we sometimes lead to mistake the strength of our emotions for extensiveness of knowledge."

—*Jessie Bernards* Fields and Methods of Sociology, p 273

इस प्रकार के निरीक्षण की यह विशेषता है कि इसमे न केवल निरीक्षणकर्त्ता पर नियन्त्रण होता है, बल्कि सामाजिक घटनाओ एव कार्यक्रमो पर भी नियन्त्रण स्थापित किया जाता है। अवलोकन की सम्पूर्ण योजना पहले से ही तैयार कर ली जाती है, बाद मे निरीक्षण द्वारा सूचनाओं को एकत्र किया जाता है। इस पद्धति का प्रयोग थाइलैंड के सारापी जिले मे स्वास्थ्य की दशाओ का अध्ययन हेतु किया गया था।

नियन्त्रण को दो भागो मे विभाजित किया जा सकता है—

(I) सामाजिक घटना पर नियन्त्रण (Control over Social Phenomenon)—जिस प्रकार भौतिक जगत् की परिस्थितियो को प्रयोगशाला की नियन्त्रित अवस्था मे लाया जाता है, उसी प्रकार सामाजिक घटनाओ को भी नियन्त्रित अवस्था मे लाने का प्रयत्न किया जाता है। अधिकाश सामाजिक घटनाएं प्रायोगिक विधि के लिए उपयुक्त नही होती, अतः इस प्रकार का नियन्त्रण पाना काफी कठिन कार्य है। इसके अन्तर्गत सफल प्रयोग केवल बालको पर ही हो सके हैं। इसके सफल प्रयोग के लिए अनुसन्धानकर्त्ता को सूझ बूझ एव कुशलता से कार्य करना पडता है।

(II) अवलोकनकर्त्ता पर नियन्त्रण (Control over Observer)—सामाजिक घटनाओ पर नियन्त्रण रख सकना काफी कठिन कार्य है, निरीक्षणकर्त्ता स्वय पर नियन्त्रण अवश्य रख सकता है। निरीक्षणकर्त्ता यदि पक्षपातपूर्ण व व्यक्तिगत दोषो से बचना चाहता है तो स्वय को नियत्रणो मे आबद्ध करना होगा। यह नियन्त्रण कुछ साधनो के प्रयोग से हो सकता है। निरीक्षण की भलीभांति योजना तैयार करके वह कैमरा, टेपरिकार्डर डायरी, पैमानो इत्यादि को प्रयोग मे ला सकता है। इससे परिणामो मे निष्पक्षता व सत्यता अधिक होगी।

6 सामूहिक अवलोकन (Mass Observation)—यदि किसी एक ही सामाजिक घटना का विभिन्न अनुसन्धानकर्त्ताओ द्वारा निरन्तर अलग-अलग निरीक्षण किया जाता है, तो उसे 'सामूहिक अवलोकन' कहते हैं। सिन पाओ यॉग के शब्दो मे, "यह नियन्त्रित व अनियन्त्रित अवलोकन का सम्मिश्रण होता है। इसमे कई व्यक्ति मिलकर सामग्री को एकत्र करते हैं और तत्पश्चात् सब मिलकर उस पर विचार-विमर्श करते हैं।"[1] इससे स्पष्ट है कि एक ही घटना का अनेक व्यक्तियो द्वारा अवलोकन किया जाता है। इस प्रकार के अवलोकन का यह लाभ है कि पुनरावृत्ति एव कई व्यक्तियो के अध्ययन से पक्षपात की सम्भावना नही रहती है। सन्देह एव भ्रम को आसानी से दूर किया जा सकता है। इसका प्रयोग वे ही कर सकते हैं जो अधिक सामग्री, पैसा व समय काम मे ला सकते हैं। अमेरिका और इग्लैंड मे इस पद्धति का प्रचलन है।

1. "Mass observation is a combination of controlled and uncontrolled observation. Mass observation depends on the observing and recording of information by a number of people and the pooling and treatment of their contribution by a central person." —*Hsin Pao Young*

अवलोकन के गुण (Merits of Observation)

1. वैषयिकता (Objectivity)—अवलोकन द्वारा अनुसन्धानकर्त्ता स्वयं घटना की वस्तुस्थिति का पता लगाता है। वह अपनी ओर से कुछ नहीं मिलाता है, जो देखता है, जैसा देखता है उसका वैसा ही विवरण वह प्रस्तुत करता है। अतः अवलोकन द्वारा संकलित तथ्य-सामग्री में अभिनति या पक्षपात प्रवेश नहीं कर पाता है।

2. विश्वसनीयता (Reliability)—इस पद्धति द्वारा प्राप्त तथ्यों पर विश्वास किया जा सकता है क्योंकि घटनास्थल पर आँखों देखी स्थिति का वास्तविक ज्ञान होता है। प्रश्नावली या साक्षात्कार के लिए अध्ययनकर्त्ता को सूचनादाता पर निर्भर होना पड़ता है, अतः इस विधि (प्रश्नावली) द्वारा प्राप्त सूचनाएँ या तथ्य गलत भी हो सकते हैं। इस पद्धति में वह स्वयं सब कुछ देखता है, अतः गल्तियों की सम्भावना कम ही रहती है।

3. सरलता (Simplicity)—अवलोकन विधि सबसे सरल मानी जाती है। अनुसन्धानकर्त्ता को स्वयं को भी दिलचस्पी होती है कि वह घटनाओं का अवलोकन स्वयं कर निष्पक्ष एवं उपयोगी सामग्री प्राप्त करे। इसकी सरलता के कारण समाजशास्त्री व वैज्ञानिक इसको काफी महत्त्व देते हैं।

4. सत्यापनशीलता (Verifiability)—अवलोकन द्वारा तथ्यों की जाँच हो सकती है। अनुसंधानकर्त्ता एक ही सामाजिक घटना का कई बार निरीक्षण करके घटना की सत्यापनशीलता की परीक्षा कर सकता है।

अवलोकन की सीमाएँ (Limitations of Observation)

पी. वी. यंग के अनुसार, "समस्त घटनाएँ निरीक्षण का अवसर नहीं देतीं, जो घटनाएँ निरीक्षण का अवसर देती हैं उनमें अवलोकनकर्त्ता पास में नहीं होता एवं समस्त घटनाओं का अवलोकन पद्धतियों द्वारा अध्ययन सम्भव नहीं होता है।"[1]

अवलोकन द्वारा जो तथ्य-सामग्री एकत्र की जाती है, उसके निम्नलिखित दोष या सीमाएँ हैं—

(i) अवलोकनकर्त्ता का पक्षपात (Partiality of the Observer)—अवलोकनकर्त्ता अपने निरीक्षण व विचार में बहुत स्वतंत्र होता है, अतः घटनाओं को देखने में अपना दृष्टिकोण काम में लेता है। एक ही घटनास्थल पर यदि अलग-अलग लोग निरीक्षण करें तो उनके अध्ययन में भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण मिलेंगे। उदाहरण के लिए, बंगलादेश में नरसंहार, बलात्कार, हत्या, व मौत की जो घटनाएँ

1. "Not all occurrences are, of course, open to observation, not all occurrences open to observation can be observed when an observer is at hand, not all occurrences lend themselves to study by observational techniques."
—*Pauline V. Young*: op. cit, p. 154.

घटित हुई, उनका अवलोकन बी. बी सी (B B C), अमेरिका व भारत के संवाददाताओं ने किया, परन्तु इन सबके निरीक्षणात्मक दृष्टिकोणों में इतना अन्तर था कि कुछ भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। अत अवलोकन द्वारा तथ्य-सामग्री भी पूर्ण निष्पक्ष नहीं हो सकती।

(ii) सीमित क्षेत्र (Limited Sphere)— अवलोकन केवल छोटे समग्रों में ही उपयुक्त है। यदि विस्तृत सूचनाएँ प्राप्त करनी हो तो अवलोकन द्वारा प्राप्त करना सम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त काफी धन, समय और श्रम खर्च करना पड़ता है जो प्रत्येक के लिए सम्भव नहीं है।

(iii) विशिष्ट घटनाओं में अनुपयुक्त (Unsuitable for Specific Phenomena)—कुछ सामाजिक घटनाएँ विशिष्ट प्रकृति की होती हैं, अत उनका अवलोकन नहीं किया जा सकता, जैसे—सहानुभूति, झुकाव, क्रोध, कलह व संघर्ष इत्यादि को अवलोकन द्वारा नहीं समझा जा सकता। यदि इस सम्बन्ध में तथ्य-सामग्री एकत्र भी की गई तो विश्वसनीय नहीं हो सकती।

दोषों को दूर करने के उपाय

इन दोषों को दूर करने के लिए तथा अवलोकन को विश्वसनीय बनाने के लिए कुछ निम्न उपाय सुझाए जा सकते हैं—

1 निरीक्षण या अवलोकन-योजना (Observation Plan)—अनुसंधानकर्ता को एक विस्तृत अवलोकन योजना बनाकर तय कर लेना चाहिये कि किन किन तथ्यों का निरीक्षण करना है व कैसे करना है। यदि घटना के अनेक पहलू हो तो उसको कई पहलुओं में विभाजित कर लेना चाहिए ताकि प्रत्येक पहलू का अध्ययन भी विस्तृत और आसानी से हो।

2 अनुसूची का प्रयोग (Use of Schedules)—यदि अवलोकनकर्त्ता अनुसूची की सहायता से अवलोकन करे तो अवलोकन अधिक विश्वसनीय होगा। ये अनुसूचियाँ केवल विषय से सम्बन्धित होनी चाहिये तथा निरीक्षण की योजना भी इस प्रकार की हो कि पूर्ण सूचना प्राप्त करने में कठिनाई न हो। अनुसूची का प्रयोग वहीं लाभप्रद हो सकता है जहां अनेक कार्यकर्त्ता हो।

3 आधुनिक यन्त्रों का प्रयोग (Use of Modern Instruments)— आज कल वैज्ञानिक यन्त्रों को उपयोग में लाया जाता है जैसे—कैमरा, टेप रिकार्डर इत्यादि जिनके प्रयोग से व्यक्तिगत पक्षपात की कम सम्भावना रहती है। इनका प्रयोग बड़ी सावधानी व सतर्कता से करना चाहिये। यदि लोगों को यह पता चल जाता है कि उनके वार्तालाप को टेप किया जा रहा है या उनकी तस्वीरें ली जा रही हैं, तो ऐसी स्थिति में उनका व्यवहार कृत्रिम भी हो सकता है। अत तथ्य-सामग्री को निष्पक्ष बनाने के लिए इनका प्रयोग सावधानी से करना चाहिए।

4 समाजमितीय पैमानों का प्रयोग (Use of Socio-metric Scales)—हाल ही के अनुसंधानों में समाजमितीय पैमानों का प्रयोग लोकप्रिय व प्रचलित हो

रहा है। इन पैमानों द्वारा गुणात्मक सामाजिक तथ्यों का सही माप तैयार कर लिया जाता है, जिनके प्रयोग से अवलोकनकर्त्ता पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण नहीं अपना सकता।

5 सामूहिक निरीक्षण (Mass Observation)—सामूहिक निरीक्षण द्वारा प्राप्त तथ्यों पर विश्वास किया जा सकता है क्योंकि इसके अन्तर्गत कई विशेषज्ञों द्वारा निरीक्षण किया जाता है।

यदि उपर्युक्त बिन्दुओं को ध्यान में रखा जाये तो निरीक्षण द्वारा प्राप्त तथ्य-सामग्री विश्वसनीय होने के कारण अनुसंधान में बहुत सहायक सिद्ध हो सकती है।

सहभागी निरीक्षण
(Participant Observation)

सहभागी निरीक्षण के अन्तर्गत अध्ययनकर्त्ता स्वयं सामूहिक क्रियाकलापों में सक्रिय भागीदार बनता है। वह समूह के साथ इतना घुलमिल जाता है कि मानो वह समूह का प्रारम्भिक सदस्य ही हो। इस घनिष्ठता के फलस्वरूप वह उस समूह की आदतों, व्यवहारों व रीति रिवाजों का अध्ययन वैषयिक रूप में कर सकता है। इस प्रणाली का प्रयोग काफी समय पहले से होता आ रहा है। इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग लिण्डमैन (Lindeman) ने सन् 1924 में अपनी पुस्तक 'Social Discovery' में किया था। लिण्डमैन का कथन है—"सहभागी निरीक्षण इस सिद्धान्त पर आधारित है कि किसी घटना का शुद्ध निर्वचन उस स्थिति में हो सकता है जब वह बाह्य तथा आन्तरिक दृष्टिकोण दोनों से निर्मित हो। इस प्रकार उस व्यक्ति का दृष्टिकोण जिसने घटना में भाग लिया एवं जिसकी इच्छायें और स्वार्थ, जो किसी न किसी रूप में मौजूद थे, उस व्यक्ति के दृष्टिकोण से निश्चिय ही भिन्न होगा जो सहभागी न होकर केवल द्रष्टा या विवेचनकर्त्ता के रूप में रहा है।"

सहभागी निरीक्षण का अर्थ एवम् परिभाषाएँ
(The Meaning and Definitions of Participant Observation)

डॉ० एम० एच० गोपाल के अनुसार, "सहभागी निरीक्षण इस मान्यता पर आधारित है कि किसी घटना की व्याख्या या अर्थ (Interpretation) तभी अधिक विश्वसनीय और विस्तृत हो सकता है जब अनुसंधानकर्त्ता परिस्थिति की गहराइयों में पहुँच जाता है।"[1] अर्थात् अनुसंधानकर्त्ता स्वयं सहभागी के रूप में परिस्थितियों की गहराइयों में पहुँच कर वैषयिक परिणाम (Objective results) प्राप्त कर सकता है।

पीटर एच० मान के शब्दों में, "सहभागी निरीक्षण का अभिप्राय प्रायः ऐसी

1 "Participant observation is based on the assumption that an interpretation of an event can be more reliable and detailed when the investigator gets into the depths of the situation
—*M H Gopal* An Introduction to Research Procedure in Social Sciences, p 171

स्थिति से होता है जिसमे निरीक्षणकर्त्ता अपने अध्ययन समूह के उतने ही निकट होता है जितना कि उसका कोई सदस्य होता है तथा उसकी सामान्य क्रियाओं मे भाग लेता है।'[1]

लुण्डबर्ग और मारग्रेट लॉसिंग के मतानुसार 'इस पद्धति के लागू करने मे यह अनुभव करना आवश्यक है कि न केवल अध्ययनकर्त्ता ही यह अनुभव करे कि वह सामूहिक जीवन मे भाग ले रहा है बल्कि समूह के सदस्य भी उसके विषय मे ऐसा ही अनुभव करे।"[2]

गुडे तथा हाट्ट के अनुसार, "इस कार्यप्रणाली का प्रयोग उस समय किया जाता है जबकि अनुसधानकर्त्ता अपने को समूह के सदस्य के रूप मे स्वीकृत हो जाने योग्य बना लेता है।"[3]

रेमण्ड फर्थ (Raymond Firth) के शब्दो मे 'किसी विशेष सस्कार या उत्सव मे लोग किसी सहयोगी की ही कल्पना कर सकते हैं निरीक्षणकर्त्ता की नही। ऐसी स्थिति मे यह आवश्यक है कि कोई समूह के बाहर न रह कर उसका ही अग बन कर रहे।'[4]

पी० वी० यग के मतानुसार, 'सहभागी निरीक्षणकर्त्ता, अध्ययन किये जाने वाले समूह के बीच में रहता है अथवा अन्य प्रकार से उसके जीवन मे भाग लेता है।"

उपर्युक्त परिभाषाओ के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सहभागी निरीक्षणकर्त्ता समूह का अग बन कर रहता है जिससे वह जीवन के प्रत्येक अग की गहराई से छानबीन कर सके। वह तटस्थ होकर जीवन के विविध पक्षो का अध्ययन नही कर सकता। इसमे यह सावधानी अवश्य रखनी पड़ती है कि वह जिन पक्षो का अवलोकन करता है, वह अनुसन्धान की सामग्री के अनुरूप होना चाहिये। उसे अपने उद्देश्यो के बारे मे स्पष्ट होना चाहिये तथा इस बात का भी

1 "Participant observation usually refers to a situation where the observer becomes as near as may be a member of the group he is studying, and participates in their normal activities "
—*Peter H Mann* Methods of Sociological Enquiry, p 88

2 *Lundberg and Margret* "The Sociolography- Some Community Relations", American Sociological Review.

3 "This procedure is used when the investigator can so disguise himself as to be accepted as a member of the group "
—*Goode and Hatt* op cit, p 121

4 "In a specific ceremony they conceive only of participants, not of observers At such a time one cannot be out of the group, one must be of it "
—*Raymond Firth* 'We, The Tikopia,' p 11

ध्यान रखना चाहिये कि वह मुख्यत एक अनुसन्धानकर्त्ता है। वह समूह मे कही ऐसा न घुल-मिल जाए कि उस अपने कार्य की सुध-बुध ही न रहे और केवल कार्य-कलापो का निरीक्षण ही करता रहे। अत यह स्पष्ट होना चाहिए कि वह समूह का सक्रिय सदस्य रहते हुए भी अपना ध्यान मुख्यत अनुसन्धान पर रखे।

जहाँ तक निरीक्षणकर्त्ता के समूह मे भाग लेने का प्रश्न है, इस सम्बन्ध मे दो विचारधाराएँ प्रचलित हैं। अमेरिकन समाज वैज्ञानिको के अनुसार निरीक्षणकर्त्ता को समूह की क्रियाओ मे भाग अवश्य लेना चाहिये, परन्तु उसे अपना वास्तविक परिचय तथा मूल उद्देश्य समूह के समक्ष स्पष्ट नही करना चाहिये। उसे इतनी चतुराई से काम लेना चाहिये कि समूह के सदस्य उसे अपना ही व्यक्ति अथवा अपना विश्वासपात्र समझें। इस पद्धति का प्रयोग करने वालो मे मुख्यत' सुप्रसिद्ध मानवशास्त्री मेलिनोव्स्की व रेमण्ड फर्थ हैं, जिन्होंने क्रमशः अग्रोनाट्स (Agronauts) जनजाति व 'टिकोलिया' के अध्ययन मे इसी पद्धति का प्रयोग किया था। जोन होवार्ड ने भी जेलो की स्थितियो के अध्ययन के लिये इस पद्धति का प्रयोग किया था।

इस पद्धति मे अध्ययनकर्त्ता की स्थिति बड़ी विचित्र होती है। वह कई बातो को छिपाता है। कभी-कभी विभिन्न वेश-भूषा धारण करके अध्ययन करता है जैसे—फकीर, धार्मिक प्रचारक, साधु, संत, व्यापारी, डॉक्टर इत्यादि। यह अध्ययन वस्तुत गुप्त रूप मे ही हुआ करता है क्योंकि अध्ययनकर्त्ता अपना वास्तविक स्वरूप छिपा देता है और कृत्रिम रूप धारण कर सदस्यो के साथ घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित कर, उनसे अभीष्ट जानकारी प्राप्त करता है। इस प्रकार की जानकारी हमारे देश मे अमेरिका के सी० आई० डी० (गुप्तचर विभाग) के कई सदस्य गुप्त रूप मे कर रहे हैं, जिनकी आलोचना ससद मे कई बार हो चुकी है तथा सरकार ने भी आश्वासन दिया है कि उनकी गतिविधियों पर पूर्ण नियत्रण रखा जायेगा। दूसरे मत, जिसमे भारतीय समाज वैज्ञानिक हैं, के अनुसार निरीक्षणकर्त्ता को अपना परिचय तथा उद्देश्य स्पष्ट रूप से समूह को बता देना चाहिए। इससे यह लाभ है कि समूह के सदस्य उस पर किसी प्रकार की शका नहीं करेंगे तथा उसके अनुसधान के उद्देश्य को ध्यान मे रखते हुए उसके प्रति अपने व्यवहार में परिवर्तन नहीं लायेंगे।

व्यावहारिक उपयोगिता (Practical Utility)

सहभागी निरीक्षण का अनेक अनुसधानो में प्रयोग किया जा रहा है। इसका *मुख्य उद्देश्य किसी वर्ग, समुदाय या संस्था का नजदीकी* से अध्ययन व अवलोकन कर, अध्ययन को अधिक विश्वसनीय व उपयोगी बनाना है। अनुसधान-कर्त्ता जब सक्रिय होकर गतिविधियो मे भाग लेता है तो वह अपने समस्त आनन्द, आराम व सुख भूल जाता है। जॉन होवार्ड ने तो जेल के कैदियों का अध्ययन करने के लिए स्वय तक का बलिदान कर दिया। लीप्ले (Le Play) व चार्ल्स बूथ सभी प्रकार के कष्ट पाकर परिवारों के साथ रहे तथा उनकी वास्तविक स्थिति का पता

लगाया। यदि वे स्वयं भाग नही लेते तो परिवारो की कई छिपी हुई वास्तविक स्थितियो का किसी को भी पता नही चलता केवल बाह्य रूप से उनके बारे मे निर्णय लिया जाता। इसके अतिरिक्त आदिम समाजो व मतदाताओ की मानसिक वस्तु स्थिति का पता लगाने के लिये यह पद्धति श्रेष्ठ है। औद्योगिक अनुसधानो मे भी यह पद्धति काफी लोकप्रिय है। सस्कृति के किसी पक्ष जैसे—उत्सव, परम्पराएँ, मनोरजन इत्यादि के अध्ययन करने मे सहभागी निरीक्षण का ही अधिकाशत प्रयोग किया जाता है। इस पद्धति द्वारा लोगो की प्रवृत्तियो व आतरिक स्थिति को जानने का अवसर मिल जाता है। अत हमारे व्यावहारिक जीवन मे न केवल इसकी उपयोगिता ही है वरन् यह हमारे जीवन का अभिन्न अग बन गया है।

सहभागी निरीक्षण के गुण (Merits of Participant Observation)

1. सूक्ष्म अध्ययन (Minute Study)—सहभागी निरीक्षण के अन्तर्गत अध्ययनकर्त्ता समूह से घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित करता है। इससे उसे सूक्ष्म अध्ययन करने का अवसर मिल जाता है। वह सदस्यो के आतरिक जीवन का पता आसानी से लगा सकता है क्योकि वह स्वय समूह का सदस्य बनकर उसकी विविध गतिविधियो मे भाग लेता है। ऐसा अवसर अन्य पद्धतियो मे सम्भव नही है क्योकि अन्यत्र प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करने का प्रश्न ही नही उठता।

2 स्वाभाविक व्यवहार का अध्ययन (Study of Natural Behaviour)—इसके अन्तर्गत समूह के सदस्यो के स्वाभाविक व्यवहार के अध्ययन मे सहायता मिलती है। चूंकि अध्ययनकर्त्ता समूह मे इतना घुल मिल जाता है कि समूह के सदस्यो को यह महसूस ही नही होता है कि उनके मध्य कोई अजनबी या विदेशी तत्व आ गया है। अत उनके व्यवहार व आदतो मे कृत्रिमता नही आ पाती है। कृत्रिमता न आने के कारण, अनुसधानकर्त्ता का अध्ययन सरल व वैषयिक बन जाता है।

3 परम्पराओं व रिवाजों का वास्तविक अध्ययन (The real Study of Traditions and Customs)—सहभागी निरीक्षण के अन्तर्गत निरीक्षणकर्त्ता समूह की परम्पराओ व रीति-रिवाजो का वास्तविक चित्रण अवलोकन द्वारा प्राप्त कर सकता है। कुछ रिवाज ऐसे होते हैं जिनका प्रदर्शन सामान्यत खुले रूप मे न किया जाकर किन्ही विशेष उत्सवो पर सामूहिक समुदायो मे ही किया जाता है, जिनका वास्तविक ज्ञान तभी हो सकता है, जब निरीक्षणकर्त्ता को यह मौका सहभागी के रूप मे मिलता है।

4 महत्वपूर्ण सामग्री का सकलन (Collection of Important Material)—सहभागी निरीक्षण का एक और बडा गुण यह है कि इसके द्वारा महत्वपूर्ण सामग्री का सकलन किया जा सकता है। जीवन के विविध पक्षों का जीता-जागता चित्रण अनुसधानकर्त्ता को महत्वपूर्ण सामग्री प्रदान करता है। जहाँ कभी-कभी बहुत पैसा खर्च करने पर भी मूल्यवान सामग्री हाथ नही लगती है, वहाँ

इसके अन्तर्गत निरीक्षणकर्त्ता बिना खर्च किये ही उपयोगी व महत्त्वपूर्ण सामग्री को आसानी से प्राप्त करता है।

5 विश्वसनीयता (Reliability)—इसके अन्तर्गत संग्रहित सूचनायें अधिक विश्वसनीय होती हैं क्योंकि निरीक्षणकर्त्ता स्वाभाविक रूप मे घटनाओ को रिकार्ड करता है। इसके अतिरिक्त वह घटनाओ का पुन. निरीक्षण करके उनकी सत्यता की जाँच कर सकता है।

6 सरल व सुविधाजनक अध्ययन (Easy and Convenient Study)—सहभागी निरीक्षण असहभागी निरीक्षण की अपेक्षा अधिक सरल व सुविधाजनक है, क्योंकि अध्ययनकर्त्ता निरीक्षक के रूप मे नही जाता है। वह समूह के बीच रहने लग जाता है, अत समूह क सदस्य न तो उसकी उपस्थिति का विरोध करते हैं और न उस पर किसी प्रकार का सदेह ही करते हैं।

सहभागी निरीक्षण के दोष (Demerits of Participant Observation)

1 सूचना सकलन का सकीर्ण क्षेत्र (The narrow field for the Collection of Information)—इस निरीक्षण के अन्तर्गत सूचना प्राप्ति का क्षेत्र छोटा हो जाता है। इसका कारण यह है कि समूह के सभी सदस्यो से निरीक्षणकर्त्ता घनिष्ठता नही बढा सकता बल्कि केवल कुछ सदस्य ही उसके गहरे व विश्वसनीय मित्र बन पाते हैं और उन्ही से वह अधिकाश सूचना प्राप्त करता है। बाकी सदस्य मानो उसके लिये गौण ही हों, जबकि उन लोगो का रोल भी महत्त्वपूर्ण होता है।

2 व्यक्तिगत प्रभाव (Personal Influence)—जब कभी निरीक्षणकर्त्ता का समूह के व्यक्तियो मे महत्त्वपूर्ण स्थान हो जाता है तो उन लोगो के स्वाभाविक व्यवहार मे परिवर्तन आ जाता है। ऐसी स्थिति मे वह अनेक स्वाभाविक व्यवहारो का अध्ययन नहीं कर सकता। ऐसा अक्सर उन समुदायो मे होता है जहाँ निरक्षरता व्याप्त है। वे लोग निरीक्षणकर्त्ता को ही सब कुछ समझ बैठते हैं, उनमे घबराहट व भय उत्पन्न हो जाता है और अपनी बात को व्यक्त भी नही कर पाते हैं। यह स्थिति बडी सकटमय होती है क्योंकि जिस उद्देश्य से अध्ययनकर्त्ता अध्ययन करने आया था, उसका उद्देश्य ही असफल हो जाता है।

3 पूर्ण सहभागिता असम्भव (Full Participation Impossible)—व्यावहारिक रूप से यह सम्भव नही है कि एक निरीक्षणकर्त्ता पूर्ण सहभागी बनकर घटनाओं का अवलोकन करे। यदि कोई ऐसा तर्क देता भी है कि वह समस्त घटनाओ का निरीक्षण सुगमतापूर्वक कर सकता है तो यह तर्क मिथ्या है। रैडिन के अनुसार, वास्तविक रूप से भाग लेने का तो प्रश्न ही नहीं उठता और रोमाचकारी तरीके से भाग लेना स्थिति को पूर्णत मुश्किल बना देता है। किसी भी जनजाति के अध्ययनकर्त्ता के लिये यह कल्पना करना कि आदिवासियो मे जाकर स्वय भी आदिवासी बन जाने से कुछ प्राप्त किया जा सकता है, एक बहुत बडी भूल और

धोखा है। अतः वह समुदाय के दल में भी पूर्णरूपेण भाग नहीं ले सकता। वह अपना ध्यान समूह की विभिन्न क्रियाओं पर केन्द्रित करने की कोशिश करता है, फिर भी उसका ध्यान मूल समस्या से कुछ सीमा तक हट ही जाता है।

4. अभिनति की सम्भावना (Possibility of Bias)—सक्रिय सहभागी बन जाने के कारण, निरीक्षणकर्त्ता समूह से तारतम्य व भावात्मक एकीकरण स्थापित कर लेता है। वह समूह के सुख-दुःख, विपत्तियों हर्ष आदि में भाग लेता है जिससे उसका झुकाव व आकर्षण उनकी ओर बढ़ जाता है। समूह के सदस्यों के साथ घनिष्ठता होने से उनके साथ सहानुभूति दिखाने की प्रवृत्ति बढ़ जाती है जिससे उसका वैज्ञानिक दृष्टिकोण धीरे-धीरे गायब हो जाता है। अपने निष्कर्षों में वह वैषयिकता (Objectivity) नहीं ला सकता। गुडे तथा हाट्ट के अनुसार, 'वह जितना अधिक भावात्मक रूप में सहभागी बनता है उतनी ही उसकी वैषयिकता जो एकमात्र सबसे बड़ी निधि है, नष्ट हो जाती है वह तथ्यों को रिकार्ड करने की अपेक्षा क्रोधित होकर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। वह समुदाय में प्रतिष्ठा को प्राप्त करने की कोशिश करता है न कि उनके व्यवहार को देखने की''''' ।''[1]

5. दोहरे अभिनय में सन्तुलन बनाए रखने की कठिनाई (Difficulty of maintaining balance in the Double-role)—अनुसंधानकर्त्ता को इस निरीक्षण में दो भूमिकाएँ अलग अलग अदा करनी होती हैं। उनका एक रोल वैज्ञानिक के रूप में होता है और दूसरा समूह के सक्रिय सदस्य के रूप में। ऐसी स्थिति में सन्तुलन बनाए रखना मुश्किल है। विलियम एफ० ह्वाइट (William F Whyte) का कथन है, "यह कोई एक शाम को अभिनय करने की बात नहीं है। इसका अर्थ सारे समय सफल अभिनय करना है। मेरी समझ में ऐसे सफल अभिनेता का मिलना संदेहप्रद ही है जो अनुसंधान में भी रुचि रखता हो।"

6 समय खाने वाली प्रणाली (Time Consuming Method)—इस अवलोकन के अन्तर्गत समूह से घनिष्ठ सम्पर्क बनाने में अधिक समय लगता है। अवलोकनकर्त्ता अनायास ही समूह से सम्पर्क स्थापित नहीं कर सकता। उसे नवीन परिस्थितियों के नवीन समूह या समुदायों व वातावरण के अनुकूल बनने में समय लगता है।

7 सीमित प्रयोग (Limited Use)—सहभागी निरीक्षण का प्रयोग साधारण समूहों में ही किया जा सकता है। विशेष प्रकार के समूहों, जैसे—अपराधियों के

1 "To the extent that he participates emotionally, he comes to lose the objectivity which is his single greatest asset He reacts in anger instead of recording He seeks prestige or ego satisfaction within the group, rather than observing this behaviour in others He sympathesises with tragedy and may not record its impact upon his fellow members"

—*Goode and Hatt* op. cit, p 122.

समूह का निरीक्षण करने के लिए स्वयं अपराधी नहीं बन सकता। ऐसी परिस्थिति मे यह पद्धति उपयुक्त नही है।

8 अधिक खर्चीली (More Expensive)—सहभागी निरीक्षण पद्धति अधिक खर्चीली इस अर्थ मे है कि अनुसंधानकर्त्ता को तथ्यो की प्रामाणिकता सिद्ध करने के लिए बार-बार घटनास्थल पर जाकर निरीक्षण करना पड़ता है जिससे उसके कई खर्च बढ़ जाते हैं। साधारण अनुसन्धानकर्त्ता के लिए आर्थिक दृष्टि से सम्भव नही कि वह बार-बार क्रियाकलापो का अध्ययन कर, अपना अनुसंधान जारी रखे। इन सीमाओ या दोषो के बावजूद भी, सहभागी निरीक्षण को अधिक विश्वसनीय, अधिक महत्वपूर्ण व अधिक वैषयिक माना जाता है।

असहभागी निरीक्षण
(Non-Participant Observation)

असहभागी निरीक्षण उसे कहते हैं जिसके अन्तर्गत अनुसंधानकर्त्ता तटस्थ भाव से समूह के क्रियाकलापो का अध्ययन करता है। वह समूह का क्रियाओ मे बिना भाग लिए एक मौन दर्शक के रूप मे अवलोकन करता रहता है। वह जो कुछ देखता है, सुनता है एव प्रतिक्रियाओ का अवलोकन करता है, उन्हे अपनी लेखनी से लिखता है। वह दूर बैठा हुआ, समूह के समस्त बाह्य पहलुओ का अध्ययन करता है जैसे एक मनोवैज्ञानिक बच्चो की क्रियाओ का अध्ययन करने के लिए अलग बैठकर अवलोकन करता है वैसे ही वह समूह के बीच रहता है, परन्तु उसका अभिन्न अग नही बनता है। इस पद्धति द्वारा अनुसंधानकर्त्ता स्वतन्त्र एव निष्पक्ष होकर अध्ययन करता है।

असहभागी निरीक्षण के गुण (Merits of Non-participant Observation)

1 अनुसंधानकर्त्ता समूह की भावनाओ से प्रभावित नही होता, अत. उसका अध्ययन निष्पक्ष और स्वतन्त्र होगा।

2. इस पद्धति के अन्तर्गत सकलित की गई सूचनाएँ अधिक विश्वसनीय होती हैं, क्योंकि वह एक मौन निरीक्षणकर्ता के रूप मे क्रियाओ का अवलोकन दूर से बैठा करता है।

3 समय, शक्ति व धन की बचत होती है।

4 अनुसंधानकर्त्ता समूह की घटनाओ मे स्वय भागीदार न होने के कारण उसके अध्ययन मे अभिनति या पक्षपात की सम्भावना कम रहती है।

5. असहभागी निरीक्षण में अध्ययनकर्त्ता अपना परिचय देने से समूह का अधिक सम्मान व सहानुभूति प्राप्त करता है।

असहभागी निरीक्षण के दोष (Demerits of Non-participant Observation)

1. बिना सक्रिय भाग लिए अनुसंधानकर्त्ता सामाजिक जीवन की गहराइयों मे नहीं पहुँच पाता है।

2 अनुसंधानकर्त्ता के इस प्रकार के अध्ययन से उसका निरीक्षण भावात्मक व एकपक्षीय हो सकता है क्योंकि वह समूह के सदस्यों में घुलता-मिलता नहीं है अत उनकी भावनाओं को समझने में गलती कर बैठता है।

3 एक मौन एवं पृथक् दर्शक के रूप में अध्ययन करने से समूह के सदस्यों में उसके प्रति शंका की सम्भावना अधिक रहती है।

4 पूर्णत असहभागी निरीक्षण सम्भव नहीं है। प्रो० गुडे तथा हाट्ट के शब्दों में, "जैसा कि विद्यार्थी समझ सकते हैं, विशुद्ध असहभागी निरीक्षण कठिन है।"[1]

5 निरीक्षणकर्त्ता का स्वय का व्यवहार कृत्रिम हो जाता है, अत वह स्वाभाविक रूप में समूह के सदस्यों का अध्ययन नहीं कर पाता।

इन सीमाओं के होते हुए भी, असहभागी निरीक्षण का प्रयोग उन विशेष परिस्थितियों में किया जाता है जहां सहभागी निरीक्षण द्वारा अध्ययन सम्भव नहीं होता है।

साक्षात्कार
(Interviewing)

क्षेत्रीय कार्य पद्धतियों में साक्षात्कार पद्धति का स्थान सर्वोपरि है। व्यक्तियों की मनोवृत्तियों भावनाओं और आतरिक विचारों का अध्ययन एवं विश्लेषण करने के लिए साक्षात्कार एक उपयोगी पद्धति है। इसमें अध्ययनकर्त्ता और सूचनादाता एक दूसरे से आमने-सामने सम्बन्ध स्थापित कर वार्तालाप करते हैं जिसके द्वारा अध्ययनकर्त्ता अभीष्ट सामग्री को प्राप्त करता है। इस पद्धति का प्रयोग सामाजिक विज्ञानों के अनुसधान में ही सम्भव है। भौतिक अनुसधानों का सम्बन्ध जड-पदार्थों से है, परन्तु सामाजिक अनुसधानों का सम्बन्ध जीवित वस्तुओं से है, अत अनुसधानकर्ता को व्यक्ति की भावनाओं व इच्छाओं का ज्ञान साक्षात्कार द्वारा करना पड़ता है। वह साक्षात्कार द्वारा उपयोगी सामग्री का सकलन करता है।

परिभाषाएँ और विशेषताएँ (Definitions and Characteristics)

"साक्षात्कार को एक क्रमबद्ध प्रणाली माना जा सकता है, जिसके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के आन्तरिक जीवन में अधिक या कम कल्पनात्मक रूप से प्रवेश करता है, जो उसके लिए सामान्यत तुलनात्मक रूप से अपरिचित है।"[2]

—पी० वी० यग

1 "As the students can understand, purely non-participant observation is difficult" —*Goode and Hatt* Op cit, p 122

2. "The interview may be regarded as systematic method by which one person enters more or less imaginatively into the inner life of another, who is generally a comparative stranger to him" —*P. V. Young* Scientific Social Surveys and Research, p 212

"साक्षात्कार दो व्यक्तियों के बीच एक सामाजिक स्थिति की रचना करता है, इसमें प्रयुक्त मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के अन्तर्गत दोनों व्यक्तियों को परस्पर प्रतिउत्तर देने पड़ते हैं।"[1] —वी० एम० पामर

"औपचारिक साक्षात्कार जिसमें पूर्व निर्धारित प्रश्नों को पूछा जाता है, तथा उत्तरों को प्रमाणीकृत रूप में सकलित किया जाता है, बड़े सवेक्षणों में निश्चित रूप से सामान्य है।"[2] —सी० ए० मोजर

'साक्षात्कार क्षेत्रीय कार्य की एक पद्धति है जो एक व्यक्ति अथवा कुछ व्यक्तियों के व्यवहार को देखने कथनों को लिखने और सामाजिक अथवा समूह अन्त क्रिया के निश्चित परिणामों का निरीक्षण करने हेतु प्रयोग की जाती है। अतः यह एक सामाजिक प्रक्रिया है। यह दो व्यक्तियों के बीच अन्त क्रिया से सम्बन्धित होती है।'[3] —सिन पाओ यग

साक्षात्कार मूलत एक सामाजिक प्रक्रिया है।' —गुडे तथा हाट्ट

'साक्षात्कार व्यक्तियों के आमने सामने का कुछ बातों पर मिलना या एकत्र होना कहा जा सकता है।'[4] —एम० एन० बसु

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम सामान्यत साक्षात्कार की निम्नलिखित विशेषताएँ पाते हैं—

(1) दो या दो से अधिक व्यक्तियों का वार्तालाप या निकट सम्पर्क होता है।

(2) इस पद्धति के अन्तर्गत साक्षात्कारकर्ता और साक्षात्कारदाता में आमने सामने के प्राथमिक सम्बन्ध स्थापित होते हैं।

(3) आपसी विचारों के आदान प्रदान का अच्छा साधन है।

(4) साक्षात्कार किसी विशेष उद्देश्य को ध्यान में रख कर किया जाता है। यह सामग्री सकलन की पद्धति है।

1 'The interview constitutes a social situation between two persons the psychological process involved requiring both individuals mutually respond' —*V M Palmer* Field Studies in Sociology, p 170

2 "Formal interviewing in which set questions are asked and the answers are recorded in standardized form is certainly the normal in the large scale surveys." —*C A. Moser* *Survey Methods in Social Investigation* p 185

3 "The interview is a technique of field-work which is used to watch the behaviour of an individual or individuals, to record statements, to observe the concrete results of social or grouping interactions It is, therefore, a social process and usually involves interactions between two persons."
—*Hsin Pao Young* Fact Finding with the Rural People, p 301

4 'An interview can be defined as a meeting of persons face to face on some points"
—*M N Basu* Field Methods in Anthropology and other Social Sciences, p 21

साक्षात्कार के उद्देश्य
(Objectives of Interviewing)

साक्षात्कार के अनेक उद्देश्य हैं। साक्षात्कारकर्त्ता को उद्देश्यों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए, अन्यथा वह अपने निश्चित पथ से भटक जाएगा। निश्चित उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए, वह साक्षात्कार करते वक्त अपने को परिस्थितियों के अनुकूल ढाल सकता है। साक्षात्कार के प्रमुख उद्देश्य निम्न हैं—

(1) प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करके सूचना-संकलन करना (To collect information by establishing direct contact)—साक्षात्कार के अन्तर्गत साक्षात्कारकर्त्ता और साक्षात्कारदाता प्रत्यक्ष रूप से सम्पर्क स्थापित करते हैं। वे एक दूसरे के आमने-सामने खुली एवं स्पष्ट बातें कर पाते हैं जिससे साक्षात्कार किए जाने वाले व्यक्ति की आंतरिक बातों, मनोभावों, मनोवृत्तियों, अभिरुचियों और इच्छाओं का पता लग जाता है। इनका वास्तविक ज्ञान सामाजिक विज्ञानों के अनुसंधानों में बहुत महत्त्व का है।

(2) उपकल्पनाओं का प्रमुख स्रोत (Main Source of Hypotheses)—साक्षात्कार द्वारा सूचनादाता के सामाजिक जीवन, आदतों व मनोवृत्तियों का पता लगाया जाता है जिनसे बड़ी उपयोगी सामग्री का संकलन किया जा सकता है। नए-नए तथ्यों का उद्घाटन होता है जिनके आधार पर नवीन उपकल्पनाओं के निर्माण में साक्षात्कार सम्भवतः एक उत्तम व विश्वसनीय स्रोत है।

(3) गुप्त एवं व्यक्तिगत सूचना प्राप्त करना (To obtain Secret and Personal Information)—साक्षात्कार से व्यक्ति के गुप्त जीवन की महत्त्वपूर्ण सूचनाएं प्राप्त की जा सकती हैं। वैयक्तिक अध्ययन में व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित सूचनाएं अत्यन्त उपयोगी होती हैं। उदाहरण के लिये जब हम साक्षात्कार से किसी व्यक्ति के आवेगों, मनोवृत्तियों व आदतों का स्पष्ट चित्र प्राप्त कर लेते हैं तो हम उसके भावी जीवन की सफलता और विफलता पर न केवल भविष्यवाणी ही कर सकते हैं बल्कि साक्षात्कारदाता को विफलता में सामना करने के लिए उचित निर्देशन भी दे सकते हैं।

(4) निरीक्षण द्वारा अन्य उपयोगी सूचना प्राप्त करना (To obtain other Useful Information through Observation)—साक्षात्कारकर्त्ता को किसी व्यक्ति के साक्षात्कार के अन्तर्गत केवल साक्षात्कार का अवसर ही नहीं मिलता बल्कि वह उसके घर के वातावरण, परिस्थितियों, पड़ोस का वातावरण, सम्बन्धियों के व्यवहार, मित्रों की आदतों इत्यादि सभी का अध्ययन करने का सुनहरा मौका मिल जाता है। साक्षात्कार के बहाने से वह कई नई बातों की जानकारी प्राप्त कर सकता है, अन्यथा शायद उसे भी अनायास निरीक्षण करने में संकोच व शर्म आ सकती है। इस प्रकार साक्षात्कारकर्त्ता को निरीक्षण व साक्षात्कार दोनों करने का अवसर मिल जाता है।

साक्षात्कार के प्रकार
(Types of Interview)

साक्षात्कार का सुविधा की दृष्टि से निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकरण किया जा सकता है—

(1) **कार्यों के आधार पर वर्गीकरण**
(Classification according to Functions)

(a) **कारण-परीक्षक साक्षात्कार (Diagnostic Interview)**—कारण-परीक्षक साक्षात्कार उसे कहते हैं जब अनुसंधानकर्त्ता को किसी गम्भीर घटना या समस्या के कारणों को खोजना हो। अतः इस साक्षात्कार का मुख्य उद्देश्य समस्या के कारणों को खोजना है।

(b) **उपचार साक्षात्कार (Treatment Interview)**—अनुसंधानकर्त्ता समस्या के कारणों का पता लगाने के बाद उसके हल के लिए साक्षात्कार संचालित करता है। वह इस समस्या के निवारण के लिए सम्बन्धित व्यक्तियों संस्थाओं और संगठनों जैसे डॉक्टर, वकील, न्यायाधीश, शिक्षा संगठन आदि से सम्पर्क स्थापित कर हल ढूंढता है।

(c) **अनुसंधान साक्षात्कार (Research Interview)**—गहन तथ्यों का पता लगाने के लिए जो साक्षात्कार आयोजित किये जाते हैं उन्हें अनुसंधान साक्षात्कार कहते हैं। इसके अन्तर्गत व्यक्ति के मनोभावों, मनोवृत्तियों और अभिरुचियों व इच्छाओं का पता लगाकर नए सामाजिक तथ्यों की खोज करनी होती है।

(2) **औपचारिकता के आधार पर वर्गीकरण**
(Classification according to Formality)

(a) **औपचारिक साक्षात्कार (Formal Interview)**—इस साक्षात्कार को निर्देशित या नियोजित साक्षात्कार भी कहा जाता है। इस साक्षात्कार में अनुसूची विधि को काम में लाया जाता है। साक्षात्कारकर्ता के पास अनुसूची में दिए गए पूर्वनिर्मित प्रश्न होते हैं जिनके उत्तर वह सूचनादाता से प्राप्त करता है। सूचनादाता द्वारा दिए गए उत्तरों को वह लिखता जाता है। इस प्रकार के साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता प्रश्न पूछने में स्वतन्त्र नहीं होता है। वह न तो नए प्रश्नों को पूछ सकता है और न ही नए प्रश्न अनुसूची में जोड़ सकता है। अतः ऐसा साक्षात्कार नियन्त्रित होता है।

(b) **अनौपचारिक साक्षात्कार (Informal Interview)**—ऐसे साक्षात्कार को अनियन्त्रित साक्षात्कार (Unstructured Interview) भी कहा जाता है। इस साक्षात्कार में औपचारिक साक्षात्कार की भाँति अनुसूची तैयार नहीं की जाती है। साक्षात्कारकर्ता साक्षात्कारदाता से अपने विषय से सम्बन्धित प्रश्न करता है। साक्षात्कारदाता उनका उत्तर वर्णन या कहानी के रूप में दे सकता है। इसमें घटनाओं एवं भावनाओं के वर्णन में काफी स्वतन्त्रता रहती है। इस प्रकार वर्णन के आधार पर साक्षात्कारकर्त्ता निष्कर्ष निकालता है।

(3) सूचनादाताओं की सख्या के आधार पर
(Classification on the Basis of Number of Informants)

(a) व्यक्तिगत साक्षात्कार (Personal Interview)—व्यक्तिगत साक्षात्कार मे एक समय मे एक ही व्यक्ति से साक्षात्कार किया जाता है। साक्षात्कारकर्त्ता, सूचनादाता से प्रश्न करता जाता है और वह उसका उत्तर एक-एक करके देता है। चूंकि एक बार मे एक ही व्यक्ति से आमने-सामने वार्तालाप होती है, अत सूचनादाता को उत्तर देने मे भी प्रेरणा मिलती है।

व्यक्तिगत साक्षात्कार को बहुत लाभदायक और उपयोगी माना गया है। इसके गुणो का सक्षेप मे वर्णन निम्नाकित प्रकार से किया जाता है—

(i) वास्तविक व विश्वसनीय सूचना प्राप्त होती है।
(ii) इसमे किसी सदेह का स्पष्टीकरण तुरन्त कर दिया जाता है।
(iii) अनावश्यक प्रश्नो को छोडकर उपयोगी और आवश्यक प्रश्न पूछे जाते हैं जिनसे अभीष्ट उत्तरो की प्राप्ति होती है।
(iv) व्यक्तिगत एव सवेदनशील प्रश्नो के उत्तर समक्ष आने की सम्भावना रहती है।

सीमाऐं (Limits)

(i) एक व्यक्ति से एक ही समय साक्षात्कार करने मे समय का अधिक व्यय होता है।
(ii) व्यक्तिगत अभिनति (Personal bias) की सम्भावना बढ जाती है।
(iii) इस पद्धति मे आर्थिक व्यय भी अधिक होता है।

इन सीमाओ के बावजूद भी यह पद्धति अधिक प्रचलित है।

(b) सामूहिक साक्षात्कार (Group Interview)—इसके अन्तर्गत एक से अधिक लोगो से एक ही समय साक्षात्कार किया जाता है। साक्षात्कारकर्त्ता बिना क्रम के भी प्रश्न पूछ सकता है। वह समूह के समस्त व्यक्तियो को उत्तर देने के लिए प्रेरित करता है। इनमे से कुछ लोग एक साथ उत्तर देते हैं तो कुछ सकेतो द्वारा या हाव-भाव द्वारा उनके साथ हाँ मे हाँ मिलाते हैं। कभी-कभी समुदाय का एक व्यक्ति भी अपना मत निश्चय रूप से व्यक्त करने की कोशिश करता है। ऐसी स्थिति भी आ सकती है जब किसी सदस्य विशेष द्वारा आलोचना या विरोध भी किया जाता है तो कुछ सदस्य उसके पक्ष का भी समर्थन करते हैं। इस प्रकार एक छोटी वाद-विवाद सभा का निर्माण हो जाता है।

गुण (Merits)

(i) अधिक जनसख्या मे सामग्री सकलन का अच्छा साधन है।
(ii) चूंकि अधिक लोगो से साक्षात्कार किया जाता है, अतः प्राप्त सूचना अधिक विश्वसनीय होती है।
(iii) समय व धन दोनो का व्यय व्यक्तिगत साक्षात्कार की अपेक्षा कम होता है।
(iv) व्यक्तिगत पक्षपात की सम्भावना कम रहती है।

दोष (Demerits)

(i) सभी प्रश्नों के उत्तर एक साथ नहीं दिए जा सकते।

(ii) समूह के सदस्यों में आपसी मतभेद के कारण सही जानकारी नहीं मिल पाती तथा कभी कभी छोटा विवाद बड़े संघर्ष का रूप धारण कर लेता है।

(iii) इसमें गोपनीयता का अभाव रहता है।

(4) अध्ययन-पद्धति के आधार पर

(Classification according to Methodology)

(a) **अनिर्देशित साक्षात्कार** (*Non-directive Interview*)—इस साक्षात्कार को अव्यवस्थित या असंचालित साक्षात्कार की संज्ञा भी दी जाती है। इसके अन्तर्गत साक्षात्कारकर्ता कोई कठिन या गम्भीर समस्या रखता है जिसका उत्तर, उत्तरदाता कहानी या संक्षिप्त अथवा लम्बे विवरण के रूप में दे सकता है। साक्षात्कारकर्ता प्रश्न पूछने में स्वतन्त्र होता है परन्तु सूचनादाता को बीच बीच में टोकता नहीं है। जब उत्तरदाता अपना जवाब दे देता है, तब साक्षात्कारकर्ता अपना दूसरा प्रश्न रखता है। इस प्रकार बिना पूर्व नियोजित प्रश्नों के साक्षात्कारकर्ता प्रश्नों को पूछकर विस्तृत रूप में जानकारी प्राप्त करता है। इस प्रकार के साक्षात्कार में प्रश्नकर्ता और उत्तरदाता के अपने-अपने मुख्य विषय से भटकने की आशंका बनी रहती है। यह साक्षात्कार मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में अधिक लाभदायक व उपयोगी है।

(b) केन्द्रित साक्षात्कार (**Centralised or Focused Interview**)—इस प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग सर्वप्रथम रॉबर्ट मर्टन (Robert Merton) ने किया था। इस साक्षात्कार का प्रयोग इन्होंने रेडियो, फिल्म तथा सन्देशवाहक साधनों का प्रभाव जानने के लिए किया था। इसमें शर्त यह है कि साक्षात्कारदाता पहले से किसी विशेष परिस्थिति में, जो अनुसंधान का विषय है, रह चुका हो, उदाहरण के लिए रेडियो का सुनना। साक्षात्कारकर्ता अपना ध्यान इस बात पर केन्द्रित करता है कि उस परिस्थिति या घटना का उस पर क्या प्रभाव पड़ा। साक्षात्कारकर्ता उस घटना या परिस्थिति के प्रभाव का अध्ययन कर लेता है। यह साक्षात्कार अधिक स्वतन्त्र होता है।

(c) पुनरावृत्ति साक्षात्कार (**Repetative Interview**)—इस पद्धति का *सर्वप्रथम प्रयोग लैजार्सफील्ड (Lazarsfield) ने किया था। इस साक्षात्कार का प्रयोग* समाज में परिवर्तन के प्रभावों का अध्ययन करने के लिए किया जाता है। इन प्रभावों के अध्ययन के लिए एक ही साक्षात्कार पर्याप्त नहीं होता है। अतः साक्षात्कार को बार-बार दुहराया जाता है इसीलिए इसे हम पुनरावृत्ति साक्षात्कार कहते हैं। उदाहरण के लिए, किसी कस्बे या गाँव में शिक्षा-व्यवस्था का प्रभाव

जानने के लिए बार-बार साक्षात्कार किए जाएँगे, क्योंकि शिक्षा का प्रभाव एकदम नहीं पडता ।

उपर्युक्त साक्षात्कार का वर्गीकरण करने से अनेक कठिनाइयाँ दूर हो गई हैं, परन्तु व्यक्तिगत स्तर पर साक्षात्कार द्वारा सामग्री सकलन बहुत खर्चीला पडता है । अतः आजकल स्थाई अनुसधान सस्थाओ की स्थापना की जा रही है ।

साक्षात्कार की प्रक्रिया
(Process of Interviewing)

साक्षात्कार सम्पन्न करना एक कला है। इसके सचालन के लिए बहुत सावधानी व सतर्कता की आवश्यकता रहती है। साक्षात्कार के परिणामो को विश्वसनीय व उपयोगी बनाने के लिए, इसे विधिवत् योजना बनाकर सगठित किया जाना चाहिये । इसे वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने के लिए समय-समय पर प्रयत्न व खोजें की गई हैं। इस पर बहुतायत साहित्य भी लिखा जा चुका है । साक्षात्कार पद्धति पर लिखने वालो मे हरबर्ट हाइमन (Herbert Hyman), बिघम, वाल्टर व मूरे (Bingham, Walter and Moore), ओल्डफील्ड इत्यादि प्रमुख हैं। इन सुप्रसिद्ध लेखको ने, साक्षात्कार कैसे सचालित किया जाता है, साक्षात्कार का मनोविज्ञान, सामाजिक अनुसधान मे साक्षात्कार इत्यादि विषयो पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला है। साक्षात्कार की प्रक्रिया को सरल बनाने हेतु इसे निश्चित चरणो पर सचालित किया जाता है, वे इस प्रकार हैं—

(1) साक्षात्कार की तैयारी (Preparation of Interview)—यग के शब्दो मे, "एक दीर्घ साक्षात्कार के आयोजन के पूर्व, सम्बन्धित दशाओ की विशेष परिस्थितियो के अनुसार,सावधानीपूर्वक पहले ही विचार कर लिया जाना चाहिए ।"[1]

साक्षात्कार सचालित करने से पूर्व साक्षात्कारकर्ता को प्रारम्भिक तैयारी कर लेनी चाहिए । प्रारम्भिक तैयारी मे निम्नलिखित बातें अनिवार्यतः शामिल होनी चाहिए—

(i) समस्या से पूर्ण परिचित (Well Acquainted with the Problem)—अध्ययनकर्ता को साक्षात्कार करने से पूर्व समस्या के विभिन्न पहलुओ का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए । वह इस स्थिति मे होना चाहिए कि उत्तरदाताओ द्वारा पूछे गए प्रत्येक प्रश्न का जवाब आत्मविश्वास के साथ दे सके । उसे उत्तरदाताओं द्वारा उठाई गई कई शकाओ का निवारण करना होता है । अतः समस्या के प्रत्येक पहलू, उसके महत्त्व एव समस्या से उत्पन्न प्रभावो का ज्ञान अनुसधानकर्त्ता को होना अत्यावश्यक है । यदि उसे पर्याप्त ज्ञान नही है तो उत्तरदाता भी सतोषजनक उत्तर देने में आनाकानी कर सकते हैं, अतः इस स्थिति से बचने के लिए उसे समस्या के बारे मे पूर्णतः स्पष्ट होना चाहिए ।

1. " a long, anticipated interview should be carefully thought through in advance according to the unique circumstances of the situations involved "
—*Pauline V. Young*

(ii) साक्षात्कार निर्देशिका (Interview Guide)—समस्या से पूर्ण परिचित हो जाने के पश्चात् अध्ययनकर्ता को साक्षात्कार निर्देशिका तैयार करनी होती है। साक्षात्कार निर्देशिका मे समस्या के विभिन्न पहलुओ पर आवश्यक निर्देश दिए होते हैं। इसमे अनुसूची तथा प्रश्नावली की तरह निश्चित प्रश्न नही होते, बल्कि एक संक्षिप्त योजना का ब्यौरा रहता है। इसमे समस्या से सम्बन्धित इकाइयो की परिभाषाएँ भी दी हुई होती हैं, जिससे अनुसंधानकर्ता, सूचनादाताओ को उनका अर्थ भी स्पष्ट कर सके।

महत्व—साक्षात्कार निर्देशिका के महत्त्व को हम निम्न प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं—

(a) साक्षात्कार निर्देशिका के तैयार करने से अध्ययन मे एकरूपता आ जाती है। इस निर्देशिका का उपयोग अलग-अलग व्यक्ति भी कर सकते हैं, क्योकि इसमे स्पष्ट निर्देश रहते हैं जो सभी साक्षात्कारकर्ताओ के लिए सामान्य होते हैं।

(b) समस्या के समस्त पक्षो का समावेश होने के कारण कोई महत्त्वपूर्ण पक्ष छूट नही सकता।

(c) साक्षात्कार निर्देशिका के प्रश्नो का क्रमबद्ध तरीके से लिखा जाता है जिसमे सूचनादाता सही सूचना देने मे घबराते नही हैं। क्रमबद्धता के अभाव मे अनेको परेशानियाँ खड़ी हो जाती हैं जिससे साक्षात्कारकर्ता को तो कठिनाई होती ही है, परन्तु उत्तरदाता भी अपने को एक विचित्र स्थिति मे पाता है।

(d) साक्षात्कार निर्देशिका होने से अनुसंधानकर्ता को व्यर्थ मे स्मरण-शक्ति पर आवश्यक दबाव डालने की आवश्यकता नही रहती है।

(iii) साक्षात्कारदाताओं का चयन (Selection of Interviewers)—साक्षात्कारदाताओ का चयन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, क्योकि इन्ही पर अध्ययन निर्भर करता है। इनका चयन निदर्शन पद्धति (Sampling Method) द्वारा किया जा सकता है। ऐसे ही साक्षात्कारदाताओ का चयन करना चाहिए जिनका समस्या विशेष से सम्बन्ध हो तथा जो जानकारी देने मे संकोच या किसी प्रकार का भय न महसूस करें। चूँकि कई साक्षात्कारदाताओ की आवश्यकता रहती है, अत ऐसे लोगो की सूची तैयार कर लेनी चाहिए जो अनुसंधान-कार्यों मे थोडी दिलचस्पी भी रखते हो एम एच गोपाल के अनुसार साक्षात्कारदाताओ को तीन श्रेणियो मे रखा जाता है—(i) उच्चाधिकारी (ii) विशेष (iii) सामान्य व्यक्ति। इन साक्षात्कारदाताओ की संख्या लम्बी नहीं होनी चाहिए। मोजर के शब्दो मे, आवश्यकताओ को ध्यान मे रखते हुए, इनमे से उचित निदर्शन समूहो का चयन भी किया जा सकता है।

(iv) समय एवं स्थान का निर्धारण (Determination of time and place for interview)—साक्षात्कार लेने से पूर्व, साक्षात्कारकर्त्ता को साक्षात्कारदाता से

स्थान और समय निर्धारित कर लेना चाहिए जिससे सामने वाले को सहूलियत रहे और वह प्रसन्न मन से अभीष्ट प्रश्नों का जवाब दे सके। कई बार ऐसा होता है कि साक्षात्कारकर्त्ता बिना समय निर्धारित किए साक्षात्कारदाता के घर के दरवाजे खटखटा लेते हैं, उस समय साक्षात्कारकर्त्ता से पूछा जाता है, "कहिए, कैसे आए, क्या काम है, क्या कोई आवश्यक काम है या यह समय ठीक नहीं है, आपको मेरे काम में इस समय विघ्न नहीं डालना चाहिए था," आदि संवाद चलता रहता है। इन प्रश्नों से अथवा संवाद से, साक्षात्कारकर्त्ता बड़ा निराश होकर लौटता है, अत. इस दुविधाजनक परिस्थिति से बचने के लिए, उसे पहले से ही सावधानी बरतनी चाहिए।

वास्तविक साक्षात्कार का संचालन
(The Execution of Real Interview)

इन तैयारियों के पश्चात्, साक्षात्कारकर्त्ता, साक्षात्कारदाता से मिलने जाता है। यह उसकी चतुरता व बुद्धिमानी पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार उनके साथ व्यवहार करे।

1. साक्षात्कारदाताओं से सम्पर्क स्थापित करना (To Establish Contact with the Interviewers)—साक्षात्कारकर्त्ता, निर्धारित स्थान और समय पर साक्षात्कार लेने के लिए पहुँचता है। प्रथम भेंट में उसे इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसकी पोशाक भड़कीली नहीं होनी चाहिए, व्यवहार कृत्रिम नहीं होना चाहिए और न वह ऐसी बात प्रकट करे या ऐसा हाव-भाव प्रदर्शित करे जिससे सूचनादाता पहली मुलाकात में ही उसके बारे में गलत सोचने लग जाए। अतः साक्षात्कारकर्त्ता की पोशाक गम्भीर सीधी-सादी सौम्य होनी चाहिए। सर्वप्रथम विनम्रतापूर्वक अभिवादन कर, अपना परिचय दें, बाद में साक्षात्कार का प्रयोजन बतलावे।

2. सहयोग की याचना (Appeal for Co-operation)—अपने परिचय व साक्षात्कार के प्रयोजन के बाद, साक्षात्कारकर्त्ता को उसके सहयोग की प्रार्थना करनी चाहिए। सहयोग की याचना बड़े ही मधुर एवं विनम्र भाव से करनी चाहिए। उसको सतुष्ट करने के लिए यह कहना चाहिए कि अमुक अनुसंधान में उसकी (अर्थात् साक्षात्कारदाता) जानकारी व अनुभव होने के कारण, उसको (साक्षात्कार-दाता) चुना गया है। परन्तु अधिक प्रशंसा व अतिशयोक्तियों से भी साक्षात्कारकर्त्ता को सदैव बचना चाहिए, अन्यथा साक्षात्कारदाता समझ जायेगा कि साक्षात्कारकर्त्ता उसे बेवकूफ या मूर्ख समझ रहा है। साक्षात्कारकर्त्ता को उसे पूर्ण आश्वासन देना चाहिए कि उसके द्वारा दी गई जानकारी को वह गुप्त रखेगा।

3. प्रश्न पूछना (Asking Questions)—उपरोक्त बातों के पश्चात् साक्षात्कारकर्त्ता को अनुसूची के प्रश्नों को एक-एक करके पूछना चाहिए और उनके उत्तर लिखते जाना चाहिए। जहाँ तक हो सके, उसे अनुसूची के बाहर प्रश्न नहीं पूछना चाहिए। परन्तु सम्भव है साक्षात्कारदाता के उत्तरों से ही कुछ ऐसे प्रश्न

उत्पन्न हो जावें जिनकी जानकारी उसके अनुसधान के लिए बहुत उपयोगी हो ऐसी स्थिति मे उसे बडी चतुरता व विनम्रता से नए प्रश्नो को पूछकर उत्तर प्राप्त करने चाहिएँ। साक्षात्कारकर्ता को जटिल, घरेलू व व्यक्तिगत प्रश्न नहीं पूछने चाहिए जिनके उत्तर देने मे उसे बडा सकोच व हिचकिचाहट हो। साक्षात्कारकर्ता को अपने आवेगो पर नियन्त्रण रखना चाहिए कि वह ऐसा प्रश्न न कर बैठे जिससे 'तूं-तूं मैं-मैं' की स्थिति पैदा हो जाये। अत साक्षात्कारदाता के मनोभाव व मानसिक स्थिति को ध्यान मे रखते हुए प्रश्न किए जाने चाहिए।

4 धैर्य एव सहानुभूति के साथ सुनना (**Listening with Patience and Sympathy**)—साक्षात्कारकर्ता को प्रश्न पूछने के बाद, साक्षात्कारदाता के जवाब को बडे ही धैर्य और सहानुभूति के साथ सुनना चाहिए। हो सकता है कि साक्षात्कारदाता विस्तृत वर्णन मे खो जावे या कोई कहानी कह बैठे, परन्तु प्रश्नकर्ता को उसे भी बडे धैय से सुनना चाहिए। प्रश्नकर्ता को विनम्रता से उसे मुख्य विषय का स्मरण करवाना चाहिए। परन्तु स्मरण करवाते समय उसे बडी सावधानी की आवश्यकता होती है क्योकि हो सकता है कि उसके मनोभाव पर आघात पहुँचे, अत कुछ प्रेरक वाक्य कहने चाहिए जैसे आपने बडी महत्त्वपूर्ण व उपयोगी जानकारी दी है 'आपका इस विषय पर बहुत Command है' इत्यादि।

5 साक्षात्कार का नियन्त्रण एव प्रमाणीकरण (**Controlling and Validating of Interview**)—साक्षात्कार का नियन्त्रण करने से यह अभिप्राय है कि सूचनादाता कही गलत भ्रामक व असगत जानकारी न दे दे। यदि उत्तरदाता वर्णनात्मक या भावात्मक बातों मे तल्लीन हो जाता है जिनका अनुसधान से कोई सम्बन्ध नही है तो ऐसी स्थिति मे प्रश्नकर्ता को चतुरता से उसका ध्यान ऐसी बातो से हटाकर अन्य ऐसे प्रश्न करने चाहिए जिससे साक्षात्कार की प्रामाणिकता सिद्ध हो सके। प्रमाणीकरण से यह आशय है कि साक्षात्कारदाता द्वारा दी गई जानकारी मे विरोधाभास का पता लगाकर उसके कारणो को दूर करना है। यदि उत्तरदाता ने कहीं झूँठ बोला है, धोखा दिया है तो क्रास प्रश्नों (Cross questions) को पूछकर सही सूचना प्राप्त करनी चाहिए।

6 साक्षात्कार की समाप्ति (**Closing of the Interview**)—साक्षात्कार की समाप्ति प्राकृतिक मधुर और सौम्य वातावरण मे होनी आवश्यक है। यह साक्षात्कारकर्ता की कुशलता एव चतुरता पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार साक्षात्कार की समाप्ति करे जिससे सामने वाला यह महसूस न करे कि उसका समय व्यर्थ गया, उसे परेशान किया गया या उससे गुप्त बातों की जानकारी प्राप्त की गई। यदि उत्तरदाता थकान महसूस कर रहा हो या साक्षात्कार को आगे जारी करने में अनिच्छुक हो तो, मुख्य साक्षात्कार को तुरन्त बन्द कर देना चाहिए। यदि कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्न रह गए हो तो उसे वह दूसरी बार साक्षात्कार कर के, उत्तर प्राप्त कर सकता है। साक्षात्कार समाप्ति पर उसे सूचनादाता के प्रति बडा आभार

प्रदर्शित करना चाहिए, और यह आश्वासन बड़ी विनम्रता के साथ देना चाहिए कि उसकी प्रत्येक बात को पूर्णरूपेण गुप्त रखा जावेगा।

7. रिपोर्ट (Report)—साक्षात्कार करने के बाद, साक्षात्कारकर्त्ता को अपने घर या ऑफिस मे आकर उसकी रिपोर्ट तुरन्त तैयार कर लेनी चाहिए। इस कार्य मे उसे आलस्य या उदासीनता नही दिखानी चाहिए, क्योंकि उसके समस्त निष्कर्ष रिपोर्ट पर ही निर्भर करते हैं; यदि ऐसा नही किया गया तो कई बातो को वह भूल जाएगा, कई सदर्भ याद नही रहेंगे व कई नई जानकारियों का स्मरण करने मे कठिनाई रहेगी। रिपोर्ट लिखते वक्त उसे पक्षपात व वैयक्तिकता से बचना चाहिए। निष्पक्ष व प्रामाणिक रिपोर्ट ही अनुसंधान को महत्त्वपूर्ण व विश्वसनीय बनाती हैं।

साक्षात्कारकर्त्ता के गुण
(The Qualities of an Interviewer)

साक्षात्कारकर्त्ता का साक्षात्कार मे अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है। साक्षात्कार की सफलता या विफलता उसके व्यक्तिगत गुणो पर निर्भर करती है। एक अच्छे साक्षात्कारकर्त्ता मे सहनशीलता, धैर्य, निष्पक्षता, बौद्धिक ईमानदारी व कुशलता कूट-कूट कर भरी होनी चाहिए। साक्षात्कारकर्त्ता को कई प्रकार के सूचनादाताओ से मिलना होता है। कोई साक्षात्कारदाता बड़ा उदार, ईमानदार व सौम्य स्वभाव का होता है, तो कोई बिलकुल इसके विपरीत। कुछ सूचनादाता चालाक या धूर्त होते हैं, व उनमे किसी बात को बढा-चढा कर कहने की प्रवृति होती है तो कोई साक्षात्कार-दाता अपने अहम् को सतुष्ट करने के लिए बडी-बडी डींग हांकते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि इन सब प्रकार के लोगो से साक्षात्कारकर्त्ता का पाला पडता है, अत: उनके साथ व्यवहार बडी कुशलता, होशियारी व आत्मविश्वास के साथ करना चाहिए। सबसे महत्त्वपूर्ण गुण उसमे पक्षपातहीनता व बौद्धिक ईमानदारी का होना चाहिए क्योंकि अनुसधान की ये प्रमुख शर्तें हैं।

साक्षात्कार के गुण एवं सीमाएँ
(Merits and Limitations of Interviewing)

गुण (Merits)

1. जिन घटनाओ का प्रत्यक्ष अवलोकन नहीं किया जा सकता, उनके अध्ययन के लिए साक्षात्कार एक उत्तम और उपयुक्त पद्धति है। व्यक्ति की धारणाओं, भावनाओ और सवेगो के अध्ययन के लिए साक्षात्कार सर्वाधिक प्रभावशाली साधन है।

2. समस्याओ की छानबीन एव गहराई के लिए साक्षात्कार एक विश्वसनीय पद्धति है।

3. साक्षात्कार द्वारा विषय से सम्बन्धित समस्त प्रकार की सामग्री का सकलन किया जा सकता है।

4 इसके द्वारा विगत संसार की घटनाओ और उनके प्रभावो का अध्ययन किया जा सकता है। कई घटनाओ की पुनरावृत्ति सम्भव नहीं होती, जिनका ज्ञान अनुसंधान के लिए बहुत आवश्यक है, ऐसी स्थिति मे साक्षात्कार ही एकमात्र उपयोगी पद्धति है।

5 साक्षात्कार द्वारा मनोवैज्ञानिक अध्ययन आसानी से हो सकता है।

6 साक्षात्कार द्वारा प्राप्त सूचनाओ की प्रामाणिकता सिद्ध की जा सकती है।

7 इसमे परस्पर बातचीत से नवीन तथ्य सामने आते हैं, जिनका उद्घाटन सम्भवत अन्य विधि द्वारा होना अत्यन्त ही मुश्किल है।

8 साक्षात्कार द्वारा शिक्षित और अशिक्षित दोनो से अभीष्ट सूचना प्राप्त की जा सकती है। प्रश्नावली पद्धति का उपयोग केवल शिक्षित लोगो के लिए है, जबकि साक्षात्कार के द्वारा अशिक्षित लोगो के विभिन्न पक्षो का भी अध्ययन किया जा सकता है।

सीमाएँ या दोष (Limitations)

उपरोक्त गुणो के होते हुए भी साक्षात्कार की कुछ सीमाएँ या दोष निम्नलिखित हैं—

1 साक्षात्कारकर्ता और साक्षात्कारदाता दोनो के व्यक्तिगत पक्षपात का समावेश होने की सम्भावना रहती है।

2 इसमे असत्य व अतिशयोक्तिपूर्ण बात कहने का अवसर व प्रोत्साहन मिलता है। अक्सर साक्षात्कारदाता अपनी बात को वर्णनात्मक ढग से पेश करता है जिससे उसे बात बढा चढाकर कहने का मौका मिल जाता है।

3 इस पद्धति द्वारा प्राप्त सामग्री विश्वसनीय व सत्य कम होती है।

4 भावनात्मक घटनाओ के सम्बन्ध मे साक्षात्कारदाता से पहली बात तो सूचना प्राप्त करना ही मुश्किल है और यदि सूचना मिल भी गई तो वह विश्वसनीय नही हो सकती क्योंकि प्रत्येक उत्तरदाता अपने जीवन की कुछ बातों को छिपाना चाहता है।

5 प्रश्नकर्ता को पूर्णतया उत्तरदाता की दया का पात्र रहना पडता है अत उस द्वारा दी गई गलत सूचना कभी कभी खतरनाक सिद्ध हो सकती है।

6. साक्षात्कारकर्ता को अपनी स्मरण-शक्ति पर निर्भर रहना पडता है, अत साक्षात्कार के पश्चात् प्रतिवेदन तैयार करते समय वह कई बातो को लिखना भूल जाता है जो उसके अनुसंधान के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

7 उत्तरदाता के प्रभावशाली व्यक्तित्व का प्रभाव साक्षात्कारकर्ता पर पड सकता है, ऐसी स्थिति मे वह हीन भावना से दब जाता है। वह केवल उसकी हाँ म हाँ या ना में ना मिलाता जाएगा।

8 इस पद्धति में समय अधिक खर्च होता है। एक-एक व्यक्ति से साक्षात्कार करने में व उनके वर्णनात्मक उत्तर सुनने में बहुत समय का अपव्यय होता है।

9. एक कुशल, सुयोग्य, मनोवैज्ञानिक एवं चतुर साक्षात्कारकर्ता को ढूंढना मुश्किल है। यदि ये गुण उसमे नही पाए गए तो वह सफल साक्षात्कार कर ही नही सकता।

10 उत्तरदाता द्वारा बतलाई गयी सामग्री की सत्यता व असत्यता की जाँच करना अत्यधिक कठिन कार्य है।

केन्द्रित साक्षात्कार
(Focused Interview)

केन्द्रित साक्षात्कार के सर्वप्रथम अनुयायी रॉबर्ट के मर्टन (Robert K. Merton) और उनके साथी फिस्के (Fiske) एवं केंडाल (Kendall) हैं। इस साक्षात्कार का प्रयोग उन्होंने रेडियो, फिल्म तथा संदेश वाहन के साधनों का प्रभाव जानने के लिए किया था। यह साक्षात्कार मुख्यत इस धारणा पर आधारित होता है कि इसके द्वारा व्यक्तिगत भावनाओ, सवेगो, प्रतिक्रियाओ एव मानसिक ग्रन्थियो के सम्बन्ध मे विश्वसनीय और अधिकतम सूचनाएँ प्राप्त की जा सकती हैं। श्रीमती यग के अनुसार "केन्द्रित साक्षात्कारो का एक उद्देश्य यह है कि मानव व्यवहार से सम्बन्धित पूर्व विश्लेषण की हुई स्थितियो से उत्पन्न उपकल्पना की प्रामाणिकता की परीक्षा का पता लगाना।"[1]

परिभाषाएं (Definitions)—केन्द्रित साक्षात्कार वह विधि है, "जिसमे उत्तरदाता अपने विचार को व्यक्त करने मे पूर्ण स्वतन्त्र होता है, लेकिन साक्षात्कार के निर्देशन का कार्य स्पष्टत साक्षात्कारकर्त्ता (Interviewer) के हाथो मे होता है।"[2]

"इसमे (केन्द्रित साक्षात्कार) साक्षात्कारकर्ता साक्षात्कारदाता को अधिक स्वतन्त्रता देते हुए दिए हुये अध्यायो के समूह को अधिक या कम व्यवस्थित रूप से Cover करने का ध्येय रखता है, इसे ही सबसे अच्छे रूप मे निर्देशित या केन्द्रित साक्षात्कार कहा जाता है।"[3] —सी ए मोजर

1 "One of the aims of focused interview is to provide a way to test the validity of hypotheses derived from the previously analysed situation regarding human behaviour"

—*P V Young* Scientific Social Surveys and Research, p. 212.

2 "The respondent is free to express completely his line of thought, the direction of interview is clearly in the hands of the interviewer."

– *Seltiz, Jahoda, Deutsch and Cook* Research Methods in Social Research, p 261

3 "The interviewer, whilst allowing the respondent a good deal of freedom, aims to cover a given set of topics in a more or less systematic way. This is best termed the guided or focus interviewed"

—*C. A Moser* Survey Methods in Social Investigation, p 206

"केन्द्रित साक्षात्कार इस धारणा पर आधारित रहता है कि जिसके द्वारा व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओं, विशिष्ट आवेगों, निश्चित मानसिक लगावों, को जो एक निश्चित उत्तेजकों द्वारा उत्तेजित किए जाते हैं, Precise जानकारी प्राप्त करना सम्भव है।"[1] —पी. वी. यंग

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर केन्द्रित साक्षात्कार की निम्न विशेषताएँ प्रकट की जा सकती हैं—

(1) यह दूसरे साक्षात्कारों से कहीं अधिक स्वतन्त्र और लचीला है।

(2) इसमें लचीलापन होते हुए भी यह साक्षात्कार को ऐसा स्वरूप प्रदान करता है जिसके द्वारा तर्कपूर्ण विषयों पर ही चर्चा होती है।

(3) इसमें उत्तरदाता को प्रश्नों के उत्तर देने में अधिक स्वतन्त्र अवसर मिलता है।

(4) हालांकि उत्तरदाता को निश्चित सूचना देने के लिए कहा जाता है फिर भी उसको अपने विचार विकसित और व्यक्त करने का पूर्ण अवसर दिया जाता है।

(5) ऐसे साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्त्ता स्वयं भी अधिक स्वतन्त्र होता है कि उसे कब कैसे और किस प्रकार के प्रश्न पूछने हैं ताकि सम्बन्धित विषय की गहराई में जाकर अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त की जाए।

आर के मर्टन और पी केन्डाल (R. K. Merton and P. Kendall) ने इस साक्षात्कार की निम्नलिखित विशेषताएँ बतलाई हैं—

(1) यह साक्षात्कार उन व्यक्तियों से सम्बन्धित रहता है जो किसी विशेष परिस्थिति में रह चुके हों। जैसे उन्होंने किसी विशेष फिल्म को देखा है या किसी विशेष संदेश को सुना है या किसी सामाजिक परिस्थिति में भाग लिया है।

(2) यह साक्षात्कार उन परिस्थितियों को Refer करता है, जिनका साक्षात्कार से पूर्व ही विश्लेषण कर लिया गया है।

(3) यह साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका (Guide) के आधार पर किया जाता है जिसमें अन्वेषण के वृहत क्षेत्रों के बारे में जानकारी दी गई है।

(4) यह वैयक्तिक अनुभव पर केन्द्रित किया जाता है।

1. "The focused interview is based on the assumption that through it It is possible to secure precise details of personal reactions, specific emotions called into play, definite mental associations provoked by a certain stimulus, and the like." —*P.V. Young : op cit.*, p. 219.

केन्द्रित साक्षात्कार के गुण
(Merits of Focused Interview)

अन्तरंग अनुभव इस साक्षात्कार की आत्मा है। इसके द्वारा मानसिक स्थिति एवं मनोभावों का पता चल जाता है। इसकी विशिष्टता के कारण इसमें निम्न-लिखित गुण पाए जाते हैं।

(1) लचीलापन (Flexibility)—केन्द्रित साक्षात्कार का प्रमुख गुण लचीलापन है। साक्षात्कारकर्त्ता के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह निश्चित या Exact प्रश्न पूछे और न साक्षात्कारदाता के लिए आवश्यक है कि वह पूर्व अनुमानित उत्तर ही दे। यह परिस्थिति पर निर्भर करता है। साक्षात्कारकर्त्ता का उद्देश्य अपने विषय से सम्बन्धित सही, विश्वसनीय व अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करना होता है, तथा उस बात पर ध्यान केन्द्रित करना होता है जिससे वह उत्तरदाता की प्रतिक्रियाओं को ठीक ढंग से समझ सके। अतः ऐसी स्थिति में वह अन्य साक्षात्कारों की तरह निश्चित नियमों से बँधा नहीं रहता है।

(2) उद्देश्य प्राप्ति में आसानी (Easy to achieve its purpose)—इस साक्षात्कार में चूँकि उत्तरदाता के जवाब Spontaneous होते हैं न कि दबाव-युक्त। जब उत्तर कृत्रिम नहीं होते, साक्षात्कारकर्त्ता के लिए वे उत्तर अनुसन्धान कार्य में बड़े उपयोगी होते हैं। दूसरे साक्षात्कारों में पहले से बने बनाए हुए प्रश्न होते हैं तथा साक्षात्कार के समय ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है कि उत्तरदाता उस वातावरण से या तो घबरा जाता है या स्वयं को विचित्र स्थिति में पाता है, जिसके फलस्वरूप उसके द्वारा दिए गए उत्तर विश्वसनीय नहीं हो सकते।

(3) व्यावहारिक समस्याओं के समाधान में सहायक (Helpful in the Solution of Practical Problems)—इस साक्षात्कार में कोई Set प्रश्नावली नहीं होती और अधिकांशतः प्रश्न खुले रूप में होते हैं ताकि उत्तरदाता को प्रत्येक विषय के लिए स्वतन्त्र रूप में बात करने के लिए प्रेरित किया जा सके। इससे उत्तर-दाता अपनी आन्तरिक भावनाओं को छिपा नहीं सकता क्योंकि वह स्वतन्त्र वातावरण में उस साक्षात्कार में भाग ले रहा है। मेरियट (Marriott) ने एक सुन्दर उदाहरण अपने उस पेपर में दिया है जिसमें मजदूरों के उन कारणों को जानने के लिए सर्वेक्षण किया गया है जो उनकी प्रसन्नता और अप्रसन्नता से सम्बन्धित है। व्यक्तिगत साक्षात्कार 8 विषयों पर केन्द्रित था। उदाहरण के लिए क्या वास्तविक कार्य करना होता है, कार्य के घंटे, पारी प्रणाली (Shift System), मजदूरी का पैसा, अदायगी प्रणाली, फर्म, उच्च व्यवस्था और उनकी नीतियों इत्यादि प्रत्येक विषय के बारे में सम्पूर्ण प्रश्न पूछे गए और खुले रूप में उनसे पूछा गया कि वे प्रत्येक, अर्थात् 8 में से, विषय के बारे में स्वयं ही तय करें कि किससे उनको सुख, चैन या प्रसन्नता मिल सकती है और किससे अधिक कठिनाई या कष्ट। इस प्रकार इस साक्षात्कार द्वारा कठिन से कठिन समस्या का वास्तविक हल ढूँढा जा सकता है।

(4) व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओं को जानने मे सहायक (Helpful in understanding individual reactions)—इस पद्धति द्वारा प्रत्येक व्यक्ति की व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओं का आसानी से पता लगाया जा सकता है। जैसा कि मेरियट के उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है यदि मजदूरो के असतोष का पता लगाना हो, उनकी वास्तविक भावनाओं का पता लगाना हो तो इस साक्षात्कार पद्धति को अपनाया जाना चाहिए। इसमे साक्षात्कारदाता मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अधिक चेतन (Over Conscious) नही होता, अत वह अपनी प्रतिक्रियाओं व भावनाओं को निष्पक्ष रूप मे व्यक्त करता है।

(5) उपकल्पना के विकास मे प्रभावी (Effective in the Development of Hypothesis)—साक्षात्कारकर्ता विश्लेषण सामग्री से पहले ही लैस (Equipped) होता है अत. वह विषय के तथ्यो और साक्षात्कारदाता द्वारा दिए गए उत्तरो के बीच स्पष्ट रूप से भेद कर सकता है। इससे वह विषय-सामग्री को और आगे बढा सकता है, इसका विश्लेषण कर सकता है तथा नए अनुभवो एवम् तथ्यो को जोड सकता है जिससे उपकल्पना के यथार्थ विकास मे सहायता मिलती है।

केन्द्रित साक्षात्कार के दोष
(Demerits of Focused Interview)

इस प्रणाली के गुणो के बावजूद, इसमे कुछ ऐसे दोष पाए जाते हैं जिनका जिक्र करना इसीलिए आवश्यक हो जाता है ताकि साक्षात्कारकर्ता उनके बारे मे सावधान व सतर्क रहे।

(1) विश्लेषण की जटिलता (Complexity of Analysis)—इस ... की सबसे बडी कठिनाई यह है कि साक्षात्कारकर्ता किस प्रकार से व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण करे। मानव स्वभाव के अध्ययन के लिए उसे मनोविज्ञान, दर्शन, गणित तथा साहित्य का भी ज्ञान होना चाहिए ताकि वह उसके प्रत्येक पक्ष का अध्ययन कर सके। लेकिन अध्ययन के बाद विश्लेषण करना और भी अधिक जटिल हो जाता है। ऐसी स्थिति मे जो निष्कर्ष भी निकाले जाएँगे वे स्वभावत अविश्वसनीय होगे।

(2) समय लेने वाला (Time consuming)—इस साक्षात्कार मे समय अधिक खर्च होता है क्योंकि मानवीय आवेगो, भावनाओं को जल्दी से न तो पढ़ा जा सकता है और न समझा जा सकता है। इसके अतिरिक्त इस प्रकार के साक्षात्कार में कोई पूर्व निर्धारित प्रश्नावलियाँ नहीं होती अतः साक्षात्कार के बारे मे नही कहा जा सकता कि वह कब समाप्त होगा। सामान्यतः इसमे समय की बरबादी होती है।

(3) असंगत प्रश्नों को स्थान देने की सम्भावना (Possibility of giving place to irrelevant questions)—ऐसे साक्षात्कारो मे कोई निश्चित प्रश्न नहीं होते, अत साक्षात्कारकर्ता को कोई भी प्रश्न पूछने की स्वतन्त्रता है। फिर वह इस आड मे भी कोई प्रश्न पूछ सकता है कि उसे व्यक्ति के मनोभावो, मनोवृत्तियों व

आवेगो का विश्लेषण करना है। कई बार ऐसा व्यवहार देखा गया है कि सेक्स के सम्बन्ध में साक्षात्कारकर्त्ता विशेष रूप से स्त्रियो से बडे असगत प्रश्न पूछता है। कई बार स्त्रियाँ स्वय या उनके परिवार वाले भी इस सम्बन्ध मे आपत्ति उठाते हैं, परन्तु साक्षात्कारकर्त्ता प्राय यह उत्तर देता है कि ये प्रश्न उसके अनुसधान के लिए बडे उपयोगी हैं। वह उनको भी यह कहकर पथ से विचलित करने की कोशिश करता है कि उनकी आतरिक भावनाओ का अध्ययन कर उन्हे बडी उपयोगी सूचनाएँ प्रदान की जाएगी। इस प्रकार वह एक आडम्बरयुक्त ज्योतिषी या भविष्यवक्ता की भूमिका अदा करने का अभिनय करता है।

(4) अभिनति की सम्भावना (Possibility of bias)—साक्षात्कारकर्त्ता को ऐसे साक्षात्कार मे अधिक स्वतन्त्रता होती है, अत वह पक्षपातपूर्ण रवैया भी अपना सकता है। इसमे पूर्व निर्धारित प्रश्नावलियाँ नही होती जिससे साक्षात्कार-कर्त्ता प्रश्नो की प्रकृति के बारे मे निश्चित हो जाता है। ऐसी स्थिति मे अभिनति की सम्भावना बढ जाती है।

इन दोषो के होते हुए भी, केन्द्रित साक्षात्कार पद्धति आधुनिक तकनीकी युग मे बडी उपयोगी सिद्ध हुई है। इसका प्रयोग 'अधिकतर नए आविष्कारो का समाज पर क्या प्रभाव पडा' के अध्ययन हेतु किया जाता है। इसकी सफलता साक्षात्कारकर्त्ता के स्वय के ज्ञान, अनुभव, योग्यता, कौशल एव चतुरता पर निर्भर करती है। यदि ये गुण उसमे नही पाए जाते हैं तो यह पद्धति स्वय मे कितनी ही अच्छी क्यो न हो, साक्षात्कार को सचालित करने मे अनुपयोगी ही सिद्ध होगी।

प्रश्नावलियाँ
(Questionnaires)

आधुनिक अनुसधानो मे प्रश्नावली का उद्देश्य अध्ययन-विषय से सम्बन्धित प्राथमिक तथ्य-सामग्री (Primary data) को एकत्र करना है। प्रश्नावली का अर्थ उस सुव्यवस्थित तालिका से है जो विषय के सम्बन्ध मे सूचनाएँ प्राप्त करने मे सहयोगी है। सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक सर्वेक्षणो मे तथ्यात्मक जानकारी प्राप्त करने के लिए, प्रश्नावली को अत्यन्त महत्वपूर्ण पद्धति माना जाता है।

प्रश्नावली की परिभाषाएँ (Definitions of Questionnaire)

साधारणत किसी विषय से सम्बन्धित व्यक्तियों से सूचना प्राप्त करने के लिए बनाए गए प्रश्नो की सुव्यवस्थित सूची को प्रश्नावली की सज्ञा दी जाती है। इसे डाक द्वारा भेजकर सूचना प्राप्त की जाती है।

गुडे तथा हाट्ट के शब्दो मे, 'सामान्यत, प्रश्नावली' शब्द प्रश्नो के उत्तर प्राप्त करने की उस प्रणाली को कहते हैं, जिसमे स्वय उत्तरदाता द्वारा भरे जाने वाले पत्रक (Form) का प्रयोग किया जाता है।"[1]

1 "In general, the word 'questionnaire' refers to a device for securing answers to questions by using a form which the respondent fills in himself."
—*Goode and Hatt* Op cit, p 133

लुण्डबर्ग (Lundberg) के शब्दो मे, "मूलत: प्रश्नावली प्रेरणाओ का एक समूह है, जिसे शिक्षित लोगो के सम्मुख, उन प्रेरणाओ के अन्तर्गत उनके मौखिक व्यवहारो का अवलोकन करने के लिए प्रस्तुत किया जाता है।"[1]

विल्सन-गी के शब्दो मे, "यह (प्रश्नावली) बडी सख्या में लोगों से अथवा छोटे चुने हुए एक समूह से जो विस्तृत क्षेत्र मे फैला हुआ है, सीमित मात्रा मे सूचना प्राप्त करने की एक सुविधाजनक प्रणाली है।"[2]

बोगार्डस के अनुसार, "प्रश्नावली विभिन्न व्यक्तियो को उत्तर देने के लिए दी गई प्रश्नो की एक तालिका है।"

प्रश्नावली की विशेषताएं (Characteristics of Questionnaire)

परिभाषाओ के आधार पर इसकी विशेषताओं को निम्नाकित रूप मे प्रस्तुत किया जा सकता है—

(1) प्राथमिक सामग्री प्राप्त करने की अप्रत्यक्ष प्रणाली है।
(2) यह अधिकाशत डाक द्वारा भेजी जाती है।
(3) इसे केवल उत्तरदाता स्वय ही भरता है।
(4) इसका प्रयोग शिक्षित उत्तरदाताओ के लिए किया जाता है।
(5) इसमे प्रश्नो को सरल एव स्पष्ट रूप मे प्रस्तुत किया जाता है।

प्रश्नावली के प्रकार (Types of Questionnaire)

लुण्डबर्ग के अनुसार, इसके दो प्रकार हैं—

(i) तथ्य-सम्बन्धी प्रश्नावली (Questionnaire of fact)—सामाजिक तथ्यो को एकत्र करने के लिए प्रयोग मे लाई जाती है।

(ii) मत तथा मनोवृत्ति सम्बन्धी प्रश्नावली (Questionnaire of opinion and attitude)—उत्तरदाता की अभिरुचि से सम्बन्धित सूचनाओ को प्राप्त करने के लिए प्रयोग मे लाई जाती है।

श्रीमती यग ने भी प्रश्नावली के दो प्रकार बतलाये हैं—

(i) सरचित प्रश्नावली (Structured Questionnaire)—इसकी रचना अनुसधान प्रारम्भ करने से पूर्व कर ली जाती है।

(ii) असरचित प्रश्नावली (Non structured Questionnaire)—इसके

1. "Fundamentally, the questionnaire is a set of stimuli to which literate people are exposed in order to observe their verbal behaviour under these stimuli." —George A Lundberg Op cit, p. 113

2 "It does constitute a convenient method of obtaining a limited amount of information from a large number of persons or from a small selected group which is widely scattered"

—Wilson Gee, Social Science and Research Methods, p. 314.

अन्तर्गत प्रश्नों को पहले से नहीं बनाया जाता है बल्कि केवल अध्ययन विषय, क्षेत्र आदि के सम्बन्ध में उल्लेख होता है।

इनके अतिरिक्त प्रश्नावली के कुछ और भी प्रकार हैं। वे निम्नलिखित हैं—

(क) खुली प्रश्नावली (Open Questionnaire)—जिन प्रश्नावलियों में उत्तरदाताओं को अपना उत्तर व्यक्त करने में पूर्ण स्वतन्त्रता हो उसे 'खुली प्रश्नावली' कहते हैं। वह अपनी स्वेच्छा से उत्तर दे सकता है, उस पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं लगाया जाता।

(ख) चित्रमय प्रश्नावली (Pictorial Questionnaire)–चित्रमय प्रश्नावली में प्रश्नों के उत्तर चित्रों द्वारा दिखाये जाते हैं। उत्तरदाता के समक्ष अलग-अलग चित्र होते हैं और जिनके आगे लिखा होता है कि आप छोटे परिवार को पसंद करते हैं या बड़े परिवार को। इन चित्रों में परिवार को छोटे से बड़ा बताया जाता है, उत्तरदाता को सिर्फ उसके आगे निशान अंकित करना होता है। इस प्रश्नावली द्वारा बाद में इनके मतों का पता लगा लिया जाता है। यह प्रणाली विशेष रूप से कम पढ़े-लिखे लोगों तथा बालकों के लिए बड़ी उपयोगी है।

(ग) मिश्रित प्रश्नावली (Mixed Questionnaire)—इसमें सभी प्रकार की प्रश्नावलियों को सम्मिलित किया जा सकता है। कुछ सामाजिक तथ्य इतने जटिल होते हैं कि उनके बारे में जानकारी किसी एक निश्चित प्रश्नावली द्वारा नहीं हो सकती, अतः सुविधा व उपयोगिता की दृष्टि से विभिन्न प्रश्नावलियों को सम्मिलित किया जाता है।

प्रश्नावली के निर्माण में सावधानियाँ

(Precautions in Constructing Questionnaire)

प्रश्नावली प्राथमिक तथ्यों को प्राप्त करने का एक उत्तम साधन है। इसकी सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि इसके निर्माण में क्या-क्या सावधानियाँ बरती गई हैं, अन्यथा प्रश्नावली का सम्पूर्ण उद्देश्य ही निरर्थक हो जाएगा। अतः निम्नलिखित सावधानियों पर गौर किया जाना चाहिए—

विषय का पूर्ण विश्लेषण (A thorough analysis of the Subject)—प्रत्येक समस्या के विभिन्न पक्ष होते हैं जिनमें कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं तो कुछ कम महत्त्वपूर्ण। अध्ययनकर्त्ता को यह सावधानी रखनी चाहिए कि प्रश्नावली संतुलित होनी चाहिए ताकि समस्त पक्षों का प्रतिनिधित्व प्रश्नावली में हो सके। इसके लिए वह अपने अनुभव, मित्रों का सहयोग, अन्य साहित्यिक स्रोत इत्यादि को काम में ला सकता है। अतः समस्त पक्षों का उचित विश्लेषण करने के पश्चात् ही प्रश्नावली को तैयार किया जाना चाहिए।

उपयोगिता (Utility)—प्रश्नों को प्रश्नावली में स्थान देने से पूर्व यह देख

लेना चाहिए कि उनकी अध्ययन के सम्बन्ध में उपयोगिता है या नहीं। निरर्थक प्रश्नों को स्थान नहीं दिया जाना चाहिए क्योंकि इससे न केवल समय व धन का ही दुरुपयोग होता है बल्कि उद्देश्य की प्राप्ति भी नहीं होती।

प्रश्नावली की प्रकृति (Nature of the Questionnaire)

प्रश्नावली की प्रकृति व अन्य पहलुओं पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में कुछ सुझाव निम्नलिखित हैं—

(i) **प्रश्नों का आकार (Size of Questions)**—प्रश्नों का आकार बड़ा नहीं होना चाहिए क्योंकि उत्तरदाता बड़े आकार को देखते ही घबरा जाता है। अतः छोटी प्रश्नावलियाँ अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

(ii) **भाषा की स्पष्टता (Clarity of Language)**—प्रश्नावलियों की भाषा इतनी सरल और स्पष्ट होना चाहिए कि एक साधारण उत्तरदाता भी उनके अर्थ व प्रयोग को समझ सके। भाषा को जटिल या मुहावरेदार नहीं बनाना चाहिए। किसी प्रकार की पारिभाषिक शब्दावलियों बहुअर्थक शब्दों को जहाँ तक सम्भव हो सके, स्थान नहीं देना चाहिए। प्रश्न जितने सरल व स्पष्ट होंगे, उनके उत्तर भी उतने ही स्पष्ट होंगे।

(iii) **इकाइयों की स्पष्टता (Clarity of Units)**—अध्ययनकर्त्ता जिन इकाइयों को प्रयोग में ला रहा है उनको स्पष्ट रूप से परिभाषित करना चाहिए ताकि अलग-अलग उत्तरदाता अपने अपने दृष्टिकोण से उनकी व्याख्या न करें।

(iv) **उपयोगी प्रश्न (Useful Questions)**—प्रश्न उपयोगी होने चाहिए। अनर्गल प्रश्नों से उत्तरदाता तो परेशान होता ही है साथ ही अनुसंधानकर्त्ता का स्वयं का उद्देश्य भी पूरा नहीं हो पाता। अतः ऐसे प्रश्न पूछे जाने चाहिए जिनका उत्तर दाता उनका जवाब निःसंकोच दे।

(v) **विशिष्ट प्रश्नों से बचाव (Avoidance of Specific Questions)**—कुछ प्रश्नों का सम्बन्ध व्यक्तिगत जीवन भावनाओं तथा रहस्यमय जीवन से होता है अतः ऐसे प्रश्नों से बचना चाहिए। कोई व्यंगात्मक प्रश्न भी नहीं पूछे जाने चाहिए, क्योंकि उत्तरदाता की भावनाओं को ठेस पहुँच सकती है। यदि इस प्रकार के प्रश्नों से नहीं बचा गया तो अनुसंधान का उद्देश्य ही निरर्थक हो जायेगा।

अच्छी प्रश्नावली की विशेषताएँ (Features of a Good Questionnaire)

ए० एल० बॉउले (A L Bowley) के अनुसार अच्छी प्रश्नावली की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

(1) प्रश्नों की संख्या कम होनी चाहिए।

(2) प्रश्न ऐसे होने चाहिएँ जिनका उत्तर 'हाँ या नहीं' में दिया जा सकता हो।

(3) प्रश्नों की संरचना ऐसी होनी चाहिए कि व्यक्तिगत पक्षपात प्रवेश ही न कर पाए।

(4) प्रश्न सरल, स्पष्ट व एकअर्थक होने चाहिएँ।
(5) प्रश्न एक दूसरे को पुष्ट करने वाले होने चाहिए।
(6) प्रश्नों की प्रकृति ऐसी होनी चाहिए कि अभीष्ट सूचना को प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त किया जा सके।
(7) प्रश्न अशिष्ट नहीं होने चाहिएँ।

प्रश्नावली की विश्वसनीयता (Reliability of Questionnaire)

अब प्रश्न यह उठता है कि उत्तरदाताओं ने जो कुछ सूचनाएँ दी हैं, वे कहाँ तक विश्वसनीय हैं। विश्वसनीयता का पता तभी लग जाता है जब अधिकतर प्रश्नों के अर्थ अलग अलग लगाए गए हों, ऐसी स्थिति में संदेह उत्पन्न हो जाती है।

अविश्वसनीयता की समस्या निम्नलिखित कारणों से उत्पन्न होती है—

(1) गलत एवं असंगत प्रश्न (Wrong and Irrelevant Questions)—जब गलत और असंगत प्रश्नों को प्रश्नावली में सम्मिलित किया जाता है तो उनके उत्तर भी उत्तरदाता अपने अपने दृष्टिकोण से देते हैं। ऐसी स्थिति में उत्तरदाताओं द्वारा दी गई सूचनाएँ विश्वसनीय नहीं हो सकती।

(2) पक्षपातपूर्ण निदर्शन (Biased Sample)—निदर्शन का चयन करते समय यदि सावधानी नहीं रखी जाती है तो उसके परिणामों में विश्वसनीयता नहीं आ सकती। यदि सूचनादाताओं के चयन में अनुसंधानकर्त्ता प्रभावित हुआ है तो निश्चित रूप से प्राप्त सूचना प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं हो सकती।

(3) नियन्त्रित व पक्षपातपूर्ण उत्तर (Controlled and Biased Responses)—प्रश्नावली प्रणाली द्वारा प्राप्त उत्तर प्रायः कम सही होते हैं। कुछ गोपनीय एवं व्यक्तिगत सूचनाएँ देने में लोग संकोच करते हैं क्योंकि वे अपने हाथ से लिख कर देने से डरते हैं। अतः उनके उत्तरों में पक्षपात की भावना होती है। उनके उत्तरों में या तो तीव्र आलोचना मिलेगी या पूर्ण सहमति मिलेगी। इस प्रकार सन्तुलित उत्तर प्राप्त नहीं हो पाते हैं।

(4) विश्वसनीयता की जाँच (Test of Reliability)—प्रश्नावलियों में दिए गए उत्तरों में विश्वसनीयता प्रायः कम पायी जाती है इसीलिए उनकी जाँच कर लेनी चाहिए। इसके कतिपय तरीके निम्न हैं—

(i) प्रश्नावलियों को पुनः भेजना (Sending Questionnaire Again)—विश्वसनीयता की परख के लिए प्रश्नावलियों को उत्तरदाताओं के पास पुनः भेज देना चाहिए, यदि उनके उत्तर इस बार भी पहले की तरह मेल खाते हैं तो प्राप्त सूचना पर विश्वास किया जा सकता है। यह जाँच तभी उपयोगी सिद्ध हो सकती है जब उत्तरदाता की सामाजिक, आर्थिक या मानसिक परिस्थिति में कोई परिवर्तन न हुआ हो।

(ii) समान वर्गों का अध्ययन (Study of Similar Groups)—विश्वसनीयता की जाँच के लिए वही प्रश्नावली अन्य समान वर्गों के पास भेजी जावे,

यदि उनसे प्राप्त उत्तरो से व पहले वाले वर्गो द्वारा दिए गए उत्तरो मे समानता है तो दी गई सूचना पर विश्वास किया जा सकता है। यदि दोनो मे काफी ग्रन्तर है तो विश्वास नही किया जा सकता।

(iii) उपनिदर्शन का प्रयोग करना (Using of Sub-sample)—यह भी जाँच करने की एक महत्त्वपूर्ण विधि है। प्रमुख निदर्शन मे से एक उपनिदर्शन का चयन कर, प्रश्नावली की परख की जा सकती है। उपनिदर्शन से प्राप्त सूचनाग्रो ग्रौर प्रमुख निदर्शन से प्राप्त सूचनाग्रो मे यदि काफी ग्रन्तर पाया जाता है तो प्रश्नावली ग्रविश्वसनीय समझी जाएगी। यदि दोनो में बहुत कम ग्रसमानता है तो इसे विश्वसनीय समझा जाएगा।

(iv) ग्रन्य तरीके (Miscellaneous Methods)—प्रश्न पद्धतियो मे साक्षात्कार, ग्रनुसूची एव प्रत्यक्ष निरीक्षण को सम्मिलित किया जा सकता है। इन विधियो द्वारा प्रश्नो के उत्तर लगभग समान हो तो प्रश्नावली को विश्वसनीय समझा जायेगा, ग्रन्यथा नही।

प्रश्नावली के गुण (Merits of Questionnaire)

प्राथमिक तथ्यो को प्राप्त करने मे प्रश्नावली प्रणाली ग्रत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसके गुणो के कारण तथ्यो को ग्रासानी से एकत्र किया जा सकता है। इसके कुछ गुण निम्नलिखित हैं—

(i) विस्तृत ग्रध्ययन (Vast Study)—इस पद्धति द्वारा विशाल जनसख्या का ग्रध्ययन सफलतापूर्वक हो सकता है। ग्रन्य प्रणालियो मे विशाल समूह के ग्रध्ययन के लिए धन, समय ग्रौर परिश्रम ग्रधिक खर्च होता है ग्रौर साथ-साथ सूचनादाताग्रो के पास भटकना पडता है। इन समस्त बुराइयो से यह प्रणाली बची हुई है।

(ii) कम व्यय (Less Expenses)—इस प्रणाली मे क्षेत्रीय-कार्यकर्ताग्रो को नियुक्त करने की ग्रावश्यकता नही रहती, ग्रत व्यय की बचत होती है। केवल छपाई व डाकखर्च ही होता है।

(iii) सुविधाजनक (Convenient)—इस प्रणाली की सबसे बडी सुविधा यह है कि सूचनाग्रों को कम समय के ग्रन्दर ही प्राप्त कर लिया जाता है। प्रश्नावलियों को उत्तरदाताग्रो के पास भेज दिया जाता है ग्रौर कुछ ही समय के भीतर इनको उत्तरदाता सूचना सहित भेज देते हैं। ग्रनुसूची, साक्षात्कार ग्रादि प्रणालियों मे ग्रध्ययनकर्त्ता को व्यक्तिगत रूप से जाना पडता है ग्रौर सूचना एकत्र करनी पडती है। ग्रतः इस दुविधा से बचने के लिए प्रश्नावली प्रणाली बडी सुविधाजनक है।

(iv) पुनरावृत्ति की सम्भावना (Possibility of Repetition)—ग्रलग-ग्रलग समय मे प्रश्नावलियो को उत्तरदाताग्रो के दृष्टिकोण का पता लगाने लिए भेज दिया जाता है। या कुछ ऐसे ग्रनुसन्धान होते हैं जिनमे निश्चित समय के बाद कई बार सूचना प्राप्त करनी होती है तो उसके लिए प्रश्नावली पद्धति बडी उपयोगी है।

(v) स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष सूचना (Free and Impartial Information)– प्रश्नों के उत्तर देने में उत्तरदाताओं को पूर्ण स्वतन्त्रता रहती है। इस प्रणाली में अनुसन्धानकर्त्ता को व्यक्तिगत रूप से उत्तरदाता के समक्ष नहीं आना पड़ता है, अत उत्तरदाता बिना सकोच व हिचकिचाहट के स्वतन्त्र और निष्पक्ष सूचना देने का प्रयत्न करता है। अत. इस पद्धति द्वारा प्राप्त सूचना अधिक विश्वसनीय व प्रामाणिक होती है।

प्रश्नावली के दोष (Demerits of Questionnaire)

यह प्रणाली नितान्त दोषरहित नहीं है। इसकी अपनी कुछ सीमाएँ हैं, जो इस प्रकार हैं—

(i) प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन की सम्भावना नहीं (No possibility of Representative Sampling)—चूंकि प्रश्नावली का प्रयोग केवल शिक्षित व्यक्तियों से तथ्य-सामग्री प्राप्त करने के लिए किया जाता है, अत प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शनों का चयन नहीं हो सकता।

(ii) गहन अध्ययन के लिए अनुपयुक्त (Unsuitable for Deep Study)— प्रश्नावली द्वारा केवल प्रमुख तथ्यों को एकत्र किया जाता है। प्रश्न की गहराइयों तक नहीं पहुँचा जा सकता। साक्षात्कार द्वारा मनुष्य के मनोभाव, प्रवृत्तियाँ, आवेगों व आन्तरिक मूल्यों का गहराई से अध्ययन हो सकता है, जबकि प्रश्नावली द्वारा केवल सहायक सूचनाएँ प्राप्त हो सकती हैं। पार्टन के शब्दों में, "इसमें कोई सन्देह नहीं है कि सर्वोत्तम प्रश्नावली की अपेक्षा उत्तम साक्षात्कार द्वारा अधिक गहन अध्ययन किया जा सकता है।"[1]

(iii) पूर्ण सूचना की कम सम्भावना (Less possibility of Complete Information)— प्रश्नावली के सम्बन्ध में यह कटु अनुभव है कि उत्तरदाता प्राय अधिक रुचि नहीं लेते क्योंकि पहली बात तो उनका अनुसन्धानकर्त्ता से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता और दूसरी बात उनका स्वयं का कोई प्रयोजन हल नहीं होता, अत वे लापरवाही से उत्तर देते हैं। शब्दों का अर्थ अलग-अलग लगाया जाता है, अत उनके उत्तर भी विश्वसनीय नहीं होते।

(iv) उत्तर प्राप्ति की समस्या (Problem of Response)—प्रश्नावलियों के न तो उत्तर समय पर आते हैं और न ही उनके उत्तर सही आते हैं। बार बार याद दिलाने पर भी वे समय पर नहीं लौटाई जाती अत कई बार अनुसन्धानकर्त्ता परेशान होकर उनको लिखना ही छोड़ देता है। ऐसी स्थिति में वास्तविकता व सत्यता का पता नहीं लग सकता।

इन दोषों के बावजूद भी प्रश्नावली द्वारा तथ्य-सामग्री को एकत्र करने में काफी सुविधा रहती है। जहाँ अध्ययन-क्षेत्र विस्तृत होता है, प्रश्नावलियों द्वारा तथ्यों को एकत्र करने में और भी सुविधा रहती है। इस पद्धति द्वारा प्राप्त सूचना या सामग्री अनावश्यक प्रभावों से मुक्त होती है। अनुसन्धानकर्त्ता के बारे में सूचना-

1 "On this matter there can be little doubt that good interview can probe far more deeply than the best questionnaire" —Parten

दाताओं की अज्ञानता भी आन्तरिक सूचनाओं के प्राप्त होने में वरदान सिद्ध होती है। इसी कारण तथ्यों को सकलित करने के लिए इसको अधिक अपनाया जा रहा है।

अनुसूचियाँ
(Schedules)

तथ्य सामग्री को सकलित करने की एक और प्रविधि है, वह है अनुसूचियों का प्रयोग। अनुसूची प्रश्नों की एक लिखित सूची है जो अध्ययनकर्त्ता द्वारा अध्ययन विषय को ध्यान में रखकर बनाई जाती है। इसमें अनुसन्धानकर्त्ता स्वयं घर-घर जाकर प्रश्नों के उत्तर अनुसूचियों द्वारा प्राप्त करता है। एम. एच. गोपाल के शब्दों में, "अनुसूची एक ऐसी प्रविधि है जिसे विशेष रूप से सर्वेक्षण प्रणाली के अन्तर्गत क्षेत्रीय सामग्री एकत्र करने में प्रयोग किया जाता है।"[1]

गुडे तथा हाट्ट के अनुसार, "अनुसूची उन प्रश्नों के समूह का नाम है जो साक्षात्कारकर्ता द्वारा किसी अन्य व्यक्ति से आमने-सामने की स्थिति में पूछे और भरे जाते हैं।"[2]

अनुसूची के उद्देश्य (Objects of Schedule)

(i) प्रामाणिक अध्ययन (Valid study)—प्रामाणिक उत्तर प्राप्त करने के लिए, अनुसन्धानकर्त्ता स्वयं व्यक्तिगत रूप से व्यक्तियों से सम्बन्ध स्थापित करता है। अनुसन्धानकर्त्ता वही उत्तर प्राप्त करने का प्रयत्न करता है जो उसकी दृष्टि में उपयोगी व सार्थक है, अतः उत्तरदाताओं को विभिन्न अर्थ लगाने का अवसर नहीं मिलता। इससे अध्ययन में प्रामाणिकता आती है।

(ii) अनुपयोगी सकलन से बचाव (Guard against useless collection)—अनुसूची का उद्देश्य विषय से सम्बन्धित प्रश्नों का क्रमबद्ध उत्तर प्राप्त करना होता है। अनुसूची अपनी स्मरण-शक्ति पर आवश्यक रूप से भरोसा करने के जोखिम से अनुसन्धानकर्त्ता को बचाती है। अनुसूची में ऐसी कोई गलती नहीं हो सकती क्योंकि प्रश्न लिखित व क्रमबद्ध हैं। अतः इसमें केवल सम्बन्धित तथ्यों को ही सकलित किया जाता है।

(iii) सख्यात्मक आँकड़ों के संकलन में उपयोगी (Useful in collecting numerical facts)—यह प्रविधि सख्यात्मक सूचनाओं एवं आँकड़ों के सकलन में अधिक उपयोगी है। विचारात्मक सूचनाओं या भावनात्मक जानकारी के लिए यह प्रविधि उपयुक्त नहीं है।

1. "A device that is most frequently used in gathering field data, especially where the survey technique is employed, is the schedule or its counterpart, the questionnaire." —*M. H. Gopal*
2. "Schedule is the name usually applied to a set of questions which are asked and filled in by an interviewer in a face to face situation with another person." —*Goode and Hatt* op. cit., p. 133

अनुसूचियों के प्रकार (Knids of Schedules)

(1) **अवलोकन-अनुसूची (Observation Schedules)**—इस प्रकार की अनुसूची के अन्तर्गत अवलोकनकर्त्ता स्वयं अनुसूची को निरीक्षण के समय अपने पास रखता है और स्वयं निरीक्षण द्वारा तथ्यों को उसमें भर देता है।

(2) **मूल्यांकन अनुसूची (Rating Schedule)**—उत्तरदाताओं की विषय से सम्बन्धित प्रवृत्ति, पसंद व मत जानने के लिए इस सूची को प्रयोग में लाया जाता है।

(3) **साक्षात्कार अनुसूची (Interviewing Schedule)**—क्रमबद्ध रूप में साक्षात्कार लेने के लिए इस सूची को प्रयोग में लाया जाता है।

(4) **प्रलेखीय अनुसूची (Documentary Schedule)**—इस प्रकार की अनुसूची को उस समय प्रयोग में लाया जाता है, जब लिखित प्रलेखों जैसे डायरियों, पत्रों, आत्मकथाओं, इत्यादि द्वारा सूचना एकत्र करनी हो।

आवश्यक स्तर

उपर्युक्त अनुसूचियों को तथ्यों के संकलन के लिए प्रयोग में लाया जाता है। अनुसूची द्वारा सामग्री प्राप्त करने के लिए कुछ आवश्यक स्तरों (Stages) से गुजरना पड़ता है, ये स्तर निम्न हैं—

(1) **उत्तरदाताओं का चयन (Selection of Respondents)**—अनुसूची के प्रयोग में सर्वप्रथम उत्तरदाताओं का चयन किया जाता है जिनसे सूचना एकत्र करनी है। इसके अन्तर्गत दो प्रकार की प्रणालियों को अपनाया जा सकता है—जनगणना-पद्धति (Census method) और निदर्शन-पद्धति। जहाँ समूहों के सभी व्यक्तियों से साक्षात्कार करके अनुसूची को भरा जाय, उसमें जनगणना-पद्धति को अपनाया जाता है। जनगणना-पद्धति को अपनाने से पूर्व अनुसंधानकर्त्ता देख लेता है कि अध्ययन समस्या की प्रकृति किस प्रकार की है। वह समूह को कई उप-समूहों में भी विभाजित कर सकता है। इसके बावजूद भी उन सबके उत्तरों को अनुसूची में स्थान नहीं दे सकता तो निदर्शन पद्धति को प्रयोग में लाया जाता है। निदर्शन पद्धति द्वारा कुछ उत्तरदाताओं का चयन कर उनसे साक्षात्कार कर लिया जाता है और उनसे प्राप्त सूचनाओं को अनुसूचियों में भर दिया जाता है। चुने हुए व्यक्तियों से प्राप्त प्रारम्भिक जानकारी को तुरन्त ही लिख लिया जाना चाहिए। इस बात का भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि उत्तरदाता उपलब्ध होंगे अथवा नहीं। उनसे सम्पर्क बनाए रखना चाहिए।

(2) **जाँचकर्त्ताओं का चयन एवं प्रशिक्षण (The Selection and Training of Investigators)**—जहाँ कुछ लोगों का साक्षात्कार करना है, वहाँ अनुसंधानकर्त्ता स्वयं जाकर उनसे अभीष्ट सूचना प्राप्त कर अनुसूची में भर सकता है। यदि साक्षात्कारदाताओं की संख्या अधिक हो तो अनुसंधानकर्त्ता कुछ ऐसे जाँच-

कर्त्ताओं का चयन कर सकता है जो बड़ी कुशलता सूझबूझ, धैर्य और होशियारी से अनुसूची में साक्षात्कार द्वारा सूचना को भर सकता हो। उनके चयन में अनुसंधानकर्त्ता को बड़ी सावधानी रखनी पड़ती है क्योंकि अनुभवहीन जिन जाँचकर्त्ताओं का चयन किया जा रहा है वे यदि अनुपयुक्त सिद्ध होते हो तो अनुसंधान कार्य सही रूप में सचालित नहीं हो सकता। अत उन्हें विशेष रूप से प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। उनके लिए प्रारम्भिक प्रशिक्षण शिविर होने चाहिएँ ताकि उन्हें अध्ययन की प्रकृति, क्षेत्र, उद्देश्य, अनुसूचियों को भरने की विधि, साक्षात्कार के तरीके, कौनसी सूचनाओं को प्राथमिकता देना आदि बातों का पूरा ज्ञान एवं प्रशिक्षण दिया जा सके।

(3) तथ्य-सामग्री का सकलन (Collection of Data)—तथ्य-सामग्री के सकलन के लिए अध्ययनकर्त्ता या जाँचकर्त्ता को साक्षात्कार के लिए निश्चित स्थान पर पहुँचना पड़ता है। उत्तरदाताओं से सूचना प्राप्त करके उसे अनुसूची में भरना होता है, लेकिन इसके लिए एक क्रमिकप्रक्रिया को अपनाना पड़ता है जिसका वर्णन निम्नलिखित रूप में किया जाता है—

(a) सूचनादाताओं से सम्पर्क (Contact with Informants)—अनुसधानकर्त्ता को साक्षात्कार द्वारा सूचना प्राप्त करने से पूर्व सूचनादाताओं से सम्पर्क स्थापित करना होता है। सम्पर्क स्थापित करने में क्षेत्रीय कार्यकर्त्ताओं की कुशलता, चतुरता, धैर्य व शान्ति से काम लेना पड़ता है। यदि प्रारम्भ में ही कार्यकर्त्ता, सूचनादाता को प्रभावित नहीं कर पाता तो उससे सूचना प्राप्त करना कठिन हो जाता है। यदि सूचनादाता के मस्तिष्क में कार्यकर्त्ता के प्रति कुछ गलत धारणाएँ बैठ गईं या कोई सशय पैदा हो गया तो ऐसी स्थिति में सूचना प्राप्त करना बिल्कुल असम्भव होगा। अत कार्यकर्त्ता को चाहिए कि वह बड़े प्रभावशाली ढग से अपना परिचय दे अपनी प्रभावपूर्ण वाणी और सौम्य स्वभाव से उसका हृदय जीत ले। उसे चाहिये कि बड़े ही विनम्र ढग से अभिवादन कर उसके स्वभाव, आदत एवं व्यवहार के साथ तारतम्य स्थापित करे। उसे ऐसी स्थिति उत्पन्न करनी चाहिए कि सूचनादाता स्वय उत्साहित होकर सूचना दे। इसीलिए कार्यकर्त्ता को उसके बारे में सक्षिप्त जानकारी पहले ही से कर लेनी चाहिए। कार्यकर्त्ता को यह ध्यान रखना चाहिए कि उससे प्रश्न कब पूछे जायें। यदि सूचनादाता किसी कार्य में व्यस्त हो गया हो तो उसके कार्य में विघ्न नहीं पहुँचना चाहिए। उसे धैर्य रखकर समयानुकूल स्थिति में ही प्रश्न पूछने चाहिएँ।

(b) साक्षात्कार (Interview)—सूचनादाता से सम्पर्क स्थापित करने के पश्चात् साक्षात्कार का कार्य प्रारम्भ किया जाता है। साक्षात्कार करना भी उतना ही कठिन है जितना कि सूचनादाताओं से सम्पर्क स्थापित करना। साक्षात्कार करते समय अनुसधानकर्त्ता को यह विशेष ध्यान रखना चाहिए कि वह प्रश्नों की बौछार

ही न कर दे। उसका उद्देश्य साक्षात्कारदाता से अधिक से अधिक विश्वसनीय जानकारी प्राप्त करना होना है, यह तभी सम्भव हो सकता है जब अनुसंधानकर्त्ता एक स्वाभाविक वातावरण में सूचनादाता के मनोभावों को ध्यान में रखते हुए, सूचना प्राप्त करता है। बीच में थोड़ा रुककर कुछ इधर-उधर की बातें करनी चाहिएँ ताकि सूचनादाता की अभिरुचि बनी रहे। साक्षात्कार को रोचक बनाने के लिए कुछ हँसीमज़ाक की बात भी कर लेनी चाहिए या कोई उपयुक्त दृष्टांत दे देना चाहिए, ताकि सूचनादाता, साक्षात्कार को कोई बोझ न समझ कर एक 'रुचिपूर्ण भेंट' समझें।

(c) सूचना प्राप्त करना (To obtain Information)—साक्षात्कार करते समय यह समस्या पैदा हो जाती है कि सूचनादाता से किस प्रकार सन्तपूर्ण एवं विश्वसनीय सूचनाएँ प्राप्त की जाएँ। साक्षात्कारकर्त्ता को अनुसूची में से एक एक करके प्रश्न कर सूचना प्राप्त करनी चाहिए। लेकिन साक्षात्कारदाता के दिमाग में यह शंका पैदा न हो कि अनुसंधानकर्त्ता उससे कोई गुप्त जानकारी प्राप्त कर रहा है या उसे किसी उलझन में डाल रहा है। यदि उत्तरदाता सूचना देते समय मुख्य विषय से हट जाता है तो ऐसी स्थिति में बड़ी सावधानीपूर्वक उसका ध्यान मुख्य विषय की ओर केन्द्रित करना चाहिए अथवा उसे साक्षात्कार के बीच कुछ अन्य बातें करके, बंद कर देना चाहिए। यह भी सम्भव है कि प्रश्नों के स्पष्ट न होने के कारण सूचनादाता उसका कुछ और ही अर्थ समझ बैठे जिसके फलस्वरूप वह मुख्य विषय से विचलित हो जाए। अतः अनुसंधानकर्त्ता या अध्ययनकर्त्ता को चाहिए कि वे सीधे व स्पष्ट प्रश्नों का निर्माण करें।

अनुसूचियों का सम्पादन (Editing of Schedules)

जब जाँचकर्त्ताओं से समस्त अनुसूचियाँ प्राप्त हो जाती हैं तब उनका सम्पादन किया जाता है जिसकी प्रक्रिया इस प्रकार है—

(i) अनुसूचियों की जाँच (Checking the Schedules)—सर्वप्रथम कार्यकर्त्ताओं द्वारा भेजी हुई अनुसूचियों की जाँच की जानी है। यहाँ यह ध्यान रखा जाता है कि सभी अनुसूचियाँ प्राप्त हुई हैं अथवा नहीं। इसके पश्चात् सूचियों का वर्गीकरण किया जाता है। यह वर्गीकरण कार्यकर्त्ताओं या जाँचकर्त्ताओं के आधार पर किया जाता है। प्रत्येक जाँचकर्त्ता द्वारा भेजी गई अनुसूचियों की अलग-अलग फाइल तैयार की जाती है और उस फाइल पर चिट लगाकर कार्यकर्त्ता का नाम, क्षेत्र, सूचनादाताओं की संख्या आदि लिख दी जाती है।

(ii) प्रविष्टियों की जाँच (Checking the Entries)—अनुसंधानकर्त्ता समस्त प्रविष्टियों की जाँच करता है। यदि कोई खाना नहीं भरा गया हो या गलत खाने में उत्तर लिख दिया हो तो उसके कारण का पता लगाकर उस त्रुटि को दूर करने का प्रयत्न करता है। यदि वह स्वयं गलती को ठीक कर सकता है तो उसे उसी वक्त ही ठीक कर देता है, अन्यथा अनुसूची को कार्यकर्त्ता के पास लौटा दिया

जाता है जिसमे या तो स्वयं ही संशोधन कर देता है या उत्तरदाता से पुनः मिलकर सही सूचना प्राप्त करता है।

(iii) गंदी अनुसूचियाँ (Dirty Schedules)—अनुसंधानकर्त्ता गंदी अनुसूचियों का अलग कर देता है। जो पढ़ने योग्य न हो या फट गई हो या अन्य किसी कारण से सूचना देने योग्य न हो उन्हे कार्यकर्त्ताओं के पास भेज दी जाती है ताकि यथार्थ सूचना प्राप्त हो सके।

(iv) संकेतन (Coding)—अनुसंधानकर्त्ता सारणीयन के कार्य मे असुविधा दूर करने के लिए संकेतन का कार्य करता है। वह सभी उत्तरों का निश्चित भागों मे वर्गीकरण कर देता है। प्रत्येक वर्ग को संकेतन संख्या प्रदान की जाती है।

अनुसूची के गुण (Merits of Schedule)

1 प्रत्यक्ष सम्पर्क (Direct Contact)—अनुसंधानकर्त्ता, सूचनादाताओं से प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करता है ताकि वह महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ प्राप्त कर सके। यदि अनुसंधानकर्त्ता का व्यक्तिगत सम्पर्क न हो तो सूचनादाता स्वयं भी सूचनाएँ भेजने मे आलस्य करता है एवं उसको अभिरुचि नहीं रहती। अनुसंधानकर्त्ता को सामने देखकर उसमे भी उत्साह की भावना तीव्र होती है क्योंकि सूचनादाता स्वयं भी तो उसके बारे मे जानने का इच्छुक रहता है।

2 ठोस सूचनाएँ प्राप्त करना (Securing Concrete Informations)—अनुसूची प्रणाली का यह एक महत्त्वपूर्ण गुण है जिसके द्वारा प्राप्त सूचनाएँ ठोस होती हैं। अनुसंधानकर्त्ता की उपस्थिति से सूचनादाता के मन मे यह रहता है कि वह कहीं गलत सूचना न दे दे क्योंकि अनुसंधानकर्त्ता स्वयं के उपस्थित होने के कारण वह उस द्वारा दिए उत्तर की सत्यता या असत्यता सिद्ध कर सकता है। साथ ही अनुसंधानकर्त्ता अवलोकन द्वारा भी वास्तविक ज्ञान प्राप्त करता रहता है। इससे तथ्यों की पुष्टि की जा सकती है।

3 अधिकतम सूचनाओं की प्राप्ति (Obtaining Maximum Informations)—ठोस सूचनाएँ प्राप्त करने के अतिरिक्त, अनुसंधानकर्त्ता अनुसूची को भरकर अधिकतम सूचनाएँ प्राप्त करता है। यह सुविधा साक्षात्कार मे नहीं है क्योंकि उसमे प्रश्न निश्चित नहीं होते। अनुसंधानकर्त्ता के समक्ष, अनुसूची स्पष्ट रूप से होने के कारण उसका उद्देश्य अधिकतम सूचना प्राप्त करना होता है।

4 सारणीयन मे सहायक (Helpful in Tabulation)—प्रश्नों को क्रमबद्ध और श्रेणियों मे विभाजित करने से सारणीयन का कार्य आसान हो जाता है। इससे उत्तरों का प्रयोग सांख्यिकीय सूत्रों के अन्तर्गत किया जा सकता है।

5. अभिनति की सम्भावना नहीं (No possibility of Bias)—अनुसूची के प्रश्न स्पष्ट एवं पूर्व निर्धारित होते हैं अतः उन्ही प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने होते हैं, जिनका सम्बन्ध उसके अनुसंधान से है। साक्षात्कार मे सूचनादाता उत्तर देते हुए

कभी कभी इतना भाव-विभोर हो जाता है कि वह अपने विषय से हटकर अपने दृष्टिकोण को ही प्रस्तुत करने मे सफल रहता है इसकी गु जाइश इसमे नही रहती। अनुसधानकर्ता स्वय भी निष्पक्ष-सा हो रहता है क्योकि उसको भी वे ही उत्तर प्राप्त करने हैं जो अनुसूची मे हैं, अत अपनी ओर स इसमे कुछ हेरफेर नही कर सकता।

6 अवलोकन की गहनता में वृद्धि (Increase in the Intensity of Observation)—अलग अलग इकाइयो का अलग अलग अध्ययन करने से अवलोकन मे गहनता एव प्रामाणिकता की वृद्धि होती है। चूँकि अनुसधानकर्ता विभिन्न सूचनादाताओ से उत्तर प्राप्त करता है अत उसके अवलोकन मे उतनी ही गहनता आती है।

लुण्डबर्ग के अनुसार, "अनुसूची एक समय म एक तथ्य को पृथक् करने का तरीका है एव इस प्रकार हमारे अवलोकन को गहन बनाती है।"

अत अनुसूची हमारे मार्गदर्शन एव वैषयिक सूचना प्राप्त करने का एक उत्तम साधन है। इसके आधार पर अनुसधान के क्षेत्र निश्चित किए जा सकते हैं। पी० वी० यग के शब्दो मे, "अनुसूची को वह (अनुसधानकर्ता) एक पथ-प्रदर्शक, जाँच के क्षेत्र को निश्चित करने का एक साधन, स्मरण-शक्ति का सयत्र, लेखबद्ध करने का तरीका बनाता है।"[1]

अनुसूची की सीमाएँ (Limitations of Schedule)

(i) अनुसूची का प्रयोग छोटे क्षेत्र मे किया जा सकता है। विस्तृत क्षेत्र में इसीलिए अनुपयोगी रहता है कि उसमे कई व्यावहारिक कठिनाइयाँ जैसे, उत्तरदाता बिखरे हुए हो, आ जाती हैं।

(ii) ऐसे सामान्य प्रश्नो का निर्माण नही किया जा सकता जिनको प्रत्येक व्यक्ति समझकर उत्तर दे सकें।

(iii) इसके परिणाम निदर्शन पर आधारित नही होते।

(iv) विभिन्न संस्कृति, समुदाय, जीवन-स्तर एव शिक्षा के कारण सभी प्रश्नो को समान रूप स लागू करना असभव है।

(v) अनुसधानकर्ता द्वारा सूचनादाता को प्रेरित करने से अभिनति की सम्भावना रहती है क्योकि सूचनादाता समझ जाता है कि उसके अनुसधान का प्रयोजन क्या है, अत वह ऐसे ही उत्तर देता है जो अनुसधानकर्ता अपनी अनुसूची में भरना चाहता है।

(vi) अनुसूची द्वारा प्राप्त सूचनाओ को एकत्र करने मे काफी समय व धन का अपव्यय होता है।

1. "He makes the schedule a guide, a means of delimiting the scope of enquiry, a memory-tickler, a recording device." —*P. V Young*

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति
(Case Study Method)

सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र मे वैयक्तिक अध्ययन प्रणाली का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह प्रणाली काफी प्राचीन है और इसका उपयोग सुप्रसिद्ध व्यक्तियो के जीवन इतिहास को तैयार करने मे किया जाता था। इस पद्धति द्वारा सभी सम्भव स्रोतो और प्रणालियो से तथ्यो का सकलन किया जाता था। प्रारम्भ मे इस पद्धति का प्रयोग हर्बर्ट स्पेंसर (Herbert Spencer) ने किया, बाद मे लिप्ले (Leplay) ने इसका प्रयोग बडे ही सुव्यवस्थित और समुचित ढग से किया। बर्नार्ड के मतानुसार, "सर्वप्रथम इसका उपयोग अनुमान द्वारा किसी नई उपकल्पना पर पहुँचने की अपेक्षा, प्रस्तावनाओ तथा विचारधाराओ को समझाने एव समर्थन करने के लिए किया गया था।"

परिभाषाएँ

पी० वी० यग ने वैयक्तिक अध्ययन की परिभाषा देते हुए लिखा है— "वैयक्तिक अध्ययन, किसी एक सामाजिक इकाई, चाहे वह एक व्यक्ति हो, या एक परिवार, सस्था सांस्कृतिक समूह अथवा सम्पूर्ण समुदाय ही क्यो न हो, के जीवन की खोज तथा विश्लेषण की एक पद्धति है।"[1]

एफ० एच० गिडिंग्स (F H. Giddings) के मतानुसार, "अध्ययन किया जाने वाला वैयक्तिक विषय केवल एक व्यक्ति अथवा उसके जीवन की एक घटना, विचारपूर्ण दृष्टि से एक राष्ट्र या इतिहास का एक युग भी हो सकता है।"[2]

बिसेंज एव बिसेंज के अनुसार, "वैयक्तिक अध्ययन पद्धति सम्पूर्ण गुणात्मक विश्लेषण का एक स्वरूप है जिसमे एक व्यक्ति, परिस्थिति या सस्था का बहुत सावधानीपूर्वक तथा पूर्ण अवलोकन किया जाता है।"[3]

क्लिफोर्ड आर शॉ के अनुसार, "वैयक्तिक अध्ययन पद्धति सम्पूर्ण परिस्थिति अथवा कारको के सम्मिलित रूप, प्रक्रिया के विवरण और घटनाओ के अनुक्रम जिसमे व्यवहार घटित होते हैं, मानव व्यवहार का सम्पूर्ण सरचना मे अध्ययन तथा

1 "Case study is a method of exploring and analysing the life of a Social-unit, be that unit a person, a family, an institution, a cultural group or even entire community." —*Pauline V Young* op. cit, p 229.

2 "The case under investigation may be one human individual or only an episode in his life, or it might conceivably be a nation or an empire, or an epoch of history"
—*F H Giddings* Scientific Study of Human Society, p. 95

3 "The case-study is a form of qualitative analysis, involving very careful and complete observation of a person, a situation, or any institution"
—*Biesanz and Biesanz* · Modern Society, p 11

उपकल्पनाओं (Hypotheses) के निर्माण में सहायक वैयक्तिक स्थितियों के विश्लेषण और तुलना पर जोर देती है।"[1]

ओडम के अनुसार, "वैयक्तिक अध्ययन पद्धति एक ऐसी प्रणाली है जिसके द्वारा प्रत्येक व्यक्तिगत कारण, चाहे वह एक संस्था हो, किसी व्यक्ति के जीवन की एक घटना मात्र हो, अथवा एक समूह हो, का अन्य समूहों से सम्बन्धित करते हुए विश्लेषण किया जाता है।"[2]

गुडे एवं हाट के शब्दों में, "यह सामाजिक तथ्यों को संगठित करने की एक ऐसी विधि है जिससे अध्ययन किए जाने वाले सामाजिक विषय की एकात्मक प्रकृति की पूर्णतः रक्षा हो सके। दूसरे शब्दों में, यह ऐसा दृष्टिकोण है जिनसे किसी सामाजिक इकाई का उसके सम्पूर्ण स्वरूप में दिग्दर्शन हो जाता है।"[3]

याग-सिन पो लिखते हैं, "वैयक्तिक अध्ययन की परिभाषा व्यक्तिगत इकाई गहन तथा सम्पूर्ण अध्ययन के रूप में दी जा सकती है जिसमें अनुसंधानकर्ता अपनी समस्त निपुणता तथा विधियों का उपयोग करता है, अथवा वह किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में पर्याप्त सूचना का व्यवस्थित संकलन है जिससे हम इस बात का पता लगा सकें कि वह समाज की इकाई के रूप में किस प्रकार कार्य करता है।"[4]

विशेषताएँ

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर वैयक्तिक अध्ययन की निम्न विशेषताएँ हैं—

(1) विशेष सामाजिक इकाई का अध्ययन (Study of a Specific Social Unit)—गिडिंग्स के शब्दों में, "यह इकाई कोई व्यक्ति, परिवार, संस्था अथवा

1. "Case-study method emphasizes the total situation or combination of factors, the description of the process or sequence of events in which behaviour occurs, the study of individual behaviour in its total setting and the analysis and comparison of cases leading to formation of hypothesis"
—*Shaw and Clifford R* Case-Study Method, p. 149

2 "The case study method is a technique by which individual factor, whether it be an institution or just an episode in the life of an individual or a group, is analysed in its relationship to any other in the group"
—*H Odum An Introduction to Social Research, p 229*

3. "It is a way of organising social data so as to preserve the unitary character of the social object being studied. Expressed some what differently, it is an approach which views any social unit as a whole"
—*Goode and Hatt* Methods of Social Research

4 "Case study method may be defined as small inclusive and intensive study of an individual in which the investigator brings to bear all his skills and methods, or as a systematic gathering of enough information about a person to permit one to understand how he or she functions as unit of society" —*Yang Hsin Pao* Fact Finding with Rural People

समस्त जाति हो सकती है अथवा कोई अमूर्त वस्तु जैसे कोई सम्बन्ध या स्वभाव।' सामाजिक इकाई के अन्तर्गत मनुष्य जीवन की किसी एक घटना से लेकर पूर्ण साम्राज्य की सारी घटनाएँ तक हो सकती हैं।

(2) गुणात्मक अध्ययन (Qualitative Study)—वैयक्तिक अध्ययन का स्वरूप गुणात्मक है अत इसका आँकडो, सख्याओ से सम्बन्ध नही होता है। इसके अन्तर्गत सूचना को सख्यात्मक रूप मे प्रस्तुत नही किया जाता है। उदाहरणार्थ कोई विधायक, दल को बार बार छोडता है तो इस बात की सूचना इकट्ठी नही की जाएगी कि उसने दल को कितनी बार छोडा है, बल्कि उन परिस्थितियो और कारणो का अध्ययन किया जाएगा जिनसे बाध्य होकर उसने दल को छोडा है। अत इसमे प्रेरक तत्वो आकांक्षाओ और इच्छाओ पर विशेष बल दिया जाता है।

(3) चयनित वर्ग का गहन अध्ययन (Intensive Study of a Selected Class)—इसमे चयनित वर्ग या इकाई का बडी सावधानी और सूक्ष्मता से अध्ययन किया जाता है। इसमे इस बात की परवाह नही की जाती कि अध्ययन मे कितना समय लगेगा, क्या क्या अन्य प्रेरक तत्त्व होगे और वे भी कितना अतिरिक्त समय लगे। अत अधिक समय के कारण, अध्ययन मे कोई त्रुटियाँ या दोष की सम्भावना नही रहती तथा वैयक्तिक अध्ययन इकाई का स्वरूप स्पष्ट रूप से पेश करता है।

(4) सम्पूर्ण अध्ययन (Complete Study)—जहाँ साख्यिकीय विधि मे किसी एक पहलू अथवा अग का अध्ययन किया जाता है, वहाँ वैयक्तिक अध्ययन प्रणाली के अन्तर्गत सम्पूर्ण जीवन के समस्त पहलुओ का अध्ययन किया जाता है। गुडे एव हाट्ट के अनुसार, यह ऐसी विधि है जो किसी सामाजिक इकाई के समस्त रूप का अवलोकन करती है। ऐसा इसीलिए किया जाता है कि एक व्यक्ति अथवा सगठन के सामाजिक आर्थिक राजनीतिक, शैक्षणिक सांस्कृतिक पक्ष हो सकते हैं, अत बिना सम्पूर्ण तथा विभिन्न पक्षो के अध्ययन के परिणाम लाभदायक नही हो सकते।

(5) कारकों के परस्पर अन्तर्सम्बन्ध को जानने का प्रयास (Effort to know the mutual inter relationship of casual factors)—इकाइयो के विशेष व्यवहार को प्रेरणा देने वाले कई कारक हो सकते हैं। किसी घटना विशेष के पीछे कई कारण हो सकते हैं। उदाहरणाथ कई डाकुओ का हृदय परिवर्तन हो गया और उन्होने डकैती या लूटमार करना छोड दिया। जिस डाकू ने जीवन का एक बडा भाग डकैती मे व्यतीत किया है और वह एकदम साधु या सत बन जाता है तो हमे उसके पीछे कई कारण ढूँढने पडते हैं, जैसे भावुकता, सामाजिक प्रतिष्ठा का आभास, जाति या बिरादरी का स्वाग, जीवन मे अस्थायित्व, परिवार के प्रति जिम्मेदारी का ज्ञान इत्यादि ऐसे कारण हैं जिनमे परस्पर अन्तर्सम्बन्ध होता है। अतः इसके अन्तर्गत कारको के अन्तर्सम्बन्ध का पता लगाकर, एक निश्चित नियम पर पहुँचा जा सकता है।

वैयक्तिक अध्ययनो की आधारभूत मान्यताएँ
(Basic Assumptions in Case Studies)

(1) मानवीय व्यवहार की एक मौलिक एकता (Fundamental unity of human behaviour)—वैयक्तिक अध्ययन की यह आधारभूत मान्यता है कि मानव व्यवहार की मौलिक प्रवृत्तिया समान होती हैं। यद्यपि प्रत्येक मनुष्य दूसरे मनुष्य से स्वभाव व आदतो मे भिन्न है परन्तु मानव जाति का मूल प्रवृत्तिया नही बदल सकती। जिस प्रकार एक हब्शी अपने काले रग को नही बदल सकता उसी प्रकार मानव जाति अपनी मूल प्रेरक शक्तियां तथा आदतो का नही बदल सकती। परिस्थितिवश यदि परिवर्तन भी हमे नजर आता है तो वह एक अस्थाई Phase है अत वैयक्तिक अध्ययन मे अनुसधानकर्ता इस बात को मानकर ही चलता है कि निश्चित परिस्थितियो मे प्रत्येक व्यक्ति का व्यवहार समान सा ही होता है।

(2) अध्ययन इकाई का बहुमुखी स्वरूप (Protean or multi phased character of the study unit)—इसकी दूसरी आधारभूत मान्यता यह है कि किसी विशेष अध्ययन इकाई का स्वरूप भी एकल न होकर बहुमुखी होता है। उसमे विभिन्न प्रकार के पक्ष होते हैं अत यदि हम एक पक्ष का भी अध्ययन करना चाहते हैं तो भी हम उसके विभिन्न स्वरूपो का अध्ययन करना चाहिए यदि हमारा ध्यान केवल मात्र एक ही पक्ष पर जाता है और उससे सम्बन्धित अन्य पक्षो का अध्ययन नही करते हैं तो अनुसधान के परिणामो मे दोष आना स्वाभाविक है। अत जब कभी भी इकाई के एक पक्ष का अध्ययन किया जाय तो उसके विभिन्न पक्षो का अध्ययन भी अनिवार्य हो जाता है

(3) परिस्थितियों की पुनरावृत्ति व प्रभाव (Repetition of conditions and their effect)—मानव व्यवहार को हम बिना परिस्थितियो के अध्ययन के नही समझ सकते। जीवन मे अनेक प्रकार की परिस्थितियां आती हैं और वे निरन्तर उसके व्यवहार पर प्रभाव डालती हैं। चूंकि परिस्थितिया बार बार आती हैं अत उसकी पुनरावृत्ति से हम अन्दाजा लगा सकते है कि मानव व्यवहार उस परिस्थिति मे किस प्रकार का होगा या उन परिस्थितिया मे वह किस प्रकार का आचरण करेगा। यदि परिस्थितियो की पुनरावृत्ति ही न हो तो हम विशेष परिस्थिति के आधार पर कोई सामान्य निष्कर्ष नही निकाल सकते। परन्तु परिस्थितियाँ मनुष्य के जीवन मे बार बार आती है जिससे हम पहले से उसके प्रभाव का पता लगा सकते हैं।

(4) समय तत्व का प्रभाव (Effect of time factor)—इकाई का वर्तमान रूप भूत व पूर्व दशाओ तथा परिस्थितियो का परिणाम है। जिस रूप मे हम इकाई का अध्ययन करते हैं उस पर न मालूम कितने कारको का प्रभाव होगा। जो घटना आज घटित हो रही है न जाने उसके बीज कब बोए गए थे। उदाहरणार्थ आज हमारे देश मे कभी भी हिन्दू मुस्लिम दगे भयानक रूप धारण करते हैं इसके मूल कारण को ढूंढा जाय तो हमे पता चलता कि इसके बीज 1909 के अधिनियम

के अन्तर्गत ही भी दिए गए थे, जिसके अनुसार मुस्लिम प्रतिनिधित्व की पृथक् व्यवस्था की गई थी, उसके बाद सिक्खों के पृथक् प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की गई थी। हिन्दू-मुस्लिम में पृथकतावाद की भावना इस अधिनियम के अन्तर्गत ही पैदा कर दी गई थी परन्तु इस विष का प्रभाव अब हमें प्रत्यक्ष रूप से देखने को मिल रहा है। अहमदाबाद, यू पी व बिहार में हिन्दू-मुस्लिम दंगों ने कानून व व्यवस्था के लिए बहुत बड़ी समस्या पैदा कर दी थी।

(5) घटनाओं की जटिलता (Complexity of events)—हमारे जीवन में घटित होने वाली घटनाएँ बड़ी ही जटिल होती हैं, अतः उनका समझना काफी मुश्किल कार्य है। इन घटनाओं के पीछे अनेक तत्त्व (Factors) व तथ्य (Facts) होते हैं। यदि इनको हम एकत्र कर क्रमबद्ध कर देते हैं, तब वैयक्तिक अध्ययन सरल हो जाता है व इसके निष्कर्ष काफी निष्पक्ष हो सकते हैं।

वैयक्तिक अध्ययन के स्रोत
(Sources of Case-studies)

इस प्रकार के अध्ययन में अध्ययनकर्ता का मुख्य उद्देश्य यह होता है कि वह अधिकाधिक जानकारी प्राप्त करे। इसके दो प्रकार के प्रमुख स्रोत हैं—

(1) मौखिक रूप से सूचना संकलन (Data-collection in the oral form),

(2) लिखित व सुरक्षित सामग्री संकलन (Written and preserved data-collection)।

मौखिक रूप से सूचना संकलन (Data-collection in the oral form)

इसमें सामग्री संकलन के मुख्य साधन साक्षात्कार (Interviews), मौखिक वार्ताएँ (Oral talks), प्रायोगिक अध्ययन (Experimental studies), अवलोकन (Observation) और परीक्षण (Tests) हो सकते हैं। वैयक्तिक अध्ययन में साक्षात्कारों द्वारा व्यक्तियों के वर्तमान व्यवहारों की जानकारी की जा सकती है। उससे छोटे-बड़े प्रश्न पूछकर समस्या की गहराई तक पहुँचा जा सकता है। जिस प्रश्न का उत्तर एक व्यक्ति लिखित रूप में देना चाहता हो तो वह मौखिक उत्तर द्वारा जटिल समस्याओं के समाधान में अधिक योगदान दे सकता है। यदि आवश्यकता पड़ जाए तो अवलोकन व परीक्षण द्वारा भी अनुसंधानकर्ता जानकारी को प्राप्त कर सकता है और उसको नोट करके अपने निष्कर्ष के लिए सामग्री तैयार कर सकता है।

आजकल साक्षात्कारों, मौखिक वार्ताओं के अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक प्रोजेक्टिव प्रणालियों, कलात्मक परीक्षा बुद्धि परीक्षा (Intelligence test) पर अधिक बल दिया जा रहा है। उसका कारण यह है कि मनुष्य भावनाओं, कल्पनाओं द्वारा अधिक प्रभावित होता है जिसके सहारे हम समाज में बढ़ रही कुप्रवृत्तियाँ जैसे वेश्यागमन, चोरी, नशेबाजी, आदि अपराधवृत्तियों का पता लगा सकते हैं।

लिखित व सुरक्षित सामग्री सकलन
(Written and preserved data-collection)

वैयक्तिक अध्ययन प्रणाली का एक अन्य स्रोत है सुरक्षित तथा लिखित रिकार्ड। लिखित सामग्री आत्मकथा, डायरी तथा पत्रो के रूप मे हो सकती है। कई लोग अपनी दैनिक डायरी रखते हैं जिसमे वे दैनिक जीवन मे घटित होने वाली घटनाओ का वर्णन करते है जिनका सम्बन्ध उनके मानसिक कारणो से हो सकता है। वह भावना से प्रेरित होकर अपने विचार व्यक्त करता है, जिससे उसकी मानसिक दशा का भी पता लग सकता है। आत्मकथाओ और पत्रो द्वारा हम व्यक्ति के विभिन्न पक्षो की जानकारी सही-सही प्राप्त करते हैं क्योकि वह स्वय के जीवन के मूल्यो, सिद्धान्तो की रिकार्डिंग निष्पक्ष होकर करता है। आलपार्ट के अनुसार, "ये स्वय प्रकाशित रिकार्ड होते हैं जो जानबूझ कर अथवा अनायास ही लेखक के मानसिक जीवन की रचना अथवा गतिशीलता का वर्णन करते हैं।"[1] हालाकि ये व्यक्तिगत रिकार्ड व्यक्ति-प्रधान होते हैं, लेकिन अनुसधानकर्ता के लिए इनकी जानकारी बडी महत्वपूर्ण है क्योंकि वह इनके आधार पर व्याप्त परिस्थितियो मे मानसिक स्थिति का पता लगा सकता है।

श्रीमती यग ने प्रमुख साधनो मे व्यक्तिगत प्रलेख (Personal documents), व्यक्ति द्वारा लिखे गये अथवा उसके द्वारा लिखाये गये प्रथम पुरुष लेख (Accounts), आत्मकथाएँ, सस्मरण, डायरियाँ, जीवन-इतिहास आदि को शामिल किया है। इन स्रोतो के अतिरिक्त आधुनिक समय मे फोटोग्राफ-एलबम, टेप रिकार्डिंग, जीवन-घटनाओ की सूची, प्रमाण व प्रशसा-पत्र सरकारी कार्यालयो द्वारा दी गई जानकारी, पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित रचनाएँ, उनमे की गई प्रशसा व आलोचना आदि इस प्रकार की सामग्री मे सम्मिलित किये जाते हैं। इनमे विद्वान् लेखको, प्रोफेसरो, साहित्यकारो की डायरियाँ व पत्र हैं। कई अप्रकाशित तथ्य डायरियो व पत्रो द्वारा प्राप्त हो सकते हैं। जब वे प्राप्त होते हैं तो इन लोगो के रिकार्डों को सग्रहालय मे रखा जाता है। अत इस स्रोत को वैयक्तिक अध्ययन मे बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है।

वैयक्तिक अध्ययन की प्रणाली
(Procedure of Case-Studies)

वैयक्तिक अध्ययन मे व्यक्ति या इकाई के बारे मे पूर्ण जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है, अत इसमे विभिन्न पद्धतियो को प्रयोग मे लाया जाता है। इसके अन्तर्गत अध्ययन की प्रकृति काफी जटिल होती है, अत सुनियोजित ढग से ऐसी प्रणाली अपनाई जानी चाहिए ताकि सामग्री-सकलन अधिक उपयोगी हो

1 " Self revealing records which intentionally or unintentionally yield direct information regarding the structure, dynamics, and functioning of author's mental life " —Alport

सके। वैयक्तिक अध्ययन की प्रक्रिया को निम्नलिखित क्रमों के अनुसार विभाजित किया जा सकता है—

(1) समस्या की संक्षिप्त विवेचना (A brief statement of problem)-अध्ययन समस्या की प्रकृति एवं स्वरूप की संक्षिप्त विवेचना अत्यन्त आवश्यक है। समस्या के वर्णन व व्याख्या के बिना हम अगले चरण की ओर नहीं बढ़ सकते। इसमें निम्नलिखित बातें सम्मिलित की जाती हैं —

(अ) मामलों का चुनाव (Selection of cases)—ये मामले दो प्रकार के हो सकते हैं—(i) सामान्य एवं (ii) विशिष्ट।

(ब) इकाइयों के प्रकार (Types of units)—इसके अन्तर्गत अध्ययन-इकाई व्यक्ति समूह, संस्था समूह या वर्ग हो सकता है। अतः जिस इकाई का अध्ययन करना हो, उसे चयनित कर लिया जाता है।

(स) विषयों की संख्या (Number of cases)—इनके आधार पर निष्कर्ष पर पहुँचने में आसानी रहती है लेकिन बड़ी सावधानी बरतनी पड़ती है क्योंकि कुछ विषयों की संख्या के आधार पर ही यदि सामान्यीकरण की ओर बढ़ा जाता है तो निष्कर्ष निःसन्देह एकपक्षीय या गलत सिद्ध होंगे।

(द) विश्लेषण का क्षेत्र (Scope of analysis)—विश्लेषण का क्षेत्र पहले से ही निर्धारित कर लेना चाहिए—क्या व्यक्ति-अध्ययन के एक पक्ष का ही अध्ययन करना है अथवा उसके अनेक पक्षों को उसमें शामिल करना है।

(2) घटनाओं के अनुक्रम का वर्णन तथा उनके निर्धारक तत्त्व (Description of the course of events and their determinant factors)—समय या काल को ध्यान में रखते हुए यह देखा जाता है कि किस युग में कौन-सी घटना घटित हुई या किस क्रम से घटित हुई, उसमें क्या-क्या परिवर्तन हुए और यदि परिवर्तन हुए तो उनका क्या स्वरूप रहा, आदि बातें महत्त्वपूर्ण हैं। इसके अतिरिक्त उन तत्त्वों का पता लगाना जिनके कारण घटना घटित हुई है। उदाहरणार्थ, यदि स्त्री समाज में चरित्र-भ्रष्टता की घटनाएँ अधिक हो रही हों तो इसके पीछे कई कारण, जैसे—निरोधक दवाइयों का आविष्कार, उनका अधिक प्रचार, आधुनिक सस्ते व प्रभावशाली साधन जिसके द्वारा गर्भपात की समस्या ही नहीं उठती है। इसके अलावा अन्य कारण जैसे बढ़ता हुआ फैशन, सिने-संसार का हानिप्रद प्रभाव व नैतिक शिक्षा की कमी हो सकते हैं।

(3) कारकों का विश्लेषण (Analysis of factors)—इसके अन्तर्गत समस्त संकलित सामग्री का समन्वय कर उसका विश्लेषण किया जाता है। इसमें यह देखना होता है कि कौन से तत्त्व अधिक प्रभावशाली रहे, कौन से कम तथा कौन से तटस्थ एवं इन कारकों का परिवर्तन में क्या हिस्सा रहा।

(4) निष्कर्ष (Conclusion)—इसका अन्तिम चरण निष्कर्ष है। समस्त सामग्री उपलब्ध होने व कारकों के अन्तिम विश्लेषण के पश्चात्, किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचा जाता है। इसके अतिरिक्त अध्ययनकर्त्ता स्वय की टीका टिप्पणियों, दृष्टिकोण व इसमे व्याप्त कमियो को भी प्रस्तुत करता है।

वैयक्तिक अध्ययन के गुण
(Merits of Case-Studies)

(1) सामाजिक इकाई का सूक्ष्म अध्ययन (Microscopic study of social unit)—वैयक्तिक अध्ययन द्वारा सामाजिक इकाई के बारे मे पूर्ण जानकारी अर्जित की जा सकती है। इसमे इकाई के विशिष्ट व सामान्य दोनों लक्षणो का अध्ययन किया जाता है, उसकी गहराइयो मे पहुँचकर अति सूक्ष्म अध्ययन कर निश्चितता पर पहुँचा जा सकता है। कूले के शब्दो में, "वैयक्तिक अध्ययन प्रणाली से हमारा बोध-ज्ञान विकसित होता है तथा वह जीवन के प्रति स्पष्ट अन्तर्दृष्टि प्रदान करती है। यह व्यवहार का अध्ययन, अप्रत्यक्ष एव अमूर्त रूप से नही, बल्कि प्रत्यक्ष रूप से करती है।"

(2) प्रमाणकारी उपकल्पना का निर्माण (Formation of evidential hypothesis)—चूँकि इकाइयो के विभिन्न पक्षो के अध्ययन द्वारा ही निष्कर्ष पर पहुँचा जाता है, अत इन निष्कर्षों पर आधारित उपकल्पना प्रामाणिक रूप से सिद्ध होती है।

(3) अनुसधानकर्त्ता के अनुभव का क्षेत्र व्यापक (The field of experience of researcher is vast)—वैयक्तिक अध्ययन प्रणाली मे अनुसधानकर्त्ता को जीवन के विभिन्न पक्षो का अध्ययन करना होता है। उसका क्षेत्र, सांख्यिकीकार के क्षेत्र की तरह सीमित नही होता है। उसे जीवन मे आने वाली अनेक परिस्थितियो का अवलोकन व व्यक्ति की मनोवृत्तियो का अध्ययन करना होता है जिससे उसे कई विषयो का ज्ञान होता है व उसके अनुभव मे वृद्धि होती है। गुडे एव हाट्ट के अनुसार, "अधिकाश सर्वेक्षण कार्य की सीमा निश्चित होने के कारण, वास्तव मे अनुसधानकर्त्ता विश्लेषण स्तर पर विस्तृत अनुभव प्राप्त करता है जब प्रश्नो के अर्थों की छानबीन की जाती है।"

(4) अनेक तकनीकों का प्रयोग (Use of many techniques)—वैयक्तिक अध्ययन के अन्तर्गत अनेक तकनीक जैसे साक्षात्कार, प्रश्नावलियाँ, मौखिक प्रश्न, प्रलेख, पत्र, डायरियो द्वारा बड़ी उपयोगी सामग्री प्राप्त होती है। इन प्रणालियो द्वारा अध्ययनकर्त्ता को इतनी सामग्री प्राप्त हो जाती है कि यह प्रयोग सही निष्कर्षों पर पहुँचने मे सफलतापूर्वक कार्य कर सकता है।

(5) व्यक्तिगत मामलों का अध्ययन (Study of personal matters)—इसमे व्यक्तिगत मामलो के विभिन्न पहलुओ का बारीकी से अध्ययन किया जाता है। उसके मामले की पूरी जाँच पड़ताल होती है—क्या दोष व कमियाँ हैं, क्या

परिस्थितियाँ रही हैं जिसके कारण चारित्रिक दुर्बलता व नैतिक पतन को प्रोत्साहन मिला है। इस विधि द्वारा व्यक्तियों के गुणों, रहस्यों इत्यादि की जानकारी प्राप्त होती है।

(6) अध्ययन-समस्या को समझने में सहायक (Helpful in understanding study problem)—अध्ययनकर्त्ता अनुसंधान के मुख्य भाग को प्रारम्भ करने से पूर्व कुछ इकाइयों को चुनकर उनका वैयक्तिक अध्ययन कर लेता है तो उसे समस्याओं को समझने में बड़ी आसानी रहती है।

(7) सामान्यीकरण का आधार प्रदान करता है (Provides basis for generalisation)—विभिन्न परिस्थितियाँ व उनसे सम्बन्धित समस्याओं की जानकारी के आधार पर सामान्यीकरण करना सम्भव हो जाता है। गुडे एवं हाट्ट के अनुसार, "यह प्रायः सत्य होता है कि वैयक्तिक अध्ययन द्वारा प्रदान की गई अन्तर्दृष्टि की गहराई से, बाद में बृहत स्तर पर आयोजित अध्ययनों के लिए लाभकारी उपकल्पनाएँ निकल सकेंगी।"[1]

(8) विरोधी इकाइयों को ज्ञात करना (To find out deviant cases)—विरोधी इकाइयाँ वे होती हैं जो हमारी प्रामाणिक व सुनिश्चित उपकल्पना के विरुद्ध होती हैं। ऐसी इकाइयों को ज्ञात कर, हम सही रास्ते पर अग्रसर होते हैं। इनका अध्ययन इसीलिए आवश्यक है ताकि हम सही तथ्यों पर पहुँच सकें।

वैयक्तिक अध्ययन के दोष
(Demerits of Case-Studies)

(1) यह ठोस परिणामों का प्रदान नहीं कर सकता (It cannot provide solid results)—जिस प्रकार वैज्ञानिक पद्धति द्वारा हम ठोस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं वैयक्तिक अध्ययन प्रणाली द्वारा हम सामान्यतः किसी निर्विवाद निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकते क्योंकि इस पद्धति द्वारा एकत्रित की गई सामग्री गलत हो सकती है। साक्षात्कार व मौखिक प्रश्नों में व्यक्ति सही जानकारी नहीं देता जिसके कारण परिणामों में दोष आ जाता है।

(2) सीमित अध्ययन (Limited Study)—इसमें केवल गिनी-चुनी इकाइयों का अध्ययन किया जाता है। अतः इस आधार पर न तो निर्देशन दिया जा सकता है और न ही यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया जा सकता है।

(3) समय की बर्बादी (Wastage of time)—अनुसंधानकर्त्ता को प्रत्येक केस पर काफी समय देना पड़ता है, उसके बावजूद भी वह ठोस निष्कर्ष पर पहुँचने में असफल रहता है। जब कई मामलों को हाथ में लेता है तो समय की बहुत बर्बादी

1 "... it is of en true that the depth of insight afforded by the case study will yield fruitful hypotheses for a later, full-scale study."
—*Goode & Hatt* Ibid., p. 338.

. है, उसका ध्यान बार-बार इस ओर भी जाता है कि 'समय खराब हो रहा है', परिणाम कुछ नही निकल रहा है' । समय की हानि के साथ परिणामो की प्राप्ति भी नही होना न्यायोचित बात नही है । गुडे तथा हाट्ट के अनुसार, "मामले (Cases) एकत्र करने मे अधिक समय लगता है तथा पूर्णता के साथ अध्ययन करने को तत्पर लोगो को ढूंढना कठिन होता है ।"

(4) अवैज्ञानिक पद्धति (Unscientific Method)—वैयक्तिक अध्ययन पद्धति अवैज्ञानिक, असगठित व अनियमित है । इसमे इकाइयो के चयन एव सामग्री सकलन पर कोई नियन्त्रण नही रहता । ऐतिहासिक व्यक्तियो के बारे मे जो सूचना विभिन्न स्रोतो से एकत्र की जाती है, उसकी सत्यापनशीलना सिद्ध नही हो सकती । डायरियाँ एव पत्रो द्वारा प्राप्त सूचना अक्सर मनुष्य की भावना, आवेग व सवेदना पर निर्भर करती है क्योकि जिस समय वह दैनिक घटनाओ का वर्णन करता है, उस समय कई मानसिक तनाव उस पर छाए रहते हैं अत उसकी विचार सामग्री मे वैषयिकता (Objectivity) नही आ सकती, इसके अलावा निष्कर्षों मे प्रामाणिकता की भी सम्भावना नही रहती । मैज (Madge) के मतानुसार ' इकाइयो का सैम्पल करीब-करीब मनमाना सा होता है जिसकी सामाजिक विघटन की ओर अभिनति होती है । इससे तथ्यो मे सजातीयता का पूर्ण अभाव रहता है और साख्यिकीय निर्वचन यदि सम्भव नही तो कठिन अवश्य हो जाता है ।"

(5) अनुसधानकर्ता का झूठा आत्म-विश्वास (False self-confidence of researcher)—वैयक्तिक अध्ययन का बहुत बडा दोष यह है कि अनुसधानकर्ता को अपने ज्ञान के बारे मे झूठा आत्म-विश्वास होता है । चूंकि उसे इकाई के विविध रूपो का अध्ययन करना होता है, अत जो कुछ जानकारी उसके पास है और अन्य जानकारी जो प्राप्त करता है, उससे उसे यह विश्वास पैदा हो जाता है कि उसे बहुत अधिक जानकारी है । इस झूठे आत्म-विश्वास के आधार पर निकाले गए निष्कर्ष भी झूठे साबित होते हैं । इस दृढ विश्वास के परिणामस्वरूप वह 'अनुसन्धान-रूपरेखा' (Research design) के प्रमुख नियमो की जाँच करना आवश्यक नही समझता है तथा असावधानी का प्रयोग करता है ।[1]

(6) दोषपूर्ण जीवन-इतिहास तथा रिकार्ड (Defective life-histories and records)—प्राय देखा गया है कि—

(i) रिकार्ड मुश्किल से प्राप्त होते हैं और व्यक्तिगत या गोपनीय रिकार्ड मिलना तो और भी कठिन होता है ।

(ii) जीवन इतिहासो मे घटनाओ का अतिरजित वर्णन किया जाता है ।

1 " It creates in him, a temptation to ignore basic principles of research design he feels no need to check the over al design of proof "

—*Goode and Hatt*

(iii) शर्म एवं डर के कारण प्रश्नकर्त्ता को उत्तरदाता सही जानकारी नहीं देता है।

(iv) अध्ययनकर्त्ता की स्वयं की लापरवाही से दोषपूर्ण तथ्य इकट्ठे हो सकते हैं।

(7) सामान्यीकरण की प्रवृत्ति (Habit of generalisation)—अनुसंधानकर्त्ता में सामान्यीकरण की प्रवृत्ति निष्कर्षों में धोखा देने वाली साबित होती है। कुछ लोगों के जीवन का अध्ययन कर निश्चित नियम बना लेना उसकी सबसे बड़ी भूल होती है। बाल अपराधियों के मामले में यदि कुछ ही बालकों का अध्ययन करें कि इन कारणों से बाल-अपराधी होते हैं तो निष्कर्ष बिलकुल भ्रामक व गलत होगा।

(8) रीड बेन (Read Bain) के अनुसार, वैयक्तिक अध्ययन प्रणाली में निम्नलिखित दोष हैं :—

(i) प्रश्नदाता, अनुसंधानकर्त्ता को वही जानकारी देता है जो उसकी समझ में अनुसंधानकर्त्ता चाहता है। यदि दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है तो यह प्रवृत्ति और भी अधिक होगी।

(ii) उत्तरदाता तथ्यों की जानकारी देने के स्थान पर आत्म-समर्थन को विशेष रूप से प्रोत्साहन देता है।

(iii) साहित्यिक भावना से ओतप्रोत होकर लोग वास्तविकता को छोड़ काल्पनिक तथ्यों को शामिल करने में अधिक प्रवृत्त होते हैं।

(iv) इसके आँकड़े तुलनात्मक न होकर गुणात्मक होते हैं।

(v) यह पद्धति घटना के बारे में अव्यावहारिक सूचना देती है।

वैयक्तिक अध्ययन प्रणाली में सुधार के कुछ सुझाव (Some Suggestions for improvement in the Case-Studies Method)

चूँकि यह पद्धति अवैज्ञानिक व अनियमित है, अतः इस प्रणाली को समाप्त करने के स्थान पर उसके सुधार के लिए समय-समय पर विभिन्न लेखकों द्वारा सुझाव दिए गए हैं। इनमें कार्ल रोजर्स (Carl Rogers), एम० कोमारोवस्की (M Komarovsky), मेयो (Mayo) तथा जॉन डोलार्ड (John Dollard) मुख्य हैं। प्रमुख सुझाव इस प्रकार हैं—

(i) अध्ययनकर्त्ता को सर्वप्रथम झूठा आत्मविश्वास (False self-confidence) त्यागना चाहिए ताकि वह वैषयिक रूप में सही तथ्यों पर पहुँच सके।

(ii) साक्षात्कार के समय इस बात को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि उत्तरदाता मनोवैज्ञानिक रूप से अधिक आत्म-जागरूक (Self-conscious) न हो।

इस प्रकार हम देखते हैं कि Wagon के Introduction का पेपेगो के जीवन पर बड़ा ही व्यापक प्रभाव पड़ा था। उसने न केवल तकनीकी के पुर्जों का स्थान बदला और नवीन प्रविधियों और विशेषताओं की स्थापना की बल्कि इसका व्यापक प्रभाव अर्थ-व्यवस्था पर भी पड़ा जिसके द्वारा जातीय एकता को बल मिला और पेपेगो लोगों के पड़ौसी निवासियों से सम्बन्धों को भी प्रभावित किया।

CASE–5

STEEL AXES FOR STONE AGE AUSTRALIANS

(1) The Problem

यीर योरोंट समुदाय (Yir Yoront group) को अन्य आस्ट्रेलियाई आदिवासियों की तरह धातुओं (Metals) का कोई ज्ञान नहीं था। तकनीकी दृष्टि से उनकी संस्कृति प्राचीन पाषाण-युग की थी। वे शिकार और मछली द्वारा जीवन-यापन करते थे। उन्हें झाड़ियों में वनस्पति भोजन और आवश्यक सामग्री साधारण प्रविधियों को एकत्र करने से प्राप्त हो जाती थी। कुत्ता उन लोगों का एक मात्र पालतू जानवर था। फिर भी कुछ आदिवासी समुदायों के समान, यीर योरोंट के पास चमकीले पत्थर की कुल्हाड़ियाँ थीं जिन पर मूठ भी लगी हुई थीं, ये औजार (Implements) उनके गार्हस्थ्य प्रबन्ध या अर्थ व्यवस्था के लिए सबसे महत्वपूर्ण थे।

19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में यूरोप के धात्वीय यन्त्र और कई अन्य औजार यीर योरोंट भूमि में प्रवेश करने लगे। पश्चिमी तकनीकी के जो भी Items आए उनमें कुल्हाड़ी (Hatchet) या छोटे दस्ते वाली स्टील की कुल्हाड़ी (Axe) अधिक स्वीकार्य थी और जिन्हें आदिवासियों ने अधिक महत्व दिया।

1929 और 1940 के मध्य (Mid 1930's) एक अमेरिकन मानवशास्त्री यीर योरोंट के मध्य तेरह महीनों के लिए बिलकुल अकेला रहा जिसने किसी भी अन्य श्वेत व्यक्ति को नहीं देखा। वे सापेक्ष रूप से पृथक् ही रहते थे और आर्थिक रूप से स्वतन्त्र जीवनयापन करते थे फिर भी उनकी पॉलिश की हुई पत्थर की कुल्हाड़ियाँ बहुत ही जल्दी अदृश्य हो रही थीं और उनका स्थान स्टील की कुल्हाड़ियाँ ले रही थीं जो यूरोप के विभिन्न स्रोतों से पर्याप्त संख्या में आई थीं।

अब देखना यह है कि स्टील की कुल्हाड़ी के स्वामित्व और प्रयोग से यीर योरोंट आदिवासियों के जीवन में किस परिवर्तन की आशा की जा सकती है।

(2) The Course of Events

(i) सन् 1623 में एक डच यात्रादल किनारों पर आ उतरा जो अब यीर योरोंट के आधिपत्य में है। ये लोग यहाँ पर दो दिन के लिए रुके जिसके दौरान ये कुल सौ पुरुषों के समुदाय में से एक को चुराने और दूसरे को मारने में सफल हुए। वे अपने साथ जो लोहे के टुकड़े एवं गुटके (Beads) लाए थे, अब उनका उपयोग नहीं

किया जा रहा है लेकिन वे खेत के लोगों को प्रथम संघर्ष (First encounter) का स्मरण कराते हैं।

(ii) एक दूसरा सम्पर्क जो इस क्षेत्र में रिकार्ड किया गया है वह सन् 1864 का है। इन आदिवासियों में मवेशियों को ले जाने वाले समुदाय के लोगों पर हमला करने का साहस था।

यूरोपियन और आदिवासियों के बीच हुए संघर्ष को 'मिचेल नदी का युद्ध' (Battle of the Mitchell River) कहा जाता है। यह एक दुर्लभ उदाहरण है कि आदिवासियों ने यूरोपियन लोगों का अन्तिम सीमा तक कड़ा मुकाबला किया। इसमें अनेक मारे गए, कई घायल हुए। मवेशियों को पालने वाले लोगों की डायरी से इस युद्ध का वृतांत मिलता है। यूरोप का दल यहाँ पर तीन दिनों के लिए रुका था और उसके बाद अदृश्य हो गया।

सत्तर वर्ष के उपरान्त जो मानवशास्त्रीय अन्वेषण हुआ जो तीन वर्ष तक लगातार रहा, उसमें एक भी सदर्भ ऐसा नहीं आता जिससे यह पता चल सके कि इस प्रकार का दर्दनाक संघर्ष यूरोपियन के साथ हुआ था।

(iii) आदिवासियों के प्रथम संघर्ष की स्मृति सन् 1900 से शुरू होती जिसके अन्तर्गत उनकी मुठभेड़ें प्राणघातक थी। उसके बाद से ही श्वेत लोगों ने उनकी भूमि पर रहना जारी रखा। मवेशियों की पशुशालाओं की स्थापना से ये मवेशीपालक निरन्तर इन काले आदिवासी लोगों के साथ भ्रमण (Excursions) करने लगे। वे लोग जहाँ भ्रमण करने जाते वहाँ से स्थानीय लोगों को भगाकर लाते जिन्हें मवेशी लड़कों (Cattle boys) और 'गृह लड़कियों' (House g rls) के लिए प्रशिक्षित किया जाता था। कम से कम एक यात्रा-दल कोलन नदी (Colemn River) पर पहुँचा जहाँ यीर योरांट आदमी और औरतें मारी गईं।

(iv) सन् 1815 में एक आंग्लि मिशन स्टेशन की स्थापना की गई। कुछ यीर योरांट ने मिशन से किसी प्रकार का सम्बन्ध रखना मना कर दिया और अन्य यीर योरांट किसी अवसर पर आते थे जबकि कुछ लोग वहाँ निवास भी करने लगे।

(v) इस प्रकार अधिकांश यीर योरांट ने अपना वही पुराना जीवन जारी रखा जब तक कि 1942 तक वे सरकार एवं हस्तक्षेप करने वाले मिशन द्वारा सुरक्षित नहीं रखे गए।

(vi) 'मिचेल रिवर मिशन' (Mitchell River Mission) के कार्य के प्रत्यक्ष परिणामस्वरूप सभी यीर योरांट को सभी प्रकार के पश्चिमी यन्त्र, औजार व साधन और अधिक संख्या में प्राप्त हुए जो उन्हें पहले कभी प्राप्त नहीं हुए। इन धार्मिक संस्थाओं (Missionaries) ने आदिवासियों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए पश्चिमी वस्तुओं या माल को उनके लिए उपलब्ध कराना सम्भव बनाया। लेकिन इन आदिवासियों तक बन्दूकों, शराब एवं नशीली वस्तुओं को पहुँचने

से रोका और उन वस्तुओं के प्रयोग को प्रोत्साहन दिया जिन्हें वे सुधार के लिए आवश्यक समझते थे। इन मिशनों पर कुल्हाडियों का स्टॉक बेचने के लिए रखा गया। इसके अतिरिक्त कुछ स्टील की कुल्हाडियाँ और यूरोपियन सामान और योरांट को उपलब्ध कराया गया।

(3) Relevant Factors

यदि हम अपना ध्यान प्रारम्भिक या मूल पाषाण कुल्हाडी पर दें तो हम पाएँगे कि इस औजार ने आदिवासियों की संस्कृति में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

पाषाण कुल्हाडी के उत्पादन में पुरुष ही मुख्य रहा है। इसके उत्पादन में कई बातें ध्यान में रखनी होती हैं, जैसे प्राकृतिक स्रोतों का ध्यान उनके गुण एवं सामग्री (Material) को सही ढंग से एकत्र करने, उसे तैयार एवं प्रयोग में लाने आदि के लिए कुशलता की आवश्यकता रहती है। इस कार्य के लिए पुरुषों को ही उचित समझा गया है।

पाषाण कुल्हाडी का उपयोग एवं महत्त्व आदिवासियों के लिए अपने जीवन निर्वाह एवं अर्थ व्यवस्था के लिए है। पुरुष औरत और बच्चा भी कुल्हाडी का प्रयोग कर सकता था। वास्तव में इसका अधिक उपयोग औरतों द्वारा किया जाता था क्योंकि उनका गृह सम्बन्धी उत्तरदायित्व अधिक था।

उदाहरण के लिए भोजन पकाने या अन्य उद्देश्यों एवं सारी रात मच्छरों और सर्दी (जुलाई में सर्दी तापमान चालीस डिग्री नीचे जा सकता था) से बचाव के लिए उन्हें (अर्थात् स्त्रियों) पर्याप्त मात्रा में लकडी काट कर लानी होती थी। आदमी, औरतें और कभी कभी बच्चों को भी कुल्हाडी की आवश्यकता अन्य औजारों को बनाने के लिए होती थी या दैनिक जीवन में काम आने वाले सामान को तैयार करने में इसका उपयोग किया जाता था। कुल्हाडी का उपयोग शिकार, मछली पकड़ने, वनस्पति एकत्र करने या जानवरों के भोजन को प्राप्त करने में आवश्यक रूप से किया जाता था।

केवल दो परिस्थितियों में इसका उपयोग पुरुषों तक सीमित था। जगली शहद, जो आदिवासियों का अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण भोजन था को प्राप्त करने के लिए कुल्हाडी का प्रयोग केवल पुरुष ही करते थे और उत्सवों या अवसरों के लिए गुप्त सामान तैयार करने के लिए उनका उपयोग पुरुषों द्वारा किया जाता था। इसकी उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक था कि प्रत्येक खेमा (Camp) कम से कम एक पाषाण कुल्हाडी रखना था।

आचरण (Conduct) की दृष्टि से पाषाण कुल्हाडी का उपयोग महत्वपूर्ण था। यदि कोई स्त्री या बच्चा कुल्हाडी का प्रयोग करना चाहता था तो वह किसी पुरुष से प्राप्त करता और उसका उपयोग करके तुरन्त ही अच्छी स्थिति में लौटा

देना था। पुरुष यह कह सकता था कि 'यह मेरी कुल्हाडी है' परन्तु स्त्री या बच्चा ऐसा नहीं कह सकते थे।

इन पाषाण कुल्हाडियों को अपने से बडी उम्र वाले पुरुषों से माँगना रक्त सम्बन्धी व्यवहार पर निर्भर करता था। एक स्त्री अपने पति की कुल्हाडी के प्रयोग की आज्ञा कर सकती थी यदि पति के साथ सम्बन्ध अच्छे होते। एक पति बिना किसी प्रश्न के अपने किसी कुल्हाडे के उपयोग की आज्ञा अपनी पत्नी को दे सकता था यदि उसके सम्बन्ध अपनी पत्नी से अच्छे होते। यदि कोई स्त्री अविवाहित होती थी या उसका पति नहीं होता था तो सबसे पहले वह अपने बडे भाई या अपने पिता के पास कुल्हाडी के लिए जाती थी। केवल विशेष परिस्थितियों में ही वह अपनी माता के भाई या किसी अन्य पुरुष सम्बन्धी से पाषाण कुल्हाडी प्राप्त करती थी। एक लडकी लडका या नवयुवक पाषाण कुल्हाडी को उपयोग में लाने के लिए अपने पिता या अपने से बडे भाई से माँग करते, लेकिन अपनी माँ के भाई के पास इसके लिए कभी नहीं जाते क्योंकि ऐसी प्रार्थना पर साथ में सम्भावित ससुर भी होता था। इसी प्रकार बडी उम्र के लोग भी, जब कभी उन्हें कुल्हाडी उधार माँगनी होती इन्हीं नियमों का पालन करते थे।

इससे प्रतीत होता है कि यीर योरोंट आदिवासियों में व्यवहार समान व्यवहार (Equal terms) पर नहीं होता। औरतों और बच्चों को प्रत्येक कार्य के लिए, जो कुल्हाडे से सम्बन्धित था पुरुषों पर ही निर्भर होना पडता था। पुरुषों में उम्र में छोटा अपने से बडे वाले पुरुष पर निर्भर करता था। समानता का सबसे निकट approach भाइयों के बीच का था, लेकिन बडा भाई सदैव ही छोटे से सामान्य से अधिक था।

चूँकि व्यापारिक सम्बन्धों में वस्तुओं का विनिमय पारस्परिक अदला-बदली, सद्भावना पर निर्भर करता था, अतः यह एक प्रकार का भ्रातृत्व सम्बन्ध ही था हालाँकि बडे और छोटे का वर्गीकरण तो अवश्य ही रहता था। कुल्हाडे के उपयोग को लेकर समाज में आचरण (Conduct) को लिंग, उम्र, रक्त-सम्बन्धों पर आधारित एवं प्रामाणिक माना गया।

यीर योरोंट आदिवासियों में किसी व्यक्ति का स्तर (Status) न केवल लिंग (Sex), उम्र या रक्त सम्बन्ध से ही निश्चित होता था बल्कि उसके दो जनों में किसी एक पैतृक वंश के सम्बन्ध में सूचक चिह्न वंश (Totemic Clans) की सहायता पर भी निर्भर करता था। व्यक्ति के नाम, किसी भूमि के क्षेत्रों में उसके अधिकार, उत्सवों में उसकी भूमिका इस बात पर निर्भर करती थी कि उसका किस जाति या वंश से सम्बन्ध है। इन सम्बन्ध-सूचक चिह्न में से सूर्य, तारे, धनुष-बाण, सर्प, खोपडी, मल्ल, होठ, शेर का महत्त्व इसीलिए था कि वे वंश (Clan) को स्थायित्वपन प्रदान करते। इन सम्बन्ध सूचक-चिह्नों के आधार पर वंशों को पहिचाना जा सकता था, उनमें भेद किया जा सकता था।

दो पहलुओं—तकनीकी और आचरण पर विचार करने के उपरान्त हम तीसरे पहलू पर आते हैं जिसे 'सांस्कृतिक पहलू' (Cultural aspect) की संज्ञा दी जा सकती है। इसके अन्तर्गत विचार (Ideas), भावनाएँ (Sentiments) और मूल्य (Values) सम्मिलित हैं। इनको समझाना बड़ा कठिन है क्योंकि ये गुप्त, अस्पष्ट और अचेतन हैं अतः इनका तर्क द्वारा निर्णय स्पष्ट क्रियाओं (Overt actions) और भाषा तथा अन्य संचार योग्य व्यवहार से हो सकती है।

पाषाण कुल्हाड़ी यीर योरॉट आदिवासियों में पुरुषत्व का महत्त्वपूर्ण प्रतीक था। कुल्हाड़े को 'पुरुषों का कुल्हाड़ा' से सम्बोधित किया जाता था। ऐसे विचारों को समाज द्वारा स्वीकार भी कर लिया गया था। इसी प्रकार बर्छी (Spear) तथा भालों को फेंकने वाले भी पुरुषत्व के प्रतीक थे। लेकिन पौरुषिक मूल्य (Masculine value) जिनका प्रतिनिधित्व पाषाण कुल्हाड़े से स्पष्ट होता था, का समाज के सभी सदस्यों पर बार बार प्रभाव डाला जाना था जब अन्य लोगों को इसका उपयोग करना होता था और पुरुषों के पास मांगने के लिए जाना आवश्यक होता था। इस प्रकार कुल्हाड़ा संस्कृति में एक महत्त्वपूर्ण प्रसंग (Theme) का प्रतिनिधित्व करता था जिसने पुरुषों की महत्ता और श्रेष्ठता की प्रतिष्ठा की स्थापना की।

इस प्रकार सम्बन्ध सूचक चिह्नों द्वारा किसी वंश की श्रेष्ठता एवं सांस्कृतिक उत्कृष्टता को आँका जाता था।

(4) Analysis

यीर योरॉट तकनीकी में स्टील के कुल्हाड़े को प्रयोग में लाने से कई परिवर्तनों में एक परिवर्तन इसके कारण भी हुआ। इसीलिए यह कहना असम्भव है कि सभी परिवर्तनों या नवीनताओं के लिए स्टील कुल्हाड़ा ही उत्तरदायी है। फिर भी इसके कुछ विशेष प्रभाव पड़े हैं। यह योरोपियन औजार था जिसका प्रयोग आदिवासियों ने अधिक मात्रा में किया और इसका सामान्य प्रभाव उनकी संस्कृति पर भी पड़ा। यीर योरॉट के इस नवीन कुल्हाड़े में समस्त उपयोग इतने काम में नहीं आये जितने धर्म प्रचारक संस्थाओं और मवेशी स्टेशनों ने इसका उपयोग किया। इसीलिए आदिवासियों के जीवन-स्तर पर इसका कोई व्यावहारिक प्रभाव नहीं पड़ा। इसके अतिरिक्त इवन मस्टर की यह धारणा थी कि इस नवीन कुल्हाड़े के उपयोग से कार्य में गतिशीलता आयेगी एवं समय की बचत होगी जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकेगा कि यह तकनीकी प्रगति का प्रतिनिधित्व करता था। स्टील की कुल्हाड़ियों के प्रयोग करने से जो समय बच जाता था उसका उपयोग न तो जीवन स्तर को सुधारने के लिए किया जाता था और न ही सौंदर्य विज्ञान की गतिविधियों या क्रियाओं को विकसित करने के लिए बल्कि अधिक नींद लेने में ही किया जाता था जिसका उन्हें काफी अभ्यास हो चुका था।[1]

1 Any leisure time the Yir Yoront might gain by using steel axes or other Western tools was invested not in improving the conditions of life and certainly not in developing aesthetic activities but in sleep, an art they had thoroughly mastered.

—L. Sharp, Human Problems in Technological Changes, p 82

स्टील कुल्हाडे का आदिवासियो के सामाजिक सम्बन्धो पर भी बहुत प्रभाव पडा। धर्म प्रचारक सस्थाओ (Missionaries) ने कई बातो पर गहराई से ध्यान दिया। मिशन के हाथ मे इन्हे वितरित करन का अधिकार था। इसकी (स्टील कुल्हाडे) सख्या मे भी काफी वृद्धि हुई। मिशन प्रत्यक्ष रूप से इनको नवयुवक नवयुवतियो और बच्चो तक म बाँट सकता था। मिशन के कर्मचारियो का पक्ष जीत कर कोई स्त्री एक स्टील कुल्हाडे को प्राप्त कर सकती थी। यह कुल्हाडा उस स्त्री की स्वय की वैध सम्पत्ति थी। यह नवीन परिस्थिति उस पुरानी परिस्थिति या नियम से पृथक थी जिसके अन्तगत स्त्री को पुरुष स पाषाण कुल्हाडा मांगना पडता और वह कभी भी उसका नही कहलाता था। यह सामाजिक सम्बन्धो मे महान् परिवर्तन स्टील के कुल्हाडे को प्रयोग मे लाने मे हुआ। नवयुवक और यहाँ तक लडके भी मिशन से स्टील कुल्हाडे प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त कर सकने थे परिणामस्वरूप बडे या वृद्ध लोगो का सभी कुल्हाडो पर अब एकाधिकार समाप्त हो गया। वास्तव मे एक वृद्ध आदमी के पास केवल एक पाषाण कुल्हाडा ही हो सकता था जबकि उसकी पत्नियाँ और लडके के पास स्टील के कुल्हाडे थे जिन्हे व अपना समझने थे। इससे लिंग, उम्र और रक्त सम्बन्ध की भूमिका म एक क्रान्तिकारी भ्रांति उत्पन्न हो गई। इससे आदिवासियो की युवा पीढी को अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई और छोटेपन या हीनता की भावना से मुक्ति मिली।

इसका प्रभाव व्यापारिक हिस्सेदारी सम्बन्धो पर भी पडा। एक ओर यीर योरोंट (Yir Yoront) का व्यावसायिक हिस्सेदार या भागीदार एक कबीले मे हो सकता था जिसके फलस्वरूप बडे भाई का छोट भाई पर नियत्रण था। लेकिन स्टील कुल्हाडे के आगमन से जो भागीदार मिशन के सम्पर्क मे आते थे उन्हे ये नवीन कुल्हाडे आसानी एव जल्दी मिल जाते थे।

इसके उपयोग ने नवीन प्रकार के सम्बन्धो को जन्म दिया। आदिवासी समाज मे कभी भी ऐसा अवसर नही आता था कि जबकि एक व्यक्ति ऐसी कार्यवाही को शुरू कर द जिसका प्रभाव कई लोगो पर पडता हो। उस समाज मे Sub ordination और Super-ordination का प्रश्न महत्वपूर्ण था। अब साधारणत किसी प्रकार का मुखियापन या सत्ताधारी नेतृत्व नही था। अब जटिल से जटिल कार्य जैसे घास जलाना या सम्बन्धसूचक चिह्न उतारना की व्यवस्था करना इत्यादि सुगमता एव सरलतापूर्वक किये जा सकते थे।

फिर भी इतन लोगो न मिशन एव मवशी स्टेशनो म आदिवासियो पर अपना नेतृत्व लाद दिया था। आदिवासी जब कभी भेंटो (Gifts) को प्राप्त करने या कुल्हाडियो को प्राप्त करने के लिए मिशन पर आते तो उनके सदस्यो द्वारा लिंग, उम्र या सम्बन्ध का कोई ख्याल नही रखा जाता था इससे वृद्ध एव बडी उम्र वाले लोगो को ऐसे व्यवहार से घृणा थी।

स्टील कुल्हाड़े के सबसे विघ्नकारी प्रभाव परम्परागत विचारों, भावनाओं और मूल्यों पर पड़े। इनके महत्त्व को एकदम ही कम आंका गया। इससे एक मानसिक और नैतिक खाई उत्पन्न हो गई जिसने यीर यान्दिवासियों की संस्कृति के नष्ट और समाप्त होने की पूर्व सूचना दी।

इस प्रकार तकनीकी व्यवहार और आचरण में परिवर्तनों के कारण आतरिक मूल्यों को बड़ा धक्का लगा। पुरुषत्व का जो सम्मान उम्र और रक्त सम्बन्धों के कारण होता था उसमें बहुत अन्तर आ गया। स्त्री और लड़के के लिए स्टील हथौड़े के आगमन ने स्वतन्त्रता के नए मापदण्ड स्थापित किए। अब यन्त्रों के स्वामित्व के सम्बन्ध में अनेक भ्रातियाँ बढ़ गई जिससे तकनीकी और आचरण में चोरी तथा अतिक्रमण प्रवेश कर गए। वास्तव में जीवन ही कम रोचक रह गया।

पाषाण कुल्हाड़े युग में वृद्ध और बड़ों का बड़ा सम्मान था। उनकी अपनी परम्पराओं एवं रीति-रिवाजों के कारण ही Native संस्कृति स्थायी और गहरी थी। लेकिन स्टील कुल्हाड़े के युग ने इन्हें बड़ा आघात पहुँचाया। धर्म प्रचारक संस्थाओं (Missionaries) ने वृद्ध पुरुषों की उपेक्षा की जो अपनी खोई शक्ति और प्रतिष्ठा को प्राप्त करना चाहते थे। ऐसी स्थिति में धर्म-प्रचारक संस्था इन प्रक्रियाओं को समझती हुई धर्म को Introduce करने का ऐसे अवसर प्राप्त करेगी जिससे एक नवीन सांस्कृतिक विश्व का निर्माण हो सके।

CASE-15
DEMOCRACY IN PROCESS

(The Development of Democratic Leadership in the Micronesian islands)

(1) The Problem

माइक्रोनिशियन (Micronesian) प्रायद्वीपों के स्थानीय शक्ति-ढाँचे में प्रजातान्त्रिक प्रणालियों को Incorporate करने का प्रयत्न किया जा रहा है। इन द्वीपों का जापान के संरक्षण (Mandate) से अमेरिकन न्यास प्रदेश को हस्तान्तरित करने से आने वाले प्रशासन ने अमरिकी प्रजातन्त्र की अवधारणाओं के अनुसार वहाँ स्थानीय स्तर पर स्व सरकार (Self-Govt) की स्थापना की आशा व्यक्त की।

प्रथम कार्यक्रम इस तरीके से योजनाबद्ध नहीं किया गया कि वहाँ की स्वदेशी राजनैतिक संस्थाओं का पूर्ण पुनः संगठन हो और Native officials का प्रजातान्त्रिक पद्धतियों द्वारा चुनाव हो। इस प्रकार ... में एक मुक्ति कदम माना गया जिसके अन्तर्गत द्वीपवासी जापान द्वारा ... गए कठपुतली मुखियाओं (Puppet chiefs) से स्वतन्त्र होंगे। कुछ अंश में इसे मानवीय सम्बन्धों की उन्नति (Advancement) में अमरीकी योगदान माना गया।

चुनाव प्रणाली को लागू करने से प्रारम्भिक प्रत्युत्तर एक प्रायद्वीप से दूसरे प्रायद्वीप में भिन्न थे। पलाउ (Palau) के लोग तो नए विदेशियों द्वारा प्रस्तावित सामाजिक नियमों को अपनाने में सामान्य रूप से तैयार थे। प्रायद्वीपवासी अमेरिका की सैनिक या फौजी सर्वोच्चता तकनीकी श्रेष्ठता और धन सम्पन्नता से प्रभावित थे। यदि प्रजातन्त्र जैसाकि अमेरिकनवासियों द्वारा दावा किया गया, ऐसी महानता और उन्नति के लिए एक शक्ति है पलाऊ इस ढाँचे को अपनाने को इच्छुक थे। पलाऊ देशवासी (Natives of Palau) वंशानुगत विशिष्ट वर्ग (Hereditary elite class) के शासन के अभ्यस्त थे जिनके पास शक्ति का एकाधिकार था। लेकिन अमेरिकन प्रणाली ने परम्परागत व्यवस्था को अस्त व्यस्त नहीं किया। ये लोग राजनैतिक संगठन की नवीन विशेषताओं से किस प्रकार समन्वय स्थापित कर सके ? स्थानीय (Officials) को लोकप्रिय मत (Popular vote) द्वारा चुनने से पलाऊ में शक्ति ढांचा (Power Structure) के लिए क्या परिणाम रहे ?

(2) The Course of Events

19वीं सदी से पूर्व पलाऊ एक स्वायत्त (Autonomous) समाज था। किसी बाह्य समुदाय ने इस पर विजय प्राप्त करने की कोशिश नहीं की और स्वयं ने भी किसी बाह्य समुदाय को जीतने की इच्छा नहीं रखी। प्रायद्वीपवासी स्वतन्त्र थे यद्यपि वे दक्षिणी समुद्र से पूर्णतः पृथक् नहीं थे।

( ) विगत ढ़ड सौ वर्षों में पलाऊ ने अधीनता का अनुभव किया है। स्पेन ने *1885 से 1899 तक 15 वर्ष के लिए औपचारिक नियन्त्रण रखा* जापान ने 1914 से 1944 तक 30 वर्ष के लिए और अमेरिका ने 1944 से इस पर नियंत्रण रखा। स्पेन और जर्मनी का कम वर्षों के नियन्त्रण एवं प्रायद्वीपों के विकास पर सीमित जोर (Limited emphasis) के फलस्वरूप इनका (स्पेन और जर्मनी) प्रभाव *यहाँ की देशी (Native) संस्थाओं पर कम रहा।*

(i) पलाऊ के विदेशों के साथ सम्बन्ध के इतिहास में छः स्पष्ट विशेषताएं दृष्टिगोचर होती है।

(a) वहाँ के लोगों को नवीन कार्यक्रमों में भाग लेने कुछ विदेशियों के तौर तरीकों को ग्रहण करने के लिए प्रोत्साहित किया। पलाऊ के लोगों ने मामूली शत्रुता या विरोध का भी प्रदर्शन किया लेकिन उनको बाहर करने के लिए कोई व्यापक *प्रदर्शन नहीं रखा गया।*

(b) सांस्कृतिक बहुलवाद पर विदेशी और देशी समुदायों(Native Groups) ने अनुकूल रुख रखा। विदेशियों ने वहाँ की सामाजिक व्यवस्था को दबाने या नष्ट करने का प्रयत्न नहीं किया। प्रत्येक बाह्य सरकार की यह नीति रही कि पलाऊ के आधारभूत ढ़ाचा (Basic patterns) को समर्थन दिया जाए एवं रक्षा की जाए।

(c) विदेशियों के साथ निरन्तर सांस्कृतिक सम्बन्ध होने के कारण वहाँ के निवासियों के जीवन-स्तर एवं तौर तरीकों में सामान्य सुधार हुआ। जो लोग पुराने तौर-तरीकों को पसन्द करते थे, उनके रास्ते में कोई बाधा नहीं पहुँचाई गयी।

(d) इन परिवर्तनों ने इसकी आधारशिलाओं (Foundations) के महत्त्व को आँके बिना ही सामाजिक शिल्प विद्या (Social architecture) को सुधारा। पलाऊ की संस्कृति स्थायी (Durable) और साँचे में ढालने योग्य (Plastic) दोनों ही हैं।

(e) जो भी विदेशी यहाँ आए उन्होंने पलाऊवासियों को उसी सामान्य दिशा में प्रभावित किया है। शासकों के सक्रमण कालों (Transitional periods) में कुछ बाधाएँ अवश्य उपस्थित हुई, लेकिन मुख्य या केन्द्रीय संस्थाओं में कोई Break नहीं आया।

(f) पलाऊ के पास राजनीतिक संस्थाओं का एक सुव्यवस्थित समूह है जो आवश्यक परिवर्तन की क्षमता रखता है।

(ii) जर्मनी और जापान के प्रशासनों का प्रारम्भिक रूप से उन प्रश्नों से सम्बन्ध था जिनसे वे देशी सरकार (Native Government) का उपयोग और निरीक्षण प्रभावशाली ढंग से कर सकें। अतः प्रशासन में सुधार अपरिहार्य था ताकि परम्परागत संस्थाओं को विदेशियों की राजनीतिक व्यवस्था के अनुरूप बनाया जाए।

शक्ति को पहले से अधिक केन्द्रीकरण जनसंख्या के विशिष्ट वर्गों में किया गया। जो अबद्ध राज्य-मण्डलों (Loose Co[illegible]de[illegible]on) के मुखिया थे जिनके पास सीमित शक्ति थी उनको सर्वशक्तिमान (All Powerful) बना दिया गया। स्त्रियों के राजनीतिक प्रभाव को उनके स्वयं की संगठना की समाप्ति द्वारा समाप्त किया गया।

अन्तिम शक्ति विदेशियों के हाथों में हस्तान्तरित हुई और जो देशी अधिकारी या कर्मचारी इनके साथ सहयोग नहीं करते या उन्हें असन्तोषजनक समझा गया, उन्हें पदों से हटा दिया गया। देशी नेतृत्व की विदेशी दबावों से रक्षा करने और उन कर्तव्यों का पालन करने, जिन्हें विदेशियों ने सौंपा था, एक दोहरी शक्ति (Dual power) संगठन को जन्म दिया। एक राजनीतिक संगठन विदेशियों का सामना करता और दूसरा वहाँ के लोगों (Natives) का। प्रत्येक व्यवस्था (अर्थात् दोनों के) अपने अपने परामर्श योग्य और व्यवस्थापक अंग थे। इस दोहरी प्रणाली में उत्तरदायित्व का भी विभाजन हो गया साथ ही नियन्त्रण और सन्तुलन-पद्धति का भी।

दो विश्व युद्धों के मध्य पलाऊ (Palau) के परम्परागत नेताओं की प्रतिष्ठा में ह्रास हुआ। नई युवा-पीढ़ी जिसने विदेशी स्कूलों में शिक्षा पाई थी और उन सबने जिन्होंने धर्म परिवर्तन कर विदेशी धर्मों को अपनाया था, अपने मान्यता की

पवित्रता (Sac edness of their rulers) के सिद्धान्त को पूर्णरूपेण स्वीकार नहीं किया। देशी नेता (Nat ve leader) की सत्ता प्रतिबन्धित हो गई चूंकि विदेशियों से निर्णय Extract (हठपूर्वक लेकर) करके देशी अधिकारियों (N tive officials) के आदेशों को विपरीत किया जा सकता था। पुराने नेतृत्व की तुलना यदि विदेशियों से करते तो ऐसा लगता है कि पहले वाले इतने साधन-सम्पन्न नहीं थे कि वे पलाऊ लोगों का आधुनिक युग में आगे बढ़ा सकते। नवीन प्रभावशाली समुदायों ने अपने मत का अनुकरण करने के लिए काफी लोगों को आकर्षित किया चाहे वे सरकारी पद पर न हों। विदेशियों ने अपने प्रभाव एवं सूचनाओं द्वारा पूर्व स्थापित सम्बन्धों में परिवर्तन कर दिया और पुराना विशिष्ट वर्ग शक्ति विवादों में विभाजित हो गया और समाज के बदलते मूल्यों में फंस गया।

(iv) जापान के समर्पण के बाद, अमेरिकी फौजों ने सम्पूर्ण क्षेत्र को अपने अधिपत्य में ले लिया था, प्रारम्भ में पलाऊ में अमेरिका को सैनिक गवर्नर द्वारा वहाँ की जनता से पूछने पर पता चला कि वहाँ दो उच्च मुखिए हैं। इन दोनों मुखियों को गवर्नर ने यह निर्देश दिए कि वे राज्यों के मुखिया के कार्यों को सम्भालें गवर्नर ने इन दोनों सरकारी अधिकारियों को अधिक सत्ता प्रदान की जो इनके पास पहले कभी नहीं थी।

(v) इसके तुरन्त पश्चात् स्थानीय अधिकारियों के जिला और ग्राम स्तर पर चुनाव इन दोनों उच्च मुखियाओं और अमेरिकावासियों के निरीक्षण में करवाए गए। अब ये प्रजातान्त्रिक तरीका द्वारा चुने गए अधिकारी थे। अधिकांशतः चुने गए व्यक्ति वे ही थे जो पहले से ही उन पदों पर आसीन थे। फिर भी जो व्यक्ति विदेशियों के लिए किसी कारणवश अस्वीकार्य सिद्ध हुए उन्हें सत्ता से हटाकर नए चुनाव करा दिये जाते। इस तरीके से हटाए गए व्यक्ति बहुधा अपनी देशी राजनीतिक संस्थाओं पर नियन्त्रण रखकर शक्ति का प्रयोग निरन्तर कायम रखते। कुछ मामलों में आधिपत्य (Dominance) के लिए नवीन संघर्ष उत्पन्न हो गए उनमें एक तो हटाये गए अधिकारी (O icial) के समर्थक और दूसरे नए मुखिया के समर्थक थे। हालांकि शक्ति केन्द्रों में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हुआ फिर भी नेतृत्व को यह अहसास अवश्य हुआ कि चुनावों में भविष्य के समर्थन के लिए अनुयायियों पर निर्भरता आवश्यक है। अब सत्ता एवं शक्ति का आधार विस्तृत हो गया। पहले यह विशिष्ट वर्ग तक ही सीमित था। अब यह सात कुछ मण्डलियों (Circle) में फैलने लगी कि भा र में विशिष्ट वर्ग में प्रत्याशियों की अधिक संख्या में से नेताओं को चुनना अधिक आसान होगा क्योंकि विशिष्ट लोगों की पसन्दगियों (Choices) के सामने झुकने की आवश्यकता नहीं रहेगी। इस वातावरण में नई हित समुदायों (Interest g oups) द्वारा राजनीतिक दाँवपेच अपनी शक्ति को बढ़ाने में लगाए जा रहे हैं।

(3) Relevant Factors

पलाऊ मामलों का प्रवे ा भूतकाल में उन लोगों के हाथों में केन्द्रित किया

गया है जो प्रधान वशो के वरिष्ठ श्रेणी के सदस्य थे। उनकी वैध सत्ता के प्रतीक सरकारी पदो की उपाधि-प्राप्तकर्ता को व्यक्तिगत नामो से नही, इन उपाधियो से जाना जाता था।

सवक Title holders न केवल लौकिक मामलो मे ही बल्कि पवित्र मामलो (Sacred matters) मे भी श्रेष्ठ थे। समस्त सामाजिक सम्बन्धो मे उनके साथ आदर की दृष्टि से व्यवहार किया जाता था और उन्हें विशेषाधिकार दिये गये थे जैसे सामान्य व्यक्ति रास्ते से हटकर एकदम झुक कर सलाम करता यदि उपाधि-प्राप्त व्यक्ति वहाँ से गुजरता, सवक Title holders के निवास स्थान के बाहर ही खड़ा रहता जब तक उसे अन्दर आने लिए नही कहा जाता, विशिष्ट लोगो की आज्ञा का पालन बिना वाद विवाद किया जाता, इत्यादि। बचपन से ही व्यक्तियो को शासक वर्ग की आज्ञा का पालन और उनसे भयभीत बन रहना सिखाया जाता था। पलाऊ मे जीवन उच्च रूप से व्यवस्थित था और उन सगठनो द्वारा समाज के युवा-सदस्यो पर अनुशासन रखा जाता था। विशिष्ट लोग इस समाज के मुखियापन द्वारा अपना प्रभाव एव नियन्त्रण रखते थे। सवक अपने ही वश (Clan) के माध्यम से आदेशो का जारी कर सकता था।

सवक किसी व्यक्ति को समुदाय से निष्कासित कर सकता था, उसकी सम्पत्ति को जब्त कर सकता था और मृत्यु के आदेश भी दे सकता था यदि वे नियमितताओ (Regulation) का उल्लघन करते। एक झूठे व्यक्ति को अपनी औरत और बच्चे अपने ही वश वालो को हवाले करने के लिए बाध्य किया जाता। सम्भवत सामाजिक नियत्रण की सबसे प्रभावशाली प्रविधि सबके समक्ष खुली डाट-फटकार (Scolding) थी जो व्यक्ति को शर्मिन्दा कर देती थी। सामान्य व्यक्ति को और अधिक डर किसी का नही था जितना कि उसे यह भय था कि उसकी विशिष्ट लोगो द्वारा सबके समक्ष कही हँसी न उड़ाई जाए। पलाऊ लोगो को अपनी प्रतिष्ठा खोने का बड़ा भय था अत वे इससे बचना चाहते थे।

एक सवक के विरुद्ध अपराध व्यक्तिगत क्षति या अपकार नही था बल्कि राज्य के विरुद्ध अपराध था। यदि छिपकर भी कोई विशिष्ट वर्ग के लोगो की निंदा करता तो वह भी गम्भीर अपराध माना जाता था। शायद ही कोई ऐसा अपराध करता था कि वह निन्दा करता हुआ पाया जाए।

विदेशियो का आगमन पलाऊ मे उन व्यक्तियो के लिए चुनौती थी जो शक्तिशाली थे। ये लोग एकतावद्ध समुदाय नही थे और उनके व्यक्तिगत हित कई मामलो मे भिन्न-भिन्न थे अत वे एक दूसरे के साधनो और सुधार साधनो की आवश्यकता पर मतभेद रखते थे। फिर भी लोगो के मस्तिष्क मे यह बात अकित थी कि विशिष्ट लोगो का उचित सम्मान प्रदान करना है। यहाँ तक कि उत्साही सुधारको ने इस पक्ष को खुले रूप मे अस्वीकार नही किया है। उनकी दूसरी शक्ति का कारण उनकी निरन्तर प्रधानता या महत्त्व है।

विदेशियो ने प्रशासनिक सहायकों के लिए देशी (Natives) लोगो को भर्ती और प्रशिक्षित किया। चूंकि वे अन्तिम शक्ति की सीट के नजदीक थे अत नीतियो को प्रभावित करने मे वे एक महत्त्वपूर्ण स्थिति मे थे। वे केवल अनुवादक ही नही बने बल्कि इतने निपुण हो गए कि विदेशियो को क्या कहा जाए ताकि वे अनुकूल प्रत्युत्तरो को प्राप्त कर सकें। वे कई मामलो मे पच या मध्यस्थ का कार्य करते थे कि ऐसे कौन से प्रश्न हैं जो सरकार द्वारा ध्यान देने योग्य हैं। उनका यह विश्वास था कि निम्न श्रेणी के लोग उन भूमिकाओ मे आसानी से कार्य नही कर सकते जिसमे ऐसी श्रेष्ठता (Prominence) की आवश्यकता हो। इसीलिए विशिष्ट वर्ग के कुछ सदस्यो को विदेशी सेवा (Foreign Service) मे खीचा गया या आकर्षित किया गया। अभी भी विशिष्ट सदस्य पूर्णरूपेण सुरक्षित नही थे क्योकि वे अपने स्वय के वशगत हितो से परे अपनी राजभक्ति पलाऊ के लिए प्रदर्शित करते थे।

विशिष्ट वर्ग द्वारा जो नियत्रण का प्रयोग किया जाता है, वह अपूर्ण है। सिविल नौकर उच्च रूप मे एकता लाने वाला समुदाय नही है इसीलिए इसकी सामूहिक शक्ति सीमित हो गई है। लेकिन सबसे महत्त्वपूर्ण बिन्दु यह है कि इन सिविल नौकरो मे से ऐसे कुछ ही लोग हैं जो विशिष्ट प्रणाली (Elite System) को परिवर्तित करना चाहते हो।

नियन्त्रण मे एक विशेष समस्या व्यापारियो के एक नवीन सम्पत्ति वर्ग के उत्कर्ष से पैदा हुई है। भूत मे धन सम्पन्न लोगो की सख्या सीमित थी और प्रतिष्ठा भी सीमित थी। नवीन व्यवसायी वर्ग के सदस्यो की सख्या और अधिक हो गई है और विदेशियो से घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण उनकी कुछ Standing बन गई है। व्यापारिक समुदाय (Business group) ने कुछ एकता को विकसित किया है, लेकिन इसका उपयोग राजनीतिक उद्देश्यो के लिए नही किया गया है। वे विद्यमान प्रणाली को स्वीकार करते हैं। कुछ लोग सम्पत्ति का उपयोग उपाधियो को प्राप्त करने के लिए कर रहे हैं। वे विशिष्ट सदस्यो के समक्ष झुकते हैं और सभी बड़े मामलो में उनका समर्थन करते हैं।

विदेशी पाठशालाओ के कारण युवा लोगो के दृष्टिकोण एव विचारो मे भारी परिवर्तन आया है। इन्होने पलाऊ मे परिवर्तनो का बडा पक्ष लिया है। युवा समाज ने बाह्य ससार की आचार-नीति को गले लगाया है। फिर भी शिक्षित लोगो का यह समुदाय महत्त्वपूर्ण राजनीतिक शक्ति के रूप मे उभर नहीं पाया है।

(4) The Out-come

प्रजातान्त्रिक प्रणालियो और सिद्धान्तो ने, जिनको सन् 1945 से प्रारम्भ किया गया था, पलाऊ राजनीति को एक नवीन गति (Dimension) प्रदान की है। उदाहरण के लिए, नयी युवा पीढ़ी ने स्वतन्त्रता के विषय (Theme) पर अधिक बल प्रदान किया है जिसकी व्याख्या उन्होने 'जो चाहे सो करने का अधिकार' के रूप मे

दी है। विशिष्ट वर्ग ने इस ग्रथ को स्वीकार नही किया क्योंकि विजेता विदेशियो (V ctor ous Fo c gners) ने फिलहाल हुए युद्ध मे समन्वय अनुशासन का प्रदर्शित किया था। मुखियाओ के लोकप्रिय चुनाव ने जनता से सम्पर्क रखने के लिये तैयार किया। अधिकांश वंशानुगत मखियाओ को चुना जाता था। विशिष्ट वर्ग (El te class) इस विषय पर अपने दृष्टिकोण म एकमत नही हैं। यद्यपि विशिष्ट लोक समूह (Elite Group) का कई क्षेत्रो मे औपचारिक नियत्रण कम है तथापि व पलाऊ म केन्द्रीय शक्ति हैं।

र जनीतिक सम्बन्ध म न राष्ट्र स्वरूप मे गणतन्त्रिक ढंग से अधिक परिवर्तन हुए हैं। जो व्यक्ति पदो के लिए चुने जाते थे परन्तु विरोधियो को अस्वीकार्य होने पर उन्हे हटा दिया जाता था फिर भी हटे हुए व्यक्ति निर्णयो के निर्माण और क्रियान्वयन पर नियन्त्रण रखते थे। अपने नियत्रण को बनाए रखने के लिए उन्हे अन्य समुदायो को प्रसन्न रखना होता था।

जहाँ स्थानीय समुदाय तीव्र रूप से विभाजित है और संघर्ष विकसित होता है और गवनरो के ध्यान मे आता है तो मतभेदो को दूर करने के लिए प्रयत्न किए जाते हैं। ऐसे अधिकारियो को इस्तीफा देने के लिए आमन्त्रित किया जाता है और नये चुनाव कराये जाते हैं।

उच्च राजनीतिक स्तर पर प्रजातान्त्रिक ढाँचे को लागू करने के लिए कई प्रयत्न किए गए हैं। पलाऊ सरकार का निर्माण ग मुखियाओ की सहायता से किया गया जिनके साथ नौकरशाही के सरकारी सदस्य और चुने हुए प्रतिनिधि भी हैं। कांग्रेस के सदस्यो ने प्रारम्भिक सभाओ म दो उच्च मखियाओ एव सिविल नौकरो द्वारा डाले गए प्रभाव का Pr p nd दिया। लेकिन फिलहाल उनकी शक्ति को कुछ सीमा तक कम कर दिया गया है। दोनो राज्य संघ (C nfederat on) के मखियाओ की शक्ति अत्यधिक व्यवस्था मे है। वे सामान्य हितो के लिए एकसाथ कार्य करते हैं लेकिन प्रभाव म आगे बढने के लिए एक दूसरे के प्रतिद्वन्द्वी हैं।

किसी सीमा तक एक अधीन समाज (Sub rc rate Society) के चुने गए नेता स्वतन्त्र रूप से अधिकारो का प्रयोग करते यह एक जटिल समस्या है। फिर भी यह कहना गलत होगा कि पलाऊ के परम्परागत ढाँचे म वास्तविक प्रजातन्त्र नही है।

(5) Analysis

अमरीका का विदेश नीति का एक मुख्य उद्देश्य उन क्षेत्रो म प्रजातन्त्र को I t duce करना है जो अन्य तरीके एव साधन मे उद्देश्य को प्राप्त करने के हैं उनकी परीक्षा नही की गई है।

जहाँ प्रजातान्त्रिक भावना को सामाजिक व्यवस्थाओ के विभिन्न प्रकारो म भरना है तो यह आवश्यक हो जाता है कि जीवन के प्रजातान्त्रिक तरीके का स्वय

समझे। पाश्चात्य ससार के सास्कृतिक एजेन्टो को यह पता नही कि उनके स्वय के समाज मे प्रजातन्त्र की क्या प्रकृति है। कुछ लोग यह भूल जाते हैं कि निर्णय कैसे, किस प्रकार लिए जाते हैं और राजनीतिक दबाव समूहो की इसमे क्या भूमिका है। जो लोग प्रजातन्त्र का आदर्श स्वरूप प्रस्तुत करते हैं वे देशी राजनीति को गन्दगी और घृणा की दृष्टि से देखते है।

देशी अधिकारियों जिनका चुनाव होता है सत्ता के एजटो के रूप मे कार्य करते है क्योंकि उन्हे ऊपर से ही समर्थन प्राप्त होता है। वे प्रजातन्त्र की अवधारणा को विस्तृत करने के आन्दोलन मे स्थानीय नेता नही बनते हैं।

सत्ता की वशानुगत प्रणाली मे प्रशासन के समक्ष कुछ समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। जब कभी नई प्रणाली को लागू किया जाता है तो यह देखना आवश्यक हो जाता है कि वहाँ के परम्परागत शासक जनता और स्थानीय नेता उसे कहा तक अपनाने को तैयार है। नवीन शक्ति प्रणालियो को स्थापित करने के लिए सास्कृतिक पृष्ठभूमि, विदेशी शासको और देशी शासितो की कुशलता साधन और योग्यता इत्यादि को ध्यान मे रखा जाना चाहिए अन्यथा प्रजातन्त्र जोड तोड एव चालाकी का प्रतीक होगा जो वस्तुत सारहीन है।

यहाँ इस विशेष मामले मे प्रजातान्त्रिक प्रणालियो को शनै शनै लागू करने मे नेताओ का चुनाव एव प्रभावशाली शुरुआत थी। विदेशी प्रशासको ने विभिन्न प्रकार के प्रजातान्त्रिक मूल्यो को अस्तित्व मे लाया है। व्यक्ति की प्रतिष्ठा की मान्यता एव महत्त्वपूर्ण प्रजातान्त्रिक आदर्श है और सभ्य अमेरिकावासियो और आदिवासियो के मध्य जातीय भेद की अनुपस्थिति दूसरा आदर्श है। पलाऊ मे सम्पूर्ण दृष्टियो से अनुभव प्रजातान्त्रिक रहा है।

3

शोध-प्ररचना के तार्किक एवं यान्त्रिक विचारणीय विषय, विश्वसनीयता और प्रामाणिकता के आधार या मापदण्ड, विशुद्ध और व्यावहारिक अनुसंधान, दल-अनुसंधान और उसकी समस्याएँ

(Logical and Mechanical Considerations in the Design of Research, Criteria of Reliability and Validity, Pure and Applied Research, Team Research and Its Problems)

शोध-प्ररचना के तार्किक एवं यान्त्रिक विचारणीय विषय

(Logical and Mechanical Considerations in the Design of Research)

शोध कार्य किसी उद्देश्य को लेकर संचालित किया जाता है। शोध कार्य के क्या उद्देश्य होंगे, यह उसकी प्रकृति पर निर्भर करता है। कुछ शोध कार्यों का उद्देश्य घटना विशेष की जानकारी प्राप्त करना होता है या नवीन मानदण्डों की स्थापना करना होता है या उपकल्पनाओं का विकास करना होता है या विशुद्ध अनुसंधान समस्या का ही निरूपण (Formulation) करना होता है। कुछ ऐसे अनुसंधान होते हैं जिनका उद्देश्य व्यक्ति, परिस्थिति या सम्प्रदाय की विशेषताओं का ही दर्शाना होता है। कुछ ऐसे भी अनुसंधान हैं, जिनका प्रयोजन उपकल्पनाओं का परीक्षण करना होता है।

अनुसंधान का लक्ष्य पहले से ही निर्धारित कर लिया जाता है। इन्हीं लक्ष्यों के आधार पर पूर्वनिर्मित योजना की रूपरेखा को शोध-प्ररचना (Research Design) कहते हैं। यदि शोध कार्य का सम्बन्ध सामाजिक घटना से है तो उसे हम सामाजिक शोध प्ररचना कहेंगे। सामाजिक शोध-प्ररचना के भी अनेक प्रकार हैं। हमें अब यह देखना है कि हम किस किस्म की शोध प्ररचना का चयन करें। शोध प्ररचना में बड़े तथ्यों पर गहराई से विचार किया है। ऐसा करना इसलिए आवश्यक है ताकि अनुसंधान की आगामी अवस्थाओं में कठिनाइयाँ उत्पन्न न हों। यदि शोध-

कार्य का उद्देश्य अन्वेषणात्मक (Exploratory) है तो हम एक कसौटी अनुसंधान प्ररचना की आवश्यकता होगी क्योंकि इसके अन्तर्गत समस्या के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया जाता है। इसमें शोध कार्य की रूपरेखा इस ढंग से तैयार की जाएगी जिसमें घटना की प्रकृति की खोज की जा सके। इसके लिए कुछ बातें अनिवार्य है जैसे सम्बद्ध साहित्य का अध्ययन, जिसके बिना हम शोध कार्य में एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकते हैं। अतः अनुसंधानकर्त्ता इस शोध प्ररचना का चयन करते समय देखेगा कि क्या उसे सम्बन्धित जानकारी प्राप्त हो सकती है अथवा स्वयं को जानकारी है या नहीं। इस शोध प्ररचना में अन्तर्गत सम्बन्धित सूचनादाताओं से भी सम्पर्क स्थापित करना पड़ता है। अतः उसे यह भी ध्यान में रखना होगा कि कौनसे सूचनादाता उसके साथ कार्य में उपयुक्त होंगे और कहाँ कहाँ उनका कार्यालय एवं निवास स्थान है क्योंकि यदि वे अत्यधिक दूर निवास कर रहे होंगे तो उसके लिए यह सम्भव नहीं होगा कि वह सूचनादाता से सम्पर्क स्थापित करे।

वर्णनात्मक शोध प्ररचना में वास्तविक तथ्यों के आधार पर कार्यात्मक विवरण प्रस्तुत करना पड़ता है। सम्बन्धित तथ्यों को एकत्र करने के लिए ऐसी प्रविधियों का चुनना चाहिए जो सरलता से उपलब्ध हों। इस शोध प्ररचना में व्यक्तिगत अभिनति मिथ्या व पक्षपात की सम्भावना अधिक रहती है अतः अनुसंधानकर्त्ता को इससे बचने के लिए सन्तुलित दृष्टिकोण अपनाना चाहिए।[1]

जब अध्ययन का उद्देश्य कार्य कारण के सम्बन्ध की उपकल्पना का परीक्षण करना होता है तो अन्य विचारणीय विषयों और आवश्यकताओं को ध्यान में रखना होता है। उदाहरणार्थ हाँगकांग में विद्यार्थियों ने बाल अपराध के कारणों की अनेक उपकल्पनाएँ सुझायी है। कुछ ने बाल देश में बाल अपराध में कमी का कारण चीनियों में मजबूत पारिवारिक सम्बन्धों को बताया कुछ ने उपनिवेशों (Colony) में पुलिस की सतर्क और कुशल व्यवस्था को बतलाया कुछ ने लड़कों को छोटी उम्र में नौकरी मिल जाना बतलाया कुछ ने उपनिवेश में बाल अपराध परम्परा की कमी को उत्तरदायी ठहराया ये सभी औपचारिक व्याख्याएँ हैं जो अपरीक्षित थी और अपरीक्षित थीं। अर्थात् उन कथनों में एक भी ही उपकल्पना की आवश्यकता हमारे अनुसार होते तथा लेकिन बिना परीक्षण के इन्हें न तो स्वीकार किया जा सकता है और न इन्हें रद्द किया जा सकता है।[1]

इस उपकल्पना के परीक्षण हेतु विद्यार्थियों ने एक नियन्त्रित समुदाय (Controlled Group) का सहारा लिया—यह धारणा कि जहाँ पारिवारिक सम्बन्ध मजबूत (Strong) होते हैं वहाँ बाल अपराध नहीं होते। उन्होंने करीब 300 परिवारों का निरीक्षण किया एवं वहाँ के तथ्यों का एकत्र किया। इस प्रकार उन्होंने विद्यालयों और स्वास्थ्य संस्थाओं में भी करीब इतने ही आँकड़े एकत्रित किए

1 P V Young op cit p 19

जिनमे बाल अपराध का कोई अभिलेख (Record) नहीं था। जो बाल अपराधी नहीं था उस समुदाय के बारे मे यह पाया गया कि कुछ के परिवारों मे एक दूसरे को छोड़ने के केस (Desertion) मिले। कुछ मे पति-पत्नी के बीच संघर्ष व मनमुटाव के मामले, कुछ मे माता पिता और बच्चे मे संघर्ष मिले और 70 प्रतिशत इस समुदाय मे ऐसे मामले थे जहाँ उनके परिवारों मे कोई मजबूत सम्बन्ध नहीं थे। इस परीक्षण से यह धारणा गलत सिद्ध हुई कि बाल अपराध की प्रवृत्ति कमजोर पारिवारिक सम्बन्धो के कारण पायी जाती है। यहाँ पर कार्य कारण के सम्बन्ध का पता लगाने के लिए परीक्षण किया गया ताकि अनुसंधान मे कहीं त्रुटियाँ न आ जाएँ। इसलिए अनुसंधान प्ररचना मे तार्किक विषयों (Considerations) को मुख्यतः ध्यान मे रखना आवश्यक होता है। अनुसंधानकर्ता यह देखेगा कि यदि 'X' के कारण 'Y' मे परिवर्तन आया है तो क्या वास्तव मे दोनो मे कोई सम्बन्ध है या नहीं। जब तक कथनो मे उपकल्पनाओं मे वास्तविक कार्य और कारण के सम्बन्ध स्थापित नहीं होंगे अनुसंधानकर्ता किसी शोध-प्ररचना के निर्माण मे बिना सोचे समझे आगे नहीं बढ़ सकता। नियन्त्रित समूहों का सबसे बड़ा लाभ यह है कि किसी भी घटना की तुलना या इसको आँका अथवा मापा नहीं जा सकता, जब तक कि हमे विशुद्ध रूप से यह नहीं मालूम हो जाय कि वास्तव मे क्या मापना है और किसकी तुलना करनी है।[1]

दो चरों के मध्य कारणात्मक सम्बन्धो का अनुमान लगाने के आधार
(Bases for Inferring the Existence of a Casual Relationship Between Two Variables)

सेलटिज (Selltiz) जहोदा (Jahoda), डयूस और कुक ने उदाहरण देते हुए समझाया है "माना कि पश्चिमी इलाके मे डॉक्टरों ने यह पाया कि ग्रामीणों की संख्या मे अपचन मे वृद्धि हो गई है। ये रोगी अपाचन रोग से पीड़ित हैं। इस समय आम जो बाजार मे मिलने लग गया है हो सकता है कि यह इस अपाचन का कारण हो। उनमे से एक डॉक्टर सोचता है कि इन दोनो घटनाओं मे परस्पर सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। वह अब इस उपकल्पना का निर्माण करता है कि आम के खाने से अपाचन का रोग लोगो मे बढ़ गया। जिन रोगियों को अपाचन की शिकायत है उनसे वह डॉक्टर यह पूछते है कि क्या आपने आम आदि खाए है? यदि किसी ने नहीं खाए है तो यह उपकल्पना कि अपाचन का कारण आम है गलत सिद्ध हो जाता है।

लेकिन यदि कुछ ने खाया भी जाता है। अब इस बात का पूरा दावा निरूह अपाचन की शिकायत नहीं है कि क्या उन्होने आम खाए थे। यदि मालूम

कारण ही बदहजमी का रोग लोगो को हुआ तो हम इस उपकल्पना को भी तर्कसगत (Tenable) मानेंगे।

एक अन्य उपकल्पना, टेलीविजन के प्रयोग करने मे विद्यार्थियो को अधिक सूचना प्राप्त होगी, मे विद्यार्थियो को दो समूहो मे बाट दिया जाता है। एक समूह को *टेलीविजन दिखाया जाता है और उन्होने जो सूचनाएँ प्राप्त की, उस पर उनको अक* (Scores) दे दिए जाते हैं और दूसरे समूह को परम्परागत तरीके से पढाया जाता है, उन्होने जो सूचनाएँ प्राप्त की, उन पर भी अक (Score) दे दिए जाते है। यदि दोनो समूहो के अको (Scores) मे बहुत अन्तर हो तो हम कहेगे कि टलीविजन का उपयोग करने से विद्यार्थियो का ज्ञान बढता है। अत यह उपकल्पना सही है।

इस प्रकार उपर्युक्त उदाहरणो से यह सिद्ध हो जाता है कि अनुसधान प्ररचना मे तार्किक विषयो (Considerations) को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है जिससे हमारे अनुसधान मे कोई त्रुटि न रह जाये।

इसी प्रकार अनुसधान प्ररचना मे यान्त्रिक यानो के अन्तर का भी ध्यान रखा जाता है। अनुसधानकर्त्ता को यह विश्वास हो जाना चाहिए कि वह जिन यान्त्रिक प्रविधियो के तथ्यो को एकत्र कर रहा है वे बिल्कुल विश्वसनीय और उच्च स्तरीय (Standardized) हैं।

यह अत्यावश्यक है कि जिन नवीन यत्रो का प्रयोग मे लाया जाय उनका पूर्व परीक्षण कर लिया जाना चाहिए। इसके तीन उद्देश्य है—

(1) प्रणालियो का विकास अनुसधान-यत्र को लागू करने के लिए करना।

(2) प्रश्नो के शब्दो का परीक्षण करना ताकि श्रोतागण उनको समझ सकें।

(3) यत्र वही मापता है जो उसे मापना चाहिए।

चरो (Variables) को मापने मे अनेक यान्त्रिक कठिनाइयाँ आती है क्योकि हमारे पास अभी तक ऐसा विश्वसनीय मापदण्ड नही है जिसम हम यह कह सकें कि यह सर्वोत्तम पैमाना है। फिर भी यत्र का कई Cases पर लागू किया जाना चाहिए और प्राप्त सामग्री का सकेतन यत्रो द्वारा किया जाना चाहिए। यत्रो को चरो (Variables) का अर्थ बतला दिया जाता है। अब यह उन पर निर्भर है कि वे अपनी स्वतन्त्र एव निष्पक्ष राय दे। अत इन यत्रो के महत्त्व को कम नही किया जा सकता। हमारी समस्या कितनी ही उपयोगी क्यो न हो जब तक मापक यत्र विकसित नही होगे, अनुसधान कार्य मे विशुद्धता नही आ सकती।

इन यान्त्रिक साधनो का इसलिए भी महत्त्व है कि व्यक्तिगत अभिरुचि प्रवेश नही करती। अत परिणाम विशुद्ध एव विश्वसनीय प्राप्त होते हैं जिससे अनुसधानकर्त्ता

अपनी अनुसंधान प्ररचना में इसका भी ध्यान रखता है और जहाँ तक सम्भव हो सके वह उनका प्रयोग तथ्यों का एकत्र करने में करता है।[1]

विश्वसनीयता और प्रामाणिकता का मापदण्ड या आधार
(Criteria of Reliability and Validity)

अनुसंधान में अनुमापन विधि का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है। अनुसंधान प्रविधि का सफलतापूर्वक निर्माण ही अनुसंधान की सफलता की कसौटी नहीं है। इसकी सफलता मुख्यतः इस बात पर निर्भर करती है कि जिन अनुमापन प्रणालियों का प्रयोग किया जाता है उनके परिणाम कहाँ तक लाभप्रद सिद्ध हुए हैं। एक अनुमापन प्रणाली वह प्रविधि है जिसकी सहायता से मुख्य तथ्यों को एकत्र किया जाता है। साथ ही यह नियमों का समूह है जिसके द्वारा इन तथ्यों को उपयोग में लाया जाता है।

एक अनुमापन प्रणाली में विश्वसनीयता का गुण होना आवश्यक है अर्थात् समान परिस्थितियों में समान परिणाम ही देने चाहिए। अनुमापन के सम्बन्ध में अनेक कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। अनुमापन को प्रभावित करने वाले कई तत्त्व हैं। कई बार उन तत्त्वों पर नियन्त्रण रखने का प्रयत्न किया जाता है जो अनुमापन में गलत ढंग से हस्तक्षेप करते हैं। लेकिन ये प्रयत्न भी पर्याप्त नहीं होते। फलस्वरूप अनुमापन के परिणाम जिस विशेषता का अनुमान करता है उस और अनुमापन प्रक्रिया दोनों को बुरी तरह से प्रभावित करते हैं। अनुमापन के परिणामों में भिन्नता आने के कई कारण हो सकते हैं। ये भिन्नताएँ व्यक्तिगत कारणों, स्थितीय तत्त्वों, मापने के निर्देशों, अस्पष्टता व अभाव एवं यान्त्रिक तत्त्वों के कारण हो सकती हैं।

यदि हम यह जानते हैं कि अनुमापन-यन्त्र में सन्तोषजनक प्रामाणिकता है तो हम उसकी विश्वसनीयता के बारे में चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है और ऐसी स्थिति में उसकी विश्वसनीयता की जाँच-पड़ताल करने में भी कोई लाभ नहीं है।

फिर भी कोई अनुसन्धानकर्त्ता (Investigator) पूर्ण तथा इस स्थिति में नहीं होता है कि वह स्पष्ट रूप से कह सके कि उसका अनुमापन सन्तोषजनक व पूर्णतः विश्वसनीय है। अतः अनुमापन यन्त्र की विश्वसनीयता को पहले से ही निर्धारित कर लेना चाहिए ताकि अनुसंधान के अग्रिम चरणों के मध्य में ही अविश्वसनीयता जैसी कोई कठिनाई उत्पन्न न हो।

मापक यन्त्र की विश्वसनीयता का पता लगाने के लिए कुछ ऐसे भी मानदण्ड है जिनके आधार पर हम कह सकते हैं कि *मापक-यन्त्र विश्वसनीय है।* मोसर के शब्दो मे 'एक मापक-यन्त्र उस सीमा तक विश्वसनीय है कि यदि माप (Measurement) को स्थिर अवस्था मे दोहराया जाए तो वही परिणाम देगा।"[1]

पी० वी० यंग के अनुसार, "एक विश्वसनीय पैमाना स्वय के साथ एकमत है और वह स्थिर रूप मे वही मापता है, जो उसे मापना होता है।"[2]

कर्लिंगर (Kerlinger) के शब्दो मे, 'विश्वसनीयता एक मापक यन्त्र की सत्यता या शुद्धता को कहते हैं।'[3]

विश्वसनीयता की विशेषताएं (Characteristics of Reliability)

(1) स्थायित्वता (Stability)—मापक-यन्त्र की विश्वसनीयता का आधार परिणामो का स्थायित्व है। स्थायित्व निर्धारित करने का उचित तरीका यह है कि दोहराये गए माप के परिणामो की तुलना की जाए। यदि परिणाम मे कोई विशेष अन्तर नही है तो हम उसे विश्वसनीय पैमाना मानगे। उदाहरण के लिए यदि मापक यन्त्र निरीक्षण से सम्बन्धित है, तो पर्याप्त सख्या मे निरीक्षणो को दोहराया जाना चाहिए। कई बार सामाजिक घटना का निरीक्षण करके अनुसधानकर्ता केवल उस घटना की सत्यता परख सकता है। इसी प्रकार साक्षात्कार, प्रश्नावली या प्रक्षेपी परीक्षा मे यही पद्धति अपनाई जाती है। *अन्तर केवल इतना ही है कि इसम मापक* यन्त्र को दो बार ही दोहराया जाता है जिसे हम परीक्षा-पुनर्परीक्षा प्रक्रिया (Test retest Procedure) कहते हैं। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत, एक ही विषय पर एक ही पैमाने को दो बार लागू किया जाता है और प्राप्त परिणामो की तुलना की जाती है। यदि दोनो परिणामो मे बहुत कुछ समानता है, तो हम इस पैमाने को विश्वसनीय मानते।

(2) अनुरूपता (Equivalence)—जहोदा, कुक आदि के अनुसार 'यदि विभिन्न अन्वेषणकर्ता, मापक-यन्त्र को उन्ही व्यक्तियो (Individuals) पर उसी समय मापन के प्रयोग मे लाते हैं या विभिन्न यन्त्रो को उन्ही व्यक्तियो पर उसी समय लागू किया जाता है और प्राप्त परिणामो मे यदि अनुरूपता है तो हम उस पैमाने को विश्वसनीय मानेंगे, हालांकि दोनो पैमानो का एक साथ उपयोग नही किया

1 A measuring instrument is reliable to the extent that repeat measurements made with it under constant condition will give the same result
—*Moser*, op cit, p 242

2 'A reliable scale agrees with itself and measures consistently that which it is supposed to measure —*P V Young*, op cit, p 375.

3 'Reliability is an accuracy or a precision of a measuring instrument'
—*Fred N Kerlinger* Foundations of Behavioural Research, p 434

जाता। विभिन्न यन्त्रों के मामले में प्रायः यह असम्भव ही है कि उन्हें एक साथ ही काम में लाया जाए। इसका तात्पर्य यह है कि अनुरूपता को आँकने (Estimate) के लिए पैमानों में समय का अन्तर इतना कम है कि लक्षण (Characteristic) में परिवर्तन आ जाता है।

इस प्रक्रिया के अन्तर्गत व्यक्तियों में दिन-प्रतिदिन के उतार-चढ़ावों (Fluctuations) को नहीं लिया जाता है, क्योंकि परीक्षण में दोनों स्वरूपों का एक ही समय प्रयोग किया जाता है। परीक्षण के समय थोड़ा बहुत ध्यान इधर-उधर हो ही सकता है। थकान के कारण प्रत्युत्तरों पर प्रभाव पड़ता है किन्तु फिर भी लक्षणों में वास्तविक परिवर्तन की गुंजाइश नहीं है।

अनेक विधि-पैमाने (Split-half method) को इसी प्रक्रिया के अन्तर्गत लिया जा सकता है। इसके अन्तर्गत पैमाने को दो बार लागू करना नहीं पड़ता है। पैमाने को दैव रूप में दो भागों में विभक्त कर दिया जाता है। प्रत्येक भाग को पूर्ण पैमाना मान कर एक ही समूह पर लागू किया जाता है। यदि दोनों से प्राप्त परिणामों में सहसम्बन्ध है तो पैमाना विश्वसनीय समझा जाता है।

विश्वसनीयता में वृद्धि की पद्धतियाँ

माप-प्रक्रिया की विश्वसनीयता में उचित उपायों द्वारा वृद्धि की जा सकती है। प्रशासन में अवांछित भेदों (Variations) को कम किया जा सकता है, जिसके लिए प्रशिक्षित और अनुभवी कार्मिक वर्ग (Personnel) की आवश्यकता है। माप-प्रक्रिया की विश्वसनीयता में वृद्धि की दो प्रमुख पद्धतियाँ हैं—(1) माप कार्यों में वृद्धि करना एवं (2) माप के आन्तरिक सम्बन्ध में वृद्धि करना।

कर्लिंगर ने विश्वसनीयता में वृद्धि की निम्नलिखित सामान्य पद्धति बतलाई है—

(1) मनोवैज्ञानिक और शैक्षणिक मापक-यन्त्रों की मदों (Items) को स्पष्ट लिख लीजिए। अस्पष्ट मदों से त्रुटि भिन्नता में भी वृद्धि होती है, क्योंकि व्यक्ति अस्पष्ट मद की व्याख्या भिन्न-भिन्न रूप से कर सकता है। अतः स्पष्ट मदों से यह कमी दूर हो सकती है।

(2) यदि यन्त्र अधिक विश्वसनीय नहीं है, तो समान प्रकार और समानता की ओर अधिक मदों को जोड़ा जाना चाहिए। यह बहुधा विश्वसनीयता में वृद्धि करेगा।

(3) स्पष्ट और उच्च स्तरीय निर्देशन (Instrumentations) से मापन की त्रुटियाँ कम हो सकती हैं। निर्देशन को लिखने में बड़ी सावधानी बरतनी चाहिए। मापक-यन्त्र का उपयोग सदैव नियन्त्रित, समान शर्तों या परिस्थितियों में किया जाना चाहिए।

विश्वसनीयता का महत्त्व (Value of Reliability)

कर्लिंगर के शब्दों में, "उच्च विश्वसनीयता, अच्छे वैज्ञानिक परिणामों

की प्रतिभूति (Guarantee) नही है, लेकिन बिना विश्वसनीयता के कोई अच्छे वैज्ञानिक परिणाम नही निकल सकते हैं।"[1]

पैमानो की प्रामाणिकता
(The Validity of Measurements)

गुडे तथा हाट्ट के अनुसार, 'एक पैमाना उस अवस्था मे प्रामाणिक है जबकि वह वास्तव मे वही मापता है जो कि उसे मापना चाहिए।"

मापक-यन्त्रो की प्रामाणिकता भी विश्वसनीयता की तरह कई समस्याएँ प्रस्तुत करती हैं। उदाहरण के लिए यदि मापन प्रणालियो (Measurement Procedures) निरीक्षणकर्त्ता की जटिल प्रक्रियाओ पर बहुत अधिक आश्रित है तो निरन्तर त्रुटियाँ होने की पूर्ण सम्भावना है।

सामान्यत एक व्यक्ति की चर (Variable) पर क्या स्थिति है, इसे हम मापना चाहते हैं, पर ऐसा कोई प्रत्यक्ष तरीका नही है जिससे मापन की प्रामाणिकता हो सके। व्यक्ति की चर पर वास्तविक स्थिति का प्रत्यक्ष ज्ञान न होने के कारण हम मापक-यन्त्र की प्रामाणिकता परिणामो मे अनुरूपता एव अन्य प्रमाणो (Evidences) के आधार पर सिद्ध कर सकते हैं।

प्रमाणो (Evidences) का क्या स्वरूप होगा, वह मापक-यन्त्र की प्रकृति और उद्देश्य पर निर्भर करता है। कुछ परीक्षणो का उद्देश्य व्यक्तियो के बारे मे भविष्य-वाणियो को आधार प्रदान करना होता है। उदाहरणार्थ वे जीवन के विशेष भाग मे सफल होगे या असफल अथवा उनकी मानसिक स्थिरता के लिए क्या क्या सावधानियाँ बरतनी होगी, क्या वे अपने व्यवसाय से प्रसन्न होगे या निराश इत्यादि। इन उदाहरणो से प्रतीत होता है कि परीक्षण के उद्देश्यो मे भिन्नता है, अन्तर है, अत प्रमाणो (Evidences) के प्रकार (Types) मे भी अन्तर होगा। ऐसे परीक्षणो मे जो किसी व्यक्ति की सफलता या असफलता के सम्बन्ध में भविष्यवाणी का आधार प्रदान करेंगे, उनकी प्रामाणिकता का आधार (Basis of Criterias) व्यक्तियो की स्थिति एव स्तर के बारे मे दिए गए प्रमाण (Evidences) ही होगे।

इस प्रकार की प्रामाणिकता के अन्वेषण (Investigation) को व्यावहारिक प्रामाणिकता (Pragmatic validity) की सज्ञा दी जाती है।[2]

1 "High reliability is no guarantee of good scientific results, but there can be no good scientific results without reliability In brief, reliability is a necessary but not sufficient condition of the value of research results and their interpretation." —*Kerlinger* Ibid, p 455

2 'Investigation of validity in these terms may be described as pragmatic, validity is judged in terms of accuracy of predictions made on the basis of the test s results". —*Selltiz, Jahoda, Cook & others.*

प्रामाणिकता के प्रकार (Types of Validity)

व्यावहारिक प्रामाणिकता (Pragmatic Validity)—यदि अनुसंधानकर्त्ता एक परीक्षण द्वारा व्यक्तियों के वर्तमान स्तरों में जो भिन्न हैं, अन्तर करता है तो उसे हम समवर्ती प्रामाणिकता कहेंगे। इसके साथ ही अन्वेषणकर्त्ता यह भविष्यवाणी, चाहे तो कर सकता है कि किन किन व्यक्तियों को भविष्य में मानसिक स्वास्थ्य रक्षा की आवश्यकता रहेगी।

भविष्य में कौन व्यक्ति असहमत होंगे यदि परीक्षण यह पर्याप्त रूप से मालूम कर सके तो उसे हम भविष्य बतलाने वाली Predictive प्रामाणिक कहेंगे। इन दोनों उदाहरणों में व्यावहारिक अभिगमन ही है।

इस व्यावहारिक अभिगमन (Pragmatic Approach) के लिए आधार या मापदण्ड का प्रामाणिक होना आवश्यक है। सामान्यतः प्रामाणिकता का आधार भविष्यवाणी की प्रकृति और प्रविधियों की उपलब्धि (Availability) पर निर्भर करता है। इस समय पर्याप्त रूप से प्रामाणिक आधार योग्य मानसिक चिकित्सकों द्वारा प्रदत्त स्वतन्त्र निदान है। यदि निरीक्षण का उद्देश्य कॉलेज में सफलता के सम्बन्ध में भविष्यवाणी करना है तो प्रामाणिकता का आधार (Criteria) कॉलेज ग्रेड्स (College grades) होंगे। यदि व्यवसाय में सफलता के बारे में भविष्यवाणी करनी है तो निरीक्षक के Ratings को ही आधार मानना होगा।

इन भविष्यवाणियों (Predictions) की जाँच करने के लिए पर्याप्त मापदण्डों (Criteria) के विकास की आवश्यकता है, तभी मापक यन्त्रों की प्रामाणिकता उपयोगी एवं लाभप्रद सिद्ध हो सकती है।

निर्माण प्रामाणिकता (Construct Validity)—जिन मापक-यन्त्रों का प्रयोग विशेषताओं को मापने के लिए किया जाता है वे विशिष्ट भविष्यवाणियाँ नहीं करते, अतः उनका मूल्यांकन प्रत्यक्ष रूप से नहीं हो सकता। अन्य प्रमाण (Evidences) भी प्राप्त किये जाने चाहिए जिनसे यह निर्णय लिया जा सके कि मापक-यन्त्र उसी सम्प्रत्यय (Concept) का मापन करता है जिसका कि माप करना है। इस छोटे या कम प्रत्यक्ष अभिगमन (Less direct approach) को 'निर्माण प्रामाणिकता' की संज्ञा दी गई है।

प्रज्ञाओं, मनोवृत्तियों, सत्तावाद, चिन्ताओं इत्यादि के मापक-यन्त्रों को निर्माण की श्रेणी में रखा जाता है। क्रोनबेक और मील (Cronback & Meehl) ने सर्वप्रथम निर्माण प्रामाणिकता को स्पष्ट किया। निर्माण प्रामाणिकता की परीक्षा के लिए ऐसे प्रश्न पूछे जाते हैं जैसे वाक्यों के समूह (Set of Preposition) के आधार पर क्या भविष्यवाणियाँ की जायेंगी? जो माप इस पैमाने द्वारा प्राप्त किये गये हैं, क्या वे भविष्यवाणियों के अनुरूप हैं, आदि।

जहाँ तक इसके अन्तर्गत भविष्यवाणियो (Predictions) का प्रश्न है, ये उन वाक्यो के समूह के आधार पर की जायेंगी जिनमे वे निर्माण सम्मिलित हैं।

निर्माण प्रामाणिकता का कोई एक आधार नही है। यह कई तत्वो पर निर्भर करता है। उदाहरणार्थ, कई स्रोतो मे प्रमाण (Evidences) इकट्ठे करने होते हैं। मदो की आतरिक सम्बद्धता, स्थायित्वता, अन्य परीक्षणो के साथ सह-सम्बन्ध इत्यादि प्रमुख हैं।

विश्वसनीयता और प्रामाणिकता के मापदण्डो के बारे मे जो उपर्युक्त विवेचन किया गया है, उससे प्रतीत होता है कि ऐसा कोई पूर्णत सत्य मापदण्ड नही है जो मापक यन्त्रो की विश्वसनीयता और प्रामाणिकता को सिद्ध कर सके। सेलिज, जहोदा, ड्यूस और कुक के अनुसार, "...... ऐसा कोई निर्दोष मापदण्ड प्राप्त नही है, प्राप्त मापदण्डो की विश्वसनीयता और प्रामाणिकता में सुधार किया जा सकता है।"

मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्रीय और शैक्षणिक मापनो द्वारा विश्वसनीय और प्रामाणिक परिणामो को पाने मे कठिनाइयो के बावजूद भी इस शताब्दी मे बड़ी उन्नति हुई है। अब इस भावना मे अभिवृद्धि हो रही है कि समस्त मापक-यन्त्रो की विश्वसनीयता और प्रामाणिकता के लिए उनकी व्यावहारिक और आलोचनात्मक परीक्षा की जानी चाहिए। अपर्याप्त मापन की सहनशीलता का दिवस समाप्त हो गया है।

विशुद्ध और व्यावहारिक अनुसंधान
(Pure and Applied Research)

सामाजिक अनुसधान मे विशुद्ध और व्यावहारिक दोनो अनुसंधानो का बहुत महत्त्व है। विशुद्ध अनुसधान विशेष रूप से ज्ञान वृद्धि पर बल देता है जबकि व्यावहारिक अनुसधान उपयोगिता पर विशेष ध्यान देता है। व्यावहारिक समस्याएँ सैद्धान्तिक ज्ञान की वृद्धि मे सहयोग देती हैं और इसी प्रकार सैद्धान्तिक ज्ञान भी व्यावहारिक समस्याओं के समाधान मे सहयोग देता है।

विशुद्ध अनुसंधान (Pure Research)

"विशुद्ध अनुसधान की सज्ञा उसे दी जाती है जिसमें ज्ञान प्राप्ति, ज्ञान के लिए ही हो।"[1]

विशुद्ध अनुसंधान के अन्तर्गत वैज्ञानिक पद्धति से अनुमानित परिकल्पना के आधार पर किसी तथ्य या सिद्धान्त की शोध करनी होती है। उदाहरण के लिए आइस्टाइन (Einstein) के पदार्थ से ऊर्जा को अधिक सिद्ध करने के लिए अनुसधान को हम विशुद्ध अनुसधान की श्रेणी मे रख सकते हैं।

1. "Gathering knowledge for knowledge's sake is termed 'pure' or 'basic' research."

—*Pauline V Young* : Scientific Social Surveys and Research, p. 30.

इसमें सम्मिलित की जाने वाली बातें इस प्रकार हैं—

(i) सामाजिक घटनाओं एवं जटिल तथ्यों के बारे में जानकारी प्रदान करता है (It offers knowledge about social events and complex facts)— विशुद्ध अनुसंधान का प्रमुख कर्त्तव्य यह है कि समाज में घट रही महत्त्वपूर्ण घटनाओं की जानकारी प्रदान करे। इन घटनाओं की जानकारी दिए बिना, व्यावहारिक रूप में किसी समस्या का समाधान नहीं निकाला जा सकता। जब तक घटना की ही जानकारी न हो तब तक हम किस आधार पर कोई निर्णय ले सकते हैं या निष्कर्ष की ओर प्रेरित हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त जो जटिल तथ्य हैं उनका बोध होना भी अत्यावश्यक है। व्यावहारिक अनुसंधान में इसकी उपयोगिता को कम नहीं किया जा सकता। इन्हीं जटिल तथ्यों के आधार पर, व्यावहारिक अनुसंधान के प्राथमिक चरणों में सहायता मिलती है।

(ii) विशुद्ध अनुसंधान व्यावहारिक समस्याओं के समाधान में सहायता प्रदान करता है (It offers assistance in solving practical problems)— सैद्धान्तिक अनुसंधान सामग्री प्रदान करता है। इस सामग्री के आधार पर हम किसी निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं। उदाहरणार्थ, सैद्धान्तिक ज्ञान हमें यह जानकारी प्रदान करता है कि सामाजिक पृष्ठभूमि (Social background) की बौद्धिक प्राप्ति (Intellectual achievement) पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। जिस परिवार के बच्चे की सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पिछड़ी हुई है, उस बच्चे की अवसर प्रतिभा लब्धि (Intelligence quotient) उस बच्चे से निम्न स्तर की होगी जिसकी सांस्कृतिक और सामाजिक पृष्ठभूमि अच्छी और सुदृढ़ है। अमरिका में नीग्रो जाति के बच्चों के साथ जो भेदभाव होता था उसका प्रभाव उनके बौद्धिक विकास पर पड़ा ही। वे दूसरों की तुलना में बुद्धि कम कुशल और बुद्धिहीन पाये गए। अतः इस आधार पर हम भविष्यवाणी भी कर सकते हैं कि यदि ऐसे पिछड़े समुदायों को अन्यत्र ले जाया जाये तो क्या होगा, या उन्हें नये अवसर प्रदान करें तो क्या सुधार हो सकता है। यद्यपि ये निष्कर्ष पूर्णतः सत्य नहीं निकल सकते तथापि समस्याओं के समाधान में काफी हद तक सहायक सिद्ध होते हैं। गुडे और हाट्ट के शब्दों में, "वास्तव में यह कहा जा सकता है कि रोग निदान या इलाज के लक्ष्यों के लिए और कोई बात इतनी व्यावहारिक नहीं है जितना कि एक अच्छा सैद्धान्तिक अनुसंधान।"[1]

(iii) इससे सामाजिक घटनाओं में पाये जाने वाले प्रकार्यात्मक (Functional) सम्बन्धों का पता लगाया जाता है, इन्हीं पर सामाजिक जीवन की सक्रियता तथा गतिशीलता निर्भर होती है।

(iv) यह अनुसंधान व्यावहारिक समस्याओं में पाए जाने वाले केन्द्रीय तत्त्वों का पता लगाता है। जो समस्याओं को परम्परावादी दृष्टिकोण से देखते हैं, वे मुख्य

1. "Indeed, it can be said that nothing is so practical for the goals of diagnosis or treatment as good research."
—*Goode and Hatt* Methods in Social Research, p. 37.

तत्वो की एक प्रकार से अवहेलना करते हैं फलत समाधान निष्फल हो जाता है। गुडे और हाट्ट ने उदाहरण देते हुए लिखा है कि यदि कोई क्षेत्र जातीय मतभेद से प्रभावित हो तो क्रीडा निर्देशक विभिन्न वंश के लडको के लिए अलग-अलग मैदान व समय निश्चित कर उनमे संघर्षमय स्थिति को दूर कर सकता है। इस अर्थ मे झगडो को दूर किया जा सकता है लेकिन यह समाधान स्थायी नहीं है। जब तक तनाव के कारणो को दूर नही किया जाता है जातीय भावना और प्रबल हो उठेगी जिसका परिणाम यही होगा कि स्थिति ज्यो की त्यो बनी रहेगी।

(v) गुडे और हाट्ट के अनुसार विशुद्ध अनुसंधान 'प्रशासक के लिए प्रामाणिक प्रणाली' बन जाती है। विशुद्ध अनुसंधान प्रशासनिक ढाँचे पर प्रभाव डालता है जब प्रशासक स्वय इसकी उपयोगिता को सीखे। वह प्रशासनिक यन्त्र मे सुधार विशुद्ध अनुसंधान के सिद्धान्तो के आधार पर करने के लिए इच्छुक रहता है। जब प्रशासक को अपनी नीतियो के क्रियान्वयन मे सफलता मिलती है तो उसका विश्वास इसके सिद्धान्तो मे और भी बढ जाता है। प्रशासको के अतिरिक्त, गैर-सरकारी संगठन भी इस अनुसंधान का प्रयोग अपने उद्योग-धन्धो मे करते हैं। इसके लिए वे जीव विज्ञान, भौतिक विज्ञान व रसायन विज्ञान के विशेषज्ञो को ऊँचा वेतन देकर रखते हैं। इन विषयो के विशेषज्ञ अनुसंधान के ज्ञान का उपयोग औद्योगिक प्रगति के लिए करते हैं। जब नई समस्याएँ खडी होती हैं तो इसके सिद्धान्तो पर पुन मनन करते हैं, उनका विश्लेषण करते हैं और परिस्थितियो के अनुसार रचनात्मक सुझाव भी देते हैं।

(vi) इसके अन्तर्गत 'समस्याओ के विकल्प समाधान' (Alternative Solution of Problems) भी प्रदान किए जाते हैं। विशुद्ध अनुसंधान की प्राथमिक अवस्थाओ मे कठिनाइयाँ अवश्य आती हैं और अधिक व्यय होने की भी सम्भावना रहती है। जाँच-पडताल, छान-बीन तथा इससे सम्बन्धित यन्त्रो पर व्यय करना पडता है। हो सकता है कि विशुद्ध अनुसंधान के सिद्धान्त पहली बार मे सही सिद्ध न भी हो हो सकता है कि इसके सिद्धान्तो को लागू करने मे कठिनाई भी हो, परन्तु अन्त मे वैकल्पिक समाधान निकल ही आता है। उदाहरण के लिए जिस समय प्रारम्भ मे टेलीविजन, रेडियोग्राम, ट्रांजिस्टर इत्यादि पर अनुसंधान किए गए थे, उस समय काफी व्यय हुआ होगा, लेकिन अन्त मे सफलता के बाद, व्यय मे अवश्य कटौती हुई है।

(vii) इसके अन्तर्गत स्वाभाविक या सामान्य नियमो को ज्ञात किया जाता है, जिनसे 'सामाजिक जीवन और उसकी प्रमुख घटनाएँ निर्देशित होती हैं।

व्यावहारिक अनुसंधान
(Applied Research)

"व्यावहारिक अनुसंधान की संज्ञा उसे दी जाती है जिसमे ज्ञान-प्राप्ति मानवीय भाग्य के सुधार में सहायता प्रदान कर सके।"[1]

1 "Gathering knowledge that could aid in the betterment of human destiny is termed 'Applied' or 'Practical' Research
—*Pauline V Young* Scientific Social Surveys and Research, p 30.

इस अनुसंधान के अन्तर्गत विशुद्ध अनुसंधान के परिणाम को व्यावहारिक बनाने का प्रयत्न किया जाता है। आइस्टाइन के विशुद्ध अनुसंधान को आधार बना कर अणुबम (Atom bomb) बनाने का जो शोध कार्य किया गया वह व्यावहारिक अनुसंधान की श्रेणी मे आयेगा।

गुडे और हाट्ट ने व्यावहारिक अनुसंधान के चार पक्षो पर चर्चा की है।

1 नवीन तथ्य प्रदान करता है (It provides new facts)—अध्ययन से पूर्व, सम्पूर्ण जानकारी की आवश्यकता रहती है व सामग्री का संकलन करना पड़ता हैं। जब आँकड़े आ जाते हैं तो समस्या का विश्लेषण सुगमतापूर्वक किया जा सकता है। ये आँकड़े समस्या समाधान मे जैसे जनसंख्या के सम्बन्ध मे, चोरी व डकैती के सम्बन्ध मे, विवाह विच्छेद के सम्बन्ध मे, बहुत सहायक होते हैं। इनके आधार पर नवीन तथ्यो का आविष्कार होता है। पुराने सिद्धान्तो मे संशोधन किया जाता है व नये ढग से उनकी परिभाषाएँ दी जाती हैं। गुडे और हाट्ट के अनुसार, "व्यावहारिक सर्वेक्षण के द्वारा किसी भी क्षेत्र की समस्या को दूर किया जा सकता है। यदि किसी स्कूल मे अध्ययन के सम्बन्ध मे कोई जाति विशेष या समुदाय अड़चनें पैदा करता हो तो जैसे समाजीकरण, समुदाय की एकता आदि के बारे मे कई रोचक प्रश्न खड़े हो उठते हैं। इसके व्यावहारिक पहलू का अध्ययन कर झगड़े या संघर्षों के कारणो को दूर किया जा सकता है।' संक्षेप मे, यदि व्यावहारिक अनुसंधान को ठीक ढग से नियोजित करें तो नवीन सूचना सैद्धान्तिक रूप मे लाभदायक हो सकती है।

2 विशुद्ध अनुसंधान सिद्धान्त को कसौटी पर कस सकता है (Applied Research can put theory to test)—अध्ययनकर्ता अनुसंधान प्रतिवेदन के बारे मे अधिक जागरूक हो गया है। वह सामाजिक निरीक्षणकर्ता के रूप मे राजनीतिक संघर्ष (Political conflict) का भी अध्ययन करता है क्योंकि सामाजिक समस्याओ का अध्ययन भी राजनीतिक वातावरण की पृष्ठ-भूमि मे ही किया जाता है, अत अध्ययनकर्ता द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन बहुधा स्वीकार्य होता है। अनुसंधानकर्ता को इस बात की सावधानी बरतनी चाहिए कि वह अपने अध्ययन मे वैज्ञानिक तरीको को प्रयोग मे लावे ताकि उस पर कोई यह आक्षेप न करे कि उसका प्रतिवेदन (Report) वैषयिकता (Objectivity) पर आधारित नही है। इस पर अनुसंधानकर्ता को सुनियोजित ढग से पहले ही विचार कर लेना चाहिए कि वह कौनसी प्रणाली अपनाएगा, किन साधनो को प्रयोग मे लाएगा व किस प्रकार अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अग्रसर होगा।

इस प्रकार व्यावहारिक अनुसंधान यह सुअवसर प्रदान करता है कि किस प्रकार सिद्धान्त की परीक्षा की जाय। वह स्थिति की भली-भाँति जाँच-पड़ताल एवं विश्लेषण कर समाधान प्रदान करता है। सैद्धान्तिक ज्ञान के आधार पर समाज शास्त्री उप-कल्पना का निर्माण कर सकता है जिससे उसकी भविष्यवाणी की सामर्थ्य बढ जाती

है। यदि वह सिद्धान्तो के बारे मे ही स्पष्ट नही है तो ऐसी स्थिति मे भविष्यवाणी करना खतरे से खाली न होगा। उदाहरणार्थ यदि वह विवाह विच्छेद, जातीय समुदाय, सामाजिक एकता जैसे शब्दो से ही भलीभाँति परिचित नही है तो वह यह बताने मे अयोग्य होगा कि विवाह विच्छेद क्यो होते है, इन्हे किस प्रकार रोका जा सकता है, इसमे किन बातो की आवश्यकता होती है जिसके फलस्वरूप लोग इसकी ओर प्रवृत्त ही न हो, आदि। अत विशुद्ध अनुसंधान व्याप्त सिद्धान्तो की परीक्षा कर, उनके सत्य-असत्य एव गुणो-अवगुणो का पता आसानी से लगा सकता है।

3 धारणा सम्बन्धी स्पष्टीकरण मे सहायक है (Helpful In Conceptual Clarification)—व्यावहारिक अनुसंधान के अन्तर्गत व्याप्त धारणाओ मे सुधार किए जाने की काफी गुंजाइश है। जब भौतिक शास्त्र और रसायन शास्त्र के सिद्धातो की भी नई व्याख्याएँ की जा रही है तथा उनको सुधारा जा रहा है तो सामाजिक विज्ञानो की विभिन्न धारणाओ को तो नवीन परिस्थितियो मे आसानी से चुनौती दी जा सकती हैं। आज के चन्द्र युग मे कोई बात असम्भव नही है। अत जैसे-जैसे नए प्रयोग सचालित किए जा रहे हैं नई तकनीकी प्रविधि को प्रयोग मे लाया जा रहा है, सामाजिक धारणाएँ और भी स्पष्ट होती जा रही है। अत हम यह कह सकते हैं कि व्यावहारिक अनुसधान द्वारा धारणाओ की सफलता की जाँच होती है। यदि वे सामाजिक परिस्थितियो के अनुकूल नही हैं तो समाजशास्त्री इस बात का पूरा प्रयत्न करेगा कि उनकी व्याख्या आधुनिक परिस्थितियो के अनुकूल की जाये। जब अनुसधान सुनियोजित होता है तो स्पष्टता की कमी को या तो कम किया जाता है या पूर्णत दूर किया जाता है।

व्यावहारिक अनुसधान द्वारा न केवल धारणाओ के स्पष्टीकरण मे सहायता मिलती है बल्कि उनके विकास मे भी सहायक है। जिन धारणाओ का सैद्धान्तिक ज्ञान मे अधिक प्रसार नही हुआ है, वहाँ व्यावहारिक अनुसधान उसके समुचित विकास मे सहायता देता है। लेकिन वह इस बात पर भी निर्भर करेगा कि उस धारणा का समाज की बदलती हुई परिस्थिति मे क्या महत्व है कभी-कभी तो ये धारणाएँ (Concepts) इतनी सुषुप्तावस्था मे रही कि अनुसधानकर्त्ता का भी ध्यान इनकी ओर नहीं गया लेकिन जैसे-जैसे सामाजिक आवश्यकताएँ बढ रही हैं, सामाजिक मूल्य बदल रहे है, सुषुप्त धारणाओ को भी पुन परिभाषित किया जा रहा है। अब उन्हें एक नए आकार मे मढा जा रहा है ताकि अनुसधानकर्त्ता अपने अनुसधान के सदर्भ मे इनका प्रयोग यदा-कदा कर सके। इस बात मे कोई इकार नही कर सकता कि व्यावहारिक अनुसधान अब अधिक सक्रिय होता जा रहा है, इस पर और अधिक उत्तरदायित्व बढ गया है। समाज के नये क्षितिज, इसका नया वातावरण हमे बाध्य कर रहे हैं कि हम खोज द्वारा उनके महत्व को समझे और उसकी प्रगति मे भरसक प्रयत्न करें।

4 विशुद्ध अनुसंधान पहले से विद्यमान सिद्धान्त को एकीकृत कर सकता है (Applied research may integrate previously existing theory)—किसी भी समस्या के समाधान के लिए हम एक ही विषय पर निर्भर नहीं कर सकते। यदि हमें बाँध (Dam) का निर्माण करना है तो इसमें अर्थशास्त्र, भौतिक, रसायन शास्त्र, भूगर्भ विज्ञान, वायुमंडल विज्ञान व भूगोल इत्यादि का ज्ञान भी परमावश्यक है। यद्यपि अन्त में एक ही उद्देश्य की प्राप्ति होती है, वह है बाँध का पूर्ण होना। इसी प्रकार सामाजिक विज्ञानों में भी एक विशेष समस्या के समाधान के लिए हमें अनेक विषयों, क्षेत्रों के विभिन्न सिद्धान्तों और व्यावहारिक उपयोगिताओं से बहुत कुछ उधार लेना पड़ता है। जबकि इन सबका एकीकरण (Integration) समाधान प्राप्ति के लिए किया जाता है। यह एकीकरण (Integration) व्यावहारिक अनुसंधान द्वारा ही सम्भव है। बाल अपराध की प्रवृत्ति जोर पकड़ती जा रही है। इसके लिए सीमित आय, अशिक्षा, अज्ञानता, कुसंगत, गरीबी आदि तत्व उत्तरदायी हैं। अब इनमें कुछ तत्व अधिक उत्तरदायी हैं तो कुछ कम। कुछ कारण तुरन्त प्रभाव डालने वाले होते हैं तो कुछ देरी से प्रभाव डालने वाले। अब हम यह जानने का प्रयत्न करते हैं कि किन तत्वों को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए तो इसका पता व्यावहारिक अनुसंधान द्वारा ही लग सकता है। जब हम अनुसंधान करेंगे, विभिन्न वर्गों के बच्चों से, उनके माता पिता सगे-सम्बन्धी, साथियों आदि से मिलेंगे तो हमें काफी जानकारी प्राप्त हो जायेगी। इस सामग्री के आधार पर हम सफलतापूर्वक भविष्यवाणी भी कर सकते हैं। अतः वास्तव में व्यावहारिक अनुसंधान विद्यमान सिद्धान्त का एकीकरण करता है। अन्त में, पी० वी० यंग के शब्दों में, "यथार्थ में इन दो प्रकारों के अनुसंधान के मध्य कठोर विभाजन रेखा नहीं खींची जा सकती। प्रत्येक अनुसंधान विकास और सत्यापन के लिए दूसरे पर निर्भर है।"[1]

सिद्धान्त और अनुसंधान के मध्य परस्पर क्रिया
(Interplay Between Theory and Research)

"सिद्धान्त अनुसंधान के सेनामुख का कार्य करता है।"[2] सिद्धांत और अनुसंधान का सामाजिक विज्ञानों में एक अनुपम और महत्वपूर्ण स्थान है। सिद्धान्त की अनुपस्थिति में हम सामाजिक मूल्यों या सामाजिक दर्शन का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते। सिद्धान्त, सामाजिक विषय की 'नैतिक आधारशिला' (Moral foundat on)

1 "In reality no sharp line of demarcation can be drawn between these two types of research Each is dependent upon the other for development and verification "
—*Pau'ine V Young* op cit, p 30

2 "Theory no longer brings up the rather, but rater seeks to act at the vanguard of research."
—*Stephen L Wasby* Political Science The Discipline and its Dimensions, p 219

है और अनुसंधान इस आधारशिला को मजबूत करने की प्रक्रिया है। जहाँ विषय सामग्री का अभाव है, वहाँ अनुसंधान अपने कार्य-संचालन में बाधा महसूस करता है। अत: अनुसंधानकर्त्ता के लिए यह आवश्यक है कि वह सिद्धान्त के महत्त्व को समझे। वह इस बात को भी न भूले कि वह जिस विषय पर अनुसंधान करने जा रहा है, उस विषय की जटिलताओं और गहराइयों को समझना आवश्यक है अन्यथा वह अपने पथ से भटकता हुआ अपने को अजीब स्थिति में पायेगा। यह भी सम्भव है कि वह सैद्धान्तिक स्पष्टता के अभाव में, अनुसंधान कार्य को ही स्थगित कर दे या पूर्ण निराशा के वातावरण में इस कार्य को छोड़ ही दे। यह बात समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र और राजनीति विज्ञान के साथ स्पष्ट रूप से लागू होती है। इस सम्बन्ध में डेविड ईस्टन (David Easton) का मत है, 'मैं यह तर्क प्रस्तुत करूँगा कि सिद्धान्त के कार्यभाग या भूमिका (Role) और इसकी सम्भावना की सचेत जानकारी के बिना, राजनीतिक अनुसंधान खंडयुक्त और विजातीय होगा और अपने राजनीति विज्ञान अभिधान के वचन को पूर्ण करने में असमर्थ रहेगा।''[1]

अत: यह स्पष्ट है कि अनुसंधान में सिद्धान्त अनिवार्यतः महत्त्वपूर्ण स्थान है और उसी प्रकार अनुसंधान का भी सिद्धांत में। अब हमें दोनों के बीच सम्भव परस्पर क्रिया देखनी है।

सिद्धान्त (Theory)

(1) सिद्धान्त, अनुसंधान का आधार है (Theory is the basis of Research)—इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि सिद्धांत, अनुसंधान को व्यापक सामग्री प्रदान करता है। सैद्धान्तिक ज्ञान के बिना अनुसंधानकर्त्ता शोध कार्य को प्रारम्भ ही नहीं कर सकता। यदि वह प्रयत्न करता भी है तो उसे निर्णयों पर पहुँचने में विकट कठिनाई होगी। उदाहरण के लिए, अनुसंधानकर्त्ता सामाजिक एकीकरण, समुदाय तथा सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में विभिन्न धारणाओं की जानकारी नहीं है तो वह मत में सिद्धान्त और परिणाम के बीच तालमेल नहीं बैठा सकता। गुडे एवं हॉट के शब्दों में ' सिद्धांत, अनुसंधान को ज्ञात सामग्री की जानकारी देकर इसे निदेशन देता है।'[2]

1 "Without a conscious understanding of the role of theory and its possibility, I shall argue, Political Research must remain fragmentary and heterogeneous, unable to fulfil the promise in its designation as a Political Science."
—*David Easton* The Political System : An Inquiry into the State of Political Science, p 5

2 " Theory gives direction to research by stating what is known
—*Goode & Hatt* op cit, p. 64.

फलत उसके अनुसंधान मे तर्कहीनता असहीनता और असामंजस्य प्रवेश कर जाएगा। स्टीफेन एल० वेसबी के शब्दो मे " सिद्धांत अपना बौद्धिक नेतृत्व पुन स्थापित कर सकता है।'[1]

(2) सिद्धान्त, अनुसंधान की अनुरूपता को परिभाषित करने मे सहायक है (Theory is helpful in defining the relevance of Research)—अनुसंधान का क्षेत्र इतना व्यापक है कि यदि इसके सम्पूर्ण पहलुओ पर बिना उसकी अनुरूपता (Relevance) के जानकारी शुरू कर दी जावे तो किसी निष्कर्ष पर पहुँचना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य होगा। सिद्धान्त इस ओर संकेत करता है कि अनुसंधान के सम्बन्ध मे कौनसी बातें उपयोगी हैं कौनसी गौण और कौनसी अनावश्यक है। इस प्रणाली से हम अनुसंधान के केन्द्र बिन्दु (Central point) की ओर अग्रसर होते हैं।

(3) सिद्धान्त न केवल अनुसंधान की तुलना को सुगम बनाता है बल्कि उन क्षेत्रों को विस्तारपूर्वक प्रकट करता है जिनमे अतिरिक्त या नवीन अनुसंधान की बहुत आवश्यकता है (Not only does theory facilitate comparison of research but it maps out the areas in which additional or new research is badly needed)—व्यवस्थित सिद्धान्त के बिना अनुसंधान क्षेत्र को निर्धारित नहीं किया जा सकता। एक सामाजिक अनुसंधानकर्ता के शब्दो मे, 'स्पष्ट और व्यवस्थित सिद्धान्त के बिना, अनुसंधान पंगु हो जायेगा।' ऐसी स्थिति मे जो कोई अनुसंधान किया जाएगा उसकी दशा 'प्रहार करना या चूकना (Hit or miss) जैसी हो जाएगी। इस संकट से बचाने के लिए सिद्धान्त हमें निश्चित दिग्दर्शन करता है।

(4) प्रयोगसिद्ध अनुसंधान में व्याप्त अनेक अपरीक्षित धारणाओं की जाँच करने मे सहायता देता है (It helps in investigating the unexamined concepts in empirical research)—आधुनिक सिद्धान्त उन धारणाओं की जाँच करने मे भी सहयोग देता है जिनका अभी तक परीक्षण नहीं हुआ है। सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन के नवीन क्षितिजो का पता लगाया गया है, विश्लेषण की नई इकाइयों को प्रस्तावित किया गया है एवं विकल्प समाधानो को खोजा गया है। ऐसी स्थिति मे सिद्धान्त अनुसंधान, उचित निर्देशन तथा जानकारी प्रदान करता है। यह इस बात को स्पष्ट करता है कि किन तत्त्वो का परिवर्तित मूल्यों (Changing values) मे अधिक प्रभाव और महत्त्व रहेगा।

(5) अनुसंधान के फैलाव को संकुचित करता है (It narrows the range of research)—यदि सिद्धांत अच्छी तरह से परिभाषित नहीं है, उसके क्षेत्र के

1 " That theory can begin to reassert its intellectual leadership "
—*Stephen L. Wasby* op cit, p 219.

बारे में अस्पष्टता है या उसके उप-बिन्दुओं (Sub-points) के बारे में अज्ञानता है तो अनुसंधान का संचालन कठिन हो जाता है। सिद्धान्त इस बात की जानकारी प्रदान करता है कि अनुसंधान का क्षेत्र क्या होगा, उसके क्या साधन व पद्धतियाँ (Means or Methods) होंगे, और क्या उद्देश्य होंगे। अनुसंधानकर्त्ता को इससे यह सुविधा हो जायेगी कि वह व्यर्थ का समय कल्पनाओं व सत्यताओं के संसार में नहीं गवायेगा, वह समय का सदुपयोग तथ्यों की जानकारी और प्रगति में करेगा। साथ ही वह सैद्धान्तिक पहलू को ध्यान में रखते हुए, अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होगा।

लेकिन फिर भी यदि वह सिद्धान्त के दायरे में ही अपने को सीमित रखकर अनुसंधान करता है तो उद्देश्य प्राप्ति में विफल भी हो सकता है, क्योंकि सामाजिक क्षेत्र में अनुसंधान पूर्णरूप से निश्चित नहीं होता। उदाहरणार्थ, एक समाजशास्त्री आत्महत्या और बलात्कार के पीछे सामाजिक कारण ढूँढेगा, वातावरण का अध्ययन करेगा। परन्तु फिर भी यह सम्भव है कि तुरन्त आत्महत्या के पीछे आधुनिक मेडिकल दवाइयाँ हों जिनका प्रयोग वह अधिक सोचे समझे बिना कर सकता है क्योंकि वे तुरन्त प्रभावशाली भी हैं। ऐसे सूक्ष्म यन्त्रों का आविष्कार हुआ है, जिनका प्रयोग वह आत्म हत्या के लिए करता है। कहने का अभिप्राय यह है कि कारण चाहे सामाजिक वातावरण ही क्यों न रहा हो लेकिन उसके साथ-साथ आधुनिक साधनों व यन्त्रों के महत्त्व को भी नगण्य दृष्टि से नहीं देखा जा सकता है। अत: अनुसंधानकर्त्ता सीमित क्षेत्र को ध्यान में रखने की अपेक्षा, अपना दृष्टिकोण व्यापक रखे।

(6) सिद्धान्त, प्राचीन और नवीन 'अनुसंधान की विश्वस्तता' में वृद्धि करता है (**It adds to the reliability of the results of both new and old research**)—डेविड ईस्टन के मतानुसार सिद्धान्त अनुसंधान की विश्वस्तता में वृद्धि करने में इसलिए सहायक है क्योंकि यह अनुरूपता पर आधारित है। इसमें आत्म-विरोधाभास नहीं है। भविष्यवाणी की अनुमति देने में जहाँ अनुसंधान संख्यात्मक और गुणात्मक ढंग से पर्याप्त रहा है, इसकी सफलता स्पष्टतः अनुरूप सिद्धान्त पर निर्भर करती है।

अनुसंधान (Research)

जिस प्रकार अनुसंधान कई बातों के कारण सिद्धान्त पर निर्भर करता है, उसी प्रकार सिद्धान्त भी अनुसंधान के मुख्य मसविदा पर निर्भर करता है। हर्बर्ट मैक्क्लास्की ने लिखा भी है "जबकि सिद्धान्त वैज्ञानिक उन्नति के लिए महत्त्वपूर्ण है, तथ्य प्रत्यक विज्ञान के निर्माण साँचे (Building blocks) हैं व सिद्धान्त की रचना और परीक्षण के लिए आवश्यक हैं।"[1]

1 "While theory, of course, is vital to scientific advancement, facts are the building blocks of every science, essential both to the construction and testing of theory." —*Herbert McClosky* Political Inquiry, p 11.

(1) अनुसंधान, सिद्धान्त का परीक्षण व विश्लेषण करके नए तथ्यों को जन्म देने में सहायक है (**Research is helpful in giving birth to new facts by examining and testing theory**)—अनुसंधान का प्रथम सोपान यही है कि वह सिद्धान्तो को जांच-पडताल, परीक्षा व विश्लेषण किए बिना उन्हे ज्यो का त्यों स्वीकार नहीं करता है। इसमे सिद्धान्त के सूक्ष्म से सूक्ष्म पहलू पर विचार किया जाता है तथा व्याप्त सिद्धान्त के बारे मे प्रयोग किए जाते हैं। इन विश्लेषणो और प्रयोगो के फलस्वरूप सिद्धान्त के प्राचीन तथ्यो का पता चलता है और इस प्रकार नवीन तथ्य प्रकाश में आते हैं।

(2) अनुसंधान सिद्धान्त के स्पष्टीकरण व पुन. परिभाषित करने में सहायक है (**Research is helpful in the clarification and re-definition of theory**)—जब नए तथ्य प्रकाश मे आते हैं तो सिद्धान्त को पुन. परिभाषित किया जाता है क्योकि वे तथ्य विस्तार से बतलाते हैं कि सिद्धान्त सामान्य शब्दों द्वारा क्या प्रकट करते हैं। वे सिद्धान्त को आगे और स्पष्ट करते हैं क्योकि वे इसकी धारणाओ पर आगे प्रकाश डालते हैं। अन्त मे, ये तथ्य नवीन सैद्धान्तिक समस्या खडी कर सकते हैं, ऐसी स्थिति मे नवीन परिभाषा स्वय सिद्धान्त से और अधिक स्पष्ट व व्यापक हो जाती है। उदाहरण के लिए, गुडे और हाट्ट लिखते हैं कि जब व्यक्ति देहाती या ग्रामीण वातावरण से शहरी वातावरण मे प्रवेश करता है तो उसके व्यक्तित्व मे परिवर्तन की आशा की जाती है। हम यह भी आशा करते हैं कि उसकी आदतो व स्वभाव सम्बन्धी ढांचे मे भी परिवर्तन आयेगा। इन विचारो के परिणामस्वरूप, हम यह भविष्यवाणी करते हैं कि जो नीग्रो बड़े नगरों मे बस जाते हैं, उनकी जन्म-दर गिर जाती है। वास्तव मे शहरी नीग्रो मे सन्तान उत्पादन की क्षमता देहाती नीग्रो की क्षमता की अपेक्षा काफी कम हो जाती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विद्यमान सिद्धान्तों का परीक्षाकाल ही उसे पुन परिभाषित करने के समान है।[1]

(3) अनुसंधान विद्यमान सिद्धान्त को अस्वीकृत कर उसे पुनः निर्मित करता है (**Research while rejecting the existing theory, reformulates it**)—अनुसंधानकर्ता के पास जो आधुनिकतम साधन हैं, उनके प्रयोग द्वारा वह विद्यमान सिद्धान्त को तर्क एव तथ्यो के आधार पर अस्वीकृत कर, उसे पुनर्निमित कर सकता है। क्योकि अनुसंधान सतत् प्रवाहित प्रक्रिया (Continuing activity) है, अतः अस्वीकृति व पुनर्निर्माण साथ-साथ चलते हैं। जिन धारणाओ को स्वीकार किया जा चुका था वे अनुसंधान के उपरान्त अस्पष्ट और धोखा देने वाली पायी गई हैं। इसका कारण यह है कि अनुसंधान अधिक प्रचुर (Rich), अधिक स्पष्ट और अधिक

1. "Indeed, it is one of the major experiences of researchers that actually testing any existing theory is likely to redefine it."
—*Goode and Hatt*, op cit., p. 16.

निश्चित व शुद्ध है। अत अनुसंधान के द्वारा नई उपकल्पनाओ का निर्माण होता है जिनका आधार अधिक वैज्ञानिक और तार्किक है।

(4) व्यावहारिक अनुसंधान पहले से विद्यमान सिद्धान्त का एकीकरण करता है (Applied research integrates the previously existing theory)— अनुसंधानकर्त्ता जब किसी एक विशेष समस्या पर अपना ध्यान केन्द्रित कर अनुसंधान कार्य करता है तो उसे पता चलता है कि एक ज्ञान–क्षेत्र की समस्या, अन्य ज्ञान-क्षेत्र की समस्याओ से सम्बन्धित है। यदि वह बाल अपराध के कारणो को सामाजिक वातावरण मे ढूंढ रहा है तो उसके चिंतन मे शोध मे, अर्थशास्त्र, शिक्षा-शास्त्र तथा नीतिशास्त्र की बातें भी सम्मिलित हो जाती हैं। इन विभिन्न विज्ञानो की बातें समाज की समस्याओ—जैसे बाल अपराध से भिन्न प्रतीत होती हैं, परन्तु वास्तव मे इन विज्ञानो के विभिन्न तत्त्व एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं। अनुसंधानकर्त्ता इन सबको एकीकृत करने का प्रयास करता है। इसी प्रकार के एकीकरण (Integration) के लिए औद्योगिक अनुसंधान मे प्रयत्न किया जा सकता है। जो तत्त्व अधिक स्पष्ट और शुद्ध रूप मे प्रभाव डालने की सामर्थ्य की भविष्यवाणी कर सकते हो, उन्हे अधिक महत्त्व दिया जाता है। इस प्रकार व्यावहारिक अनुसंधान व्याप्त सिद्धान्त के एकीकरण मे लाभदायक सिद्ध हो सकता है।

इस सम्पूर्ण विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि सिद्धान्त और अनुसंधान को पृथक् नही किया जा सकता। दोनो एक दूसरे पर निर्भर हैं। समय-समय पर 'उदारवादी दृष्टिकोण' दोनो एक दूसरे से ग्रहण करते हैं और एक दूसरे को देते हैं। अत इन दोनो मे यह परस्पर क्रिया स्थायी व निरन्तर है।

अन्तर्अनुशासनीय अनुसंधान मे कार्य-पद्धति की समस्याएं
(Methodology Problems in Inter-Disciplinary Research)

अन्तर्अनुशासनीय अनुसंधान के अन्तर्गत विविध उपागमो तथा अनुशासनीय दृष्टिकोणो से समस्या का 'समुचित और सर्वांगीण अध्ययन करना सम्भव होता है। इस अनुसंधान द्वारा व्यक्तिगत पक्षपातो और विशेष रूप से एकपक्षीय स्पष्टीकरणो को रोका जा सकता है।[1] जब अध्ययन-समस्या का सम्बन्ध अनेक विषयो और अनुशासनो से होता है, तब उनकी पद्धतियों को समस्या विशेष पर लागू कर एक समुचित हल निकाला जाता है।

अधिकतर सामाजिक अनुसंधान मे विषय सामग्री व पद्धतियाँ एव विषय से सम्बन्धित समस्याएँ स्वय की होती हैं ताकि वे पद्धतियाँ अधिक लाभप्रद सिद्ध हो सकें। परन्तु समस्या के विभिन्न पहलुओ का समुचित एव सुव्यवस्थित विश्लेषण करने के लिए, अन्य अनुशासनों की पद्धतियो का समावेश किया जाता है। इससे यह

1. "It may serve as a partial check against single explanations "—'Social Sciences in Historical study', quoted by H C Upreti in 'Values and Limitations of Team Research in India,' p 158

लाभ है कि अन्य अनुशासनों की अच्छी अच्छी बातों तथा उपयोगी सामग्री से समस्या विशेष का क्षेत्र व्यापक हो जाता है और उसका समाधान भी स्पष्ट प्रतीत होता है।

प्रत्येक विज्ञान की अध्ययन विधि और दृष्टिकोण में अन्तर होता है। उदाहरणार्थ राजनीति शास्त्र का सम्बन्ध राज्य सरकार, अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं आदि से है तो नीति शास्त्र का सम्बन्ध मानवीय आचरण के अच्छे बुरे, उचित-अनुचित आदि मापदण्डों से है। मनोविज्ञान मनुष्य के मन की चेतन अचेतन क्रियाओं और प्रक्रियाओं का एक वैज्ञानिक अध्ययन है तो समाजशास्त्र मनुष्य का अध्ययन एक सामाजिक प्राणी के रूप में करता है जबकि अर्थशास्त्र मनुष्य के भौतिक जीवन से सम्बन्धित है। यह उत्पादन वितरण आदि वास्तविक आर्थिक क्रियाकलापों का अध्ययन करता है। अतः अधिकांश सामाजिक विज्ञानों के अध्ययन का केन्द्र मनुष्य है। इनके दृष्टिकोण भिन्न हैं तथा वे उसके अनेक पहलुओं का अध्ययन करते हैं।

प्रत्येक विज्ञान की अध्ययन विधियाँ अलग अलग होती हैं। उनका अपना इतिहास होता है अपनी स्वयं की मौलिक धारणाएँ, स्वयं की शब्दावली और स्वयं का अनुशासन होता है। जब हम किसी अनुसंधान में विभिन्न विज्ञानों के सिद्धान्तों और पद्धतियों का प्रयोग करते हैं तो उसे 'अन्तर्नुशासन प्रणाली' कहा जाता है।

अन्तर्नुशासन अनुसंधान में विभिन्न विज्ञानों के विशेषज्ञ अपनी अपनी सेवाएँ इस प्रकार प्रदान करते हैं ताकि उनकी विधियों में एकीकरण स्थापित हो सके। बिना समन्वय के हम उसे सहकारी पद्धति के नाम से नहीं पुकार सकते। ऑरकेस्ट्रा में अलग-अलग वाद्य यंत्र काम करते हुए भी एकता स्थापित करते हैं जिनके द्वारा संगीत की रचना होती है। इसी प्रकार अन्तर्नुशासनीय अनुसंधान में मनोवैज्ञानिक, अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री, राजनीति विज्ञानवेत्ता भूगोल शास्त्री आदि सभी अपने-अपने विज्ञान के अनुशासन का पालन करते हुए समन्वय स्थापित करने का प्रयास करते हैं।

अन्तर्नुशासनीय पद्धति की आवश्यकता
(Necessity of Inter Disciplinary Method)

(1) कोई भी विज्ञान अपने आप में पूर्ण नहीं है और न ही इस बात का दावा कर सकता है कि सभी समस्याओं के समाधान का नुस्खा उसके पास है और केवल वही एकमात्र समाधान प्रस्तुत कर सकता है। केलॉग का मत है—' अनेक क्षेत्रों में वैज्ञानिक भी एक सामान्य व्यक्ति के समान है यदि वह उसमें प्रयुक्त सामान्य वैज्ञानिक विधि के गूढ़ अर्थ को जाने बिना केवल अपने निजी क्षेत्र की वैज्ञानिक प्रक्रिया का उपयोग करता है तो वह इस क्षेत्र में किसी भी अन्य व्यक्ति के समान ही घोर परम्परावादी है। कहने का तात्पर्य यह है कि अन्तर्नुशासनीय पद्धति द्वारा अन्य विज्ञानों की सहायता लेना आवश्यक एवं उपयोगी है।

(2) समस्त विज्ञानों का केन्द्र मनुष्य ही है। यहाँ तक कि रसायन विज्ञान और भौतिक विज्ञान का भी सम्बन्ध मानव और समाज से है। नए-नए प्रयोग तथा

अनुसंधान किए जा रहे है ताकि मानव-कल्याण के लिए मार्ग प्रशस्त हो सके। इसी प्रकार सामाजिक विषयो का वैज्ञानिक पहलू है। आर्थिक क्षेत्र मे प्रगति केवल आर्थिक साधनों पर ही निर्भर नही करती है। आर्थिक प्रगति मे समाज मे रहने वाले प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य है कि वह श्रम और ईमानदारी से राज्य की विशाल योजनाओ को सफल बनाने मे सहयोग दे। आर्थिक उन्नति मे एक वैज्ञानिक का बहुत महत्वपूर्ण योगदान होता है। वह नवीन साधनो के आविष्कार द्वारा, आर्थिक विकास मे उत्पन्न बाधाओ को दूर कर सकता है। एक समाजशास्त्री उन विरोधी सामाजिक तत्वो के कारणो को दूर कर आर्थिक समृद्धि मे योगदान दे सकता है। अत. एक समस्या को सुलझाने के लिए अनेक विज्ञानो के सहयोग की आवश्यकता रहती है।

(3) सामाजिक विज्ञानो मे विभिन्न घटनाएँ एक दूसरे को प्रभावित करती हैं, अत. इन्हे अलग अलग कर अध्ययन करना असम्भव है। भौतिक शास्त्र और रसायन शास्त्र मे तो कुछ सीमा तक विशिष्टीकरण सम्भव भी हो सकता है, परन्तु सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक तथा ऐतिहासिक घटनाओ मे नही। सामाजिक परिवर्तन एक संयुक्त घटना है जिसमे करीब-करीब सभी व्यक्ति प्रभाव डालते हैं अत. इन कारको को अलग-अलग करके अध्ययन करना असम्भव है।

(4) अन्तर्अनुशासनीय पद्धति अध्ययन मे वस्तुपरकता (Objectivity) लाने के लिए आवश्यक है। इस पद्धति द्वारा समस्या का अध्ययन विभिन्न दृष्टिकोणों से हो जाता है जिससे त्रुटि उत्पन्न होने की सम्भावना नही रहती। इस प्रकार तुलनात्मक अध्ययन से वांछित फल प्राप्त किया जा सकता है। पी० वी० यग के मतानुसार "अन्तर्अनुशासनीय अनुसधान की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह वर्तमान जीवन मे जटिलतापूर्वक बने हुए मनोवैज्ञानिक, आर्थिक कारको के अध्ययन तथा विवेचन को सहज बना देता है।"

अन्तर्अनुशासनीय अनुसधान की आवश्यकता और महत्ता से इकार नही किया जा सकता, परन्तु इसकी कार्यपद्धति (Methodology) सम्बन्धी समस्या हमारे सम्मुख हैं। इसमे मुख्यत तीन प्रकार की समस्याएँ सम्मिलित हैं—

(i) प्रत्येक विषय या विज्ञान के अनुसधानकर्त्ता का व्यक्तित्व एव उद्देश्य भिन्न होते हैं अत उनमे समन्वय की समस्या उत्पन्न होती है। किसी विशेष समस्या से सम्बन्धित विभिन्न विज्ञान हैं, अत एक भौतिकशास्त्री का दृष्टिकोण तथा उद्देश्य, एक समाजविज्ञानवेत्ता से भिन्न होता है। भौतिकशास्त्री या गणितज्ञ प्रत्येक समस्या को तर्क के आधार पर सुलझाने का प्रयत्न करेगा, उसके लिए परीक्षण और प्रयोग करेगा जबकि सामाजिक विज्ञानो मे कुछ ऐसे तथ्य होते हैं जो तर्क के आधार पर खरे न उतरते हुए भी व्यावहारिक दृष्टिकोण से उचित एव उपयोगी सिद्ध होते हैं। अत समाजविज्ञानवेत्ता, भौतिकशास्त्री और गणितज्ञ के दृष्टिकोणों में और उनके द्वारा अपनाई गई पद्धतियो मे समझौता होना कठिन होता है।

(ii) दूसरी समस्या प्रत्ययवादीकरण की (Problems of conceptualization) है। विश्लेषणात्मक चिंतन के विचारों या यंत्रों (Tools) को संगठित करना, विभिन्न विषयों के दृष्टिकोणों का उचित समावेश करना सुगम कार्य नहीं होता है। चूँकि न केवल "अनुसंधानकर्त्ताओं में अपितु विभिन्न विज्ञानों में भी ऊँच-नीच के अवांछनीय स्तरण क्रम देखने में आते हैं।" अतः विश्लेषणात्मक अध्ययन में विशेषज्ञ विभिन्न विचारों को संगठित करना बड़ा मुश्किल है। प्रो० डी० पी० मुकर्जी का कथन है—'सभी सामाजिक अनुसंधान समान स्तर के नहीं हैं, विशेषज्ञों को दल में संगठित होकर कार्य करने की आदत नहीं है, और प्रत्येक अनुशासन एक सम्प्रदाय के अन्तर्गत एक विभाग के इर्द गिर्द अपने स्वार्थों की रचना कर सकता है।"

(iii) तीसरी समस्या तथ्य सामग्री (Facts) के संकलन, संगठन व प्रस्तुतीकरण की प्रक्रिया सम्बन्धी है। अन्तर्अनुशासनीय अनुसंधान में विभिन्न विज्ञानों द्वारा तथ्य सामग्री को संकलित करने, उसको प्रस्तुत करने तथा उसका प्रतिवेदन तैयार करने की प्रक्रिया अलग अलग है। उदाहरण के लिए किसी एक समस्या के समाधान के लिए, उस क्षेत्र में सर्वप्रथम माना कि एक समाजशास्त्री जाता है, वह प्रश्नावली, साक्षात्कार द्वारा तथ्यों को एकत्रित करता है, उसके बाद उस स्वयं के व्यक्तिगत दृष्टिकोण का प्रभाव उस अन्तिम प्रतिवेदन पर पड़ता है। समाजशास्त्री के जाने के बाद, वहाँ अर्थशास्त्री जायेगा, वह अपनी प्रक्रिया अपनाएगा चाहे उसे वही प्रक्रिया के अपनाने के लिए सुझाव दिया जावे, जो एक समाजशास्त्री ने अपनाई थी। वह कभी-कभी ऐसा चाहते हुए भी नहीं कर सकता क्योंकि उसकी समस्या में आर्थिक पहलू प्रधान होते हैं। उसका ध्यान आर्थिक पहलू पर ही केन्द्रित होता है, अतः वह तथ्य सामग्री का संकलन करने के लिए, परिस्थिति के अनुसार प्रक्रिया को अपनाएगा। उसके प्रतिवेदन में ऐसी बातें भी आ सकती हैं जिनको प्रमुख अन्वेषक (Principal Investigator) पसंद भी न करे। अर्थशास्त्री के बाद, एक मनोवैज्ञानिक उस स्थल पर जाता है। वह वहाँ के लोगों के लिए अजीब-सा व्यक्ति प्रतीत हो सकता है क्योंकि एक मनोवैज्ञानिक की प्रश्न पूछने, उत्तर देने तथा व्यवहार प्रक्रिया बिलकुल ही भिन्न होती है। उसके इस विलक्षण व्यवहार को देखकर, समस्या में भाग लेने वाले कर्ता, सही जानकारी देने में संकोच या भय भी प्रकट कर सकते हैं। जब मनोवैज्ञानिक प्रतिवेदन तैयार करेगा तो उसमें सत्यता के समावेश की सम्भावना कम रहती है।

जब तीनों की तथ्य सामग्री सामने आएगी, तब यह समस्या खड़ी होना स्वाभाविक ही है कि किस प्रकार उनमें समन्वय स्थापित किया जावे। कुछ बातें एक दूसरे से विरोधाभासी प्रतीत होंगी कुछ बातें कोरी कल्पना लगेंगी, अन्त में उन्हें एकीकृत करने में बाधा महसूस होगी। हाँ, मान लिया जाये कि उनमें समन्वय भी होगा, परन्तु एक विकट समस्या और खड़ी हो सकती है जिसका समाधान अवश्य ढूँढना करीब करीब असम्भव सा है। वह यह कि कभी-कभी विभिन्न विशेषज्ञों में से एक की सामग्री को अनुसंधान में अधिक स्थान मिलता है तो दूसरे का मात्र जिक्र

ही कर दिया जाता है। तब सघर्ष जैसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है। जिस विशेषज्ञ के विचारो को कम स्थान मिला है, वह यह दोषारोपण करने का प्रयत्न करेगा कि उसका कार्य मानो महत्वहीन हो चाहे वास्तव मे उसके कार्य की उपयोगिता स्थिति सदर्भ मे हो ही नही। अत. परस्पर मनमुटाव, घृणा एवं राग-द्वेष की प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हो जाती है जो अनुसधान के लिए अवाछनीय है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अन्तर्अनुशासनीय अनुसधान में कार्यपद्धति की जो समस्याएँ हैं, उनका समन्वय करना बडा मुश्किल कार्य है। कार्यपद्धति की इन समस्याओ को दूर करने के लिए निम्न सुझाव दिए जाते हैं। सी० राइट मिल्स के अनुसार, "हमे शैक्षणिक विभागो के निरकुश विशेषीकरण को दूर करना होगा और अपने कार्य को प्रसग तथा उससे भी अधिक समस्या के अनुसार विशेषीकृत करना होगा।"[1]

(1) अन्तर्अनुशासनीय अनुसधान मे अनुसधानकर्त्ताओं को अन्य विज्ञानो की पद्धतियो को ग्रहण करने की रुचि व इच्छा होनी चाहिए ताकि समन्वय की समस्या हल हो सके।

(2) कार्यपद्धति की समस्याओ को दूर करने के लिए अनुशासनयुक्त और सम्मिलित प्रयास की आवश्यकता है।

(3) विभिन्न विज्ञानो के अनुसधानकर्त्ताओ को एक दूसरे के प्रति समझदारी तथा सहानुभूति का रुख अपनाना चाहिए ताकि वे अपनी अपनी कार्यपद्धतियो को ही अच्छा बताकर दूसरे की उपेक्षा करने मे तल्लीन न हो।

(4) विशेषज्ञो को विशालहृदयता और उदारता का परिचय देना चाहिए जिससे वे समस्या का समाधान मे अधिक रचनात्मक योगदान दे सकें। उनके उद्देश्य सकीर्ण नही होने चाहिएँ और न ही उन्हें क्षेत्रीय समस्याओ के समाधान के लिए अपनी पद्धतियो को सुरक्षित (Reserve) रखना चाहिए, नही तो वे राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओ के समाधान मे कुछ भी योगदान नही दे सकेंगे।

(5) उनकी विभिन्न समस्याओ की कार्यपद्धति मे समन्वय तथा एकीकरण की क्षमता होनी चाहिए। अन्त मे निष्कर्षतः यही कहा जा सकता है कि अन्तर्अनुशासनीय अनुसधान की कार्यपद्धति की समस्याओ से विचलित या भयभीत होने की आवश्यकता नही है। इनको चुनौती मानकर, सगठित होकर इनका सामना करना चाहिए तभी अनुसधान पद्धति उपयोगी हो सकती है।

दल-अनुसधान
(Team-Research)

अधिकांशत सामाजिक अनुसधान स्वय अनुसधानकर्त्ताओ द्वारा ही सम्पन्न किए जाते हैं। ऐसा करने से सबसे बडा लाभ यह है कि अध्ययनकर्त्ता स्वय अधिक

1. "We should avoid the arbitrary specialization of academic departments. We should specialize our work according to topic and above all according to the problem."

रुचि से कार्य करता है। वह अपने विषय से सम्बन्धित समस्या को दूसरों की अपेक्षा अधिक भली-भाँति जानता है। उसका समस्या के प्रति लगाव-सा रहता है। इस लगाव के फलस्वरूप वह पूर्ण निष्ठा और लगन से कार्य करता है। वह अपना ध्यान समस्या पर पूर्णरूपेण केन्द्रित कर सकता है। समस्या से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित करने, उनका विश्लेषण करने इत्यादि में उसको बहुत आनन्द आता है। लेकिन फिर भी कुछ सीमाएँ अवश्य हैं। वह मानवीय सीमाओं को नहीं लाँघ सकता। उससे यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह अनुसंधान से सम्बन्धित अन्य विषयों की भी पूर्ण जानकारी रखे। वह दूसरों के साथ मिलजुल कर अपनी समस्या को और भी आसान बना सकता है तथा अन्य विषयों के विशेषज्ञों के ज्ञान का लाभ उठा सकता है। अत जिन अनुसंधानों में स्वयं के अतिरिक्त अनेक अध्ययनकर्ताओं को सम्मिलित किया जाता है, उसे 'दल-अनुसंधान' कहा जाता है।

दल-अनुसंधान दो प्रकार के होते हैं—

(i) *एकल-अनुशासनीय दल अनुसंधान (Uni-disciplinary team research),*

(ii) अन्तर्अनुशासनीय दल-अनुसंधान (Inter-disciplinary team research)

एकल अनुशासनीय दल या समूह अनुसंधान में केवल एक ही अनुशासन में प्रशिक्षित एवं अनुभवी अध्ययनकर्त्ताओं का एक दल तैयार कर लिया जाता है। दल तैयार होने के पश्चात् वह दल दी हुई समस्या का अध्ययन करता है। ऐसे अध्ययन तभी कारगर या सार्थक सिद्ध हो सकते हैं, जब अध्ययन की समस्या एक ही अनुसंधान से सम्बद्ध हो किन्तु यदि समस्या की प्रकृति ऐसी है कि उसके कारक, *कारण या प्रभाव दूसरे अनुशासनों में विद्यमान हैं तो इस स्थिति में केवल एक ही* अनुशासन के अध्ययनकर्त्ताओं का समूह तैयार करना न्यायोचित एवं लाभप्रद नहीं है, अत अन्तर्अनुशासनीय दल अनुसंधान पर बल दिया जाता है।

अन्तर्अनुशासनीय दल-अनुसंधान
(Inter-Disciplinary Team-Research)

चूँकि अन्तर्अनुशासनीय दल अनुसंधान के अन्तर्गत समस्या अनेक अनुशासनों से सम्बन्धित होती है, अत विभिन्न अनुशासनों से अनुसंधानकर्त्ताओं का चयन किया जाता है। ऐसे चयनित अनुसंधानकर्त्ताओं के अध्ययन दल को 'बहु-अनुशासनीय दल' कहा जाता है।

अन्तर्अनुशासनीय दल अनुसंधान की परिभाषा देते हुए लुजस्की मार्गरेट बेरन (Luszki Margaret Baron) लिखते हैं : "एक अन्तर्अनुशासनीय दल ऐसे लोगों का समूह होता है जो विभिन्न यन्त्रों व अवधारणा के प्रयोग में प्रशिक्षित होते हैं, जिनमें से प्रत्येक सदस्य अपने ही यन्त्रों का प्रयोग करता है और साथ ही दूसरे

सदस्यो द्वारा प्रस्तुत सीमाओ के सदर्भ मे अन्तर्सचार व अभिधारणाओ की पुनरीक्षा करता रहता है और अन्त में इसे उत्पादन के लिए प्राय. सामूहिक उत्तरदायित्व अनुभव करता है।"[1]

अन्तर्अनुशासनीय दल अनुसंधान की विशेषताएँ
(Characteristics of Inter-disciplinary Team-Research)

1. इसके अन्तर्गत समस्या विभिन्न अनुशासनो या विषयो से सम्बन्धित होती है।
2. इसमे अध्ययनकर्त्ता अपने-अपने अनुशासन के विशेषज्ञ होते हैं।
3. ऐसे अनुसधान कार्य मे विभिन्न यत्रो एव प्रविधियो को प्रयोग मे लाया जाता है।
4. अनुसधान कार्य को गतिशीलता प्रदान करने के लिए अध्ययनकर्त्ता सामूहिक उत्तरदायित्व को निभाने का प्रयत्न करता है।
5. अन्तर्अनुशासनीय दल अनुसधान द्वारा निष्कर्ष की सार्थकता सिद्ध होती है।
6. ऐसे अनुसधान के अन्तर्गत अनुसधान कार्य बोझ नही बल्कि रोचक और सरल होता है।
7. यह सहयोगी प्रवृत्ति को प्रोत्साहन देता है जो अनुसधान की सफलता के लिए अनिवार्य है।

महत्व (Importance)

आधुनिक विशेषीकरण के युग में इसका महत्त्व निरन्तर बढता जा रहा है। विशुद्धता, स्पष्टता और परिणामो मे निष्पक्षता लाने के लिए इसके महत्त्व पर बल दिया जा रहा है। इसके महत्त्व को लोकप्रिय बनाने के लिए सुविख्यात समाजशास्त्रियो जी० डी० एच० कोल, स्प्रोट और मिल्स आदि ने अपनी रचनाओ मे पर्याप्त प्रकाश डाला है।

इस पद्धति द्वारा समस्या का अध्ययन सर्वांगीण रूप से किया जा सकता है। जब समस्या के विभिन्न पहलुओ का अध्ययन विशेषज्ञो के निर्देशन मे किया जाता है तो इससे प्राप्त सामग्री बड़ी विश्वसनीय और उपयोगी होती है। इसके अन्तर्गत एकपक्षीय निर्णय लिए जाने की बहुत कम सम्भावना रहती है। अनुसधान समस्या पर अनेक व्यक्तियो के Specialized ज्ञान एव अनुभव का लाभ उठाने के लिए इस पद्धति का उपयोग अवश्य किया जाना चाहिए।[2]

जहाँ तक परिणामो का प्रश्न है केवल वैज्ञानिक प्रविधियो के समन्वय करने से ही वे प्राप्त नही होते है बल्कि विभिन्न वैज्ञानिक अनुशासनो के ज्ञान को प्रयोग में

1. *Luszki Margaret Baron*: Inter-disciplinary Team Research Methods and Problems, p 10.
2. *Luszki*: Inter-disciplinary Team Research Methods and Problems, p. 11.

रणे से होते हैं। हम सभी औद्योगिक, राजनीतिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक मनोवृत्तियों के युग में रह रहे हैं और इन सबका प्रभाव हमारे सामाजिक अनुसंधानों पर पड़ता है, अत हम इन्हें पूर्णरूपेण पृथक् नहीं कर सकते। 'सामाजिक विज्ञान अनुसंधान' जैसी परिषद् का गठन भी इसीलिए किया जा रहा है ताकि सामाजिक विज्ञानों को एक दूसरे से समन्वित व सम्बन्धित रखा जा सके। इसके अतिरिक्त 'अति विशेषीकरण' से बचने के लिए भी सामाजिक अनुसंधानों में उपर्युक्त पद्धति का महत्त्व बढ़ जाता है। अन्तर्अनुशासनीय दल अनुसंधान में प्रत्येक अध्ययनकर्ता एक नवीन दृष्टिकोण प्रदान करता है। यदि हमारा अनुसंधान Stereotyped रह जाता है तो हम इस अनुसंधान को प्रगतिशील नहीं कह सकते हैं।[1]

द्वितीय महायुद्ध प्रारम्भ होने से पूर्व गुस्ती (Gusti) ने विशेषज्ञों के दलों को रूमानिया में ग्रामीण जीवन का विस्तृत और गहन अध्ययन करने के लिए भेजा। इन दलों में सामाजिक भूगोलवेत्ता, अर्थशास्त्री, इतिहासकार व सामाजिक मानवशास्त्री सम्मिलित थे। सर्वप्रथम इनको निरीक्षण और तथ्यों को एकत्र करने का सामान्य प्रशिक्षण दिया गया। बाद में इन्हीं विशेषज्ञों ने अपने-अपने क्षेत्रों में प्राप्त अनुभव एवं ज्ञान का प्रयोग इस अध्ययन समस्या पर किया।

अन्तर्अनुशासनीय दल अनुसंधान के अन्तर्गत, अध्ययनकर्त्ता स्वतन्त्र और खुली आलोचना करते हैं। यदि अकेला व्यक्ति ही अनुसंधान कार्य संचालित करता है तो उसका ज्ञान, अवलोकन व Scrutiny अपने तक ही सीमित रहते हैं। बिना Scrutiny और स्वस्थ आलोचना के सामाजिक वैज्ञानिक आत्मविश्वास के साथ नहीं कह सकता कि उसका कार्य निष्पक्ष और श्रेष्ठ कोटि का है।

केलॉग ने भी इस तथ्य पर बल दिया है कि एक वैज्ञानिक भी कई क्षेत्रों में एक सामान्य व्यक्ति की तरह होता है। इसके अनुसंधान पर भी सामाजिक और राजनीतिक दबावों का प्रभाव पड़ता है। वह भी अपने को व्यक्तिगत अभिनतियों से मुक्त नहीं कर सकता।[2]

जहाँ तक भारत जैसे विकासशील देश का प्रश्न है, सामाजिक विज्ञानों में उच्च कोटि के अन्तर्अनुशासनीय दल अनुसंधान बहुत कम हुए हैं। हमारे यहाँ इसे वास्तविक प्रोत्साहन नहीं मिला है। जो बड़े-बड़े समाज वैज्ञानिक हैं वे भी इसमें पर्याप्त रुचि नहीं ले रहे हैं। इस कारण हालांकि इसके विकास और प्रगति में बाधा दृष्टिगोचर होती है फिर भी जो प्रयत्न किए जा रहे हैं वे इस ओर इंगित करते हैं कि भविष्य में ऐसे अनुसंधानों को महत्त्व अवश्य मिलेगा।

1 *P. V. Young* - Scientific Social Surveys and Research, p 119
2 Ibid, op cit, p 120

अन्तर्अनुशासनीय दल-अनुसंधान की समस्याएं
(Problems of Inter-disciplinary Team Research)

अन्तर्अनुशासनीय दल-अनुसंधान को संचालित करने में अनेक व्यावहारिक कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं। हालांकि इसके महत्त्व से कोई इन्कार नहीं कर सकता, परन्तु जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है, उनसे भी इन्कार नहीं किया जा सकता। इसकी प्रमुख समस्याएं निम्नांकित हैं—

1 **अध्ययनकर्त्ताओं का चयन**—विभिन्न अनुशासनों से योग्य, कुशल एवं अभिरुचि रखने वाले अध्ययनकर्त्ताओं का चयन एक कठिन समस्या है। इसमें चयन-कर्त्ता व्यक्तिगत अभिनति से ऊपर नहीं उठ सकता। वह अपने विषय से सम्बन्धित अध्ययनकर्त्ताओं को अधिकतम संख्या में सम्मिलित करने का प्रयत्न करेगा। अतः योग्य एवं अभिरुचि रखने वाले कुशल कार्यकर्त्ताओं को दल या समूह में स्थान नहीं मिल पाता है। ऐसी स्थिति में अनुसंधान के परिणाम सन्तोषजनक नहीं निकल सकते।

2 **अध्ययन दल के मुखिया के चयन की समस्या**—जब अध्ययनकर्त्ताओं का चयन हो जाता है तो दूसरी समस्या अध्ययन दल के मुखिया या निदेशक के चयन की आती है। इसके चयन में प्रशासनिक शक्ति का दुरुपयोग किया जाता है। अक्सर ऐसे व्यक्ति का चयन होता है जिसके पीछे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से राजनीतिक सत्ता हो या उसके सम्बन्धी उच्च पदों पर आसीन हों या वह किसी तरीके से manipulation कर सकता हो। आजकल यह स्थिति देश व विदेश में बढ़ती जा रही है। हमारे यहाँ अनुपात अधिक हो, परन्तु विदेशों में जिसकी सिफारिश मजबूत हो, उन्हें ऐसे पदों पर नियुक्त किया जाता है।

3 **नौकरशाही का अनावश्यक हस्तक्षेप**—सर्वोच्च अधिकारी शक्ति से मदांध होकर अपने निर्णयों को थोपते हैं, उन्हें दबाने की कोशिश करते हैं। यदि सही बिन्दु पर भी अध्ययन दल का सदस्य अपने दृष्टिकोण को प्रस्तुत करता है तो अधिकारी उसे अपना अपमान समझता है। उसे अध्ययन-दल से निकाल देने की धमकियाँ दी जाती हैं व उसके सर्विस रिकार्ड को खराब कर दिया जाता है। ऐसे वातावरण में मनमुटाव, ईर्ष्या, द्वेष और प्रतिशोध की भावना को प्रोत्साहन मिलना स्वाभाविक है। अध्ययनकर्ता बिना अभिरुचि के कार्य करता है, उसमें विभिन्न प्रकार की प्रवृत्तियों का विकास होता है। वह यहाँ तक सोच लेता है कि यदि उसे दल से हटना भी पड़े तो भी उसे कोई दुःख नहीं होगा। अतः यह स्वाभाविक है कि अनुसंधान के उद्देश्यों पर पानी फिर जाता है। जिस उत्साह से कार्य किया जाना चाहिए, उस उत्साह से कार्य नहीं किया जाता है।

4 **संकीर्णता की भावना**—विभिन्न अनुशासनों से आने वाले अनुसंधान-कर्त्ताओं में संकीर्णता की भावना विकसित हो जाती है। अतः यह एक जटिल समस्या है कि किस प्रकार विभिन्न अध्ययनकर्त्ताओं में इस भावना को समाप्त किया जाए। प्रत्येक अध्ययनकर्त्ता अपने-अपने विषय के महत्त्व पर बल देता है। उन्हें इस बात,

का अभिमान रहता है कि वे अपने-अपने अनुशासन के विशेषज्ञ हैं अत वे दूसरो के साथ सामजस्य स्थापित नही कर पाते है। इस भावना से प्रेरित होकर वे कभी-कभी अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लेते है जो अनुसधान के लिए बहुत ही हानिप्रद है।

5 अनुसधान अभिकल्प निर्माण—विभिन्न अनुशासनो के दृष्टिकोणो का समावेश करना कोई सरल कार्य नही है। प्रत्येक अनुशासन की प्रकृति भिन्न होने के कारण, अभिकल्प निर्माण मे जटिलता उत्पन्न हो जाती है। किस अनुशासन को कितना महत्त्व दिया जाए किस अनुशासन के दृष्टिकोण को अभिकल्प निर्माण मे निर्धारक तत्त्व माना जाए इत्यादि ऐसे प्रश्न है जिनका समाधान सरलता से नही हो सकता। इसके अतिरिक्त विभिन्न अनुशासन वाले अध्ययनकर्ता भी इस बात का बुरा मान सकते हैं जब उनके विषय को, अध्ययन समस्या को, ध्यान मे रखते हुए कम महत्त्व का स्थान दिया जाता है।

6 कार्य-विभाजन की कठिनाई—इस पद्धति के अन्तर्गत अन्य समस्या विभाजन सम्बन्धी है। प्रत्येक अध्ययनकर्ता का दृष्टिकोण अलग होता है, उसका ज्ञान अलग होता है व विषय के प्रति लगाव की मात्रा अलग-अलग होती है। अत उनको ध्यान मे रखते हुए उनसे कार्य लेना एक जटिल समस्या है। कार्य विभाजन के समय काफी खींचातानी होती है। हम समान रूप से कार्य विभाजन नहीं कर सकते क्योकि किसी अनुशासन का अनुसधान समस्या से अधिक सम्बन्ध है तो किसी का कम। इस समुचित कार्य विभाजन की कठिनाई के कारण अनुसधान कार्य मे बडी बाधा उत्पन्न हो जाती है।

7 सरकारी एवं अर्द्ध-सरकारी सस्थाओं से सहयोग प्राप्ति की समस्या—प्राय ऐसा देखने मे आता है कि अध्ययन सरकारी या अर्द्ध सरकारी सस्था के अन्तर्गत किया जाता है तो अध्ययनकर्ता को सबसे बडी समस्या का सामना कर्मचारियो के असहयोगपूर्ण व्यवहार से करना पडता है। सरकारी कर्मचारी बहुत लापरवाह छिछले मस्तिष्क और सकीर्ण विचारो के होते हैं। जब कभी उनसे काम पडता है तो वे उसे टालने की ही कोशिश करते हैं या कभी-कभी स्पष्टत इकार कर देते है। इसका कारण यह है कि वे अपनी नौकरी की ओर से बिलकुल निश्चिन्त हैं। स्थायी कर्मचारी जानते हैं कि उनकी नौकरी की पूर्ण गारन्टी है, अत वे 'कौन क्या बिगाड सकता है' के सिद्धान्त पर चलते हैं। ऐसी परिस्थिति मे अध्ययनकर्त्ता बडा निराश हो जाता है उसे बडी आत्मग्लानि होती है और उसके स्वाभिमान पर चोट लगती है। जहाँ ऐसा वातावरण पाया जाता है, वहाँ अनुसधान की सफलता की क्या आशा की जा सकती है।

8 आँकडों, तथ्यों, विश्लेषणो एव निष्कर्षों के समन्वय की समस्या—विभिन्न अनुशासन दल के सदस्यों को समस्या के अध्ययन करने की पूर्ण स्वतन्त्रता

है। वे अपने-अपने दृष्टिकोणो को प्रस्तुत करने मे स्वतन्त्र हैं, परन्तु प्रश्न यह उठता है कि विभिन्न तथ्यो और निष्कर्षों को किस प्रकार समन्वित किया जाए।

9 धन उपलब्ध करने की समस्या—ऐसे अनुसधानो मे बहुत धन की आवश्यकता होती है। धन प्राप्त करना बहुत ही कठिन कार्य है। जब तक पर्याप्त पैसा नही मिलता, अनुसधान कार्य को वैज्ञानिक रूप से एव सुव्यवस्थित तरीके से सचालित नही किया जा सकता। अत बहुधा अनुसधानकर्त्ता को कार्य समाप्त या पूर्ण करने के लिए Short-cut विधियो को अपनाना पडता है। लेकिन ये Short-cut विधियाँ अनुसधान के उद्देश्य को ही पराजित कर देती हैं। भारत जैसे निर्धन देश के लिए तो यह सर्वाधिक गम्भीर समस्या है।

10 बौद्धिक ईमानदारी एवं साहस का अभाव—यदि अनुसधान किसी निजी सस्था के अन्तर्गत किया जा रहा हो तो यह समस्या खडी हो जाती है कि निजी सस्थाओ के कर्मचारी किस प्रकार ईमानदारी से तथ्यो को प्रस्तुत करें। ऐसी सस्थाओ के कर्मचारियो को अपनी नौकरी की सुरक्षा के लिए सदैव भय बना रहता है।

11 दल की अधिक सदस्य सख्या को नियत्रित करने की समस्या—जब ऐसे अनुसधानो मे सदस्य सख्या अधिक हो जाती है तो उन्हे अनुशासनात्मक रूप मे रखना बहुत कठिन हो जाता है। दल के सदस्य कभी-कभी अपने अधिकारियो से लड पडते हैं तो ऐसी स्थिति मे उनके विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए बडी-बडी फाइलें तैयार की जाती हैं। अत अनुसधान कार्य से ध्यान हटकर केवल अनुशासनात्मक कार्यवाहियो मे या Procedural मामलो मे ही समय व्यतीत हो जाता है।

12 गुटबन्दियों का शिकार—अनुसधान दल के सदस्य कई बार गुटबन्दियो के भयकर शिकार भी हो जाते हैं। उनकी वफादारी का करीब करीब विभाजन ही हो जाता है। जो अध्ययनकर्ता अपने मुख्य निर्देशक को प्रसन्न नही रख सकता वह एक प्रकार से उसका विपक्षी ही माना जाता है और जो उसकी प्रत्येक बात मे हाँ मे हाँ मिलाते हैं वे उसके पक्ष के हो जाते हैं। इस प्रकार पक्ष और विपक्ष बन जाते हैं। गुटबन्दी की इस समस्या ने अनुसधानकर्ता की गहनता एव गम्भीरता को समाप्त प्राय कर दिया है।

सुझाव (Suggestions)

अन्तर्अनुशासनीय दल अनुसधान के जिन दोषो एव समस्याओ का वर्णन किया गया है, उनको ध्यान मे रखते हुए कुछ सुझाव देना यहाँ आवश्यक होगा। सी० राइट मिल्स के अनुसार "हमे शैक्षणिक विभागो के निरकुश विशेषीकरण को दूर करना होगा और अपने कार्य को प्रसग तथा उससे भी अधिक समस्या के अनुसार विशेषीकृत करना होगा।"

1 अन्तर्अनुशासनीय दल अनुसधान मे अनुसधानकर्त्ता को अन्य वैज्ञानिक पद्धतियो को ग्रहण करने की रुचि व इच्छा होनी चाहिए ताकि समन्वय सम्बन्धी समस्या का समाधान हो सके।

2 जो अध्ययनकर्त्ता विशेषीकरण पर अधिक बल देते हैं उन्हे अपने सकुचित दृष्टिकोण मे परिवर्तन कर विशाल दृष्टिकोण का उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए।

3 कार्यपद्धति सम्बन्धी समस्याओ को दूर करने के लिए अनुशासन युक्त सम्मिलित प्रयास की आवश्यकता है।

4 उच्च अधिकारियो को अपने पद, प्रभाव और प्रतिष्ठा का अहकार नही होना चाहिए। उनका व्यवहार मधुर, शिष्ट और पद के अनुरूप विशुद्ध होना चाहिए।

5. अध्ययनकर्त्ताओ के चयन मे पक्षपात नही किया जाना चाहिए। चयनकर्त्ताओ को विशेष रूप से इस बात पर बल देना चाहिए कि अधिक योग्य, अनुभवी और प्रशिक्षित अध्ययनकर्त्ता ही अनुसधान मे वास्तविक जान फूंक सकते हैं, अत उसे व्यक्तिगत अभिनति से ऊपर उठना चाहिए।

6 नौकरशाही के हानिकारक प्रभाव को तुरन्त समाप्त किया जाना चाहिए। जब तक विषैली नौकरशाही विष उगलती रहेगी, स्वस्थ और ईमानदार प्रशासन की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

7 विभिन्न विज्ञानो के अनुसधानकर्त्ताओ को एक दूसरे के प्रति समझदारी तथा सहानुभूति का रुख अपनाना चाहिए ताकि वे अपनी-अपनी पद्धतियो की प्रशसा द्वारा या उन्हें अच्छा बतलाकर दूसरे को उपेक्षित दृष्टि से न देखें।

8 उनकी विभिन्न समस्याओ की कार्य पद्धति मे समन्वय तथा एकीकरण की क्षमता होनी चाहिए।

9 उन सामाजिक और सांस्कृतिक कारको को ध्यान मे रखना चाहिए जो अनुसधान को प्रभावित करते हो।

10 सामग्री व धन के अभाव को जितना दूर किया जाएगा उतनी ही अनुसधान के स्तर मे श्रेष्ठता आएगी।

मोर्डसीमर ने सफलता की जिन तीन आवश्यक शर्तों पर जोर दिया है वे हैं—

1 दल का प्रत्येक सदस्य किसी क्षेत्र का कुशल विशेषज्ञ होना चाहिए।

2 दल के सदस्य विभिन्न विज्ञानो के परस्पर सम्बन्धो और उनके पृथक्-पृथक् दृष्टिकोणो को समझने मे समर्थ व इच्छुक होना चाहिए।

3. प्रत्येक सदस्य को यह ज्ञात होना चाहिए कि वह जो काम कर रहा है, वह क्यो कर रहा है अर्थात् उसके पीछे क्या उद्देश्य है?

अन्त मे, यही कहा जा सकता है कि ऐसे अनुसधान को समस्याओ व आलोचनाओ से भयभीत नही होना चाहिए। इनको चुनौती समझ कर, आगे प्रशस्त होना चाहिए और सगठित होकर सामना करना चाहिए तभी अनुसधान वैधयिक व उपयोगी हो सकता है।

4

सांख्यिकीय प्रणाली : माध्य और सूची अंक, संकेतन, सारिणीयन, विश्लेषण; प्रतिवेदन लेख, निदर्शन

(Statistical Procedure : Average and Index Numbers, Coding, Tabulation, Analysis, Reporting, Sampling)

सांख्यिकीय माध्य : अर्थ

(Meaning of Statistical Average)

सांख्यिकी माध्य का प्रयोग गणनात्मक तथ्यों को प्रस्तुत करने मे किया जाता है। माध्य सम्पूर्ण श्रेणियों का प्रतिनिधित्व करता है। इस विधि द्वारा सम्पूर्ण समूह की प्रवृत्ति या मूल्य का संकेत मिलता है, अतः यह एक ऐसी इकाई है जो समस्त महत्त्वपूर्ण विशेषताओं को प्रकट करती है।

केवल तथ्यों को एकत्र करने से ही हम किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकते। सामग्री को व्यवस्थित, वर्गीकृत एवं श्रेणीबद्ध करने पर भी हम उसे एक ही बार मे नही समझ सकते। अतः सांख्यिकीय माध्य एक ऐसा केन्द्रीय बिन्दु है जो सामग्री की सम्पूर्ण विशेषताओं और महत्त्वपूर्ण लक्षणों को स्पष्ट कर सकता है। इसकी परिभाषाएँ इस प्रकार हैं—

"विशाल अंकों को संक्षिप्त करने के लिए आवृत्ति वितरण बहुत उपयोगी है, लेकिन संक्षिप्तीकरण की प्रक्रिया सम्पूर्ण श्रेणी की विशेषताओं को एक अथवा अधिक से अधिक कुछ महत्त्वपूर्ण अंकों मे संकुचित करने के द्वारा बहुत आगे बढ़ाई जा सकती है। ये अंक माध्य के रूप मे जाने जाते हैं तथा वे एक चरण के विशिष्ट मूल्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं।"[1] —पी. वी. यंग

"यह स्पष्ट है कि एक अंक, जिसका सम्पूर्ण श्रेणी का प्रतिनिधित्व करने के लिए प्रयोग किया जाता है, का श्रेणी मे न तो न्यूनतम मूल्य होना चाहिए और न ही उच्चतम मूल्य, अपितु वह मूल्य तो इन दोनो सीमाओं के मध्य का एक मूल्य होता है और सम्भवतः इस मूल्य की स्थिति वह केन्द्र होता है जहाँ श्रेणियों की अधिकांश

1. *P. V. Young* : Scientific Social Surveys and Research, p. 290

इकाइयाँ एकत्र हो जाती हैं। ऐसे अक केन्द्रीय प्रवृत्ति का माप अथवा माध्य कहलाते हैं।"[1] —डी. एन एलहस

"माध्य एक सरल अभिव्यक्ति है जिसमे एक जटिल समूह अथवा विशाल सख्याओ का वास्तविक परिणाम या सार केन्द्रित हो।"[2] —घोष और चौधरी

आदर्श माध्य की विशेषताएँ

(Characteristics of an Ideal Average)

(1) एक आदर्श या उत्तम माध्य को तथ्य समूह की समस्त विशेषताओ का प्रतिनिधित्व करना चाहिए तथा समूह की विभिन्न इकाइयों के अधिकाधिक निकट होना चाहिए।

(2) यह निश्चित तथा स्पष्ट सख्या मे होना चाहिए।

(3) तथ्यो की श्रेणियो के महत्त्वपूर्ण गुणों को ध्यान मे रखते हुए माध्य को सरल होना चाहिए। इसकी विधि इतनी सरल होनी चाहिए कि सभी लोग इसको अपना सकें।

(4) माध्य मे स्थिरता होना आवश्यक है। यदि कुछ इकाइयों को जोड दें या कुछ को छोड दें तो भी उसकी सख्या मे विशेष अन्तर नही आना चाहिए।

(5) माध्य एक निश्चित सख्या के रूप मे होना चाहिए। उदाहरणार्थ, माध्य 30 का हो सकता है, परन्तु उसे 20 से अधिक और 40 से कम कहकर पुकारना अनुचित है।

(6) यह गणितीय विवेचना के योग्य होना चाहिए।

माध्यों के उद्देश्य

(Objectives of Averages)

(1) तथ्यो की जटिल श्रेणियो का सक्षिप्तीकरण करना है।

(2) इसके द्वारा तथ्यो की तुलना सुगमतापूर्वक की जा सकती हैं। जटिल एव विस्तृत सख्याओ की तुलना के लिए माध्य निकाले जाते हैं।

(3) दो या दो से अधिक समूहो के बीच विद्यमान अनुपात को ज्ञात करने के लिए इसको प्रयोग मे लाया जाता है।

(4) इसके द्वारा व्याख्या एव विश्लेषण के कार्य को सुगम बनाया जा सकता है।

(5) अध्ययन कार्य को सक्षिप्त बनाने मे भी यह लाभप्रद है।

माध्यों के प्रकार

(Types of Averages)

कुछ प्रमुख माध्यो के प्रकार निम्नलिखित हैं—

(1) बहुलाक या भूयिष्ठक (Mode)

1 *D N Elhance* Fundamentals of Statistics p 88
2. *Ghosh and Choudhary* Statistics Theory and Practice, p 69.

(2) मध्यांक (Median)
(3) समान्तर माध्य (Arithmetic Average)
(4) ज्यामितीय माध्य (Geometric Average)
(5) हरात्मक माध्य (Harmonic Average)
(6) समीकरण माध्य (Quadratic Average)
(7) चलायमान माध्य (Moving Average)
(8) प्रगतिशील माध्य (Progressive Average)

लेकिन सामाजिक अनुसधानो मे प्राय बहुलाक (Mode), मध्यांक (Median) या मध्यक (Mean) का ही अधिक प्रयोग किया जाता है।

भूयिष्ठक
(Mode)

'भूयिष्ठक' वह सख्या है जो अक-समूह या श्रेणी समूह मे सर्वाधिक बार आती है, भूयिष्ठक कहलाती है।

पी वी यग के अनुसार "भूयिष्ठक एक साधारण श्रृखला मे माप (Measurement) का वह आकार (Size) है जो सर्वाधिक बार आता है।[1]

गिलफोर्ड के अनुसार, 'भूयिष्ठक माप के पैमाने पर वह बिन्दु है जहाँ एक वितरण मे सर्वाधिक आवृत्ति होती है।'

डॉ० चतुर्वेदी के मतानुसार "भूयिष्ठक को चल का वह आकार जो सर्वाधिक बार आता है या सर्वाधिक आवृत्ति का बिन्दु अथवा घनत्व बिंदु की सज्ञा देकर परिभाषित किया जाता है। किसी भी श्रेणी मे 'भूयिष्ठक' पदो का वह मूल्य है जो सबसे अधिक विशिष्ट या सामान्य है।"

उदाहरण—निम्न सख्याओ म भूयिष्ठक का पता लगाइए—

10, 12 16, 25 16, 8 30, 16 28

हल—दी हुई इन सख्याओ को निम्न प्रकार से व्यवस्थित किया जाता है—

8, 10 12, 16, 16, 16, 25, 28, 30

इन अको के समूह मे 16 की सख्या सबसे अधिक बार आती है, अत इनम 16 भूयिष्ठक है।

भूयिष्ठक की विशेषताएं (Characteristics of Mode)

(1) भूयिष्ठक, श्रृखला के सभी पदो पर आधारित होने के कारण, पर छोटी या बडी सख्या क मूल्य का प्रभाव नही पडता।
(2) भूयिष्ठक पद का वह मूल्य है जिसकी सर्वाधिक आवृत्ति हो।
(3) भूयिष्ठक को ज्ञात करने म आवृत्ति अधिक महत्त्वपूर्ण होती है न कि पद।

1 P V Young op cit, p 296

(4) समान आवृत्ति वाले कई पद-मूल्य होने पर हमारे लिए अधिक भूयिष्ठक का उल्लेख करना आवश्यक हो जाता है।

भूयिष्ठक के गुण (Merits of Mode)

(1) भूयिष्ठक पदमाला का सर्वाधिकार प्रतिनिधित्व करता है।
(2) इसको ज्ञात करने के लिए अधिक श्रम की आवश्यकता नहीं रहती। इसको आसानी से समझा जा सकता है।
(3) भूयिष्ठक, आवृत्ति की अधिकता पर निर्भर होने के कारण, मे पदमाला के असामान्य अंकों का प्रभाव नहीं पड़ता है।
(4) इसकी गणना शीघ्रता और सरलता से की जा सकती है।
(5) न्यूनतम और उच्चतम पद संख्या को ज्ञात किये बिना भी भूयिष्ठक का पता लगाया जा सकता है।
(6) भूयिष्ठक की गणना रेखाचित्रों की सहायता से की जा सकती है।
(7) इसका ज्ञान दैव निदर्शन प्रणाली से भी हो सकता है।

भूयिष्ठक के दोष (Demerits of Mode)

(1) इसमें गणितीय सूत्रों का प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि गणना आवृत्तियों पर आधारित होती है।
(2) यदि एक ही पदमाला में एक से अधिक भूयिष्ठक पाये जाते हैं तो वास्तविक प्रतिनिधि का पता लगाना कठिन हो जाता है।
(3) न्यूनतम और उच्चतम पद-मूल्यों को महत्त्व नहीं दिये जाने के कारण इनके बारे में कुछ भी अनुमान नहीं लगाया जा सकता।
(4) यह केवल उन्हीं पद-मूल्यों का प्रतिनिधित्व करता है जिनकी आवृत्ति सर्वाधिक हो।
(5) क्रमहीन श्रेणी में निर्धारण करना कठिन होता है।

इन दोषों के बावजूद भी इसकी व्यावहारिक उपयोगिता को कम नहीं किया जा सकता। भूयिष्ठक के आधार पर भविष्यवाणियाँ की जाती हैं। आधुनिक राजनीति के युग में इसका प्रयोग बहुधा किया जाता है।

मध्यांक
(Median)

मध्यांक, पदमाला का वह परिमाण है, जो सम्पूर्ण पदमाला या श्रृंखला को समान भागों में विभाजित करता है। पूरे अंक-समूह को दो भागों में विभाजित कर स्वयं मध्य में स्थित रहता है। मध्यांक ज्ञात करने के लिए पदमाला को व्यवस्थित रूप में आरोही अथवा अवरोही क्रमों (Ascending or descending) में जमा लेना होता है।

घोष और चौधरी के मतानुसार ' मध्याक श्रेणी मे उस पद का मूल्य है जो श्रेणी को दो समान भागो मे विभाजित करता है जिसमे से एक भाग मे मध्याक से कम और दूसरे भाग मे मध्यांक से अधिक मूल्य होते हैं। '[1]

"यदि एक श्रेणी के पदो को उनके परिणामो के आधार पर आरोही अथवा अवरोही क्रमो से व्यवस्थित किया जाय तो केन्द्रीय राशि के माप को मध्याक कहते हैं।"[2]

मध्याक की विशेषताएं (Characteristics of Median)

(1) मध्याक निश्चित करने के लिए पदो को आरोही तथा अवरोही क्रम में व्यवस्थित करना होता है।

(2) यह सम्पूर्ण शृंखला को दो भागो मे विभाजित करता है। एक भाग मे इससे कम और अन्य भाग मे इससे अधिक मूल्य पाए जाते है।

(3) यह सबसे दूर (Extreme) पदो के आकार द्वारा प्रभावित नही होता।

मध्याक के गुण (Merits of Median)

(1) मध्याक का निर्धारण सरलता से किया जा सकता है। इसकी स्थिति मध्य मे होने के कारण इसका पता तुरन्त लगाया जा सकता है।

(2) मध्याक मे मध्य के अकों को महत्व देने से इस पर प्रारम्भिक एव अन्तिम पदो का प्रभाव नही होता।

(3) इसका निरीक्षण मात्र से पता लग सकता है।

(4) मध्याक से गुणात्मक तथ्यों को भी निकाला जा सकता है।

(5) पद सख्या के ज्ञात होने पर इसको बिना अधिक परिश्रम के ज्ञात किया जा सकता है।

(6) इसे रेखाचित्रो की सहायता से भी दर्शाया जा सकता है।

(7) इसकी सहायता से भी गुणात्मक तथ्यो को अप्रत्यक्ष रूप से गणनात्मक तथ्यो मे परिवर्तित किया जा सकता है।

मध्याक के दोष (Demerits of Median)

(1) गणित या बीजगणितीय तरीको से यह ज्ञात नही किया जा सकता।

(2) यह तथ्यो का समस्त स्थितियो मे उचित प्रतिनिधित्व नही कर सकती।

(3) इसको आरोही और अवरोही क्रम मे व्यवस्थित करने से व्यर्थ मे समय खर्च होता है।

(4) यदि आँकडो की सख्या समान है तो ऐसी स्थिति मे इसका अनुमान ही लगाना होता है।

(5) यदि पद विस्तार मे अधिक भिन्नता है तो परिणाम विश्वसनीय व शुद्ध नही निकल सकते। इन दोषो के होने का तात्पर्य यह नही है कि सामाजिक

1 *Ghosh and Choudhary* Statistics Theory and Practice p 76

2 *J C Chaturvedi* Mathematical Statistics, p 106

अनुसंधानों में इसकी कोई उपयोगिता नहीं है। इसका उपयोग गुणात्मक तथ्यों, जैसे बुद्धि व ईमानदारी आदि में किया जाता है।

मध्यांक के निर्धारण के लिए श्रेणी-विभाजन

मध्यांक में श्रेणी को दो समान भागों में विभाजित करने से हमें श्रेणी मूल्यों का ज्ञान होता है। यदि हमें अधिक जानकारी प्राप्त करनी हो तो श्रेणी को 2 से अधिक अर्थात् 4, 10, 20, 50, 100 भागों में बाँटकर हम मूल्य ज्ञात कर सकते हैं। मध्यांक के निर्धारण हेतु श्रेणी को अनेक भागों में विभाजित किया जा सकता है जैसे—

(1) चतुर्थांशीय (Quartiles)—यह वह पद-मूल्य है जो सम्पूर्ण पदमाला के चार मूल्य और इंगित करता है। चतुर्थांशीय मान सम्पूर्ण श्रृंखला के मूल्य का $\frac{1}{4}$ भाग होता है। पदमाला के बीच वाले मान को हम मध्यांक कहेंगे। सबसे छोटे पद के मान और मध्यांक के मध्य वाले मूल्य को प्रथम चतुर्थांशीय या चतुर्थक (Quartiles) मान कहेंगे, जिसे Q_1 द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है मध्यांक और सबसे बड़े पद के मान के बीच वाले मूल्य को तृतीय चतुर्थक या चतुर्थांशीय मान कहा जाता है। इसको Q_3 द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है। मध्यांक प्रथम एवं तृतीय चतुर्थक मान के मध्य में होने से इसे द्वितीय चतुर्थक (Second Quartile) कहा जाता है जिसे Q_2 द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है।

(2) पंचमांशीय (Quintiles)—पदमाला को पाँच भागों में बराबर विभाजित करने पर प्राप्त मध्यांक पंचमांशीय कहलाता है।

(3) षष्ठांशीय (Sextiles)—पदमाला को छः भागों में बांटने से जो मध्यांक प्राप्त होता है, उसे षष्ठांशीय कहा जाता है।

(4) अष्टांशीय (Octiles)—पदमाला को आठ भागों में विभक्त करने से जो मध्यांक प्राप्त होता है, उसे अष्टांशीय कहा जाता है।

(5) नवांशीय (Ninth Decile)—पदमाला को नौ भागों में विभाजित करने से जो मध्यांक निकलता है, उसे नवांशीय कहा जाता है।

(6) दशांशीय (Deciles)—सम्पूर्ण श्रेणी को दस भागों में विभक्त करने पर जो मध्यांक प्राप्त होता है, उसे दशांशीय कहा जाता है।

(7) शतांशीय मान (Percentiles)—ये वे मूल्य हैं जो व्यवस्थित पदमाला को 100 समान भागों में विभाजित करते हैं। सम्पूर्ण पदमाला में कुल संख्या 99 होगी। प्रथम, द्वितीय और तृतीय शतांशीय मानों को P_1, P_2 P_3 द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है।

(8) द्वितीय शतांशीय मान (Second Percentile)—यदि दूसरे भाग का मध्यांक निकालना होता है तो वह द्वितीय शतांशीय मान कहलाता है।

उपर्युक्त विभिन्न मध्याको को निकालने के सूत्र निम्नलिखित है—

प्रथम चतुर्थांशीय (First Quartile), $Q_1 = \text{Size of } \left(\frac{n+1}{4}\right)^{th}$ item

तृतीय चतुर्थांशीय मान (Third Quartile)

$$Q_3 = \text{Size of } \left\{\frac{3(n+1)}{4}\right\}^{th} \text{ item}$$

प्रथम दशांशीय मान (First Decile), $D_1 = \text{Size of } \left(\frac{n+1}{10}\right)^{th}$ item

द्वितीय दशांशीय (Second Decile), $D_2 = \left\{\frac{2(n+1)}{10}\right\}^{th}$ item

पचमांशीय मान (Quintiles), $D_5 = \text{Size of } \left\{\frac{5(n+1)}{5}\right\}^{th}$ item

षष्ठांशीय मान (Sextiles), $D_6 = \text{Size of } \left\{\frac{6(n+1)}{5}\right\}^{th}$ item

प्रथम शतांशीय मान (First Percentile),

$$P_1 = \text{Size of } \left(\frac{n+1}{100}\right)^{th} \text{ item (पद का मान)}$$

द्वितीय शतांशीय मान (Second Percentile),

$$P_2 = \text{Size of } \left\{\frac{2(n+1)}{100}\right\}^{th} \text{ item (पद का मान)}$$

बीसवा शतांशीय मान (20th Percentile)

$$P_{20} = \text{Size of } \left\{\frac{20(n+1)}{100}\right\}^{th} \text{ item}$$

समान्तर माध्य
(Arithmetic Average or Mean)

गणित मे औसत निकालने को ही समान्तर माध्य कहते हैं। यदि प्रत्येक इकाई का मूल्य हम ज्ञात है तो समस्त इकाइयों को जोडकर उसम इकाइयो की कुल सख्या से भाग दे देते हैं, इससे जो परिणाम प्राप्त होता है उसे समान्तर माध्य की सज्ञा दी जाती है।

"समान्तर माध्य, जिसे समान्तर माध्य या केवल मध्यक भी कहते हैं, वह परिमाण है जो किसी चल में पद मूल्यो के योग को उनकी सख्या से भाग देकर प्राप्त किया जाता है।"

—घोष एव चौधरी

विशेषताएँ (Characteristics)

1 माध्य को सुगमतापूर्वक निकाला जा सकता है।

2. सभी पदो को समानता की दृष्टि से देखा जाता है। इसमे पद मूल्यो को न तो अधिक महत्त्व दिया जाता है और न ही उनकी उपेक्षा की जाती है।

3 यह आवृत्तियो (Frequencies) पर निर्भर न रह कर मूल्यो पर निर्भर रहता है।

4 पदो के योग को ज्ञात किया जा सकता है यदि पदो की सख्या और समान्तर माध्य मालूम हो।

समान्तर माध्य निकालने की विधि

(The Method of Calculating Arithmetic Mean)

समान्तर माध्य को निकालने की प्राय दो विधियाँ अपनायी जाती हैं—

(i) प्रत्यक्ष विधि (Direct Method)

(ii) लघु विधि (Short-cut Method)

(i) प्रत्यक्ष विधि (Direct Method)—इस विधि मे पद-मूल्यो को जोड़कर पदो की सख्या का भाग दिया जाता है। भाग देने से जो लब्धि (Quotient) प्राप्त होती है उसे साधारण समान्तर माध्य कहते हैं। इसे बीजगणितीय सूत्र द्वारा इस प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है—

$$X = \frac{\Sigma m}{n}$$

X = mean

Σ[Sigma] indicates the 'Sum of' wherever follows

m = measures of the separate

N = total number of items

Example 1 Find out the arithmetic mean from the following
10, 12, 18, 20, 24, 25, 28, 22, 31, 35

Solution : $X = \frac{\Sigma m}{n}$

$\Sigma m = 10 + 12 + 18 + 20 + 24 + 25 + 28 + 22 + 31 + 35$

$= 225$

$n = 10$

$\therefore X = \frac{225}{10}$

$= 22\ 5$ Answer

(ii) लघु विधि (Short-cut Method)—जहाँ श्रेणियाँ लम्बी हो एवं मूल्य भिन्न भिन्न हो ऐसी स्थिति में परिश्रम की आवश्यकता होती है तथा साथ मे अधिक कठिनाई भी उठानी पड़ती है, अत लघु विधि को अपनाया जाता है। इस विधी के अनुसार श्रेणी में किसी एक सख्या को कल्पित माध्य (Assumed Mean) मान लिया जाता है और उसी की सहायता से प्रत्येक इकाई का अन्तर निकाल लिया जाता है। यह अन्तर धनात्मक (Positive) या ऋणात्मक (Negative) भी हो सकता

है । यदि पद-मूल्य कल्पित औसत के मूल्य से कम है तो उस अन्तर को ऋण (—) चिह्न द्वारा प्रदर्शित किया जाता है और यदि पद का मूल्य कल्पित औसत से अधिक है तो उसे धनात्मक चिह्न (+) से प्रदर्शित किया जाता है। इस तरीके से पदमूल्य का अंतर ज्ञात हो जाता है। इन समस्त अंतरों के योग को पद-सख्या से विभाजित किया जाता है, जो लब्धि (Quotient) प्राप्त होती है, उसे कल्पित औसत या माध्य मे जोड़ा जाता है। इसे ही वास्तविक माध्य कहते हैं।

Example 2 Calculate arithmetic mean of the following series : 25, 33, 36, 30, 31, 23, 27, 10, 18, 26

Solution :

Size of item m	Deviation (विचलन) from assumed mean dy (25)
25	0
33	+ 8
36	+ 11
30	+ 5
31	+ 6
23	— 2
27	+ 2
10	— 15
18	— 7
26	+ 1

$$\Sigma dy = +9$$

$$X = \frac{\Sigma dy}{n}$$

$$n = 10$$

$$X = 25 + \frac{9}{10}$$

$$\therefore \quad X = 25.9 \quad \text{Answer}$$

खंडित या विच्छिन्न पद माला में माध्य निकालना

(Computing Average in Discrete Series)

जब विभिन्न पदमालाएँ खंडित या विच्छिन्न हो तो समान्तर माध्य निम्न तरीके से निकाला जाता है—

(i) प्रत्येक पद के आकार को सम्बन्धित आवृत्ति से गुणा किया जाता है।

(ii) इस तरह समस्त गुणनफल के योग का पता लगाया जाता है।

(iii) अब इन गुणनफलों के मापों को आवृत्तियों के योग से भाग दिया जाता है।

(iv) इस तरह प्राप्त लब्धि (Quotient) समान्तर माध्य होगा।

Example 3 Compute simple average in the discrete series given below —

Size of item (पद का आकार)	Frequency (आवृत्ति)	Size of item (पद का आकार)	Frequency (आवृत्ति)
1	4	6	20
2	5	7	13
3	8	8	10
4	7	9	6
5	12	10	3

Solution

पद का आकार (Size of items) Z	आवृत्ति (Frequency) F	Total size of item FXZ
1	4	4
2	5	10
3	8	24
4	7	28
5	12	60
6	20	120
7	13	91
8	10	80
9	6	54
10	3	30
	n = 88	Σm = 501

$$\therefore X = \frac{\Sigma m}{n}$$

$$X \text{ represents mean} = \frac{501}{88} = 5\ 61$$

$$\therefore X = 5\ 61$$

अत माध्य 5 61 होगा।

विच्छिन्न पदमाला में लघु विधि (Short-cut Method in Discrete Series)

विच्छिन्न पदमाला में लघु विधि द्वारा समान्तर माध्य निम्न तरीके से निकाला जाता है—

(i) विच्छिन्न पदमाला में किसी एक पद को कल्पित माध्य मान कर समस्त पद मूल्यों का उस कल्पित माध्य से अन्तर या विचलन (Deviation) ज्ञात कर लिया जाता है।

(ii) प्रत्येक आवृत्ति से उससे सम्बन्धित अन्तर को गुणा कर दिया जाता है। इससे समस्त गुणनफलों के जोड़ का पता लग जाता है।

(iii) इसके पश्चात् प्राप्त योग को आवृत्तियों के योग से विभाजित कर दिया जाता है जिससे लब्धि (Quotient) प्राप्त होगे। इस लब्धि को कल्पित माध्य या औसत में जोड़ दिया जाता है।

(iv) इस जोड़ को समान्तर माध्य कहते हैं।

सूत्र—

$$\text{कल्पित माध्य} + \frac{\text{आवृत्ति व विचलन के गुणनफलों का योग}}{\text{आवृत्तियों का योग}}$$

x = mean

z = assumed average

f = Frequency

d = deviation

n = total of frequencies

$$x = z + \frac{\Sigma fd}{n}$$

सतत् माला का माध्य निकालना (Computing Mean in Continuous Series)

सतत् माला के माध्य को भी दो विधियों द्वारा निकाला जा सकता है—

(i) प्रत्यक्ष विधि (Direct Method)

(ii) लघु विधि (Short-cut Method)

(i) प्रत्यक्ष विधि (Direct Method)—(A) सर्वप्रथम वर्गान्तर (Class interval) का मध्यमान ज्ञात करना होता है।

यदि कोई वर्गान्तर 10—20 है तो मध्यमान $\frac{10+20}{2} = 15$ होगा।

(B) दूसरी अवस्था (Second Stage) में वर्गान्तर की आवृत्ति (f) का वर्गान्तर के प्राप्त मध्यमान (z) से गुणा कीजिए जिससे गुणनफल (fz) प्राप्त हो जायेगा।

(C) इन गुणनफलों का योग अर्थात् Σfz और आवृत्तियों का योग (= N) ज्ञात कीजिए।

(D) गुणनफलों के योग को आवृत्तियों के योग से विभाजित कीजिए जिससे लब्धि ज्ञात हो जाएगी।

इस लब्धि को माध्य कहा जाएगा। अब हम इसे सूत्ररूप में आसानी से प्रस्तुत कर सकते हैं—

$$X \text{ (mean)} = \frac{\Sigma fz}{N}$$

Example :

आयु (वर्षों में)	Frequency
10–14	7
14–18	10
18–22	12
22-26	15
26–30	8
30–34	11

Solution

Class interval	Mid Value of Class intervals (Z)	Frequency (F)	Multiplication (Fz)
10–14 $\frac{10+14}{2}$	12	7	84
14–18	16	10	160
18–22	20	12	240
22–26	24	15	360
26–30	28	8	224
30–34	32	11	352
	Total	N = 63	Σfz = 1420

$$\text{mean } X = \frac{\Sigma fz}{N} = \frac{1420}{63} = 22{\cdot}34$$

∴ m = 22 34 Answer.

लघु विधि (Short-cut Method)—(A) सर्वप्रथम वर्गान्तर का मध्यमान (o) ज्ञात कीजिए।

(B) वर्गान्तर के मध्यमान को कल्पित माध्य (p) मान लेते हैं।

(C) अब प्रत्येक वर्गान्तर के मध्यमान (o) तथा कल्पित माध्य (p) का अन्तर (o—p) मालूम कीजिए। इस कल्पित माध्य से वर्गान्तर के मध्यमानो का विचलन या अन्तर (d) ज्ञात कर लीजिए।

(D) इसके पश्चात् प्रत्येक आवृति (f) से सम्बन्धित विचलन (d) को गुणा कीजिए। इस प्रकार सभी गुणनफलो (fd) के योग Σfd का पता लग जाएगा।

(E) अब इस योग Σfd को आवृत्तियो के योग अर्थात् N से विभाजित कीजिए जिससे लब्धि ज्ञात हो जाएगा।

(F) लब्धि को कल्पित माध्य P के साथ जोड़ दीजिए।

यह जोड़ समान्तर माध्य कहलाएगा।

इस विधि को सूत्र द्वारा निम्नांकित रूप मे प्रकट किया जा सकता है—

$$\text{Mean } X = \frac{P + \Sigma fd}{N}$$

समान्तर माध्य के गुण (Merits of Arithmetic Average or Mean)

1 समान्तर माध्य को सुगमतापूर्वक ज्ञात किया जा सकता है।
2 यह सुग्राह्य है। इसको समझने मे कोई कठिनाई नही आती।
3. यह पद्धति सरल होने के कारण, अधिक लोग इसका लाभ उठा सकते हैं।
4 विभिन्न शृंखलाओ के अंको को व्यवस्थित क्रम मे रखना आवश्यक नही है।
5. इसमे वर्ग का सही प्रतिनिधित्व होता है।
6 इसमे सभी पदो के मूल्यो को समान महत्त्व दिया जाता है। पदो की गणना एक बार ही होती है।
7. इसके अन्तर्गत दो वर्गो की तुलना करना भी सरल है।
8 इसमे गणितीय या बीजगणितीय पद्धतियो को प्रयोग मे लाया जा सकता है।
9. समान्तर माध्य और पद सख्या मे सम्पूर्ण समग्र को भी ज्ञात किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, एक कॉलेज की मध्यक सख्या 4 है और कुल 20 कॉलेज हैं तो सम्पूर्ण समग्र की सख्या 80 होगी।

समान्तर माध्य के दोष (Demerits of Arithmetic Average)

1 जब पद सख्या विस्तृत होती है तो ऐसी स्थिति से अवलोकन मात्र मे पहिचाना नही जा सकता।
2 इसका प्रयोग गणनात्मक सामग्री मे ही सम्भव है।
3 अपूर्ण शृंखला मे से इसका पता नही लगाया जा सकता।
4. समान्तर माध्य द्वारा घटती या बढती हुई प्रवृत्तियो को स्पष्ट नही किया जा सकता।

5 समान्तर मध्यक ऐसा भी निकल आता है जो सम्पूर्ण पद-श्रृंखला में नहीं पाया जाता। इस प्रकार वह प्रतिनिधि पद नहीं कहलायेगा।

6 कभी-कभी असामान्य अन्त पद-श्रृंखला की प्रवृत्ति को असन्तुलित कर देते हैं।

इन दोषों के बावजूद भी इसका प्रयोग आम तौर पर किया जाता है। सुग्राह्य होने के कारण इसका प्रयोग वृहत पैमाने पर होने लगा है।

सूचकाँक
(Index Numbers)

सूचकाँक का सांख्यिकी में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। सूचकाँकों का वृहत् पैमाने पर प्रयोग अर्थशास्त्र और वाणिज्य में किया जाता है। सूचकाँक एक ऐसे वायुमापक यन्त्र (Barometre) के समान है जो समय-समय पर यह सूचना देता है कि मूल्य स्थिति में क्या-क्या परिवर्तन हुए हैं। इनकी सहायता से हम तुरन्त बता सकते हैं कि अमुक-अमुक वर्ष में मूल्यों की क्या स्थिति थी और वर्तमान में क्या है तथा इन दोनों में कितना अन्तर है। अतः यह एक ऐसी पद्धति है जिसके द्वारा श्रेणियों के एक समूह में हुए संयुक्त परिवर्तनों को मापा जा सकता है। सूचकाँक कृषि-उत्पादन की मात्रा, औद्योगिक उत्पादनों एवं व्यावसायिक स्तरों में हुए परिवर्तनों के मापन में बड़े सहायक हैं। अतः स्पष्ट है कि सूचकाँक संयुक्त परिवर्तन को मापता है लेकिन साथ ही परिवर्तनों को व्यक्त करने वाली प्रतिनिधि संख्या को भी सूचकाँक की संज्ञा दी जाती है।

अतः सूचकाँक वह पद्धति है जिससे चरों के समूह में निश्चित् समयावधि के अन्तर्गत हुये परिवर्तनों का इस उद्देश्य से मिला दिया जाता है ताकि एक ऐसी संख्या प्राप्त की जा सके जो इन परिवर्तनों के अंतिम परिणाम को सही रूप में व्यक्त करती हो।

सूचकाँक की निर्माण सम्बन्धी समस्याएँ

(1) उद्देश्य के सम्बन्ध में—सूचकाँक के निर्माण सम्बन्धी उद्देश्य को स्पष्ट रूप से परिभाषित करना चाहिए। समाज में विभिन्न वर्ग हैं—उच्च, मध्यम और निम्न वर्ग। सूचकाँक के निर्माण में हमें यह जानकारी होनी चाहिए कि हम किस वर्ग के रहन-सहन की लागत का पता लगाना चाहते हैं, यदि सूचकाँक उपभोक्ता-मूल्य का है।

(2) सम्मिलित की जाने वाली वस्तुओं के चयन के सम्बन्ध में—जिन वस्तुओं को हम सूचकाँक में सम्मिलित करना चाहते हैं उनके चयन में हमें निम्न सावधानियाँ बरतनी चाहिए—

(i) चयनित वस्तुओं को अनुसंधान विषय का पर्याप्त प्रतिनिधित्व करना चाहिए। यदि हमारा निदर्शन छोटा है तो वह समग्र का उचित प्रतिनिधित्व नहीं कर पायेगा। परन्तु निदर्शन (Sample) इतना बड़ा भी नहीं होना चाहिए जिससे हमारा समय व्यर्थ में बर्बाद हो और कार्य में जटिलता भी उत्पन्न हो।

(ii) ऐसी वस्तुओं को चयनित करना चाहिए जो हर वर्ष परिवर्तनशील न हों अन्यथा सूचकाँक में तुलना सम्भव नहीं हो पायेगी।

(ii) चयनित वस्तु के समस्त प्रकारों को सम्मिलित किया जाना चाहिए ताकि अभिनति (Bias) से बचाया जा सके।

(3) तथ्य सामग्री के स्रोत के सम्बन्ध में—तथ्य सामग्री का समस्त स्रोतों से एक करना व्यावहारिक रूप से सम्भव नहीं है। अतः हमें इस स्रोतों का ऐसा निदर्शन लेना चाहिए जिसमें सभी का प्रतिनिधित्व सही ढंग से हो सके।

(4) तथ्य सामग्री को एकत्र करने के सम्बन्ध में—स्रोतों को निश्चित करने के पश्चात जो कठिनाई आती है वह है तथ्य सामग्री को किस प्रकार एकत्र किया जाए? इसके लिए अनुसंधानकर्त्ता को ऐसी संस्थाओं से सामग्री एकत्र करनी चाहिए जो विश्वसनीय हों। तथ्यों की शुद्धता की जाँच अन्य संस्थाओं द्वारा प्राप्त तथ्यों से की जा सकती है।

(5) आधार के चयन के सम्बन्ध में—सूचकांक में आधार के चयन के सम्बन्ध में सतर्कता बरतनी चाहिए। आधार सामान्य होना चाहिए अन्यथा असामान्य स्थिति में परिणाम विशुद्ध नहीं निकल सकते।

(6) तथ्य सामग्री के समूहन (Combining) के सम्बन्ध में—तथ्य सामग्री को एकत्र करने के बाद समूहन का पता जोड़ लगाकर अथवा औसत द्वारा किया जा सकता है।

(7) सूचकांकों के भार प्रदान करने के सम्बन्ध में—भारण (Weighting) का महत्व वस्तुओं के मूल्यों में हुए परिवर्तन के प्रभाव को ज्ञात करने के लिए है। प्रश्न यह उठता है कि किस वस्तु को कितना भार दिया जाए, यह मुख्यतः दो बातों पर निर्भर करता है।

(i) भार का आधार निश्चित करना होगा। जैसे हम भार किसी वस्तु की उत्पादन मात्रा पर या उपभोग की मात्रा अथवा वितरण की मात्रा पर दे सकते हैं। केवल ऐसे भारों का चयनित करना चाहिए जिससे कि सूचकांकों के प्रयोजन के अनुरूप वस्तुओं के महत्व को प्रकट किया जा सके।

(ii) भार दो प्रकार के हैं—(अ) मात्रा (Quantity) और (ब) मूल्य (Value) मात्रा (Quantity) को हम Q द्वारा व्यक्त कर सकते हैं।

अप्रत्यक्ष भार या मूल्य भार को वस्तु के मूल्य उत्पादन उपभोग या वितरण की मात्रा से गुणा करके प्राप्त कर सकते हैं। अतः अप्रत्यक्ष भार $P \times Q$ होगा।

P = Price

Q = Quantity

अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि 'वास्तविक मूल्यों के समूहन' की पद्धति में भार की मात्रा (q) का और 'मूल्य अनुपातों के औसत' की पद्धति में अप्रत्यक्ष भारों $P \times Q$ का प्रयोग किया जाएगा।

मात्रा सूचकांक
(Quantity Index Numbers)

मूल्य सूचकांक के अन्तर्गत विभिन्न वस्तुओं के मूल्यों की तुलना की जाती है और मात्रा सूचकांक के अन्तर्गत वस्तुओं के उत्पादन, उपभोग या वितरण की तुलना की जा सकती है।

वैसे दोनों की रचना क्रिया में काफी समानता है, लेकिन प्रमुख अन्तर यह है मात्रा सूचकांक में, वस्तुओं की मात्रा में जो परिवर्तन हुए हैं, उन्हें मापा जाता है।

इसमें हम टन, लीटर, मीटर, किलोग्राम, क्विन्टल आदि इकाइयों में मात्रा को व्यक्त कर सकते हैं अतः समूह का उपयोग सम्भव नहीं है।

मात्रा सूचकांक को हम निम्नाङ्कित सूत्र द्वारा व्यक्त कर सकते हैं—

$$\text{मात्रा सूचकांक (Quantity Index)} = \Sigma \frac{\left(\frac{Q_1}{Q_0}\right)}{N}$$

Here ΣQ_1 = चालू वर्ष में वस्तुओं की कुल मात्रा

ΣQ_0 = आधार वर्ष में वस्तुओं की कुल मात्रा

N = वस्तुओं की कुल संख्या

इस सूत्र को प्रयोग में लाने के बावजूद भी यह प्रणाली दोषयुक्त है, इसीलिए इस सूचकांक के निर्माण में मूल्यों (Value) का उपयोग करना होता है।

'मात्राओं' के 'भारित समूहन' की पद्धति (Weighted aggregate of Quantities) में सूत्र को निम्न रूप में व्यक्त कर सकते हैं—

$$\text{Quantity Index} = \frac{\Sigma Q_1 P_0}{\Sigma Q P_0} \times 100$$

'मात्रानुपातों के भारित माध्य' (Weighted mean of quantity relatives) की पद्धति का प्रयोग में लाने के, यदि आधार वर्ष के मूल्य भार का उपयोग हुआ है, लिए इस दिये गये सूत्र को प्रयोग में लाना होगा—

$$\text{मात्रा-सूचकांक (Quantity Index Number)} = \Sigma = \frac{\left(\frac{Q_1}{Q} P_0 Q_0\right)}{\Sigma P_0 Q_0}$$

Example—

मात्राओं के भारित समूहन की विधि द्वारा अग्रांकित सामग्री का मात्रा सूचकांक ज्ञात कीजिए—

सामग्री (Commodity)	1965		1974 मात्रा (Quantity)
	कीमत (Price)	मात्रा (Quantity)	
A	20	10	15
B	15	8	10
C	12	12	12
D	10	5	10

Solution—

Commodity	1965			1974 Quantity	
	Price P_0	Quantity Q_0	P_0Q_0	Q_1	Q_1P_0
A	20	10	200	15	300
B	15	8	120	10	150
C	12	12	144	12	144
D	10	5	50	10	100
			ΣP_0Q_0 514		ΣQ_1P_0 694

$$\text{Quantity Index} = \frac{\Sigma Q_1P_0}{\Sigma P_0Q_0} \times 100$$

$$= \frac{694}{514} \times 100 = 135 \text{ and something}$$

इसी प्रकार दूसरे सूत्र द्वारा भी 'मात्रानुपातों के भारित माध्य' के रूप में भी यह सूचकांक निकाला जा सकता है।

स्थिर और शृंखला आधार सूचकांक
(Fixed and Chain Base Indices)

सूचकांक आधार स्थिर अथवा परिवर्तनशील हो सकता है। यदि विभिन्न वर्षों के सूचकांकों की गणना आधार वर्षों के मूल्यों के आधार पर करें तो ये स्थिर आधार सूचकांक कहलाएंगे।

समस्त सूचकांक एक ही आधार वर्ष से सम्बन्धित न हो और प्रत्येक वर्ष के सूचकांक की गणना यदि गत वर्ष को आधार मानकर की जाती है तो ऐसे परिणाम 'शृंखला मूल्यानुपात सूचकांक' होते हैं। यदि इन प्राप्त शृंखला मूल्यानुपातों को सामान्य आधार में सम्बद्ध कर देते हैं तो हमें शृंखलित सूचकांक (Chain indices) प्राप्त होंगे।

शृंखला आधार पद्धति का सबसे बड़ा गुण यह है कि हम गत वर्ष की तुलना चालू वर्ष से करके मूल्यों में हुए परिवर्तन को आसानी से बता सकते हैं। स्थिर आधार सूचकांक में चालू वर्ष के मूल्यों की तुलना विगत वर्षों से की जाती है।

इसके अतिरिक्त किसी भी वर्ष का सूचकांक गत वर्ष पर आधारित होने के कारण हम अधिक परिवर्तनों की आशा नहीं कर सकते।

इस पद्धति का यही दोष है कि इसमें संख्याओं के लम्बे-लम्बे गुणा एवं भाग करने पड़ते हैं। यदि त्रुटि रह जाती है तो सारी गणना पर प्रभाव पड़ता है।

आधार परिवर्तन, शिरोबंधन और अपस्फीति
(Base Shifting, Splicing and Deflating)

1 आधार परिवर्तन (Base Shifting)—सामान्यतः सूचकांकों के आधार में परिवर्तन एक आवश्यकता बन जाती है। इसका तरीका यह है कि नये वर्ष को आधार मानकर सारी गणना पुनः की जाए। समस्त मूल्यानुपातों की गणना नये वर्ष के आधार पर करके औसत निकाला जा सकता है इस विधि का दोष यह है कि यह काफी विस्तृत विधि है, अतः सभी स्थितियों में उपयुक्त नहीं है।

2 शिरोबंधन (Splicing)—सूचकांक श्रेणी में सम्मिलित वस्तुओं का उपभोग नई वस्तुओं के आने से कम किया जाता है। साथ ही उनके सापेक्ष महत्व में भी अन्तर आ जाता है। अतः पुरानी श्रेणी को बन्द कर नई श्रेणी को तैयार किया जाता है। अब हमें दो श्रेणियाँ प्राप्त हो जाती हैं। जिस वर्ष पहली श्रेणी समाप्त होती है, उसी वर्ष दूसरी श्रेणी शुरू हो जाती है। तुलनात्मक सुविधा की दृष्टि से दोनों श्रेणियों को साथ साथ रखा जाता है और उन्हें एक सतत श्रेणी (Continuous Series) नाम दिया जाता है अर्थात् उन दोनों श्रेणियों का आपस में शिरोबंधन कर लिया गया है।

3 अपस्फीति (Deflating)—गुप्ता और लाल के अनुसार, सूचकांकों की अपस्फीति का तात्पर्य मूल्य-स्तर में होने वाले परिवर्तन के प्रभाव के लिए समायोजन करने से है। हमारे रहन-सहन की लागत और मूल्यों के उतार-चढ़ाव में गहरा सम्बन्ध है। हम रहन-सहन की लागत के सूचकांक के आधार पर मूल्य-वृद्धि का

अनुमान लगा सकते हैं। यदि किसी वर्ष रहन-सहन की लागत का सूचकांक, आधार वर्ष का दुगना हो जाता है तो ऐसी स्थिति में उस वर्ष की सही मजदूरी धन मजदूरी (Money wages) की आधी होगी। 'सूचकांक' द्वारा मूल्य-स्तर में परिवर्तन के समायोजन के लिए किसी संख्या को कम करने की प्रक्रिया को 'अपस्फीति' कहा जाता है।

उपभोक्ता-मूल्य सूचकांक
(Consumer's Price Index Number)

श्री गुप्ता और लाल के अनुसार "उपभोक्ता मूल्य-सूचकांक यह ज्ञात करने में सहायक होते हैं कि निश्चित समयावधियों के बीच उपभोक्ता द्वारा दिये जाने वाले वस्तुओं और सेवाओं के मूल्यों में कितना औसत परिवर्तन हुआ है।"

सूचकांक मूल्यों में हुए परिवर्तनों की जानकारी देने के अतिरिक्त, ये मूल्य-निर्धारण, मजदूरी-नीति किराया-नीति, सरकारी नौकरों के महगाई भत्ते के सम्बन्ध में बहुत उपयोगी हैं। ये मुद्रा की क्रय-शक्ति और बाजार-भावों के विश्लेषण में भी सहायक हैं। मूल्य सूचकांक को उपयोग में लाने के लिए क्षेत्रीय जानकारी आवश्यक है अर्थात् सूचकांक किस वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। इसकी विश्वसनीयता में वृद्धि के लिए यह आवश्यक है कि जो निदर्शन चयनित किये जाय, वे समग्र (Universe) का पूर्ण प्रतिनिधित्व करें, अन्यथा निष्कर्ष एकपक्षीय, अविश्वसनीय व अभिनतिपूर्ण होंगे।

संकेतीकरण
(Coding)

आधुनिक अनुसंधानों में संकेतन का महत्त्वपूर्ण स्थान है। जहाँ पहले से मिलिट्री सेवाओं में, प्रशासनिक एवं विशेष रूप से पुलिस सेवाओं में संकेतों को अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाता रहा है, वहाँ दूसरी ओर अनुसंधानों में कार्य कुशलता, समय की बचत और शुद्धता की दृष्टि से संकेतन प्रणाली को प्रयोग में लाया जाता है। इसके अन्तर्गत तथ्यों को संकेतन संख्या दे दी जाती है और इन संकेतन संख्याओं को गिनकर हम यह बता सकते हैं कि किस वर्ग में कुल कितने मदें (Items) हैं। सावधानीपूर्वक सम्पन्न किया गया संकेतन, अनुसंधान की महत्त्वपूर्ण सम्पत्ति है।

संकेतीकरण की परिभाषा एवं विशेषताएँ
(Definition and Characteristics of Coding)

"संकेतीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा तथ्यों को वर्गों में सगठित किया जाता है और प्रत्येक पद को, जो जिस वर्ग में आता है, एक संख्या या संकेत (Symbol) प्रदान किया जाता है। इस प्रकार संकेतों को गिनकर हम बता सकें

हैं कि किसी दिय हुए वर्ग मे मदो की सख्या कितनी है परन्तु आधारभूत प्रक्रिया वर्गीकरण की है।'[1]

—गुडे तथा हाट्ट

सकेतीकरण तकनीकी प्रणाली है जिसके द्वारा तथ्यो को श्रेणीबद्ध किया जाता है। सकेतीकरण के माध्यम से कोरे तथ्यो को सकेतो मे परिवर्तित किया जाता है जिनका सारिणीयन किया जाता है और गिना जाता है "[2]

—सेलिज, जहोदा, डायच तथा कुक

'तथ्यो को प्रस्तुत करने के लिए, सकेतीकरण मे वर्गों या श्रेणियों का निर्माण किया जाता है और इनका सकेत (Symbol) प्रदान किया जाता है'' ।"[3]

—पी० वी० यग

इन परिभाषाओ के आधार पर हम सकेतीकरण या सकेतन की कुछ विशेषताओ को निम्न रूप म प्रकट कर सकते हैं—

1 यह तथ्यो को वर्गों मे सगठित करने की प्रक्रिया है।

2 यह प्रत्येक पद को वर्ग के अनुकूल सकेत प्रदान करता है।

3 कच्चे तथ्यो को सकेतो मे परिवर्तित कर उनका सारिणीयन और गणना की जा सकती है।

4 इनकी मुख्य प्रक्रिया वर्गीकरण की है।

अब प्रश्न उठता है कि सकेतन कब लाभदायक होता है ? पी० वी० यग के अनुसार इस प्रश्न का उत्तर निम्नलिखित तीन विभिन्न चलो (Variables) पर निर्भर करता है—

(i) हमारे अध्ययन मे उत्तरदाताओ की सख्या या तथ्य सामग्री के स्रोत

(ii) पूछे गये प्रश्नो की सख्या

1 'Coding is an operation by which data are organized into classes and a number or symbol is given to each item, according to the class in which it falls. Thus counting the symbols gives us the total number of items in any given class. The basic operation, of course, is that of classification.'

—*Goode and Hatt* Methods in Social Research, p 315

2 'Coding is the technical procedure by which data are categorized through coding the raw data are transformed into symbols—usually numerals—that may be tabulated and counted.'

—*Selltiz Jahoda Deutsch Cook* Research Methods in Social Relations

3 'Coding consists of setting up classes or categories to be used in presenting the data and then assigning a symbol, usually numerical, to each answer which falls into a predetermined class.'

—*P V Young* Scientific Social Surveys and Research

(iii) सांख्यिकीय प्रक्रियाओं की संख्या और जटिलता जो अध्ययन के लिए नियोजित की गई है

अब प्रश्न यह उठता है कि संकेतन कब करना चाहिए ? संकेतीकरण को किसी भी अवस्था मे किया जा सकता है—साक्षात्कार से लेकर सारिणीयन तक कुछ प्रश्न ऐसे होते हैं जिनका उत्तर हाँ या नही मे होता है जैसे क्या आप अनुदार दल को पसन्द करते हैं अथवा नही ? क्या आपने किसी सामाजिक रचनात्मक कार्य मे भाग लिया अथवा नही ? ऐसे प्रश्नो के उत्तर से प्राप्त तथ्य सामग्री का स्वत ही संकेतीकरण हो जाता है। इन उत्तरो का बहुत ही आसानी से सारिणीयन कर लिया जाता है। ऐसे प्रश्नो मे साक्षात्कारकर्त्ता को संकेतन के लिए कोई विशेष या पृथक् प्रक्रिया नही अपनानी पड़ती है। जब उत्तरदाता उत्तर दे देता है तो साक्षात्कारकर्त्ता उसी समय संकेतन कर देता है। उसके उत्तर प्राप्त करते ही वह संकेतन वाले खाने (Margin) मे निशान लगा देता है।

पी० वी० यंग का कथन है कि जब अनुसन्धानकर्त्ता का उद्देश्य उत्तरदाताओं की वार्षिक आय को दृष्टि मे रखते हुए उनका वर्गीकरण करना होता है, तो ऐसी स्थिति मे अच्छे से अच्छा साक्षात्कारकर्त्ता भी गलतियाँ कर सकता है।

'गलतियाँ यद्यपि हो सकती हैं, कम से कम उनको जाँचा जा सकता है।'[1]

संकेतीकरण या संकेतन के लाभ (Advantages of Coding)

(i) यह शुद्धता को प्रोत्साहन देता है।

(ii) यह समय व स्थान की बचत करता है।

(iii) पुन सारिणीयन करने से छुटकारा मिलता है या उसे कम से कम करना पड़ता है।

(iv) अनुसंधानकर्त्ता को अधिक परिश्रम से बचाता है

संकेतन मे विश्वसनीयता की समस्या (Problem of Reliability in Coding)

संकेतनकर्त्ता के निर्णय को गलत ढंग से प्रभावित करने वाले कई तत्त्व हो सकते हैं। ये तत्त्व उन तथ्यों के कारण भी हो सकते हैं जिनका श्रेणीकरण किया जाना है या श्रेणियों की प्रकृति के कारण या संकेतनकर्त्ता स्वयं की गलती के कारण संकेतन अविश्वसनीय हो सकता है।

1 विश्वसनीयता की समस्या इसीलिए उत्पन्न हो जाती है कि तथ्य अपर्याप्त होते हैं। ऐसी परिस्थिति मे अर्थात् तथ्यों के सारपूर्ण सामग्री प्रदान न करने के कारण संकेतन विश्वसनीय नही हो सकता।

2 विश्वसनीयता की समस्या का कारण यह भी हो सकता है कि तथ्यों को एकत्र करने की प्रणालियाँ पर्याप्त न हो। इसके अन्तर्गत हो सकता है कि प्रश्नो का निर्माण ठीक ढंग से नही किया गया हो या निरीक्षक स्वयं प्रशिक्षित न हो इत्यादि।

1 'Although errors can be made atica t t ey can be checked
—Ibid p 317

सकेतीकरण मे सावधानियाँ (Precautions)

(1) तथ्य सामग्री को एकत्र करने के तुरत बाद उसकी जाँच की जानी चाहिए ताकि सम्भाविन गलती या गलतियो को उसी समय दूर किया जा सके। यदि एक बार ज्ञान या अनजान म गलती रह गई और उसका पता नहा लगाया गया ता वह आगे जाकर परिणामा का बुरी तरह स प्रभावित करेगी। अत सकेतनकर्ता को चाहिए कि तथ्या की तुर त जाच करे

( ) तथ्या का सम्पादन करना चाहिए। इससे यह लाभ होगा कि अनुसधानकर्ता त या क सकेतन करन क क्रम क म गार सकता है उसकी कई गलतिया दूर हो सकती है।

( ) जहाँ आवश्यक हो निरीक्षणकर्ता की भी जाच व्यवस्थित ढग से होनी चाहिए ताकि कई समस्याए उसी समय दूर हो सक।

सकेतीकरण की जाच

प्रत्यक साक्षा कार या निरीक्षण अनुसूची की जाच की जानी चाहिए। जहोदा सेलिज डायच एव कुक के अनुसार य निम्नाकित है—

(1) पूर्णता (Completeness)—सभी मदा (It ms) को पूर्ण किया जाना चाहिए। रिक्त स्थान पूर्ण करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि जो प्रश्न पूछे जा रहे है उनकी क्या प्रकृति (Nat e) है। गलत ढग से भरे गए रिक्त स्थान गलत परिणामा की ओर अग्रसर करते ह।

(2) सुवाच्यता (Legibility)—यदि सकेतनकर्ता (Coder) साक्षात्कार या निरीक्षणकर्ता (Observer) के लिख अक्षरा को पढ या पहचान नही सकता तब सकेतन असम्भव है। जब सकेतनकर्ता को सामग्री प्रदान की जाए उस वक्त ही उसको देख लेना चाहिए कि अक्षर पढने योग्य है या नही। वह उस वक्त तो साक्षात्कारकर्ता स सही जानकारी प्राप्त कर सकता है।

(3) ग्राह्यता (Comprehensibility)—कभी कभी ऐसा होता है कि रिकार्ड किया गया उत्तर साक्षात्कारकर्ता या निरीक्षणकर्ता के ग्राह्य या समझने योग्य है परन्तु दूसरे क लिए ग्राह्य नही है। किसी सदभ मे व्यवहार (Behav our) या उत्तर का रिकार्ड किया गया है यह केवल साक्षात्कारकर्ता का ही पता है न कि सकेतनकर्ता (Co) का। अत साक्षा कारकर्ता या निरीक्षणकर्ता की व्यवस्थित जाँच का जानी चाहिए।[1]

(4) सगतपूर्णता (Consi tency)—किसी साक्षात्कार या निरीक्षण म असगतपूर्ण बातें सकेतन म कई समस्याए पैदा कर देती हैं। उदाहरणार्थ, नीग्रो और गोर जाति के सम्बन्धो पर कोई माप कार लिया गया है जिसम उदाहरणार्थ।

1 ys emat c quest o g of t nter e er or obser er to d spel confu s ons and am b gu es ll ons derably n pro e t e qu l ty of the cod ng
—Jah da a d Cook Ib 1 p 404

एक बार तो यह उत्तर देता है कि उसने कभी नीग्रो परिवार की जानकारी या उसका निरीक्षण नही किया, लेकिन कभी बीच मे उत्तर देता है कि यह कभी-कभी उनके परिवार में भी चला जाता है। ऐसी असमतपूर्णता को दूर किया जाना चाहिए, अन्यथा सकेतन के लिए गम्भीर समस्या पैदा हो जाएगी।

(5) *एकरूपता (Uniformity)*—एकरूपता लाने के लिए यह आवश्यक है कि साक्षात्कारकर्त्ता या निरीक्षणकर्त्ता को पर्याप्त निर्देश दिए जायें ताकि वह तथ्यों के सकलन मे एकरूप प्रणालियो (Uniform procedures) को ही अपनाये।

इन सावधानियो एव जाँच के अतिरिक्त कुछ कठिनाइयाँ श्रेणियो (Categories) से उत्पन्न होती हैं। तथ्यो के श्रेणीकरण का महत्व तभी है जब विशुद्ध श्रेणियो को ही अपनाया जाय। श्रेणी अच्छे ढग से परिभाषित होनी चाहिए और अनुसधान के उद्देश्यो के अनुरूप होनी चाहिए। अत सकेतन की विश्वसनीयता के लिए श्रेणियाँ स्पष्ट एव सुनियोजित होनी चाहिये।

श्रेणियो (Categories) के स्पष्ट एव शुद्ध होने के अतिरिक्त, सकेतन की विश्वसनीयता सकेतनकर्त्ता की योग्यता, कुशलता एव प्रशिक्षण पर निर्भर करती। इसके लिए सकेतनकर्त्ता को विभिन्न सकेतनों की व्याख्या करनी चाहिए और उदाहरणो द्वारा पुष्टि करनी चाहिए। श्रेणियो की भी पुन' जाँच करनी चाहिए। यदि श्रेणियाँ अविश्वसनीय महसूस हो तो उन्हे सम्मिलित नहीं करना चाहिए। सकेतनकर्त्ता को नये अनुसधानो मे हुए विकास एव प्रगति का ध्यान होना चाहिए ताकि वह अपनी सकेतन प्रणाली मे आवश्यक सुधार कर सके।

विश्वसनीयता को और अधिक बढाने के लिए न केवल श्रेणियो की जाँच की जानी चाहिए, बल्कि उपश्रेणियो की भी समय समय पर जाँच करनी चाहिए ताकि तथ्यो के विश्लेषण मे त्रुटियाँ प्रवेश न कर पायें।

सारणीयन
(Tabulation)

समाज विज्ञान अनुसधानो मे सकेतन और वर्गीकरण की प्रक्रिया के पश्चात् तथ्यो का सारणीयन किया जाता है। सारणीय पद्धति द्वारा तथ्यो को व्यवस्थित करके अधिक सरल और स्पष्ट रूप मे प्रदर्शित किया जाता है। इसके अन्तर्गत तथ्यो को स्तम्भो (Columns) एव कतारो मे प्रस्तुत किया जाता है ताकि तथ्यों के विश्लेषण मे सुविधा रहे। जहोदा, डायच, एव कुक (Jahoda, Duetsch and Cook) ने इस सम्बन्ध मे अपने विचारो को व्यक्त करते हुए लिखा है—

"जिस प्रकार सकेतन को तथ्यों के श्रेणीबद्ध करने की तकनीकी पद्धति कहा जाता है, उसी प्रकार सारणीयन को सांख्यिकीय तथ्यो के विश्लेषण की तकनीकी प्रक्रिया का अग माना जा सकता है।"[1]

1 "Just as coding is thought of as the technical procedure for the categorization of data, so tabulation may be considered as a part of the technical process in the statistical analysis of data."
—*Jahoda, Duetsch & Cook*. Research Methods in Social Relations, p 270.

सारणीयन की परिभाषाएँ (Definitions of Tabulation)

एल आर कोनर (L R Connor) के अनुसार," सारणीयन किसी विशेष समस्या को स्पष्ट करने के लिए आँकड़ों को नियमित एवं सुव्यवस्थित रूप से रखने का नाम है।"

घोष और चौधरी के शब्दों में, "सारणीयन द्वारा गणनात्मक तथ्यों का इस भाँति व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक प्रदर्शन करना है कि विचाराधीन समस्या स्पष्ट हो जाये।"[1]

प्रो नीस्वैंगर (Neiswanger) के अनुसार, "सारणी स्तम्भों एवं पंक्तियों में आँकड़ों का क्रमबद्ध संगठन है।"

डी एन एलहांस के अनुसार, "व्यापक अर्थ में, सारणीयन तथ्यों की स्तम्भों तथा पंक्तियों में व्यवस्थित व्यवस्था है। यह एक ओर तथ्यों के संकलन और दूसरी ओर तथ्यों के अन्तिम विश्लेषण के मध्य की प्रक्रिया है।"[2]

सेक्रिस्ट (H Secrist) का मत है कि इसके अन्तर्गत समान और तुलना योग्य इकाइयों को उचित स्थान पर रखा जाता है।

सारणीयन के उद्देश्य (Aims of Tabulation)

1 तथ्य सामग्री को स्पष्ट और सुव्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करना—जब तथ्यों को सारणीयन द्वारा स्पष्ट और व्यवस्थित तरीके से प्रस्तुत किया जाता है तो उनको समझने में आसानी रहती है।

2 विशेषताओं को दिखाना—सारणीयन का यह उद्देश्य होता है कि तथ्यों की विशेषताओं को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया जाय। चूँकि तथ्य स्तम्भों एवं पंक्तियों में संगठित हो जाते हैं अतः उनकी विशेषताओं का तुरन्त पता चल जाता है।

3 तथ्यों की तुलना करने में सहायता करना—जब तथ्यों को सारणी के रूप में प्रदर्शित किया जाता है तब उनका तुलनात्मक अध्ययन सरलता से किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, पिछले दस वर्षों के जनसंख्या के आँकड़ों के आधार पर हम इनकी तुलना अन्य किसी वर्ष में जनसंख्या के साथ कर सकते हैं।

4 तथ्यों को न्यूनतम स्थान में प्रस्तुत करना—सारणीयन का मुख्य उद्देश्य तथ्यों को कम से कम स्थान में प्रदर्शित किया जाना है तथा साथ ही, तथ्यों के समस्त

1 "Tabulation stands for the systematic and scientific presentation of quantitative data in such a form as to elucidate the problem under consideration" —*Ghosh and Chaudhary* Statistics (Theory and Practice), p 91

2 "In the broadest sense, tabulation is an orderly arrangement of data in columns It is a process between the collection of data on the one hand, and its final analysis on the other"
—*D N Elhance* Fundamentals of Statistics

गुणो का प्रतिनिधित्व होना भी है। यग के शब्दो में, 'सांख्यिकीय सारणी को सांख्यिकी की आशुलिपि (Shorthand) कहा गया है।"

सारणी की विशेषताएँ (Characteristics of a Table)

1 स्पष्ट एव सरल होती है।
2 आकार सयुचित होता है अर्थात् न बहुत विस्तृत और न अधिक सक्षिप्त।
3 आकर्षक व प्रभावशाली होती है।
4 एक अच्छी सारणी मे तुलना सुगमतापूर्वक की जा सकती है।
5 उद्देश्य के साथ मेल खाती है।
6 सत्यता व प्रामाणिकता पर आधारित होती है।
7 अलग अलग लक्षणो को बताने के लिए दोहरी पृथक्करण रेखाओ को खीचा जाना चाहिए।

सारणियो के प्रकार (Types of Tables)

मुख्यत सारणियो को दो भागो मे विभाजित किया जाता है—
(i) सरल (Simple)
(ii) जटिल (Complex)

(i) सरल सारणी (Simple Table)—सरल सारणी को एकल सारणी (Single tabulation) भी कहा जाता है जिसके अन्तर्गत केवल एक लक्षण को ही प्रदर्शित किया जाता है अर्थात् एक ही गुण की सूचना दी जाती है। उदाहरणार्थ, निम्नलिखित सारणी छात्रो के परीक्षा अक आवृत्ति (Frequency) को प्रदर्शित करती है।

राजनीति विज्ञान मे प्राप्त किये गये अक

प्राप्ताक ग्रुप (Marks obtained Group)	आवृत्ति (Frequency)
10–20	18
20–30	12
30–40	25
40 50	35
50–60	11
60–70	6
70–80	3

उपर्युक्त सारणी द्वारा यह ज्ञात हो सकता है कि प्रत्येक वर्ग के छात्रों की कितनी संख्या है। इसमे केवल एक लक्षण का ही ज्ञान हो सकता है, वह है राजनीति विज्ञान के प्रश्न-पत्र मे छात्रो द्वारा प्राप्त अंक। इस सारणी के द्वारा यह आसानी से पता लगाया जा सकता है कि 50–60 के बीच अंक प्राप्त करने वाले छात्रो की क्या संख्या है। इस प्रकार सारणी द्वारा केवल राजनीति विज्ञान विषय मे प्राप्त अंको के बारे मे ही कहा जा सकता है।

(ii) जटिल सारणी (Complex Table)—इस सारणी के अन्तर्गत तथ्यों के एक से अधिक गुणों या लक्षणों पर प्रकाश डाला जाता है। जटिल सारणी को हम द्विगुण, त्रिगुण एवं बहुगुण सारणी मे विभाजित कर सकते हैं।

A द्विगुण सारणीयन (Double Tabulation)—द्विगुण सारणी मे किसी विशिष्ट घटना से सम्बन्धित दो लक्षणों या गुणों को दर्शाया जाता है।

राजनीति विज्ञान में प्राप्तांक लिंग के आधार पर

प्राप्तांक	छात्रों द्वारा	छात्राओं द्वारा	कुल योग
10–20	13	5	18
20–30	8	4	12
30–40	14	11	25
40–50	25	10	35
50–60	6	5	11
60–70	3	3	6
70–80	2	1	3

उक्त सारणी के आधार पर यह ज्ञात किया जा सकता है कि 30–40 के बीच अंक प्राप्त करने वालों की कुल संख्या 25 है, जिसमे 14 छात्र हैं और 11 छात्राएँ हैं। अतः किसी तथ्य के दो गुणों को प्रदर्शित किया गया है।

B. त्रिगुण सारणीयन (Treble Tabulation)—इसके अन्तर्गत किसी विशिष्ट घटना की तीन पारस्परिक सम्बन्धित विशेषताओं के बारे मे जानकारी प्रदान की जाती है। अत घटना से सम्बन्धित तीन लक्षणों को स्पष्ट किया जा सकता है। इस सारणी के अन्तर्गत केवल छात्र और छात्राओं के प्राप्तांकों को ही नहीं बतलाया जायगा, वरन् विवाहित और अविवाहित छात्र-छात्राओं के प्राप्तांकों को भी बताया जायगा। इस प्रकार इसके तीन आधार किये गये हैं—छात्र, छात्रा व वैवाहिक स्थिति।

राजनीति विज्ञान में प्राप्तांक
(लिंग एवं वैवाहिक स्थिति)

प्राप्तांक	छात्र			छात्रायें			कुल		
	विवाहित	अविवाहित	कुल	विवाहित	अविवाहित	कुल	विवाहित	अविवाहित	कुल
10–20	4	9	13	2	3	5	6	12	18
20–30	3	5	8	1	3	4	4	8	12
30–40	5	9	14	4	7	11	9	16	25
40–50	8	17	25	4	6	10	12	23	35
50–60	2	4	6	1	4	5	3	8	11
60–70	1	2	3	2	1	3	3	3	6
70–80	1	1	2	–	1	1	1	2	3

C बहुगुण सारणीयन (Manifold Tabulation)—इस सारणीयन के अन्तर्गत किसी एक घटना अथवा तथ्य के तीन से अधिक परस्पर सम्बन्धित गुणों को प्रदर्शित किया जाता है। अनुसंधान में यह सबसे जटिल सारणी है, परन्तु इसके महत्व के कारण इसको काफी प्रयोग में लाया जाता है। इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि हम तथ्यों का तुलनात्मक अध्ययन सारणी को देखकर करते हैं।

राजनीति विज्ञान में प्राप्तांक
(लिंग, विवाह एवं कॉलेज के अनुसार)

कॉलेज	प्राप्तांक	छात्र			छात्राएँ			कुल		
		विवाहित	अविवाहित	कुल	विवाहित	अविवाहित	कुल	विवाहित	अविवाहित	कुल
X	10–20 20–30 30–40 40–50 50–60 60–70 70–80									
	योग									

Y	10-20									
	20-30									
	30-40									
	40-50									
	50-60									
	60-70									
	70-80									
	योग									
Z	10-20									
	20-30									
	30-40									
	40-50									
	50-60									
	60-70									
	70-80									
	योग									

सारणी निर्माण के नियम (Rules of the formation of Table)

सारणी निर्माण का कार्य बड़ा जटिल है। इसे इच्छानुसार तैयार नहीं किया जा सकता। इसके निर्माण के लिए कुछ निश्चित नियमों का पालन करना पड़ता है। जटिल स्थिति में अनुसंधानकर्त्ता को धैर्य, साहस व कुशलता से कार्य लेना चाहिए तभी सारणी का निर्माण सही व उपयोगी हो सकता है। सारणी सम्बन्धी नियमों को हम निम्नांकित रूप में प्रकट कर सकते हैं—

1 शीर्षक (Heading)

(i) शीर्षक जहाँ तक हो सके, छोटा एवं स्पष्ट होना चाहिए।
(ii) शीर्षक स्पष्ट व आकर्षक होना चाहिए।
(iii) बड़े अक्षरों में होना चाहिए।
(iv) शीर्षक द्वारा उद्देश्य का तुरन्त पता चलना चाहिए।

2 स्तम्भ (Columns)

(i) स्तम्भ अनावश्यक रूप से बड़ा नहीं होना चाहिए।
(ii) इनका आकार परस्पर सानुपातिक होना चाहिए।
(iii) योग के स्तम्भ को अवश्य सम्मिलित किया जाना चाहिए।

3. अनुशीर्षक एवं अनुलेख (Captions and Stubs)

(i) स्तम्भ पर लिखा जाने वाला अनुशीर्षक और प्रत्येक बड़ी लाइन के शीर्षक स्पष्ट होने चाहिए।
(ii) सुन्दर अक्षरों में अंकित किये जाने चाहिए।

4 कतारें (Rows)

सूचना को कतारों में लिखने के लिए कुछ विधियाँ प्रचलित हैं। इन विधियों में वर्णनात्मक, भौगोलिक, सख्यात्मक व सामाजिक विधियाँ काफी प्रचलित हैं।

5 स्तम्भों का क्रम (Sequence of Columns)

(i) स्तम्भ विवरणात्मक होने चाहिये।
(ii) महत्वपूर्ण सूचनाएँ बाएँ स्तम्भ में लिखी जानी चाहिये।
(iii) तुलना की जाने वाली सख्याओं को निकट रखा जाना चाहिये।
(iv) जिन निरपेक्ष सख्याओं के प्रतिशत, माध्य या अनुपात निकाले जायें, उनको उन्हीं सख्याओं के सहारे अलग स्तम्भ में रखा जाना चाहिए।

6 योग (Total)

स्तम्भों के योग को सारणी में सबसे नीचे रखा जाना चाहिये।

7 टिप्पणी (Note)

(i) सारणी के बारे में यदि कोई सूचना देनी हो तो उसे टिप्पणी द्वारा प्रकट किया जाना चाहिए।
(ii) भिन्न आँकड़ों में भिन्न चिह्न लगा कर उन्हें टिप्पणीबद्ध कर देना चाहिए।

सारणीयन की पद्धतियाँ (Methods of Tabulation)

सारणीयन में मुख्यत दो पद्धतियों को प्रयोग में लाया जाता है—

(1) हाथ द्वारा किया हुआ सारणीयन (Hand Tabulation)
(2) यान्त्रिक सारणीयन (Mechanical Tabulation)

(1) हाथ द्वारा किया हुआ सारणीयन (Hand Tabulation)—इसके अतर्गत 'टैली शीट' (Tally Sheet) को प्रयोग में लाया जाता है। इसका प्रथम चरण यह है कि सकलित तथ्यों को वर्गित करने के लिए निश्चित वर्गों का निर्धारण कर लिया जाता है। तत्पश्चात् प्रत्येक वर्ग में आवृत्तियों (Frequencies) की गणना के लिए कोई निश्चित चिह्न डाल देते हैं और उनको गिन लिया जाता है। उदाहरणार्थ, हमें 100 विद्यार्थियों के प्राप्तांकों का सारणीयन करना है तो हमें प्राप्तांक समूहों, जैसे 10-20, 20-30, 30-40 का निर्धारण करना होता है। इसके पश्चात् प्रत्येक विद्यार्थी द्वारा प्राप्त अंकों को लिया जाता है, वह जिस वर्ग के अन्तर्गत आता है उसके आगे खड़ी लाइन अकित कर देते हैं। जब एक वर्ग में चार लाइनें अकित कर दी जाती है तो पाँचवीं लाइन उन चारों को काटती हुई खींच दी जाती है ताकि तुलना और गिनती में कोई असुविधा न हो। इस प्रकार प्रत्येक वर्ग के सामने इन अकित लाइनों को गिनकर जोड़ लिया जाता है और आगे जोड़ की सख्या लिख दी जाती है। इस प्रणाली से तुरन्त पता चल जाता है कि कौन किस वर्ग में आता है तथा उनकी कितनी सख्या है। इसे सारणी द्वारा इस प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है—

कक्षा ··· अंकनकर्ता
विषय ··· निरीक्षक ·

प्राप्तांक	परीक्षार्थियों की संख्या	योग
10–20	𝍸 𝍸 III	13
20–30	𝍸 𝍸 𝍸	15
30–40	𝍸 𝍸 𝍸 𝍸 III	23
40–50	𝍸 𝍸 𝍸 𝍸 𝍸 𝍸 II	32
50–60	𝍸 𝍸 I	11
60–70	𝍸 I	6
योग		100

(2) यांत्रिक सारणीयन (Mechanical Tabulation)—जहाँ संकलित तथ्यों की संख्या काफी बड़ी होती है, वहाँ यान्त्रिक सारणीयन विधि को प्रयुक्त किया जाता है। इसमें कुछ मशीनें ऐसी होती हैं जिनको हाथ से संचालित करना होता है और कुछ मशीनें विद्युत द्वारा संचालित होती हैं। तथ्यों को वर्गों में विभाजित करने के पश्चात् यान्त्रिक सारणीयन विधि को प्रयोग में लाया जाता है।

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित क्रियाएँ सम्पन्न करनी होती हैं—

1. संकेतन (Codification)—इसमें एकत्रित तथ्यों को संकेत संख्या प्रदान की जाती है। उदाहरणार्थ, बेरोज़गार व्यक्ति, शिक्षित व्यक्ति, अशिक्षित व्यक्ति को दर्शाने के लिए 0 1, 2, आदि संकेतन संख्या का प्रयोग किया जाता है।

2 प्रतिलेख (Transcription)—संकेतन संख्या निर्धारित करने के पश्चात् सारणीयन कार्ड पर छेद करके नम्बर (संख्या) को दर्ज कर लेते हैं। इस प्रकार सूचनादाता के समस्त उत्तरों के संकेतन नम्बर कार्ड में लिख दिये जाते हैं।

3 सत्यापन (Verification)—कार्डों पर छेद करने में यदि कोई त्रुटि रह गई हो तो इसकी परीक्षा के लिए छेदकयन्त्र को प्रयोग में लाया जाता है।

4. कार्डों को छाँटना (Sorting of cards)—कार्डों को छाँटने का कार्य भी यन्त्र द्वारा पूरा किया जाता है। यह छँटनी कार्डों की विशेषताओं के अनुसार की जाती है।

5 गणना (Counting)—कार्डों को छाँटने के पश्चात् प्रत्येक पद की आवृत्ति (Frequency) को गिन लिया जाता है। इस कार्य की पूर्ति अर्थात् गणना के लिए भी एक मशीन को प्रयोग में लाया जाता है।

6 सारणीयन (Tabulation) उपरोक्त अवस्थाओं के पूर्ण होने के बाद एक व्यवस्थित व सुन्दर सारणी का निर्माण हो जाता है।

सारणीयन के लाभ (Advantages of Tabulation)

1. तथ्यो को व्यवस्थित एव तर्कपूर्ण ढग से रखने के लिए सारणीयन पद्धति उत्तम है।

2 विस्तृत सामग्री को सरल और सक्षिप्त बनाने मे सहायक है।

3. तथ्यो के विश्लेषण करने, माध्य, विचलन और सहसम्बन्ध निकालने के लिए यह बहुत लाभप्रद है।

4 तथ्यो को आसानी से समझा जा सकता है जिससे समय की बचत होती है। तथ्यो को कम स्थान मे दर्शाकर यह पद्धति स्थान की भी बचत करती है।

5 यह तुलनात्मक अध्ययन मे सहायक है।

6 इस पद्धति द्वारा जटिल अक-समूह सुगमतापूर्वक समझे जा सकते हैं।

सीमाएं (Limitations)

यद्यपि सारणीयन पद्धति अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होती है, तथापि इसकी निम्नलिखित कुछ सीमाएं हैं—

1 सारणी द्वारा अकात्मक तथ्यो को ही प्रदर्शित किया जा सकता है अत गुणात्मक तथ्यो को दिखाने के लिए यह पद्धति उपयुक्त नही है।

2 कोरे तथ्यो को सख्या मे प्रस्तुत करने से, सारणी के प्रति आकर्षण समाप्त हो जाता है। इसमे न केवल शिक्षित बल्कि अकशास्त्री भी तथ्यो की अकात्मक सूची को देखकर घबरा जाता है।

3 साधारण व्यक्ति के लिए सामान्यत यह उपयोगी नही है क्योकि उसको समझने मे बडी कठिनाई आती है।

4 महत्वपूर्ण मदो (Important items) को इस पद्धति द्वारा नही दिखलाया जा सकता।

इन सीमाओ के बावजूद कोई इस बात से इन्कार नही कर सकता कि सामाजिक अनुसधानो मे सारणियो का अपना अलग ही महत्त्व है, अत इनके अभाव मे अनुसधान का कार्य अधूरा ही रह जाएगा। आधुनिक अनुसधानो मे इनकी लोकप्रियता है। यदि सावधानी एव सतर्कता से इस पद्धति को प्रयोग में लाया जाए तो यह बडी ही उपयोगी एव लाभप्रद सिद्ध हो सकती है।

तथ्य-विश्लेषण
(Data Analysis)

"जिस प्रकार एक भवन का निर्माण पत्थरो से होता है, उसी भाँति विज्ञान का निर्माण तथ्यों से होता है, पर केवल मात्र तथ्यो का सकलन उसी प्रकार विज्ञान नहीं है जैसे कि पत्थरो का एक ढेर भवन नहीं है।" —जे हेनरी प्वेनकेयर

"जो अनुसंधानकर्त्ता शोध प्ररचना से पूर्णरूपेण परिचित है उसे अपने तथ्यों के विश्लेषण में कोई कठिनाई नहीं होगी।" —गुडे तथा हाट्ट

अनुसंधान में तथ्यों का संकलन एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है, परन्तु मात्र संकलन किसी उद्देश्य की पूर्ति नहीं कर सकता। अतः सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य तथ्यों को सुव्यवस्थित करके उनका विश्लेषण करना है। तथ्यों का विश्लेषण किए बिना उसका वास्तविक उपयोग अनुसंधान कार्य में नहीं हो सकता। इस प्रक्रिया को पूर्ण किए बिना, अनुसंधान का कार्य सच्चे अर्थों में अधूरा ही रहेगा। पी० वी० यंग के अनुसार, "वैज्ञानिक विश्लेषण की यह धारणा है कि एकत्रित तथ्यों से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण व भेद खोलने वाली अन्य प्रक्रियायें भी हैं यदि सुव्यवस्थित तथ्यों को सारे अध्ययन से जोड़ा जाए, तो उनका एक महत्त्वपूर्ण सामान्य अर्थ प्रगट हो सकता है जिसके द्वारा प्रामाणिक व्याख्याएँ की जा सकती हैं।"[1]

शोधकर्त्ता किसी घटना को ही सब कुछ मानकर नहीं चल सकता। उसे सकलित तथ्य-सामग्री की जाँच करनी होगी एवं उनके पारस्परिक सम्बन्धों का पता लगाना होगा। तथ्यों का विश्लेषण करने से पुरानी धारणाओं की या तो पुष्टि होती है या उनकी अप्रामाणिकता अथवा असत्यता सिद्ध होती है। अनुसंधानकर्त्ता जब अपनी लगन एवं एकाग्रता से तथ्यों की जाँच पड़ताल करता है, उसे नई नई परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है जिसकी कल्पना उसने पहले नहीं की थी, अतः वह इस प्रकार के विश्लेषण में ऐसे-ऐसे अनुभव प्राप्त करता है, जो मानव-ज्ञान के लिए उपयोगी है। यदि अनुसंधानकर्त्ता की ठोस परिणामों पर पहुँचने की इच्छा है तो उसे विश्लेषण कार्य पर अधिक जोर देना होगा क्योंकि इसके परिणामों की घोषणा करना स्वयं को मुसीबत में डालना है व अनुसंधान के साथ खिलवाड़ करना है।

यदि हम किसी घटना के कार्य कारणों का सम्बन्ध जानना चाहें या उनकी व्याख्या करना चाहें तो हमें तथ्यों का विश्लेषण करना होगा। तथ्यों की सत्यता तभी सिद्ध हो सकती है जब हम उनका उचित विश्लेषण व व्याख्या कर सकें।

आवश्यक शर्तें (Essential Pre requisites)

विश्लेषण कार्य सर्वाधिक कठिन कार्य है। इसकी सफलता विश्लेषणकर्त्ता के गुणों पर अधिक निर्भर है। एक कुशल विश्लेषणकर्त्ता एक अयोग्य प्रशासक सिद्ध हो सकता है और एक कुशल प्रशासक एक अयोग्य विश्लेषणकर्त्ता सिद्ध हो सकता है। जेम्स मेडिसन के 'संवैधानिक सभा' पर दिए गए भाषण एवं 'संघवाद का पोषक' पर उनके द्वारा लिखी गई पुस्तक के अध्याय, यह प्रदर्शित करते हैं कि वे एक उच्च

1 'Scientific analysis assumes that behind the accumulated data there is something more important and revealing than the facts themselves, that well marshalled facts when related to the whole study have a significant general meaning, from which valid interpretations can be drawn."
—*P. V. Young* Scientific Social Surveys and Research p 509

कोटि के विश्लेषणकर्त्ता थे, लेकिन वे मध्य स्तर के राष्ट्रपति थे। इसका कारण यह है कि विश्लेषण का सम्बन्ध हमारे आन्तरिक गुणों से है। क्या अनुसंधानकर्त्ता की अन्तर्दृष्टि गहन है? क्या उसकी अन्तर्दृष्टि स्पष्ट परिलक्षित है? क्या उसमे अनुभूति शक्ति की प्रचुरता है? क्या उसमे बौद्धिक निष्पक्षता का गुण है? ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं, जिनके आधार पर हम विश्लेषणकर्त्ता के गुणों का पता लगा सकते है अर्थात् विश्लेषणकर्त्ता का अनुभव, उसकी अन्तर्दृष्टि, बौद्धिक निष्पक्षता, सामान्य बोध, विश्लेषण कार्य मे सबसे अधिक सहायक हैं।

विश्लेषण प्रक्रिया की कुछ आवश्यक शर्तें निम्न हैं—

1 आलोचनात्मक कल्पना-शक्ति आवश्यक है। इसी के द्वारा तथ्यो का वैज्ञानिक विश्लेषण किया जा सकता है।

2 आलोचनात्मक परीक्षण की क्षमता आवश्यक है। इस क्षमता के अभाव मे अनुसंधानकर्त्ता कल्पना जगत मे ही उड़ानें भरता रहेगा, जिससे वैज्ञानिक पक्ष निर्बल होता जाएगा।

3 विश्लेषण करते समय यह भी ध्यान रखना चाहिए कि उसकी कल्पना रचनात्मक होनी चाहिए। विश्लेषणकर्त्ता को केवल आदर्श एव कृत्रिम कल्पनाओ के सहारे तथ्यो का विश्लेषण नही करना है, अत उसे हर समय इस बात से सावधान रहना चाहिए कि कही वह कोरी कल्पना मे ही तो समय बर्बाद नही कर रहा है।

4 विश्लेषणकर्त्ता का दृष्टिकोण निष्पक्ष होना चाहिए, तभी सही एव विश्वसनीय विश्लेषण सम्भव हो सकता है।

आवश्यक तैयारियां

विश्लेषण करने से पूर्व, अनुसंधानकर्त्ता को कुछ आवश्यक तैयारियाँ कर लेनी चाहिए, ताकि वह सुव्यवस्थित एव तार्किक रूप स विश्लेषण कर सके। इनके बिना वह अपनी मंजिल तक नहीं पहुँच सकेगा। अत उसे निम्नलिखित कार्यों को अवश्य ही सम्पन्न करना चाहिए—

(1) **तथ्यों का सम्पादन (Editing of Data)**—संकलित तथ्यो के पश्चात् उनका सूक्ष्म अनुवीक्षण (Scrutiny) करना, तथ्यो का सम्पादन कहलाता है। सूचनादाताओ एव प्रगणको (Enumerators) से जो प्रश्नावलियां एव अनुसूचियाँ प्राप्त होती हैं उनका सम्पादन करना अनिवार्य है। सम्पादन का मुख्य अभिप्राय तथ्यो मे असगतियो, सदेहो, गल्तियो एव अपूर्णताओ का बारीकी से निरीक्षण करना है, जिससे अशुद्ध निष्कर्षों से बचा जा सके। यह सम्पादन कार्य वर्णमाला-क्रम, भौगोलिक या कार्यकर्त्ताओ के आधार पर किया जा सकता है। अनुसंधानकर्त्ता को यह देख लेना चाहिए कि सूचनादाताओ द्वारा दी गई जानकारी अनुसंधान के अनुकूल है या प्रतिकूल। यदि प्रतिकूल है, तो उसे तथ्य सामग्री मे स्थान नही देना चाहिए। यदि सम्पादनकर्त्ता स्वय गलती को सुधार सकता है, जिसमे सूचनादाता की आवश्यकता नहीं रहती है, तो उसी समय संशोधन कर देना चाहिए, साथ मे यह भी

ध्यान रखे कि मौलिक विवरण मे किसी प्रकार का अन्तर नहीं आना चाहिए। मौलिक तथ्यो को तोडना मरोडना नही चाहिए।

प्राथमिक सामग्री की शुद्धता की परीक्षा करते समय निम्नलिखित बातो को ध्यान मे रखना चाहिए—

(i) सकलित प्राथमिक तथ्य अनुसधान विषय से सम्बन्धित हो।
(ii) अनावश्यक तथ्यो को स्थान नही दिया जाना चाहिए।
(iii) तथ्यो मे शुद्धता एव विश्वसनीयता होनी चाहिए। सदेहयुक्त तथ्यो की पुन परीक्षा की जानी चाहिए।
(iv) तथ्यो का परीक्षण एव मूल्यांकन निष्पक्ष होना चाहिए।
(v) सकेतन काय को आसान बनाने के लिए तथ्य-सामग्री व्यवस्थित होनी चाहिए।
(vi) तथ्यो मे एकरूपता विद्यमान होनी चाहिए।
(vii) सामग्री तुलना योग्य होनी चाहिए।
(viii) तथ्यो मे मौलिक हेर फेर नहीं किया जाना चाहिए।

(2) द्वैतीयक तथ्यो का अनुवीक्षण (Scrutiny of Secondary Data)—द्वैतीयक स्रोतो से प्राप्त सामग्री का अनुवीक्षण भी उतना ही अनिवार्य है जितना प्राथमिक स्रोतो से सकलित सामग्री का। यद्यपि तथ्यो के सकलन मे पूर्ण सावधानी रखी जाती है लेकिन फिर भी सम्भवतया कुछ गल्तियो का समावेश हो सकता है। इन तथ्यो मे गल्तियो को दूर करने एव अविश्वसनीयता को कम करने के लिए उनकी परीक्षा करना आवश्यक है। विश्वसनीयता की जाँच के लिए इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि जिन सस्थाओ, व्यक्तियो या स्रोतो से सामग्री को प्राप्त किया गया है, व कहाँ तक विश्वसनीय हैं। तथ्यो के सकलन मे जिन पद्धतियो को अपनाया गया है, उनका परीक्षण किया जाना चाहिए कि वे कहा तक निर्भर योग्य हैं। उसे यह भी देख लेना चाहिए कि तथ्यो के सकलन मे कही पक्षपात तो प्रवेश नही कर गया है। साथ ही सामग्री की अनुकूलता का अनुवीक्षण भी करना चाहिए कि सकलित तथ्य अनुसधान के अनुकूल हैं या नही। यदि वे अनुकूल न हो तो उनका उपयोग करने से कोई लाभ नही हैं। अन्त मे, अनुसधानकर्ता को यह देख लेना चाहिए कि प्राप्त तथ्य पर्याप्त हैं या अपर्याप्त। तथ्यो के आधार पर किया गया विश्लेषण निश्चित रूप से विश्वसनीय एव उपयोगी सिद्ध नहीं होगा।

(3) तथ्यों का वर्गीकरण (Classification of Data)—तथ्यो की विश्वसनीयता एव उपयुक्तता की जाच करने के पश्चात् उनका वर्गीकरण किया जाता है। बडी मात्रा मे बिखरी सामग्री को निश्चित श्रेणियो मे व्यवस्थित करना वर्गीकरण कहलाता है। इसके द्वारा सकलित तथ्यो को समानता व असमानता के आधार पर विभिन्न श्रेणियो मे श्रेणीबद्ध किया जाता है। कोनोर के शब्दो में, "वर्गीकरण, तथ्यों को उनकी समनता एव निकटता के आधार पर, समूहो एव वर्गों

मे क्रमबद्ध करने तथा व्यक्तिगत इकाइयो की भिन्नता के मध्य पाये जाने वाले लक्षणो की एकात्मकता को व्यक्त करने की एक प्रणाली है।'

इस प्रकार वर्गीकरण द्वारा तथ्यो को व्यवस्थित, स्पष्ट, संक्षिप्त एव सरल बना दिया जाता है।

वर्गीकरण की विशेषताएँ (Characteristics of Classification)— एक अच्छे व आदर्श वर्गीकरण में निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए—

(i) वर्गीकरण स्पष्ट एव निश्चित होना चाहिए।
(ii) वर्गीकरण मे स्थायित्व होना चाहिए।
(iii) इसमे लचीलेपन का गुण होना चाहिए ताकि नवीन परिस्थितियो के अनुकूल आवश्यक परिवर्तन किया जा सके।
(iv) वर्ग मे प्रस्तुत तथ्यो की इकाइयो मे सजातीयता अनिवार्य है।
(v) वर्गीकरण अनुसधान के उद्देश्यो के अनुकूल होना चाहिए। यदि अनुसधान का उद्देश्य योग्यता के आधार पर प्रत्याशियो की तुलना करना है तो धर्म, जाति या सम्प्रदाय के आधार पर वर्गीकरण करने मे कोई प्रयोजन सिद्ध नही होगा।
(vi) यह सामग्री परस्पर तुलना के योग्य होनी चाहिए।
(vii) वर्गीकरण सांख्यिकीय दृष्टिकोण मे शुद्ध होना चाहिए।
(viii) इसके अन्तर्गत वर्गो का आकार न अधिक छोटा और न अधिक बडा होना चाहिए बल्कि मध्य आकार का होना चाहिए।

(4) संकेतन (Codification)—तथ्यो के वर्गीकरण के पश्चात् तथ्यो का संकेतन किया जाता है। प्रत्येक वर्ग के उत्तर के लिए प्रतीको (Symbols) का प्रयोग करना होता है। संकेतन वर्णनात्मक उत्तर मे अधिक उपयोगी है। बडे बडे उत्तर को संकेतो (Symbols) द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। भिन्न-भिन्न उत्तरो को सांकेतिक श्रेणियो मे रख दिया जाता है, जिससे यह पता लगाया जा सकता है कि वे किन विशेषताओं को प्रदर्शित करते हैं। हम संख्या के आधार पर उनको 1, 2, 3, 4, 5 के संकेत प्रदान करते हैं। इस प्रकार उत्तर को संकेतात्मक तरीके से व्यक्त किया जाता है। इससे न केवल समय की ही बचत होती है बल्कि विश्लेषण करने मे भी सरलता रहती है।

(5) तथ्यों का सारणीयन (Tabulation of Data)— सारणीयन गणनात्मक तथ्यो को व्यवस्थित एव वैज्ञानिक ढग से प्रदर्शित करने की विधि है। इसका मुख्य उद्देश्य, विस्तृत तथ्यो को संक्षिप्त एव समझने योग्य स्थिति मे प्रस्तुत करना है। चूँकि तथ्यो को तर्क एवं पद्धतिपूर्ण ढग से व्यवस्थित किया जाता है, अत विश्लेषण करने मे बडी आसानी होती है। सारणी द्वारा जटिल अक समूहो को भी सरलता से समझा जा सकता है। इसके द्वारा विभिन्न तथ्यो का

सम्बन्ध भी ज्ञात किया जा सकता है एवं उनमें तुलना भी की जा सकती है। इससे समय व स्थान की बचत होती है। ये बातें सारणीयन के लिए लाभप्रद हैं।

तथ्यों के विश्लेषण की प्रक्रिया (Process of Data Analysis)

पी० वी० यंग के अनुसार तथ्यों के विश्लेषण की प्रक्रिया निम्नानुसार है—

(1) सामग्री तथ्यों का तौल करना (Weighing the Data)—तथ्यों को अनुसंधान के लिए उपयोगी बनाने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि उनकी परीक्षा की जाए। तथ्यों की पुन. परीक्षा करते समय यह देखा जाय कि उनमें यथार्थता एवं वैधयिकता विद्यमान है या नहीं। यदि वैधयिकता का गुण विद्यमान नहीं हो, तो पुन निरीक्षण कर लेना चाहिए कि ऐसी कौनसी परिस्थितियाँ थीं जिनके कारण वैधयिकता का अभाव रहा। यथार्थता की अनुपस्थिति में विश्लेषण कितने ही सुन्दर ढंग से क्यों न किया जाए, उसका कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता। लेकिन यह भी नहीं भूलना चाहिए कि संकलित तथ्य महत्त्वहीन या महत्त्वपूर्ण दोनों ही हो सकते हैं अतः केवल महत्त्वपूर्ण तथ्यों को स्थान दिया जाना चाहिए और अर्थहीन तथ्यों को निकाल देना चाहिए। इसके अतिरिक्त यह जाँच भी की जानी चाहिए कि तथ्य सम्बन्धित समूह का उचित प्रतिनिधित्व करते हैं या नहीं।

(2) रूपरेखा की तैयारी (Preparation of an Outline)—रूपरेखा तैयार कर लेने पर महत्त्वपूर्ण तथ्यों को आसानी से समझा जा सकता है। महत्त्वपूर्ण तथ्यों को इसीलिए दोहराया जाना चाहिए, ताकि नए तथ्य प्रकाश में आ सकें और पहले वाले तथ्यों की सरयता का भी पता लग सके।

रूपरेखा को तैयार करने में असावधानी नहीं बरतनी चाहिए। इसका निर्माण स्पष्ट मान्यताओं पर होना चाहिए। वैज्ञानिक रूप से बनाई हुई रूपरेखा अनुसंधान के महत्त्वपूर्ण पक्षों का रहस्योद्‌घाटन करती है। यह इस बात का निर्धारण करती है कि तथ्यों का पारस्परिक सम्बन्ध क्या है एवं कहाँ पर गम्भीर गलतियाँ की गई हैं, इत्यादि।

(3) व्यवस्थित वर्गीकरण (Systematic Classification)—सावधानी-पूर्वक रूपरेखा के निर्माण के पश्चात् तथ्यों के वर्गीकरण करने की अवस्था (Stage) आती है। वर्गीकरण के आधार पर तथ्यों में पाई जाने वाली समानताओं व असमानताओं का ज्ञान तुरन्त हो सकता है। तथ्यों के वर्गीकरण के बिना हम उनका उपयोगी अध्ययन नहीं कर सकते, अतः यह आवश्यक है कि तथ्यों का व्यवस्थित ढंग से वर्गीकरण किया जाए ताकि हम उनकी तुलना उनमें परस्पर सम्बन्ध व विभिन्नताओं का ज्ञान सुगमतापूर्वक कर सकें।

(4) अवधारणाओं का निर्माण (Formulation of Concepts)—अवधारणा निर्माण का सामाजिक अनुसंधान में महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके द्वारा हम बिना कठिनाई के किसी घटना विशेष या परिस्थिति को समझ सकते हैं। जब तथ्यों का वर्गीकरण कर दिया जाता है तब उसके पश्चात् अवधारणा निर्माण

आवश्यक है। अवधारणा किसी एक तथ्य का प्रतिनिधित्व करती है। उदाहरण के लिए पुराने लोगो के विचारो, मूल्यो और व्यवहार मे, आधुनिक लोगो के व्यवहार, आदतों व मूल्यो मे बहुत भिन्नता पाई जाती है तब हम इसको प्रदर्शित करने के लिए कहेंगे कि यह 'पीढी का अन्तर या खाई' (Generation Gap) है। अवधारणा के आधार पर हम उसके गुण व प्रकृति को समझ सकते है। अवधारणा गागर मे सागर का काम करती है। अवधारणा का विचार मस्तिष्क मे आते ही हमारे सम्मुख सम्पूर्ण दृश्य उपस्थित हो जाता है। परन्तु अवधारणा निर्माण मे पूर्ण सावधानी की आवश्यकता रहती है। अनुसंधानकर्ता को यह देख लेना चाहिए कि वह जिस शब्द का प्रयोग अवधारणा के रूप मे करता है, क्या वह उस घटना या परिस्थिति के लिए उपयुक्त है एव क्या उससे स्पष्ट अर्थ निकलता है।

(5) तुलना एव व्याख्या (Comparison and Interpretation)—अवधारणा निर्माण के पश्चात् तथ्यो के प्रतिमान (Pattern) स्पष्ट हो जाते हैं, जिसकी तुलना की जा सकती है। तुलना करने से विभिन्न तथ्यो का स्पष्टीकरण हो जाता है, हम उनकी गहराइयो की ओर विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। एकत्रित तथ्यो का विश्लेषण करके हम जो निष्कर्ष निकालते हैं, उस क्रिया को 'व्याख्या' कहते हैं। अनुसधानकर्त्ता व्याख्या करते समय कार्य कारण के सम्बन्ध को स्पष्ट करने का प्रयास करता है। कार्य-कारण के बिना व्याख्या का कोई औचित्य नहीं है। शोधकर्ता को यह ध्यान देना चाहिए कि विषय से सम्बन्धित व्याख्या स्पष्ट व सरल होनी चाहिए जिससे उसका लाभ अन्य लोग भी उठा सकें। जहाँ तक हो जटिलता को दूर किया जाना चाहिए क्योकि सामान्यत अनुसधानकर्त्ता बड़े ही जटिल शब्दो मे व्याख्या करता है। समझ न पाने के कारण लोगो को उसके कार्य मे रुचि भी नही रहती है।

(6) सिद्धान्तों का प्रतिपादन (Formulation of Theories)—तथ्यो की व्याख्या के पश्चात् सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया जाता है, अत इसके सम्बन्ध मे अत्यधिक सावधानी की आवश्यकता रहती है। सिद्धान्त के प्रतिपादन का अर्थ है कि अनुसधान के मुख्य उद्देश्य की पूर्ति हो गई। सिद्धान्त को स्पष्ट एव सुव्यवस्थित रूप में व्यक्त किया जाना चाहिए। इसमे सुबोध एव सरल भाषा का प्रयोग किया चाहिए तथा सिद्धान्त को प्रस्तुत करने की प्रणाली भी बड़ी सरल होनी चाहिए ताकि अन्य लोग भी इसको समझ सकें। इसके विपरीत यदि इसे जटिल, अस्पष्ट एव असगत रूप मे प्रस्तुत किया गया तो अनुसधान के वास्तविक उद्देश्य की प्राप्ति नहीं होगी।

सामाजिक अनुसधानो मे सिद्धान्तो के प्रतिपादन मे बडी कठिनाई आती है क्योंकि घटनाओं की प्रकृति मे एकरूपता, समानता व स्थिरता नही होती है अत: इस कारण अनुसधानकर्त्ता को कई समस्याओं का सामना करना पडता है। जिन-जिन सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र मे शोध कार्य हो चुके हैं, उनमे सहायता मिल जाने से

शोध कार्य मे कठिनाई नही आती है क्योकि पहले वाले शोध कार्य नये शोध कार्य को दिशा एव निर्देशन प्रदान करते हैं। इस प्रकार नए-नए अनुसधानो से कई छिपे हुए तथ्यो को प्रकाश मे लाया जाता है और पुराने सिद्धान्तो मे सशोधन या परिवर्तन कर उन्हे वैज्ञानिक एव व्यावहारिक रूप दिया जाता है।

सामाजिक अनुसधानो मे सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि तथ्यो मे वैषयिकता, विश्वसनीयता व क्रमबद्धता पाई जानी चाहिए। यदि इनका किसी कारणवश अभाव रह गया तो अनुसधान विश्वसनीय व उपयोगी नही होगा। वैषयिकता व विश्वसनीयता के लिए स्वय अनुसधानकर्त्ता मे गुण मौजूद होने चाहिए। यदि वह एक कुशल, ईमानदार, निष्पक्ष, एव अनुभवी अनुसधानकर्त्ता नही है तो तथ्यो की व्याख्या एव सिद्धान्तो के प्रतिपादन मे एक उच्च कोटि के शोधकर्त्ता के गुण नही पाए जाएँगे, अत अनुसधान की सफलता स्वय शोधकर्त्ता के गुणो पर बहुत निर्भर करती है।

प्रतिवेदन लेख
(Report Writing)

अनुसधान कार्य मे प्रतिवेदन (Report) लेख अन्तिम चरण है। तब तक अनुसधान को अधूरा ही समझा जाएगा जब तक प्रतिवेदन तैयार नही किया जाता। कितने ही सुन्दर ढग से उपकल्पनाओ का निर्माण, विश्वसनीय प्रणालियो का प्रयोग, तथ्यो का सकलन, उनका विश्लेषण, वर्गीकरण एव सिद्धान्तो का प्रतिपादन क्यो न किया गया हो, प्रतिवेदन को तैयार किए बिना वे महत्वहीन हैं। इसका प्रमुख कारण प्रतिवेदन द्वारा अनुसधान कार्य को दूसरो तक पहुँचाया जाना है। यह तभी सम्भव है जब प्रतिवेदन लिखित हो, सुव्यवस्थित व स्पष्ट रूप मे हो।

अमेरिकन मार्केटिंग सोसायटी (American Marketing Society) के मत को गुडे एव हाट्ट ने अपनी पुस्तक मे उद्धृत करते हुए लिखा है, "प्रतिवेदन को तैयार करना अनुसधान की अन्तिम अवस्था (Stage) है, और इसका उद्देश्य रुचि रखने वाले लोगो के अध्ययन के सम्पूर्ण परिणाम को पर्याप्त विस्तार मे बतलाना है एव इस तरह व्यवस्थित करना है जिससे पाठक तथ्यो को समझने और स्वय के लिए निष्कर्षों की प्रामाणिकता (Validity) का निश्चय करने योग्य बन जाएँ।"[1]

चूँकि प्रतिवेदन अनुसधान का लिखित विवरण होता है जिसमे प्रारम्भ से अन्त तक इसके उद्देश्यो, प्रक्रियाओ, साधनो, इकाइयो, आँकडो की सारणी, चित्रावली आदि का वर्णन मिलता है, अत अनुसधानकर्त्ता को इसे तैयार करते समय इसके प्रमुख उद्देश्यो को अवश्य ध्यान मे रखना चाहिए। अनुसधान कार्य

1 "The preparation of the report is, then, the final stage of research and its purpose is to convey to interested persons the whole result of the study in sufficient detail and so arranged as to enable each reader to comprehend the data and to determine for himself the validity of the conclusions."
—Quoted by Goode and Hatt in his book 'Methods in Social Research,' p. 359

किसी एक संस्था, समुदाय, वर्ग या समाज तक ही सीमित नही रहता है, अत इसको इस तरह से प्रस्तुत किया जाना चाहिए ताकि कोई भी पाठक इसमे दिलचस्पी लेकर अपने ज्ञान की वृद्धि कर सके।

मुख्य उद्देश्य (Main Aims)

प्रतिवेदन लिखने के उद्देश्यो को निम्नवत् प्रकट किया जाता है—

(1) अनुसधान कार्य के महत्व को दूसरों तक पहुँचाना (To communicate the importance of the research work to others)—प्रतिवेदन लिखने का उद्देश्य यह नही है कि अनुसधानकर्ता उस ज्ञान को स्वय तक ही सीमित रखे बल्कि उस ज्ञान का उद्देश्य तो उसके महत्व को अन्यो तक पहुँचाना है। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए प्रतिवेदन को एक क्रमबद्ध लिखित रूप प्रदान किया जाता है। यह लिखित प्रतिवेदन भावी पीढियो के लिए एक स्थायी धरोहर बन जाता है।

(2) ज्ञान वृद्धि के लिए (For Increasing Knowledge)—प्रतिवेदन का उद्देश्य अनुसधानकर्त्ता द्वारा अनुसधान से प्राप्त नई जानकारी का ज्ञान लोगो को करवाना होता है। जो नए-नए मापदण्ड निर्धारित किए गए हैं, नई-नई व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई हैं, उनका ज्ञान विषय से सम्बन्धित लोगो को करवाए।[1]

(3) दूसरो के निष्कर्षों का प्रामाणीकरण करना (Validation of Other's Conclusions)—प्रतिवेदन द्वारा दूसरो के निष्कर्षों की सत्यता की जाँच की जा सकती है। अनुसधान एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा हम दूसरों से ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं और दूसरे हमसे सीख सकते हैं, अत अन्य लोगो की राय का भी आदर करना चाहिए। इस भावना से हम नवीन तथ्यो की खोज कर सकते हैं एव अन्य अनुसधानकर्त्ताओ के निष्कर्षों की प्रामाणिकता का भी परीक्षण कर सकते हैं।

(4) भावी अनुसधानों के लिए उपयोगी (Useful for Future Researches)—प्रतिवेदन के आधार पर भविष्य मे भी अनुसधान किए जा सकते हैं। प्रतिवेदनो द्वारा अनुसधान के कई छोटे छोटे विषयो को व्यवस्थित करके किसी एक निश्चित सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जा सकता है। अत इन प्रतिवेदनो द्वारा नए सिद्धान्तो का निर्माण भी सम्भव है।

(5) प्रामाणिकता की परीक्षा (Examination of Validity)—अध्ययन की प्रामाणिकता की परीक्षा तभी सम्भव है जब प्रतिवेदन लिखित रूप मे हो। चूँकि प्रतिवेदन मे सभी तथ्यो को प्रदर्शित किया जाता है, अत उनका निरीक्षण व परीक्षण कर हम उनकी वैधता या अवैधता को सिद्ध कर सकते हैं।

1 "The purpose of the report is not communication with oneself but communication with the audience."

—*Seltiz, Jahoda, Deutsch & Cook* Research Methods in Social Relations

प्रतिवेदन की विषय सामग्री (The Subject-matter of Report)

एक प्रतिवेदन के अन्तर्गत क्या-क्या विषय-सामग्री आनी चाहिए, इस बारे मे समाज-वैज्ञानिक एकमत नही हैं। कोई किसी एक बिन्दु को महत्त्व देता है तो दूसरा किसी दूसरे बिन्दु को। फिर भी सामान्यत जिन विषयो को प्रतिवेदन मे स्थान दिया जाता है, वे निम्नांकित हैं—

(1) प्रस्तावना (Introduction)—प्राय समस्त प्रतिवेदनो मे सर्वप्रथम प्रस्तावना को सम्मिलित किया जाता है। प्रस्तावना मे शोध के महत्व व इसकी योजना पर संक्षिप्त मे प्रकाश डाला जाता है। इसमे अनुसंधान कराने वाली सरकारी या गैर-सरकारी संस्था तथा दूसरो के सहयोग व समर्थन की विवेचना होती है। प्रस्तावना मे अनुसंधानकर्त्ता इस बात को भी स्पष्ट रूप से लिख सकता है कि उसको किन-किन कठिनाइयो का सामना करना पड़ा एवं उनको उसने किस प्रकार दूर किया। संक्षेप मे वह सम्पूर्ण तथ्यो का विवेचन करता है।

(2) समस्या का वर्णन (Statement of the Problem)—प्रस्तावना के पश्चात्, अनुसंधानकर्त्ता समस्या का परिचय देता है। वह प्रतिवेदन मे समस्या की आवश्यकता एवं उसके आधारो पर जानकारी प्रदान करता है। अध्ययन विषय से सम्बन्धित सीमाओ का निर्धारण करता है व उस विषय से सम्बन्धित अन्य विषयों व समस्याओ का संक्षेप मे वर्णन करता है। जिस कारण से उसने समस्या विशेष को चुना है, उसका विवरण भी वह अपने प्रतिवेदन मे करता है। समस्या के वर्णन से यह लाभ है कि हमें उसके समस्त पहलुओ का ज्ञान हो जाता है अत. हम उसकी प्रकृति को तुरन्त समझ सकते हैं।

(3) अध्ययन का उद्देश्य (Purpose of the Study)—जिस उद्देश्य को लेकर अनुसंधान किया जा रहा है, उसका उल्लेख भी वह अपने प्रतिवेदन मे करता है। अनुसंधान के उद्देश्य के पक्ष पर प्रकाश डालना आवश्यक होता है, अत वह स्पष्टत इस बात का उल्लेख करेगा कि क्या उसके अनुसंधान का उद्देश्य ख्याति, भौतिक लाभ, नए तथ्यो की खोज व ज्ञान प्राप्ति करना है। यदि अनुसंधान को संचालित कराने के लिए कोई सरकारी संस्था रुचि रखती हो तो अनुसंधानकर्त्ता उस अनुसंधान के उद्देश्य को भी बता देता है।

(4) अनुसंधान प्रणालियाँ (The Research Procedures)—अनुसंधान मे तथ्यो के संकलन के लिए विभिन्न प्रणालियो को अपनाया जाता है। अनुसंधानकर्त्ता अपने प्रतिवेदन मे उन प्रणालियो का भी उल्लेख करता है जिनके द्वारा तथ्यो का संकलन किया गया है। तथ्यो को प्राप्त करने के लिए प्राथमिक और द्वैतीयक स्रोतों का भी उल्लेख करता है। प्रतिवेदन मे इस बात का भी उल्लेख किया जाता है कि अनुसंधानकर्त्ता ने उन प्रणालियो का प्रयोग क्यो किया एवं उनका तथ्यो से क्या सम्बन्ध था। उदाहरणार्थ यदि तथ्यो का संकलन प्रश्नावलियों या साक्षात्कारो द्वारा किया गया है तो क्या-क्या प्रश्न पूछे गए, इनकी सूची Appendix मे दी जाती है।

साक्षात्कारकर्ता को साक्षात्कार लेते समय क्या-क्या अनुभव हुए, उसे अनुभव कैसे लगे, क्या वह इन अनुभवों से लाभान्वित हुआ या कड़े अनुभवों के कारण तिरस्साहित हुआ, इत्यादि बातों का उल्लेख भी प्रतिवेदन में किया जाता है। यदि अनुसंधानकर्ता ने अनुमाप प्रणाली (Scaling process) या निदर्शकों का उपयोग किया है तो उसका विवेचन भी प्रतिवेदन में किया जाता है। इसके अतिरिक्त अनुसंधानकर्ता ने यदि प्रकाशित स्रोतों से तथ्यों का संकलन किया है तो वह उनको अपने प्रतिवेदन में स्थान देगा।

(5) निदर्शन-चयन (Selection of Samples)—अध्ययनकर्ता अपने प्रतिवेदन में निदर्शन-चयन प्रणाली का उल्लेख करता है। निदर्शनों के चयनार्थ जिस पद्धति को अपनाया जाता है, उसके कारणों का भी उल्लेख वह अपने प्रतिवेदन में करता है। जिन निदर्शनों को चुना गया है वे समूह का सही प्रतिनिधित्व करते हैं अथवा नहीं, निदर्शन प्रणाली के अन्तर्गत निदर्शन का आकार एवं समग्र (Universe) में उसका अनुपात जैसी बातों को भी प्रतिवेदन में स्पष्ट किया जाता है।

(6) विश्लेषण (Analysis)—प्रतिवेदन का यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण चरण है। संकलित तथ्यों का व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुतीकरण एवं उन्हें ग्राफ, चार्ट, सारणियों एवं चित्रों द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। तथ्यों के व्यवस्थित प्रस्तुतीकरण के पश्चात् उनका विश्लेषण किया जाता है। केवल तथ्यों को एकत्र करने से कोई विशेष प्रयोजन सिद्ध नहीं होता अतः उनका विश्लेषण करना आवश्यक है। विश्लेषण द्वारा अनुसंधानकर्ता किन-किन निष्कर्षों पर पहुँचा है, उसका उल्लेख प्रतिवेदन में किया जाता है। निष्कर्षों के आधार का स्पष्टीकरण भी प्रतिवेदन में प्राप्त होता है। यदि द्वैतीयक सामग्री को प्रयोग में लाया गया है तो उनके स्रोतों का भी संक्षेप में उल्लेख कर दिया जाता है।

(7) परिणाम (Results)—तथ्यों के विश्लेषण के आधार पर प्रमुख परिणामों व निष्कर्षों को प्रतिवेदन में स्थान दिया जाता है। परिणामों एवं निष्कर्षों का उल्लेख अनुसंधानकर्ता को निष्पक्ष रूप से करना चाहिए। उसे इस बात की परवाह नहीं करनी चाहिए कि व उसके विचारों या दृष्टिकोणों के साथ मेल खाते हैं या नहीं। प्रतिवेदन के इस चरण में निष्कर्षों के सार का भी उल्लेख किया जाता है जो शोध के परिणामों को संतोषजनक ढंग से स्पष्ट कर देता है।

(8) सुझाव (Suggestions)—अनुसंधान में सुझावों का बड़ा महत्व है। प्रतिवेदन के अन्त में अनुसंधानकर्ता अपनी ओर से सुझावों का भी उल्लेख करता है। यदि कोई अनुसंधान किसी विशेष प्रयोजन से करवाया गया है तो प्रतिवेदन के अन्त में सुझाव अवश्य दिए जाने चाहिएँ। उदाहरणार्थ देश में तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या व उत्पादन के सम्बन्ध में यदि कोई अनुसंधान कार्य किया गया हो तो अनुसंधानकर्ता प्रतिवेदन में यह सुझाव दे सकता है कि या तो उत्पादन (Production) इतना बढ़ाया जाय कि वह समस्त जनसंख्या की आवश्यकता की

पूर्ति कर सके या यह भी सुझाव दे सकता है कि उत्पादन पर तो जोर दिया जाना चाहिए, परन्तु जनसंख्या वृद्धि पर भी रोक लगाने के लिए तुरन्त ही प्रभावशाली कदम उठाए जाने चाहिएँ अन्यथा भविष्य में स्थिति नियन्त्रण के बाहर हो सकती है। इन सुझावों को वह अपने अनुभव व वस्तु-स्थिति के आधार पर दे सकता है।

(9) संलग्न सूचना (Appendices)—अनुसंधानकर्ता जब अपने प्रतिवेदन में सुझाव दे देता है तो प्राय यही समझा जाता है कि उसका कार्य पूर्ण हो गया है। फिर भी कुछ तालिकाएँ, चार्ट, एवं पत्र अनुसंधान की सत्यापनशीलता के लिए आवश्यक होते हैं जिनका उपयोग सम्बन्धित पाठकगण कर सकते हैं। इन सबको प्रतिवेदन के अन्त में संलग्न कर दिया जाता है।

उपर्युक्त विवरण के पश्चात् प्रतिवेदन के लिखने या तैयार करने का कार्य समाप्त हो जाता है। जहाँ तक प्रतिवेदन में क्रम का प्रश्न है, इस सम्बन्ध में कोई एक निश्चित क्रम नहीं है। यह प्रतिवेदनकर्त्ता पर निर्भर करता है कि वह किस क्रम से प्रतिवेदन लिखे ताकि वह उपयोगी, आकर्षक व अनुकरण योग्य हो।

एक आदर्श प्रतिवेदन की विशेषताएँ (Characteristics of an Ideal Report)

(i) प्रतिवेदन सुन्दर व आकर्षक होना चाहिए। अधिक तड़क-भड़क का इसमें स्थान नहीं होना चाहिए। आकर्षक बनाने के लिए प्रतिवेदन में शीर्षकों, ग्राफ, फोटो इत्यादि का प्रयोग उपयुक्त ढंग से किया जाता है।

(ii) प्रतिवेदन को सरल, स्पष्ट एवं सुग्राह्य ढंग से प्रस्तुत करना चाहिए। मुहावरेदार, लच्छेदार एवं अतिशयोक्तिपूर्ण भाषा के प्रयोग को निरुत्साहित करना चाहिए।

(iii) तथ्यों का विश्लेषण तार्किक एवं वैज्ञानिक आधार पर होना चाहिए जिससे किसी को यह संदेह न रहे कि प्रतिवेदन कोरी कल्पनाओं या आदर्शों पर ही आधारित है।

(iv) एक ही प्रकार के तथ्यों की अनेक बार पुनरावृत्ति नहीं की जानी चाहिए।

(v) सूचना के सभी स्रोतों का उल्लेख किया जाना चाहिए जिससे कोई भी सम्बन्धित व्यक्ति उन उल्लिखित स्रोतों के आधार पर तथ्यों की जाँच कर सकता है।

(vi) अनुसंधान की कठिनाइयों, समस्याओं एवं दोषों का वर्णन प्रतिवेदन में अवश्य करना चाहिए ताकि प्रतिवेदन में कृत्रिमता न आए। इससे यह लाभ भी होगा कि भविष्य में किए जाने वाले अनुसंधानों के लिए ये महत्त्वपूर्ण निर्देशन का कार्य करेंगे।

(vii) एक आदर्श प्रतिवेदन में उन बातों का भी संकेत दिया जाता है जो अनुसंधानों के लिए उपयोगी हो।

(viii) अनुसंधानकर्त्ता एक आदर्श प्रतिवेदन मे ऐसे सुझावो को प्रस्तुत करता है जो निष्पक्ष होने के साथ-साथ अधिक रचनात्मक एव उपयोगी हो।

प्रतिवेदन की कुछ समस्याएँ (Some Problems of the Report)

प्रतिवेदन लिखना एक जटिल कार्य है। प्रतिवेदन तैयार करने मे जो समस्याएँ आती हैं, वे निम्नलिखित हैं—

(1) **भाषा की समस्या (Problem of Language)**—भाषा एक ऐसा शब्द है जो हमे भ्रम मे डाल देता है। भाषा कैसी होनी चाहिए, यह विषय विवादास्पद है। यदि भाषा सरल होगी तो यह आलोचना की जाएगी कि अनुसंधान का स्तर गिर गया है यदि भाषा मे कुछ कठिन या तकनीकी शब्द (Technical words) आते है तो यह कह कर आलोचना की जाती है कि भाषा समझने योग्य नही है, यह साधारण व्यक्ति के लिए उपयोगी नही है, इत्यादि। अनुसधानकर्त्ता अपनी पूर्ण लगन एव ईमानदारी से यही प्रयत्न करता है कि उसका प्रतिवेदन लोगो को पसन्द आए व लोगो के लिए उपयोगी हो परन्तु फिर भी इस समस्या का निवारण पूर्णरूपेण नही हो सकता।

(2) **ज्ञान-स्तर की समस्या (Problem of Intellectual level)**—प्रतिवेदन की यह एक गम्भीर समस्या है कि उसका स्तर कैसा होना चाहिए? सामान्यत यही कहा जाता है कि अनुसधान का प्रतिवेदन सामान्य जनता के लिए उपयोगी नही है क्योकि इसका स्तर ऊँचा है कि साधारण पढा लिखा व्यक्ति प्रस्तुत तथ्यो को समझ ही नही सकता। हालाँकि अनुसधानकर्त्ता का यही प्रयत्न रहता है कि वह प्रतिवेदन को इस प्रकार से प्रस्तुत करे एव इसके तथ्यो को ऐसे तरीके, (जैसे चित्र, ग्राफ इत्यादि द्वारा) से प्रस्तुत करे, जिसे थोडा पढा-लिखा व्यक्ति भी समझ सके। इतना करने के बावजूद भी सभी लोगो की समस्या का निवारण होना असम्भव है। यह भी सम्भव है कि यदि अनुसधानकर्त्ता जनता के केवल ज्ञान-स्तर को ही ध्यान मे रखकर प्रतिवेदन तैयार करता है तो उसकी मौलिकता मे कमी आ सकती है।

(3) **वैषयिकता की समस्या (Problem of Objectivity)**—अनुसधानकर्त्ता का उद्देश्य सदैव यह रहता है कि उसके प्रतिवेदन मे किसी प्रकार के मिथ्या भाव या पक्षपात समाविष्ट न हो। फिर भी अनुसंधानकर्त्ता समाज से कोई भिन्न इकाई नही है। उसका समाज से अटूट सम्बन्ध है, वह सामाजिक गतिविधियो में भाग लेता है एव व्यक्तिगत रूप से प्रभावित भी होता है। उसके स्वय के कुछ मूल्य, भावनाएं, आदतें एवं व्यवहार हैं जिनका प्रभाव उसके प्रतिवेदन पर किसी न किसी रूप मे पड़ेगा ही। ऐसी परिस्थिति मे पूर्ण वैषयिकता असम्भव है।

(4) **अवधारणाओं की समस्या (Problem of Concepts)**—अवधारणाओ द्वारा बड़े-बड़े तथ्यो या विस्तृत बात को कुछ ही शब्दो मे व्यक्त किया जा सकता

है। अनुसंधान में तो इनकी व्यावहारिक आवश्यकता है। जहाँ तक समाज विज्ञानों के अनुसंधानों का प्रश्न है, अवधारणाओं का अब तक पर्याप्त विकास नहीं हो पाया है, अतः तथ्यों को प्रस्तुत करने के लिए विस्तृत बातों को आवश्यक रूप में लिखना पड़ता है।

(5) सत्य कहने की समस्या (Problem of telling Truth)– अनुसंधानकर्ता के समक्ष यह सबसे समस्या है। वह यह जानता है कि वह जिस सत्य का उद्घाटन करेगा, उसका प्रभाव समाज के किसी न किसी वर्ग के लोगों पर अवश्य पड़ेगा। यदि वह वस्तु-स्थिति का उल्लेख करता है तो समाज के ठेकेदार व प्रभावशाली व्यक्ति उससे बदला लेने की भावना से प्रेरित होते हैं। यदि कोई सत्य बात अधिकारियों के बारे में कह दी गई तो उसे यह भय रहता है कि अधिकारीगण उस बात को प्रतिशोध की भावना से न ले लें। यदि वह सरकारी नीतियों का सही भंडाफोड़ प्रस्तुत कर देता है उसे यह भय रहता है कि कहीं सी० आई० डी० या डी० आर० आर० वाले पीछे न लग जायें। कहने का तात्पर्य यह है कि अनुसंधानकर्ता अपने दिल से निष्पक्षता चाहते हुए भी सत्य बात को कहने में घबराता है, उसे संकोच होता है क्योंकि वह उसके परिणामों का भी अन्दाज लगा लेता है, अतः प्रतिवेदन में समस्याएँ बनी ही रहती हैं।

प्रतिवेदन का महत्व (Importance of the Report)

1. ज्ञान के विस्तार में सहायक है।
2. प्रतिवेदन में उल्लिखित पद्धतियाँ भविष्य में अनुसंधान करने वाले के लिए बड़ी उपयोगी हो सकती हैं। इन पद्धतियों के आधार पर नवीन पद्धतियों की भी खोज की जा सकती है।
3. इनकी व्यावहारिक उपयोगिता है। कई सामाजिक समस्याओं का निवारण किया जा सकता है।
4. नवीन अध्ययनों के लिए मौजूदा प्रतिवेदन उपकल्पना के आधार बन सकते हैं।
5. प्रतिवेदन से कई अध्ययन विषयों की सामग्री उपलब्ध होती है। प्रतिवेदन मुख्यतः ज्ञान के प्रसार, समस्याओं के निवारण व भावी अनुसंधानों के आधार के रूप में बड़े सहायक, उपयोगी एवं लाभदायक हैं।

निदर्शन
(Sampling)

निदर्शन का पारिभाषिक विवेचन विविध प्रकार से किया गया है। गुडे तथा हाट्ट के अनुसार, "एक निदर्शन जैसा कि नाम से स्पष्ट है, एक विस्तृत समूह का अपेक्षाकृत छोटा प्रतिनिधि है।"[1] श्रीमती यंग के मतानुसार, 'एक साख्यिकी

1. "A sample, as the name applies, is a smaller representative of a larger whole" —*Goode and Hatt* Methods in Social Research, p 209

निदर्शन उस सम्पूर्ण समूह अथवा योग का एक प्रति लघु चित्र है जिसमे से निर्दशन लिया गया है।"[1] बोगार्डस के शब्दों में, "निदर्शन एक पूर्व-निर्धारित योजना के अनुसार इकाइयो के एक समूह मे से एक निश्चित प्रतिशत का चुनाव है।"[2] फ्रैंक याटन (Frank Yaton) की दृष्टि में, "निदर्शन शब्द का प्रयोग केवल किसी समग्र चीज की ईकाइयो के एक सैट या भाग के लिए किया जाना चाहिए जिसे इस विश्वास के साथ चुना गया है कि वह समग्र का प्रतिनिधित्व करेगा।"[3] मिल्ड्रेड पार्टन के मतानुसार, "एक निश्चित संख्या मे व्यक्तियो, मामलो या निरीक्षणो को एक समग्र विशेष मे से निकालने की प्रक्रिया या पद्धति अथवा अध्ययन हेतु एक समग्र समूह मे से एक भाग को चुनना निदर्शन-पद्धति कहलाती है।"[4]

निदर्शन के आधार
(Bases of Sampling)

(1) **समग्र की एकरूपता (Homogeneity of Universe)**—यदि समग्र की विभिन्न इकाइयो मे अधिक भिन्नताएँ नही हैं तो जिन इकाइयों को चुना जायेगा वे प्रतिनिधित्वपूर्ण होगी। थोडी बहुत तो भिन्नता मिलेगी, परन्तु सामान्यत उनमे एकरूपता मिलेगी अत. चयनित इकाइयो के आधार पर निकाला गया परिणाम अधिक विश्वसनीय व लाभप्रद होगा। लुण्डबर्ग के अनुसार, "यदि तथ्यो में अत्यधिक एकरूपता पायी जाती है अर्थात् सम्पूर्ण तथ्यो की विभिन्न इकाइयो मे अन्तर बहुत कम है तो सम्पूर्ण मे से कुछ या कोई इकाई समग्र का उचित प्रतिनिधित्व करेगी।"[5]

भौतिक वस्तुओ मे जो समानता पायी जाती है वह मानवीय जगत मे तो नहीं दृष्टिगोचर होती क्योंकि भौतिक वस्तुओ की उत्पादन प्रणाली मे समानता होती है। परन्तु सामाजिक घटनाओ, मानव-प्रवृत्तियो, आदतों व स्वभाव मे समानता न होने

1. "A statistical sample is a miniature picture of cross selectionof the entire group or aggregate from which the sample is taken"
—*Pauline V. Young* op cit, p 329
2. "Sampling is the selection of certain percentage of a group of items according to a predetermined plan" —*Bogardus* op. cit, p 548
3. "The term sample should be reserved for a set of units or portion of an aggregate of material which has been selected in belief that it will be a representative of the whole aggregate" —*Frank Yaton*
4. "Sampling method is the process or method of drawing a definite number of individuals, cases, or observations from a particular universe, selecting part of a total group for investigation" —*Mildred Parton*
5. "If the data are highly homogeneous, that is if the difference between the various items composing the whole body of data are negligible, then any item or group of item s is representative of the whole"
—*George A. Lundberg*, Social Research, p. 135.

के कारण निदर्शन का चुनाव कठिन हो जाता है। स्टीफेन (Stephen) के अनुसार जीवन के प्रत्येक पक्ष मे विविधता होने से एक दूसरे को अलग करना कठिन होता है। इस प्रकार के स्पष्ट विभाजनो के अभाव के कारण उस निदर्शन का चुनाव जटिल हो जाता है जो समुदाय मे विद्यमान समस्त विविधताओं का प्रतिनिधित्व कर सके।[1] इसीलिए इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि निदर्शन के चुनाव मे विभिन्न इकाइयो मे विविधता होने के बावजूद भी निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण होना चाहिए।

(2) प्रतिनिधित्वपूर्ण चयन (Representative Selection)— इस पद्धति के अंतर्गत समग्र म से इकाइयो को इस प्रकार चुना जाता है कि वे समग्र का प्रतिनिधित्व करें। इकाइयो का चयन करते समय बडी सावधानी की आवश्यकता है। एक दो इकाइयो को चुनकर हम प्रतिनिधित्वपूर्ण निष्कर्ष नही निकाल सकते। प्रतिनिधित्व का यह आधार है कि विशेष गुण या गुण समूह के आधार पर समस्त समूह को कुछ निश्चित वर्गों मे बाँट दिया जाता है और प्रत्येक वर्ग की कुछ इकाइयों को चुनने से समग्र का प्रतिनिधित्व सम्भव हो जाता है।

(3) अधिक परिशुद्धता की सम्भावना (Possibility of much accuracy)- यद्यपि निदर्शन मे शत प्रतिशत परिशुद्धता लाना मुश्किल है, तथापि यही कोशिश होनी चाहिए कि निदर्शन अधिक से अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण हो। प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन वास्तविक स्थिति का प्रतिबिम्ब होता है और उसके निष्कर्ष भी लगभग ठीक होते हैं। सामाजिक घटनाओं की विविधताओं के कारण निदर्शन का चुनाव यदि उचित रूप से कर लिया जाता है तो शुद्धता की सम्भावना काफी रहती है। उदाहरणार्थ, यदि हम महाविद्यालय के 300 विद्यार्थियो का अध्ययन निदर्शन पद्धति द्वारा करें तब अत मे पता चलता है कि उनमें से 7 प्रतिशत की महाविद्यालयो म देरी से आने की आदत है और जब समस्त विद्यार्थियो का अध्ययन करें तो हमें मालूम होता है देरी से आने-वालों की सख्या 7 5 प्रतिशत है। इससे हमारे निष्कर्ष पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पडता है। हम कह सकते है कि हमारे परिणामो मे काफी शुद्धता है, अर्थात् वे विश्वसनीय हैं।

निदर्शन के गुण
(Advantages of Sampling)

इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि निदर्शन पद्धति दिन प्रतिदिन लोकप्रिय होती जा रही है क्योकि सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक घटनाओं की

1 " This lack of clear cut divisions complicates the selection of a sample which will be representative of all the varieties present in the community ". —Stephen

जटिलता के कारण, जनगणना पद्धति अनुपयुक्त व कष्टदायक है, अतः अधिकतर इसी पद्धति का उपयोग किया जाता है। फिर इसमे त्रुटियों की सम्भावना भी कम रहती है, अतः इसके निष्कर्षों पर निर्भर रहा जा सकता है। रोजेण्डर के शब्दों मे, "यदि सावधानी से चुना जाए तो निदर्शन न केवल पर्याप्त सस्ता ही रहता है, बल्कि ऐसे परिणाम भी देता है जो बिल्कुल सत्य होते हैं तथा कभी-कभी तो सगणना के परिणामों से भी सत्य होते हैं। अतएव सावधानीपूर्वक चुना गया निदर्शन वास्तव मे एक त्रुटिपूर्ण रूप से नियोजित तथा क्रियान्वित सगणना से अधिक श्रेष्ठ होता है।"[1]

इसके प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं—

(1) समय की बचत (Saving of Time)—निदर्शन के अन्तर्गत कुछ चुनी हुई इकाइयों का अध्ययन किया जाता है, अतः स्वाभाविक है कि सगणना पद्धति मे जहाँ समग्र का अध्ययन करने से बहुत समय व्यर्थ चला जाता है, वहाँ इस प्रणाली द्वारा वास्तविक समय की बचत होती है। अनुसधानकर्ता के लिए समय बहुत महत्वपूर्ण होता है और यदि वह समय व्यर्थ गवाँता है तो वह अनुसधान के नवीन यत्रों, साधनो व प्रणालियो से परिचित नही हो सकता। इस प्रणाली को अपनाने से अनुसधानकर्त्ता अपने शेष समय का भी सदुपयोग कर सकता है।

(2) धन की बचत (Saving of Money)—इस पद्धति के अन्तर्गत जब कि कुछ ही इकाइयों का अध्ययन करना होता है तो उस पर किया गया खर्च भी अधिक नही हो सकता। उदाहरणार्थ, जब इकाइयों की सख्या सीमित है या छोटी है तो उससे सम्बन्धित खर्च, जैसे डाक व्यय साक्षात्कार लेने के लिए किया गया व्यय, सम्पूर्ण स्टेशनरी के सामान इत्यादि का व्यय कम हो जायेगा। सम्पूर्ण मे एक तो यत्र इतना व्यापक होता है फिर उस पर साधारण अनुसधानकर्त्ता तो खर्च कर ही नही सकता, उसे जो व्यय वहन करना पड़ता है वह कभी-कभी उसकी सीमा से बाहर की बात हो जाती है, अतः इस पद्धति को प्रयोग मे लाने से आर्थिक बचत अपेक्षाकृत अधिक ही होती है।

(3) परिणामों की परिशुद्धता (Accuracy of Results)—चूँकि इस पद्धति मे कुछ ही इकाइयों को लिया जाता है जो उस समग्र या समूह का प्रतिनिधित्व करती हैं। इससे परिणामो मे शुद्धता की गुंजाइश अधिक रहती है। परन्तु यह इस बात पर निर्भर करता है कि निदर्शन का चुनाव बड़ी सतर्कता व चतुरता से किया गया है। अमेरिका मे राष्ट्रपति के चुनाव मे प्रत्याशियों के जीतने व हारने की जो

1. "If carefully designed, the sample is not only considerably cheaper but may give results which are just accurate and sometimes more accurate than those of a cenus. Hence a carefully designed sample may actually be better than a poorly planned and executed census." —*A. C. Rosander.*

सम्भावना इस पद्धति के आधार पर की गई, वे आज भी हमे आश्चर्य मे डालने वाली है चूंकि ध्यान कुछ ही इकाइयो पर केन्द्रित रहता है, अत इस आधार पर उनकी शुद्धता का पता लग सकता है जो अनुसधान का प्रथम गुण है।

(4) गहन अध्ययन (Intensive Study)—जनगणना पद्धति मे अनुसधानकर्त्ता का ध्यान अनेक इकाइयों मे बँट जाने से केवल प्रमुख बातो का ही पता लग सक्ता है, अनेक बारीकियो का अध्ययन नही हो पाता है, अत इस पद्धति द्वारा सीमित इकाइयो का अध्ययन बडी गहराई से किया जा सकता है क्योंकि सभी इकाइयो के लिए इतना समय देना व इतने ही एकाग्रचित (Concentration) से अध्ययन सम्भव नही होना है।

(5) प्रबन्ध की सुविधा (Convenience of Management)—निदर्शन के अन्तर्गत कम इकाइयो का अध्ययन करना होता है, अत. अधिक सख्या मे कार्यकर्त्ताओ को नियुक्त करने की आवश्यकता नही पडती है और दूसरी बात कुछ ही लोगो से सूचना प्राप्त करनी होती है, अत साधन भी सुगमतापूर्वक उपलब्ध हो जाते हैं, सूचना के मिलने मे भी कोई देरी व असुविधा नही रहती है। कहने का तात्पर्य यह है कि जिन चयनित इकाइयो का अध्ययन किया जाता है, उस सम्बन्ध मे प्रबन्ध इतना जटिल व व्यापक नही होता, अत सम्पूर्ण सवक्षण आसान व सुविधाजनक होता है।

(6) लचीलापन (Flexibility)—चूँकि निदर्शनो की सख्या अधिक नही होती है, अत इसमे कभी-कभी सख्या को घटाया या बढाया जा सकता है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि अनुसधान की प्रकृति कैसी है समग्र की प्रकृति कैसी है, इनके आधार पर इसमे हेर फेर या परिवर्तन आसानी से किया जा सकता है जबकि जनगणनात्मक पद्धति म सम्पूर्ण अध्ययन करने के कारण, यह सम्भव नही है।

(7) सगणना पद्धति के उपयोग की असम्भावना (Impossibility of using the Census Method)—कभी ऐसी परिस्थितियाँ भी पैदा हो सकती हैं जिनमे सगणना पद्धति को उपयोग मे नही लाया जा सकता। जब समग्र विस्तृत या जटिल हो अथवा भौगोलिक दृष्टि से बहुत दूर-दूर बिखरा हो जहाँ पहुँचने तक के साधन उपलब्ध न हो तो ऐसी स्थिति मे सगणना पद्धति के स्थान पर निदर्शन पद्धति ही अधिक उपयोगी है।

निदर्शन पद्धति के दोष
(Demerits of Sampling Method)

निदर्शन पद्धति के अनेक लाभ होने के बावजूद भी इसमे कुछ न कुछ दोष अवश्य हैं। इसका प्रयोग सीमाओं के अन्दर ही किया जा सकता है। बिना नियन्त्रण के निदर्शन पद्धति उपयोगी सिद्ध नही हो सकती। इसमे अग्रलिखित दोष पाए जाते हैं—

(1) उचित प्रतिनिधित्व की समस्या (Problem of proper representation)—इसका प्रथम दोष यह है कि प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन, का चयन करना एक बहुत बड़ी समस्या है। जिसका कारण यह है कि सामाजिक व राजनीतिक इकाइयों में भिन्नता और विविधता बहुत अधिक होती है और जितनी अधिक भिन्नताएँ व विविधताएँ होंगी उतना ही प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चुनाव करना कठिन होता है। जब निदर्शन सही प्रतिनिधित्व नहीं कर पाता है तो उसके निष्कर्षों की विश्वसनीयता व प्रामाणिकता पर कम विश्वास किया जाता है। इसका प्रतिनिधित्वपूर्ण होना इस बात पर निर्भर रहता है कि कौनसी पद्धति को अपनाया गया है। यदि चुनाव पद्धति में ही गलती हो गई है तो निदर्शन भी प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं हो सकता।

(2) पक्षपात की सम्भावना (Possibility of bias)—इसका अन्य दोष यह है कि निदर्शन का चुनाव निष्पक्ष नहीं हो पाता है। जब इसके चयन में ही पक्षपातपूर्ण रवैया प्रवेश कर जाता है तो इस पद्धति से यह आशा नहीं की जा सकती कि इसके परिणाम बिल्कुल सत्य, तटस्थ व निष्पक्ष होंगे। प्रायः जब किसी विशेष उद्देश्य के लिए निदर्शन का चयन किया जाता है तो अभिमति या पक्षपात स्वतः ही आ जाती है और निकाले गए निष्कर्ष भी सामान्यतया अविश्वसनीय व भ्रांतिपूर्ण हो सकते हैं।

(3) आधारभूत व विशेष ज्ञान की आवश्यकता (Basic and Special knowledge required)—निदर्शनों का चुनाव बहुत ही जटिल कार्य है। जिन इकाइयों का चयन किया जा रहा है, उनकी प्रकृति का ज्ञान व उनकी आधारभूत बातों की जानकारी आवश्यक है। इस कार्य के लिए बड़े धैर्य, ज्ञान, सूझ-बूझ तथा अनुभव की आवश्यकता होती है। इन गुणों का समान रूप से सभी अनुसंधानकर्त्ताओं में पाया जाना मुश्किल है। इस कार्य के लिए कुछ ही ऐसे अनुभवशील, योग्य व विशेषज्ञ होते हैं जो इस पद्धति का सफलतापूर्वक उपयोग करने में समर्थ हैं।

(4) निदर्शन पालन की समस्या (Problem of sticking to sampling)—इस पद्धति के अन्तर्गत कुछ इकाइयों के आधार पर निष्कर्ष निकालने में असुविधा होती है जैसाकि यह पद्धति इस बात पर जोर देती है कि जिन इकाइयों को निदर्शन के रूप में चुना गया है, केवल उनका ही अध्ययन किया जाये। परन्तु व्यवहार में यह होता है कि चुनी हुई इकाइयों से भौगोलिक दूरी, सामाजिक व राजनीतिक स्थिति के कारण सम्पर्क भी स्थापित नहीं किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में अनुसंधानकर्त्ता उन्हें या तो अपने अध्ययन से ही निकाल देता है या उनके स्थान पर किसी ऐसे को चुन लेता है जो कि सम्भव हो प्रतिनिधित्वपूर्ण ही न हो। कई बार ऐसा होता है कि लोग सूचना देने में आनाकानी करते हैं, अतः मूल निदर्शन पर कायम रहना मुश्किल है।

(5) अनुसंधान में इसके प्रयोग की असम्भावना (Impossibility of its use in research)—सगणना पद्धति की भाँति यह भी कहीं कहीं असम्भव सिद्ध हो जाती है। जहाँ समग्र बहुत छोटा हो, एक जातीयता या एकरूपता का अभाव हो या विरोधाभास हो ऐसी स्थिति में इसका प्रयोग सम्भव नहीं है। यदि परिणाम प्राप्त करने की कोशिश की गई तो अन्तिम निष्कर्ष सत्य सिद्ध नहीं हो सकते। अत ऐसी स्थिति में सगणना पद्धति को ही प्रयोग में लाया जाता है।

इन दोषों के बावजूद भी इसके महत्त्व को कम नहीं किया जा सकता। इस प्रणाली द्वारा प्राप्त निष्कर्ष पर्याप्त सीमा तक शुद्ध एवं सत्य होते हैं।

निदर्शन पद्धतियाँ
(Methods of Sampling)

निम्नल पद्धति की सहायता से प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चुनाव किया जाता है। निष्कर्षों की यथार्थता के लिए यह आवश्यक है कि निदर्शन समग्र का पर्याप्त प्रतिनिधित्व कर सके। निदर्शन के चयन की प्रमुख पद्धतियाँ निम्नलिखित हैं—

(1) दैव (सयोग) निदर्शन पद्धति (Random Sampling Method)

समग्र की प्रत्येक इकाई को समान रूप से चुने जाने का अवसर देना ही इस पद्धति का उद्देश्य है। इसमें सम्पूर्ण समूह के सभी अंकों के चुने जाने की सम्भावना रहती है क्योंकि सबको समान महत्त्व का माना जाता है। यह प्रणाली अध्ययनकर्त्ता की इच्छा या पक्षपात से प्रभावित नहीं होती व पद्धति के अन्तर्गत किन किन इकाइयों को निदर्शन में शामिल किया जाएगा यह अध्ययनकर्त्ता के व्यक्तिगत झुकाव या इच्छा पर निर्भर न होकर सयोग पर निर्भर करता है। कहने का आशय यह है कि इकाइयों का चुनाव व्यक्ति के हाथ से निकलकर दैव सयोग होता है। थामस कारसन का मत है दैव निदर्शन में आने या निकल जाने का अवसर घटना के लक्षण से स्वतन्त्र होता है।[1]

इसकी परिभाषाएँ कई विद्वानों जैसे पार्टेन (Parten) हार्पर (Harper), गुडे तथा हाट्ट (Goode and Hatt) मोजर (Moser) इत्यादि ने दी है। पार्टेन के अनुसार दैव निदर्शन पद्धति चयन की उस पद्धति को कहते हैं जबकि समग्र में से प्रत्येक व्यक्ति को चुने जाने के समान अवसर हों, चयन दैवयोग से हुआ माना जाता है।'[2] हार्पर के शब्दों में, "एक दैव निदर्शन वह निदर्शन है जिसका चयन इस

1 In a random sample the chance of being drawn or thrown is independent of the character of the event
—*Thomas Carson* Elementary Social Statistics p 224

2 'Random sampling is the term applied when the method of selection assures each individual or element in the universe an equal chance of being chosen The selection is regarded as being made by chance
—*Parten*,

प्रकार हुआ हो कि समग्र की प्रत्येक इकाई को सम्मिलित होने का समान अवसर प्राप्त हुआ हो।"[1]

दैव निदर्शन की चयन विधियाँ (The Selection Method of Random Sample)—दैव निदर्शन पद्धति के अनुसार दैव निदर्शन के चयन की प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं—

(i) लॉटरी प्रणाली (Lottery Method)
(ii) कार्ड प्रणाली (Card Method)
(iii) नियमित अंकन प्रणाली (Regular Marking Method)
(iv) अनियमित अंकन प्रणाली (Irregular Marking Method)
(v) टिप्पेट प्रणाली (Tippet Method)
(vi) ग्रिड प्रणाली (Grid Method)

(i) लॉटरी प्रणाली (Lottery method)—सम्पूर्ण समूह की समस्त इकाइयों के नाम अथवा नम्बर कागज की चिटों (Chits) पर लिख दिए जाते हैं फिर किसी बर्तन में डालकर खूब हिला दिया जाता है ताकि वे पूर्णत अव्यवस्थित हो जाएँ। फिर आँख बन्दकर उतनी पर्चियां निकाल ली जाती हैं जितने निदर्शन छाँटने हों। अधिक इकाइयों की स्थिति में यह पद्धति अधिक उपयुक्त नहीं रहती है।

(ii) कार्ड या टिकट प्रणाली (Card or Ticket method)—इस प्रणाली मे एक ही आकार, रंग, मोटाई व चौडाई के कार्डों अथवा टिकटों पर सम्पूर्ण समूह की समस्त इकाइयो के नाम अथवा नम्बर अथवा कोई चिह्न अंकित कर दिए जाते हैं और बाद मे एक ड्रम मे भर दिए जाते हैं। फिर इसी ड्रम को हिलाकर, घुमाकर, उसमें पड़े कार्ड एक एक करके निकाले जाते हैं। जितनी इकाइयों का चयन करना हो, उतने कार्ड निकाले जाते है। लॉटरी प्रणाली मे आँखें बन्द करके पर्ची निकाली जाती है, लेकिन इसमे कोई भी व्यक्ति आँखें खुली रखकर कार्ड निकाल सकता है।

(iii) नियमित अंकन प्रणाली (Regular marking method)—इस प्रणाली के अन्तर्गत, सम्पूर्ण समूह की इकाइयो की क्रम संख्या डालते हुए एक सूची तैयार कर ली जाती है तथा यह तय कर लिया जाता है कि निदर्शन के लिए हमे कितनी इकाइयों का चयन करना है। तत्पश्चात् सूची को सामने रखकर एक संख्या से प्रारम्भ कर पाँच, दस, पन्द्रह या अन्य किसी अंक को नियमित कर अगली संख्याएँ चुनी जाती है। उदाहरण के लिए पचास बालकों मे से 5 बालक चुनने हैं तो प्रत्येक दसवाँ बालक हमारे चयन मे आता जायगा।

(iv) अनियमित अंकन प्रणाली (Irregular marking method)—इसमे समस्त इकाइयों की सूची बनाकर उसमे से प्रथम तथा अन्तिम अंक को छोड़कर शेष

1. "A random sample is a sample selected in such a way that every item in the population has an equal chance of being included —H. M. Harper

अन्य इकाइयों की सूची में से अध्ययनकर्त्ता अनियमित तरीके से इन विविध इकाइयों में उतने ही निशान लगाएगा जितने निदर्शन का चयन करना है। इस पद्धति में पक्षपात की सम्भावना रहती है।

(v) टिप्पेट प्रणाली (Tippet method)—प्रोफेसर टिप्पट ने दैव निदर्शन प्रणाली के लिए चार अंकों वाली 10400 संख्याओं की एक सूची बनाई थी। इन संख्याओं को बिना किसी क्रम के कई पृष्ठों पर लिखा गया है। अब यदि किसी अनुसंधानकर्त्ता को निदर्शन का चयन करना है तो वह प्रो० टिप्पेट द्वारा बनाई गई सूची के किसी भी पृष्ठ से लगातार उतनी ही संख्याओं को लेगा जितना उसे अपने निदर्शन के लिए चुनना है।

इसका एक नमूना यहाँ प्रस्तुत किया जाता है—

2952	3392	7979	3170
4167	1545	7203	3100
2370	3408	3563	6913
5060	1112	6608	4433
2754	1405	7002	8816
6641	9792	5911	5624
9524	1396	5356	2993
7483	2762	1089	7691
5246	6107	8126	8796
9143	9025	6111	9446

इसमें निदर्शन निकालने की विधि इस प्रकार है। माना कि हमें 8000 व्यक्तियों के एक सम्पूर्ण समूह (Universe) में 25 व्यक्ति निदर्शन में लेने हैं तो उपरोक्त सूची में से लगातार 25 संख्याएँ लेनी चाहिए और उन संख्याओं वाले व्यक्तियों से जानकारी प्राप्त की जानी चाहिए। इसमें सम्पूर्ण समूह की इकाइयों को किसी भी क्रम में रखा जा सकता है और इसके उपरान्त एक सूची तैयार कर दी जाती है। समग्र की इकाइयों के कम होने की अवस्था में भी टिप्पेट प्रणाली को ही प्रयोग में लाया जा सकता है। इस पद्धति को अधिक विश्वसनीय व वैज्ञानिक माना गया है।

(vi) ग्रिड प्रणाली (Grid method)—इसका प्रयोग क्षेत्रीय चयन के लिए किया जाता है। सर्वप्रथम विशाल क्षेत्र का भौगोलिक मानचित्र तैयार किया जाता है या तैयार किया हुआ प्राप्त किया जा सकता है। चयन के लिए सेल्यूलॉइड या पारदर्शक पदार्थ की मानचित्र के बराबर आकार की तख्ती ली जाती है जिस पर वर्गाकार खाने बने होते हैं। प्रत्येक खाने पर नम्बर लिखा होता है। अब माना कि हमें विशाल क्षेत्र से 30 ब्लाक चुनने हैं तो सर्वप्रथम यह ज्ञात किया जाता है कि कौन से 30 नम्बर चुनने हैं, ग्रिड को मानचित्र पर रखकर चुने हुए वर्गों के नीचे

पड़ने वाले क्षेत्रफल मे निशान लगा लिया जाता है। ये क्षेत्र ही निदर्शन की इकाइयाँ होती हैं।

दैव निदर्शन प्रणाली के गुण (Merits of Random Sampling Method)—दैव निदर्शन प्रणाली के मुख्य गुण निम्नलिखित हैं—

1. इस पद्धति मे निष्पक्षता होने के कारण प्रत्येक इकाई के निदर्शन मे चयन की सम्भावना रहती है।

2 यह प्रणाली अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण है। इकाइयो मे समग्र के लक्षण विद्यमान होते हैं।

3 यह पद्धति बहुत सरल है जिससे त्रुटि की सम्भावना नही रहती।

4 अशुद्धताओ का पता लगाया जा सकता है।

5 धन, समय व श्रम की बचत होती है।

दैव-निदर्शन प्रणाली के दोष (*Demerits of Random Sampling* Method)—प्रणाली मे मुख्य दोष इस प्रकार हैं—

(i) इकाइयो के चुनाव मे चयनकर्त्ता का कोई नियन्त्रण नही होता। दूर दूर स्थित इकाइयो से अध्ययनकर्त्ता सम्पर्क स्थापित नही कर पाता।

(ii) विस्तृत या सम्पूर्ण भूमि तैयार करना तब असम्भव हो जाता है जब समग्र (Universe) बहुत विशाल हो।

(iii) इकाइयो मे सजातीयता न होने की स्थिति मे यह पद्धति अनुपयुक्त है।

(iv) इस पद्धति मे विकल्प (Alternative) के लिए कोई स्थान नही है। चुनी हुई इकाइयो मे परिवर्तन नहीं किया जा सकता, अत ऐसी स्थिति मे परिणाम कुछ भी निकल सकता है।

(2) उद्देश्यपूर्ण निदर्शन (Purposive Sampling)

जब अध्ययनकर्त्ता सम्पूर्ण समूह (Universe) म से किसी विशेष उद्देश्य से कुछ इकाइयाँ निदर्शन के रूप म चुनता है तब उसे उद्देश्यपूर्ण, सप्रयोजन या सविचार निदर्शन प्रणाली की सज्ञा दी जाती है। जहोदा तथा कुक के अनुसार "उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के पीछे यह आधारभूत मान्यता होती है कि उचित निर्णय तथा उपयुक्त कुशलता के साथ व्यक्ति (अध्ययनकर्त्ता) निदर्शन मे सम्मिलित करने के हेतु इन मामलो को चुन सकता है तथा इस प्रकार ऐसे निदर्शनो का उद्देश्यपूर्ण विकास कर सकता है जो उसकी आवश्यकताओ के अनुसार सतोषजनक हैं।[1]

एडोल्फ जेन्सन के अनुसार, "उद्देश्यपूर्ण निदर्शन से आशय इकाइयो के समूहों की एक सख्या को इस प्रकार चयन करना है कि चयनित समूह मिलकर

1 "The basic assumption behind the purposive sampling is that with good judgement and an appropriate strategy, one can hand pick the cases to be included in the sample and thus develop samples that are satisfactory in relation to one s needs" —*Jahoda and Cook* op cit, p 570

उन विशेषताओं के सम्बन्ध में यथासम्भव वही औसत अथवा अनुपात प्रदान करें जो समग्र में है और जिनकी सांख्यिकीय जानकारी पहले से ही।"[1]

उद्देश्यपूर्ण निदर्शन प्रणाली की विशेषताएँ (Characteristics of purposive sampling method)—इसके प्रमुख गुण निम्न हैं—

(i) निदर्शन का आकार छोटा होने के कारण, यह प्रणाली कम खर्चीली होती है तथा उसमें समय की भी बर्बादी नहीं होती।

(ii) इस प्रणाली की उपयोगिता तब और भी बढ़ जाती है जब सम्पूर्ण की कुछ इकाइयाँ विशेष रूप से महत्वपूर्ण होती हैं।

(iii) इसमें अधिक प्रतिनिधित्व भी सम्भव होता है।

(iv) कम इकाइयों की अवस्था में, निदर्शन अधिक लाभप्रद होते हैं।

दोष (Demerits)—पाटन के अनुसार समस्त सख्या-शास्त्रियों को उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के पक्ष में एक शब्द भी नहीं कहना है। बेमैन इस प्रणाली को व्यय समझते हैं, क्योंकि—

(i) इसमें इकाइयों का चयन अध्ययनकर्त्ता स्वतन्त्र रूप से करता है, अतः निदर्शन पक्षपातपूर्ण होता है।

(ii) निदर्शन की अशुद्धियों का पता नहीं लगाया जा सकता।

(iii) अनुसंधानकर्त्ता, सम्पूर्ण समूह को नहीं समझ पाता।

स्नेडेकोर (Snedecor) के अनुसार, इसमें निम्नलिखित दोष पाए जाते हैं—

(i) सम्पूर्ण समूह का पहले से ही ज्ञान होना सम्भव नहीं।

(ii) निदर्शन पक्षपातपूर्ण हो सकता है।

(iii) जिन उपकल्पनाओं पर निदर्शन का अशुद्धता का अनुमान टिका रहता है वे व्यवहार में बहुत कम आती हैं।

(3) वर्गीय निदर्शन प्रणाली (Stratified Sampling Method)

वर्गीय निदर्शन प्रणाली में समग्र (Universe) को सजातीय वर्गों में बाँटकर प्रत्येक निश्चित वर्ग संख्या में इकाइयाँ दैव निदर्शन के आधार पर चयनित की जाती हैं। पाटन के अनुसार, "इसमें प्रत्येक श्रेणी के अन्तर्गत मामलों का अन्तिम चुनाव संयोग द्वारा ही होता है।"[2] सिन पाओ यॉग (Hsin-Pao Yang) के अनुसार, "वर्गीय निदर्शन का अर्थ है समग्र में से उप निदर्शनों को चुनना, जिनकी समान विशेषताएँ हैं, जैसे कृषि के प्रकार, खेतों का आकार, स्वामित्व, शैक्षणिक स्तर, आय, लिंग, सामाजिक वर्ग आदि। उप निदर्शनों के अन्तर्गत आने वाले इन तत्वों

1 "Purposive Sampling denotes the method of selecting a number of groups of units, in such a way that the selected groups together yield as nearly as possible the same averages as the totality with respect to those characteristics which are already a matter of statistical knowledge." —*Adolph Jenson*

2 "The final selection of cases within each stratum should be made at random." —*M Parten* op c t, p. 226.

(Elements) को एक साथ लेकर एक प्रारूप या श्रेणी के रूप मे वर्गीकृत किया जाता है।"[1]

इस प्रणाली मे अनुसधानकर्त्ता समग्र की सभी विशेषताओ के बारे मे जानकारी कर लेता है। इसी आधार पर वह सम्पूर्ण (Universe) को वर्गों मे बाँट देता है। तत्पश्चात् प्रत्येक वर्ग मे से निदर्शन का चयन करता है। सभी वर्गों मे से अलग-अलग निदर्शन चुनकर उन्हें मिला दिया जाता है जिसके द्वारा पूर्ण निदर्शन प्राप्त हो जाता है। प्रत्येक वर्ग से निदर्शन का चयन करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक वर्ग से उतनी ही इकाइयाँ ली जानी चाहिए जिस अनुपात मे वर्ग सम्पूर्ण (Universe) मे है। उदाहरणार्थ एक समग्र मे 100 इजीनियर, 80 भूगर्भवेत्ता, 70 डॉक्टर, 50 फोरमैन व 40 अध्यापक हैं और यदि हमे दस प्रतिशत निदर्शन का चयन करना है तो 10 इजीनियर, 8 भूगर्भवेत्ता 7 डॉक्टर, 5 फोरमैन, 4 अध्यापक को दैव निदर्शन प्रणाली द्वारा निदर्शन के रूप मे चयनित या चुन लेंगे।

वर्गीय निदर्शन के प्रकार (Kinds of Stratified Sampling)—इस पद्धति के प्रमुख प्रकार निम्नवत् हैं—

(i) समानुपातिक (Proportionate) वर्गीय निदर्शन—इसके अन्तर्गत प्रत्येक वर्ग से उसी अनुपात मे इकाइयाँ ली जाती हैं जिस अनुपात मे वर्ग की सभी इकाइयाँ समग्र मे सम्मिलित है।

(ii) असमानुपातिक (Disproportionate) वर्गीय निदर्शन—इसमे प्रत्येक वर्ग से समान अनुपात मे इकाइयाँ न लेकर समान सख्या में चुनी जाती हैं चाहे सम्पूर्ण समूह मे उनकी सख्या कुछ भी हो। इसका अर्थ यह हुआ कि निदर्शन मे इकाइयो की सख्या असमानुपातिक होगी, यदि विभिन्न वर्गों मे इकाइयाँ समान सख्या मे नही हैं।

(iii) भारयुक्त वर्गीय निदर्शन (Weighted stratified sampling)—इसमे प्रत्येक वर्ग से इकाइयो का समान सख्या मे तो चयन किया जाता है, परन्तु बाद मे अधिक सख्या वाले वर्गों की इकाइयो को अधिक भार देकर उनका प्रभाव बढा दिया जाता है।

वर्गीय निदर्शन के गुण (Merits of Stratified Sampling)—(i) किसी भी महत्वपूर्ण वर्ग के उपेक्षित होने की सभावना नही रहती क्योंकि प्रत्येक वर्ग की इकाइयो को निदर्शन मे स्थान मिल जाता है।

1 "Stratified sampling means taking from the population sub-samples which have common characteristics, such as types of farming, size of farms, and ownership, educational attainment, income, sex, social class etc These elements making up the sub-samples are drawn together and classified as a type or category."

—*Hsin Pao Yang*. Fact Finding with Rural People, pp 36-37.

(ii) विभिन्न वर्गों का विभाजन यदि सतर्कतापूर्वक किया जाता है तो थोडी-थोडी इकाइयों का चयन करने पर भी सम्पूर्ण समूह का प्रतिनिधित्व हो जाता है। जबकि दैव निदर्शन में प्रतिनिधित्व का गुण तभी आ सकेगा जब इकाइयों की संख्या पर्याप्त हो।

(iii) क्षेत्रीय दृष्टि से वर्गीकरण करने पर इकाइयों से सम्पर्क सरलतापूर्वक स्थापित नहीं किया जा सकता है। इससे धन व समय की बचत होती है।

(iv) इकाइयों के प्रतिस्थापन में सुविधा रहती है। यदि किसी व्यक्ति से सम्पर्क स्थापित नहीं किया जा सकता तो उसके स्थान पर उसी वर्ग का दूसरा व्यक्ति लिया जा सकता है जिसके सम्मिलित करने से परिणामों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता। स्टीफेन के शब्दों में, "इस बात की व्यवस्था कर देने से कि निदर्शन का एक निर्दिष्ट अंश प्रत्येक भौगोलिक क्षेत्र या आय वर्ग से लिया जाएगा, वर्गीय निदर्शन स्वतः निदर्शन के अप्राप्य व्यक्तियों के उसी वर्ग से दूसरे व्यक्तियों द्वारा प्रतिस्थापन की सुविधा प्रदान करता है तथा इस प्रकार निदर्शन में सम्भावित पक्षपात को, प्रतिस्थापन करने से उत्पन्न होता, दूर कर देती है।"[1]

वर्गीय निदर्शन के दोष (Demerits of Stratified Sampling)

(i) चुने हुए निदर्शन में यदि किसी विशेष वर्ग की इकाइयों को बहुत अधिक या बहुत कम स्थान दिया गया तो निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं हो सकता।

(ii) विभिन्न वर्गों के आकार में अधिक भिन्नता है तो समानुपातिक गुण नहीं लाया जा सकता।

(iii) असमानुपातिक आधार पर किए गए चयन में बाद में भार का प्रयोग करना पड़ता है। भार का प्रयोग करने समय अनुसंधानकर्ता पक्षपातपूर्ण रवैया अपना सकता है जिससे निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं हो सकता।

(iv) वर्ग का स्पष्टीकरण न होने की स्थिति में यह कठिनाई आती है कि इकाई को किस वर्ग में रखा जाये।

सावधानियाँ (Precautions)—इस प्रणाली को व्यवहार में लाते समय निम्नलिखित सावधानियाँ बरती जानी चाहिए—

(i) अनुसंधानकर्ता को समग्र के गुणों का ज्ञान होना चाहिए, अन्यथा वर्गीय विभाजन में वह कई गलतियाँ कर सकता है।

(ii) प्रत्येक वर्ग से उतनी ही इकाइयाँ उसको चुननी चाहिए जितने अनुपात में वे समग्र में हैं।

(iii) एक वर्ग के अन्तर्गत आने वाली सभी इकाइयों में एकरूपता हो, इसके लिए वर्गों का निर्माण सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।

1 *Frederic Stephen* : Stratification in Representative Sampling

(iv) वर्ग सुनिश्चित व स्पष्ट होने चाहिए ताकि सम्पूर्ण समूह (Universe) की सभी इकाइयाँ किसी न किसी वर्ग में आ जाएँ।

(4) निदर्शन प्रणालियो के अन्य प्रकार
(Other types of Sampling Methods)

निदर्शन की इनके अतिरिक्त पद्धतिया भी प्रचलित हैं, जो इस प्रकार हैं—

1. क्षेत्रीय निदर्शन प्रणाली (Area Sampling Method)
2. बहु स्तरीय निदर्शन प्रणाली (Multi-stage Sampling Method)
3. सुविधाजनक निदर्शन प्रणाली (Convenience Sampling Method)
4. स्वय-चयनित निदर्शन प्रणाली (Self-selected Sampling Method)
5. पुनरावृत्ति निदर्शन प्रणाली (Repetitive Sampling Method)
6. अभ्यश निदर्शन प्रणाली (Quota Sampling Method)

1 क्षेत्रीय निदर्शन प्रणाली (Area Sampling Method)—यह प्रणाली क्षेत्र निदर्शन वर्गीय निदर्शन (Stratified Sampling) का एक विशेष प्रकार है। जिस प्रकार वर्गीय निदर्शन के अन्तर्गत समग्र में से ऐसे उप-निदर्शनो (Sub-Samples) को लिया जाता है जिनमे समान विशेषताएँ हो, उसी प्रकार इस पद्धति के अन्तर्गत जिस क्षेत्र का अध्ययन करना हो उसे छोटे-छोटे क्षेत्रों मे या उप-क्षेत्रो में विभाजित कर दिया जाता है और उनमे एक निदर्शन का चयन कर लिया जाता है। क्षेत्र निदर्शन आधारभूत रूप में तो दैव-निदर्शन प्रणाली का ही स्वरूप है।

द्वितीय महायुद्ध से अमेरिका के जनगणना ब्यूरो और कृषि एव अर्थशास्त्र विभाग ने इस क्षेत्र-निदर्शन प्रणाली की प्रविधियों का अधिकाधिक प्रयोग किया है। इस प्रकार के निदर्शन मे छोटे क्षेत्रो को निदर्शन इकाइयो की सज्ञा दी जाती है। अनुसधानकर्त्ता क्षेत्र के सभी निवासियो का पूर्ण अध्ययन करता है।

जो आधारभूत निदर्शन इकाइयाँ चुनी जाती हैं वे सापेक्ष रूप से छोटी या बडी भी हो सकती हैं। इन इकाइयो का बडा या छोटा होना कई तत्त्वो पर निर्भर करता है जैसे—

(i) क्षेत्र का प्रकार
(ii) जनसंख्या
(iii) मानचित्रो की उपयोगिता
(iv) सम्बन्धित सूचना की जानकारी
(v) तथ्यो की प्रकृति।

ए० जे० किंग और जेंसन ने खेती के 'मास्टर सेम्पल' (Master Sample) मे जिन तत्त्वो (Factors) पर, खुले देश क्षेत्रो मे विचार किया था वे निम्न थे—

1. पहचानने योग्य सीमाएँ,
2. विशिष्ट आकार—खेतों की सख्या,

3 खण्डों (Segments) को अन्य निदर्शन में खण्डों की यथा योग्यता (Suitability)।

जहाँ जनसंख्या का घनत्व अधिक उच्च हो वहाँ छोटे छोटे निदर्शन खण्ड प्रयोग में लाए जाते हैं जिनमें खेत की इकाइयाँ और बगैर खेत की इकाइयों के निदर्शन का ध्यान रखा जाता है। लेकिन नगरों और कस्बों में खण्ड ब्लॉक भी हो सकते हैं या ब्लॉक के भी टुकड़े (Parts) हो सकते हैं।

जहाँ तक हो सके विस्तृत निदर्शन इकाइयों को नहीं चुना जाना चाहिए क्योंकि वे अधिक कार्यक्षम (Efficient) सिद्ध नहीं हुए हैं। बड़े शहरों में ब्लाक जैसे छोटी इकाइयों का प्रयोग में लाया जाना चाहिए। पी० वी० यंग के मतानुसार निदर्शन अभिकल्प (Sampling design) की कार्यक्षमता को बढ़ाने के लिए पते (Addresses) या निवास स्थान इकाइयों के उप-निदर्शन (Sub Sampling) का चयनित ब्लाक से चुना जाता है।

उदाहरणार्थ यदि हम एक शहर में निवास स्थानों के निदर्शन में जीवन-स्तरीय परिस्थितियों का अध्ययन करना चाहते हैं तो हमें उन निवास-स्थानों की सूची की आवश्यकता रहेगी। यह सूची निदर्शन के फ्रेम या ढाँचे का कार्य करती है लेकिन सूची मिलना अत्यन्त मुश्किल है। यदि इस सम्बन्ध में मानचित्र मिल जाए जिस पर निवास-स्थानों को दिखाया गया हो तो वह भी सुविधानुसार फ्रेम का कार्य कर सकता है। नगर क्षेत्र को ब्लॉकों में, जहाँ तक हो सके समान जनसंख्या में, विभाजित करते हैं। इन खण्डों की गणना कर ली जाती है और उनमें से एक दैव निदर्शन (Random Sampling) चुन लिया जाता है।

यदि 100 निवास स्थानों में एक ही निदर्शन (Sampling) की आवश्यकता है तो एक दैव खण्ड निदर्शन एक सौ खण्डों में लिया जा सकता है और प्रत्येक चयनित खण्ड में निवास-स्थान (Dwelling) को निदर्शन में सम्मिलित किया जा सकता है।

व्यावहारिक रूप में सामान्यतः बहु-स्तरीय निदर्शन को ही प्राथमिकता (Preference) दी जाती है। इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र को सजातीय क्षेत्रों में बाँट दिया जाता है। जहाँ तक सम्भव होता है उसे समान क्षेत्रों में बाँटा जाता है। इसके अतिरिक्त क्षेत्र निवासियों में भी अधिकाधिक समानता होनी चाहिए।

इसके पश्चात् प्रत्येक क्षेत्र में से उस इकाई को दैव निदर्शन प्रणाली से चुन लिया जाता है जिसका कि अध्ययन करना हो।

इस चयनित इकाई जैसे—गाँव या नगर में से कुछ गृह-समूह दैव निदर्शन प्रणाली के आधार पर चुन लिए जाते हैं और अंत में इन्हीं गृह-समूहों से कुछ परिवार दैव निदर्शन प्रणाली द्वारा चुन लिए जाते हैं।

यद्यपि क्षेत्र निदर्शन अमेरिका जैसे धनाढ्य देश मे ही लोकप्रिय है तथापि इसकी उपयोगिता को अन्य देश भी समझने लग गए हैं। क्षेत्र निदर्शन मे व्यक्तिगत अभिनति को बहुत ही कम स्थान मिल पाता है, इसलिए इस पद्धति को प्रयोग मे लाया जा रहा है।

यह पद्धति चूंकि अत्यधिक खर्चीली है, अत विकासशील देश या कम विकसित देश इसको उपयोग मे नही ला सकते। यद्यपि इसकी उपयोगिता और महत्त्व के बारे मे कोई सदेह नही है। प्रश्न केवल, अमेरिका जैसे देश को छोड, अन्य देशो मे इसके प्रयोग का है। ऐसी आशा की जाती है कि आने वाले समय मे इसका प्रभाव विश्व के अन्य भागो मे भी बढेगा।

2 बहुस्तरीय निदर्शन प्रणाली (Multi-stage Sampling Method)—इस प्रणाली के अन्तर्गत निदर्शन की चुनाव प्रक्रिया कई सोपानो से होकर गुजरती है—

(अ) सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र को सजातीय क्षेत्रो मे बाँट दिया जाता है।

(ब) दैव निदर्शन प्रणाली द्वारा कुछ ग्राम या नगर, जिनका अध्ययन करना होता है, चुन लिए जाते हैं।

(स) प्रत्येक ग्राम या नगर मे से कुछ गृह समूह दैव निदर्शन प्रणाली के आधार पर चुन लिए जाते हैं।

(द) अंतिम अवस्था मे गृह समूहो मे से कुछ परिवारो का चयन दैव निदर्शन प्रणाली द्वारा कर लिया जाता है।

3 सुविधाजनक निदर्शन प्रणाली (Convenience Sampling Method)—सुविधाजनक निदर्शन प्रणाली मे निदर्शन का चयन अनुसधानकर्ता अपनी सुविधा अनुसार करता है। यद्यपि यह प्रणाली वैज्ञानिक नही है तथापि इसका प्रयोग अनुसधान मे किया जा रहा है। इसके प्रमुख आधार धन, समय, कार्यकर्त्ता की दिलचस्पी व योग्यता इत्यादि हैं। इसे अनियमित या अवसरवादी निदर्शन प्रणाली भी कहा जाता है। इस प्रणाली का उपयोग तभी किया जाता है जब

(i) समग्र स्पष्ट रूप से परिभाषित न किया जा सके।

(ii) निदर्शन की इकाइयाँ स्पष्ट न हो।

(iii) जब पूर्ण स्रोत-सूची प्राप्त न हो।

4 स्वय-चयनित निदर्शन प्रणाली (Self-selected Sampling Method)—कई बार निदर्शन चुना नहीं जाता, अत सम्बन्धित व्यक्ति स्वय ही उसके अग बन जाते हैं। उदाहरण के लिए कोई कम्पनी राय जानने के लिए यह घोषणा करती है कि ग्राहक या धूम्रपान करने वाले अमुक अमुक सिगरेट को क्यो पसंद करते हैं, इसके सतोषजनक उत्तर के लिए इनाम दिया जावेगा तो इसी स्थिति मे धूम्रपान करने वाले अपनी राय उस सिगरेट की पसदगी के बारे मे भेजेंगे। इसमे

धूम्रपान करने वालों की राय के बारे में पता चल जाता है। इस प्रकार जो अपनी राय भेजेंगे वे ही निदर्शन के अंग बन जायेंगे।

5 पुनरावृत्ति निदर्शन प्रणाली (Repetitive Sampling Method)—इस पद्धति में निदर्शन कार्य एक बार नहीं अपितु अनेक बार होता है। इस पद्धति को इसलिए प्रयोग में लाया जाता है जिससे संभावित त्रुटियों को दूर कर उनमें कमी की जा सकती हो।

6 अभ्यंश निदर्शन प्रणाली (Quota Sampling Method)—सर्वप्रथम इस विधि में समग्र को कई वर्गों में बाँट दिया जाता है। तत्पश्चात् प्रत्येक वर्ग से चुनी जाने वाली इकाइयों की संख्या निश्चित कर दी जाती है। इस निश्चित संख्या को ही अभ्यंश (Quota) कहते हैं। जहोदा एवं कुक के अनुसार "अभ्यंश निदर्शन का प्राथमिक लक्ष्य ऐसे निदर्शन का चयन करना है जो ऐसी जनसंख्या का लघुरूप है जिसका सामान्यीकरण किया जाता है, अतः इसे जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने वाला कहा गया है।"[1]

निदर्शन की समस्याएँ और निदान
(Problems of Sampling and their Remedies)

यद्यपि निदर्शन पद्धति काफी लोकप्रिय व महत्त्वपूर्ण है, तथापि इसकी स्वयं की कुछ समस्याएँ हैं, जिनका वर्णन उपयोगिता की दृष्टि से करना आवश्यक है।

आकार की समस्या (Problem of Size)

निदर्शन प्रणाली में महत्त्वपूर्ण समस्या निदर्शन के आकार की होती है। आकार का छोटा या बड़ा होने का प्रत्यक्ष सम्बन्ध समय, धन, शुद्धता की मात्रा तथा संगठन से है। बड़े-बड़े निदर्शनों का संगठन कठिन होने के कारण वे अध्ययन के उपयुक्त नहीं रहते। गुडे तथा हाट्ट के शब्दों में, "एक निदर्शन को केवल प्रतिनिधित्व पूर्ण होना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उसमें पर्याप्तता भी होनी चाहिए। एक निदर्शन उस समय पर्याप्त होता है जिसका आकार उसके लक्षणों की स्थिरता में विश्वास स्थापित करने के लिए पर्याप्त हो।"[2]

निदर्शन का आकार छोटा होना चाहिए अथवा बड़ा यह निर्धारित करना बहुत कठिन कार्य है। छोटे आकार में पूर्ण प्रतिनिधित्व न होने की त्रुटि रहती है तथा बड़े आकार में भी कई कठिनाइयाँ जैसे श्रम, पैसा व समय इत्यादि की है। निदर्शन को निर्धारित करने में अग्रांकित तत्त्वों का प्रमुख प्रभाव पड़ता है—

1 "The basic goal of quota sampling is the selection of a sample that is a replica of the population to which one wants to generalize ... hence the notion that it 'represents' that population." —*Jahoda and Cook*

2 "A sample not only needs to be representative, it needs also to be adequate. A sample is adequate when it is of sufficient size to allow confidence in the stability of its characteristics." —*Goode & Hatt*, op. cit., p. 225

(i) समग्र की प्रकृति (Nature of Universe)—सजातीय इकाइयो वाले समग्र मे थोडे से प्रतिदर्शन से भी प्रतिनिधित्व पर्याप्त हो सकता है। विभिन्न इकाइयो वाले समग्र मे बडा निदर्शन उपयुक्त रहता है।

(ii) अध्ययन की प्रकृति (Nature of Study)—अध्ययन की प्रकृति के आधार पर ही निदर्शन का आकार निर्धारित करना होता है। अतः यदि इकाइयो के गहन अध्ययन की आवश्यकता अधिक समय के लिए न हो तो छोटे निदर्शन को अपनाना उपयुक्त होगा। यदि अध्ययन विस्तृत हो तो निदर्शन बडा चुनना होगा।

(iii) वर्गों की संख्या (Number of Strata)—यदि समग्र मे विभिन्न प्रकार के वर्गों का समावेश है, उनमे काफी विविधताएँ हैं तो स्वाभाविक रूप से ही निदर्शन का आकार बडा करना पडेगा। परन्तु यदि वर्गों की सख्या कम है और साथ मे इकाइयो मे भी एकरूपता है तो छोटा निदर्शन उपयुक्त हो सकता है।

(iv) उपलब्ध साधन व स्रोत (Available means and resources)—अनुसधानकर्ता के पास समय, धन, कार्यकर्त्ताओ, आवागमन के साधन व अन्य सामग्री पर्याप्त है तो बडे निदर्शन का चुनाव किया जा सकता है लेकिन इसके विपरीत जितने साधन व स्रोत कम होगे, उस निदर्शन का आकार उसी अनुपात मे छोटा होगा।

(v) निदर्शन पद्धति (Sampling Method)—यदि दैव निदर्शन प्रणाली का प्रयोग करना है तो निदर्शन का आकार बडा होना चाहिए जिससे अधिक सख्या मे विभिन्न गुणो वाली इकाइयो का चुनाव का अवसर प्राप्त हो सके। सविचार या वर्गीय निदर्शन मे कम इकाइयो का चुनाव भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व कर सकता है।

(vi) परिशुद्धता की मात्रा (Degree of Accuracy)—यद्यपि छोटे आकार के निदर्शन भी काफी विश्वसनीय तथा प्रतिनिधित्वपूर्ण हो सकते हैं, तथापि सामान्यत बडे निदर्शनो मे परिशुद्धता की मात्रा अधिक होती है।

(vii) चयनित इकाइयों की प्रकृति (Nature of Selected Units)—निदर्शन का आकार इकाइयो की प्रकृति पर बहुत कुछ निर्भर करता है। यदि इकाइयाँ अधिक बिखरी हुई हैं तो उनसे सम्पर्क स्थापित करने मे कठिनाई के अलावा, समय व धन भी अधिक खर्च होते है। ऐसी स्थिति मे यदि निदर्शन का आकार छोटा हो तो उत्तम रहेगा, इससे विपरीत अवस्था मे निदर्शन का आकार बडा लेना चाहिए।

(viii) अध्ययन के उपकरण (Tools of Study)—यदि प्रत्येक के घर जाकर अनुसूचियाँ तैयार करनी हैं तो छोटा निदर्शन उपयुक्त रहेगा और यदि डाक द्वारा ही प्रश्नावलियाँ भेजनी हैं तो बडा निदर्शन भी उपयुक्त होगा। प्रश्नो की सख्या,

आकार तथा उनकी प्रकृति पर भी निदर्शन का आकार निर्भर करता है। यदि प्रश्न छोटे, सख्या मे कम व सरल हैं तो बडा निदर्शन उपयुक्त रहता है अन्यथा छोटा निदर्शन अपनाना चाहिए।

उपर्युक्त कारको के अध्ययन से पता चलता है कि निदर्शन के आकार के सम्बन्ध मे कोई निश्चित नियम व सिद्धान्त नही है बल्कि परिस्थितियाँ ही उसके आकार को निर्धारित करती है। सभी प्रभावशाली कारको के सम्बन्ध मे सावधानी बरती जानी चाहिए। पार्टेन के मतानुसार, "अनावश्यक खर्च से बचने के लिए निदर्शन के काफी छोटा और असहनीय अशुद्धि से बचने के लिए उसे पर्याप्त बडा होना चाहिए।"[1]

अभिनति या पक्षपातपूर्ण निदर्शन की समस्या (Problem of Biased Sample)

निदशन के चुनाव पर पक्षपात का प्रभाव पडने से निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं हो सकता ऐसे निदर्शन को अभिनति या पक्षपातपूर्ण निदर्शन (Biased Sample) की सज्ञा दी जाती है। निदशन मे अभिनति निम्नलिखित कारणों से उत्पन्न हो सकती है—

(i) आकार छोटा होने से (The size being small)—निदर्शन का आकार छोटा होने के कारण बहुत सी इकाइयो को चुने जाने का अवसर नही मिलता है। ऐसी अनेक महत्त्वपूर्ण इकाइयाँ हो सकती हैं जिन्हे सम्मिलित नही किया गया है, ऐसी स्थिति मे निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नही हो पाता।

(ii) उद्देश्यपूर्ण निदर्शन (Purposive Sampling)—सविचार या उद्देश्यपूर्ण निदर्शन प्रणाली मे अनुसधानकर्त्ता को निदर्शनो के चुनने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। फलत पक्षपात का प्रवेश सरल हो जाता है। दूसरी स्थिति यह भी है कि अनुसधानकर्त्ता जिन इकाइयो से सम्पर्क स्थापित करने मे कठिनाई महसूस करता है, उनको छोड देता है और वह केवल उन्ही का निदर्शन म स्थान देता है जो कठिन व असुविधाजनक न हो। परन्तु ऐसी स्थिति म भी निदर्शन निष्पक्ष नहीं हो पाता है।

(iii) दोषपूर्ण वर्गीकरण (Defective Stratification)—वर्गीय निदर्शन विधि के अन्तर्गत दोषपूर्ण वर्गीकरण निदशन को अभिनति या पक्षपातपूर्ण (Biased) बना देता है। यदि वर्ग अस्पष्ट व असमान होगे तो निदर्शन पक्षपातपूर्ण हो जायेगा। इसी प्रकार यदि वर्ग मे असमान सख्या मे इकाइयाँ हैं और उन्हे निदशन मे समान स्थान दिया जाता है तो निदशन न केवल असमानुपातिक होगा बल्कि अनुचित रूप मे भारयुक्त भी हो जाएगा। इकाइयो को गलत वर्ग मे रखने से चुनाव भी अनुचित रूप से होता है।

1 "The sample should be small enough to avoid unnecessary expenses and large enough to avoid intolerable sampling error" —*Parten*

(iv) अपूर्ण स्रोत-सूची (Incomplete Source list)—यदि साधन सूची अधूरी, पुरानी या अनुपयुक्त है तो स्वभावतः निदर्शन का चुनाव अनुसंधानकर्त्ता की इच्छानुसार होगा। इससे निदर्शन अभिनतिपूर्ण हो जाता है।

(v) कार्यकर्त्ताओं द्वारा चयन (Selection by Workers)—जब इकाइयों के चयन की अनुमति कार्यकर्त्ताओं को दी जाती है तो उनकी लापरवाही के कारण चयन में पक्षपात प्रवेश कर जाता है। यदि इकाइयों में एकरूपता पायी जाती है तो इसकी सम्भावना कम रहती है अन्यथा निदर्शन अभिनतिपूर्ण होगा क्योंकि इकाइयों का चुनाव कार्यकर्त्ताओं ने अपनी इच्छानुसार किया है।

(vi) सुविधानुसार निदर्शन (Convenience Sample)—इसके अन्तर्गत अनुसंधानकर्त्ता को पूर्ण छूट रहती है कि वह सुविधानुसार निदर्शनों का चुनाव कर सकता है, ऐसी स्थिति में निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं हो पाता और उसमें पक्षपात का प्रवेश होना स्वाभाविक हो जाता है।

(vii) दोषपूर्ण दैव निदर्शन (Defective Random Sampling)—यद्यपि इस पद्धति के अन्तर्गत प्रत्येक इकाई को चुने जाने के समान अवसर प्राप्त होते है, लेकिन त्रुटिपूर्ण ढंग से इस पद्धति को प्रयोग में लाने से मिथ्या झुकाव का प्रवेश अनजाने में ही हो जाता है। यदि गोलियों को बनाने में असावधानी बरती गई तो गोलियाँ छोटी बड़ी हो सकती है क्योंकि बड़ी गोली हाथ में जल्दी आती है। इसी प्रकार परचियों को अच्छी तरह हिलाकर या घुमाकर नहीं मिलाया गया तो ऊपर की परची आ सकती है जो सबका प्रतिनिधित्व नहीं करती है।

(viii) अनुसंधान विषय की प्रकृति (The Nature of Research Subject)—यदि तथ्य सजातीय, समान व सरल नहीं हैं तो पूर्णतः प्रतिनिधि निदर्शन का चुनाव कठिन हो जाता है।

कुछ सुझाव (Some Suggestions)

(i) अभिनति के कारणों को जानने के पश्चात् अध्ययनकर्त्ता को इनके दुष्परिणामों से बचे रहने का प्रयत्न करना चाहिए।
(ii) अनुसंधानकर्ता को अध्ययन समस्या का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।
(iii) अध्ययनकर्ता द्वारा चयनित निदर्शन विधि समस्या के अनुकूल होनी चाहिए।
(iv) वैषयिकता (Objectivity) पर ध्यान दिया जाना चाहिए।
(v) निदर्शन का आकार पर्याप्त होना चाहिए।
(vi) निदर्शन की इस आधार पर जाँच की जानी चाहिए कि उसमें प्रतिनिधित्व है अथवा नहीं।

निदर्शनों की विश्वसनीयता का माप (Measurement of Reliability of Samples)—निदर्शन की विश्वसनीयता की जाँच करने के लिए अग्रलिखित उपाय प्रयोग में लाए जा सकते हैं—

(1) समानान्तर निदर्शन (By Parallel Sample)—निदर्शन की सत्यता की जाँच के लिए किसी अन्य प्रणाली द्वारा समग्र से उसी आकार का एक निदर्शन चुन कर दोनों की विभिन्न सांख्यिकीय मापों से तुलना की जाती है। यदि दोनों में पर्याप्त समानता है तो निदर्शन को विश्वसनीय माना जा सकता है। यदि समानता नहीं भी पायी गई हो तो भी उसमें विश्वास प्रकट किया जा सकता है क्योंकि पूर्णत एक समान कोई भी नहीं हो सकता।

(2) सम्पूर्ण समूह से तुलना (Comparison with Universe)—निदर्शन के तथ्यों की समस्त समग्र के तथ्यों से तुलना करके दोनों की समानता का पता लगाया जा सकता है। कुछ समग्र की बहुत सीमाएँ ध्यान में होती हैं, जैसे लिंग, अनुपात, आयु इत्यादि। इन मापों का पता होने पर निदर्शन द्वारा निकाली हुई मापों की तुलना उनसे की जा सकती है और काफी सीमा तक यदि समानता है तो उन्हें विश्वसनीय माना जा सकता।

(3) सर्वेक्षण की पुनरावृत्ति (Repetition of Survey)—यदि मिलती-जुलती प्रकृति के सर्वेक्षण की पुनरावृत्ति की जाती है तो उनमें प्रयोग किए गए निदर्शन की सत्यता व विश्वसनीयता का पता चल सकता है। वर्तमान समय में यह पद्धति काफी लोकप्रिय व विश्वसनीय है। यदि निदर्शनों के चुनाव में अत्यन्त सावधानी बरती जाए तो वे अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण हो सकते हैं, फलत शुद्ध निष्कर्ष निकलने की पूर्ण गुंजाइश रहती है। आधुनिक सामाजिक अनुसंधानों में इस विधि का उपयोग किया जा रहा है। दूरदर्शिता व अनुभव से यह प्रणाली और भी उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

5

मनोवैज्ञानिक पद्धतियाँ : अनुमापन, तीव्रतामापक, प्रक्षेपी प्रविधियाँ, सामग्री तथा प्रत्युत्तर विश्लेषण

(Psychological Methods : Scaling, Rating, Projective Techniques, Content and Response Analysis)

अनुमापन प्रविधियाँ
(Scaling Techniques)

आधुनिक सामाजिक अनुसंधानो मे अनुमापन प्रविधियो का अपना एक प्रमुख स्थान है। इसका महत्त्व इस बात से स्पष्ट प्रतीत होता है कि सामाजिक शोध कार्यों मे इस पर बहुत अधिक बल दिया जा रहा है। यद्यपि सामाजिक क्षेत्रो मे काफी उन्नति होनी शेष है तथापि सामाजिक विषयो की परिपक्वता और प्रगति आधुनिक वैज्ञानिक साधनो पर निर्भर है। अनुमापन प्रविधियाँ इस बात का प्रतीक हैं कि अनुसधानकर्त्ता किसी सामाजिक घटना का मापन कर उनकी विशेषताओं को गणनात्मक रूप मे व्यक्त कर सकता है। इसमे कोई सन्देह नही है कि सामाजिक घटनाएँ अमूर्त, जटिल और परिवर्तनशील होने के कारण, अनुमापो का प्रयोग इनमे असम्भव नही तो कठिन अवश्य है। मनुष्य की भावनाओं, मनोवृत्तियो, दृष्टिकोणों और उसकी मान्यताओं को मापना एक अत्यन्त ही कठिन कार्य है। अत समाजशास्त्र के लिए यह चुनौती है कि वह ऐसी प्रविधियो को अपनाए एव स्वय को भी इस योग्य बनाये कि वह सामाजिक घटनाओं का अनुमापन सुगमतापूर्वक कर सके। पी. वी. यग के शब्दो मे, "यद्यपि इस क्षेत्र मे बहुत-सा कार्य अभी प्रारम्भिक अवस्था मे ही है, तथापि यह कहा जा सकता है कि जैसे ही समाजशास्त्र एक विज्ञान के रूप मे विकसित होगा, वर्तमान मापकयन्त्रो एव पद्धतियो का विकास होगा तथा नवीन एव अधिक सही मापकयन्त्र विकसित होगे।"[1]

सामाजिक घटनाओं के लिए ऐसे यन्त्रो व साधनो की आवश्यकता है जो गुणात्मक तथ्यो को गणनात्मक रूप मे व्यक्त कर सकें। इस क्षेत्र मे नवीन

1 *P V Young op cit, p 348*

अनुसंधान संचालित किये जा रहे है एवं सामूहिक अध्ययन द्वारा इस तथ्य पर बल दिया जा रहा है कि समाजशास्त्र को वैज्ञानिक एवं अधिक शुद्ध बनाएं ताकि सामाजिक समस्याओं का समाधान हो सके। आधुनिक युग मे जितने भी अनुसंधान किये जा रहे हैं, चाहे वे प्राकृतिक विज्ञानो मे हो या सामाजिक विज्ञानो मे, उनका मुख्य आधार व्यावहारिक उपयोगिता है। यदि वे इस उद्देश्य को महत्व न देकर कोरे आदर्शवाद पर ही बल देते हैं तो ऐसी स्थिति मे समाजशास्त्र अपनी वास्तविक भूमिका निभाने मे असफल रहेगा।

उपयोगिता (Utility)

अनुमापो की उपयोगिता को प्रत्येक विज्ञान स्वीकार करता है। अनुमाप जितने परिशुद्ध होंगे विज्ञान की उन्नति उतनी ही अधिक आंकी जाएगी। सामाजिक घटनाओं की प्रकृति गुणात्मक होने के कारण परिशुद्धमाप की समस्या एक विकट समस्या है। परन्तु समाज विज्ञानो ने समय-समय पर इन चुनौतियों को स्वीकार कर विश्वसनीय अनुमापो का विकास किया है। ऐसा करना इसीलिए भी आवश्यक हो जाता है ताकि समाजशास्त्र अपनी वैज्ञानिक स्थिति बनाए रखे अतः समाजशास्त्र व समाज विज्ञानो मे अनुमापो की उपयोगिता अधिक है।

(1) प्रामाणिकता प्राप्ति के लिए (For Attaining Validity)—समाज विज्ञानों की प्रगति इस तथ्य पर आधारित है कि क्या उसके अन्तर्गत घटित होने वाली घटनाओं को सही रूप मे मापा जा सकता है। सामाजिक विज्ञान तब तक प्रगतिशील नहीं कहलाएंगे जब तक अनुमापन विधियों का उत्तरोत्तर विकास व वृद्धि नहीं होती। अनुमापन प्रविधियों द्वारा ही घटनाओं की प्रामाणिकता को सिद्ध किया जा सकता है। कोई भी विज्ञान प्रगतिशील होने का दावा नहीं कर सकता जब तक कि अत्याधुनिक अनुमापन प्रविधियाँ अनुसंधानकर्ता को अपने अनुसंधान कार्य मे उपलब्ध नहीं हो पाती। गुडे तथा हॉट के शब्दो मे, "सभी विज्ञान अधिकतम परिशुद्धता की दिशा मे अग्रसर होते हैं। इस परिशुद्धता के अनेक रूप हैं, पर उसका एक आधारभूत रूप है—क्रमबद्ध श्रेणियों का माप।"[1]

(2) विश्वसनीयता के लिए (For Reliability)—चूंकि सामाजिक घटनाएँ गुणात्मक होती हैं, अतः उनकी सत्यता व असत्यता को ज्ञात करना कठिन हो जाता है। सत्यता का पता लगाने तथा उन पर विश्वास करने के लिए अनुमापों की आवश्यकता निःसंदेहात्मक है। कुछ घटनाओं की प्रकृति इतनी सरल होती है कि उन पर हम विश्वास कर सकते हैं, परन्तु उसका आधार प्रस्तुत करने के लिए अनुमापन प्रविधियों का सहारा लेना पड़ेगा। अनुसंधानकर्ता को स्वयं में आत्मविश्वास पैदा करने तथा अन्य लोगों के संदेह को दूर करने के लिए अनुमापो की उपयोगिता अपरिहार्य है।

1. *Goode and Hatt*, op cit, p 232

(3) वैषयिकता के लिए (For Objectivity)—समस्त विज्ञानों का ध्येय वैषयिकता प्राप्ति है। इसका कारण है कि यदि हमारे अनुसंधान कार्य में व्यक्तिगत अभिरुचि या पक्षपात (Personal bias) प्रवेश कर जाता है तो अनुसंधान का सम्पूर्ण उद्देश्य ही पराजित होता है। अतः वैषयिकता प्राप्ति के लिए अनुमापन प्रविधियाँ ही उपयुक्त हैं। ये ऐसे यान्त्रिक साधन हैं जिनके द्वारा हम वैषयिक निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं।

अनुमापन की सामान्य समस्याएँ
(General Problems of Scaling)

समाजशास्त्र एक विज्ञान के रूप में निरन्तर प्रगतिशील है। यह सत्य है कि इसके अन्तर्गत अनुमापों का निर्माण करना बहुत कठिन कार्य है क्योंकि सामाजिक घटनाएँ जटिल और अमूर्त होती हैं। अनुमापन के निर्माण में जो सामान्य कठिनाइयाँ आती हैं, उनका विवेचन निम्नांकित रूप में किया जा सकता है—

(1) अनुक्रम की परिभाषा (Definition of Continuum)

अनुमापन के निर्माण में सर्वप्रथम यह बाधा आती है कि जिस घटना का मापना है वह मापने योग्य है अथवा नहीं? मापनीयता का क्या आधार है? मापनीयता के लिए घटना में निरन्तरता का होना अति आवश्यक है। जिन कारकों को मापा जाता है वे तार्किक रूप से एक दूसरे से सम्बन्धित होने चाहिए। यदि वे तर्क-सम्बद्ध नहीं हैं या अव्यवस्थित नहीं हैं तो उनको मापना असम्भव है। जहाँ तक भौतिक विज्ञान या प्राकृतिक विज्ञान का प्रश्न है, वहाँ निरन्तरता तथा क्रम को रखा जा सकता है। लेकिन सामाजिक घटनाएँ अस्थिर व परिवर्तनशील होती हैं, अतः उनमें निरन्तरता लाना अत्यन्त कठिन कार्य है। फिर भी अनुमापन के निर्माण में अत्यन्त कुशलता, चेतनता एवं जागरूकता की आवश्यकता होती है। यदि अनुमापन का शुद्ध निर्माण करना है तो सर्वप्रथम अनुसंधानकर्ता को सम्बन्धित विषय की पूरी जानकारी होनी चाहिए।

अतः अनुसंधानकर्ता को चाहिए कि वह असम्बन्धित पदों को अपने अनुमापन में सम्मिलित न करे।[1] कुछ प्रमुख ध्यान देने योग्य बातें इस प्रकार हैं—

(i) अनुसंधानकर्ता को पदों के समग्र का ज्ञान होना चाहिए बिना समग्र के ज्ञान के उसमें पदों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में आत्म-विश्वास उत्पन्न नहीं हो सकेगा।

(ii) अनुक्रमों को स्पष्ट परिभाषित करना आवश्यक है। गुडे तथा हाट्ट के अनुसार अनुक्रम को परिभाषित करने में एक और महत्वपूर्ण बिंदु ध्यान में रखना आवश्यक है वह है जनसंख्या की प्रकृति (Nature of the population) जिसका अनुमापन करना है। मनोवृत्ति का एक अनुक्रम एक समूह में विद्यमान है तो दूसरे में नहीं है। उदाहरणार्थ, जो सुविधाएँ भारत में एक प्रशासनिक अधिकारी

1. *Goode and Hatt* op cit, p 234.

को प्राप्त है वह उससे बहुत सन्तुष्ट हैं लेकिन अन्यत्र किसी देश, जैसे अमेरिका मे प्रशासनिक अधिकारी को प्राप्त है वह उनसे सतुष्ट नही है।

अत अनुमापन के निर्माण म बडी ही कुशलता, सावधानी एव सतर्कता की आवश्यकता है।

(2) विश्वसनीयता (Reliability)

अनुमापन क निर्माण की दूसरी महत्त्वपूर्ण समस्या विश्वसनीयता है। जो अनुमापन तयार किया जा रहा है वह विश्वसनीय होना चाहिए अत इसकी जाँच पहले से ही कर लेनी चाहिए। गुडे तथा हाट्ट के अनुसार, एक अनुमापन तभी विश्वसनीय माना जाता है जब उसे एक ही निदर्शन (Sample) पर बार बार लागू किए जाने पर एक ही परिणाम निकलता है। इस प्रकार वह अनुमापन भी बेकार है जो एक निदर्शन पर बार-बार प्रयोग मे लाने से भिन्न-भिन्न परिणाम देता है।

पैमाने की विश्वसनीयता की जाँच करने के लिए गुडे तथा हाट्ट ने निम्नलिखित तीन पद्धतियाँ बतलाई है—

(i) परीक्षा-पुनर्परीक्षा (Test retest)—इसके अन्तर्गत पैमाने को उसी जनसख्या पर दो बार लागू किया जाता है और प्राप्त परिणामो की तुलना की जाती है।[1] यदि दोनो परिणामो मे अधिक समानता है तो हम अनुमाप को विश्वसनीय मान सकते हैं। इसके विपरीत यदि दोनो परिणामो मे बहुत अन्तर है तो हम उसे विश्वसनीय नही मान सकते। साथ ही इस बात का भी पता लगाना चाहिए कि दोनो परिणामो मे काफी असमानता उत्पन्न करने वाले कौन कौन से कारक हो सकते हैं। इस तथ्य को ज्ञात करने के लिए मूल जनसख्या (Orig nal population) को दैव रूप (Randomly) मे दो भागो मे विभक्त करने के पश्चात् उन पर नियन्त्रण समूह प्रणाली लागू की जानी चाहिए।

(ii) बहु या विविध स्वरूप (Multiple form)—इसके अन्तर्गत एक ही अनुमाप को दो रूपो मे अलग-अलग प्रकट किया जाता है। बाद म एक एक करके उसी निदर्शन मे लागू किया जाता है। यदि परिणामो मे पर्याप्त समानता पायी जाती है तो पैमाना विश्वसनीय माना जाएगा।

(iii) अर्द्ध-भागों मे बाटना (Split Half)—इसम अनुमाप को दो समान भागो मे विभाजित किया जाता है और प्रत्येक भाग का पूरा पैमाना मानकर एक ही समूह पर लागू किया जाता है। यदि दो भागो के परिणामो मे पर्याप्त सहसम्बन्ध है तो पैमाने को विश्वसनीय माना जाएगा।

(3) प्रामाणिकता (Validity)

अनुमापन निर्माण मे अन्य महत्त्वपूर्ण समस्या प्रामाणिकता की आती है। प्रामाणिकता से तात्पर्य है कि पैमाना जिस उद्देश्य से बनाया गया है, वह उस

1 *Goode and Hatt* op cit, p 23.

उद्देश्य के अनुरूप बैठता है अथवा नही। यदि पैमाना सामाजिक विभेद के लिए तैयार किया गया है, लेकिन इसके स्थान पर वह सामाजिक दूरी को माप सकता है तो हम उसे प्रामाणिक पैमाना नही कहेगे। प्रामाणिकता की परीक्षा के लिए गुडे तथा हाट्ट ने निम्नलिखित चार प्रमुख आधार बतलाए हैं—

(i) तार्किक वैधता (Logical Validation)—तार्किक वैधता का आधार तर्क और सामान्य बोध है। उदाहरणार्थ, यदि पैमाने का प्रयोग करने से यह पता चलता है कि चीन के लोग पाकिस्तानियो की अपेक्षा भारतीयो के अधिक निकट हैं तो हमारा पैमाना प्रामाणिक नही माना जाएगा क्योकि यह हमारे सामान्य बोध की बात है कि भारत के साथ चीन के सम्बन्ध अच्छे न होने के कारण चीन के लोग या नेता भारतीयो को कैसे पसन्द करेंगे। परन्तु केवल सामान्य ज्ञान या तर्क पर भी निर्भर रहना उचित नही है क्योकि यह व्यक्ति से भिन्न है अर्थात् यह प्रत्येक व्यक्ति मे अलग-अलग हो सकती है तथा पक्षपातपूर्ण रवैए के कारण उसकी तर्क-शक्ति एव सामान्य ज्ञान प्रभावित हो सकता है।

(ii) पंचो की राय (Jury Opinion)—यह प्रणाली सामान्य ज्ञान पर आधारित न होकर उन लोगो की राय पर निर्भर है जिनका विषय से सम्बन्धित विशिष्ट ज्ञान हो। अनुमापन द्वारा प्राप्त परिणामो को विशेषज्ञो की राय के लिए छोड दिया जाता है। यदि इनमे अधिकांशत परिणाम को उचित या सही मानते हैं तो पैमाने को प्रामाणिक माना जाता है। लेकिन इसमे भी विशेषज्ञ अपनी राय के सम्बन्ध मे गलत हो सकते है क्योकि वे व्यक्तिगत सम्बन्धो जैसी बातो से एक दूसरे से प्रभावित होते हैं जो उनके निर्णय को गलत ढंग से प्रभावित करते हैं।

(iii) ज्ञात समूह (Known Groups)—इस विधि के अन्तर्गत पैमाने को ऐसे समूहो पर सर्वप्रथम लागू किया जाता है जिनको हम पहले से जानते हैं। उदाहरणार्थ, यदि हम समाजवाद के पक्ष या विपक्ष मे जानना चाहते हैं तो सर्वप्रथम इस पैमाने का प्रयोग उन ज्ञात समूहो पर किया जाएगा जो समाजवाद की नीतियो मे विश्वास नही करते हैं। यह समूह समाजवाद के सिद्धान्तो, नीतियो और नारो के कडे विरोधी हैं, उन लोगो पर पैमाना लागू करने से परिणाम यदि यह निकलता है कि वे समाजवाद मे आस्था रखते हैं इसकी नीतियो का समर्थन करते है तथा इसे बहुत अच्छी आर्थिक व्यवस्था कहते हैं तो हमारा यह पैमाना प्रामाणिक या वैध नही माना जाएगा। यह पद्धति भी पहले वाली सामान्य ज्ञान पद्धति पर करीब-करीब आधारित है। इसमे भी व्यक्तिगत अभिनति प्रवेश कर सकती है, अत. इसे हम पूर्णत. दोष-रहित नही कह सकते।

(iv) स्वतंत्र मापदण्ड (Independent Criteria)—इस विधि के अन्तर्गत अनुमापन परीक्षा घटना के विभिन्न तथ्यो पर की जाती है न कि सम्पूर्ण घटना पर। उदाहरणार्थ किसी व्यक्ति का राजनीतिक प्रभाव उसके व्यक्तित्व शिक्षा, कुशलता, दलीय नियंत्रण, जनता का समर्थन एव भाषण दक्षता इत्यादि तथ्यों पर

निर्भर करता है। यदि इन तथ्यों से प्राप्त परिणामों में समानता है तो पैमाने को वैध माना जाएगा। इसका सबसे बड़ा दोष यह है कि सभी तथ्य पूर्णतः सम्बन्धित नहीं हो। अतः राजनीतिक प्रभाव को निर्धारित करना कठिन हो जाता है।

मदों का तोलन (Weighing of Items)

यह समस्या उस समय उत्पन्न होती है जब अनुमापन में विभिन्न असमान पदों को भार देना आवश्यक हो जाता है। उचित भार के अभाव में सभी तथ्यों को समान महत्त्व मिल जाता है। यदि सम्मिलित तथ्यों में प्रत्येक का महत्त्व समान नहीं है तो प्राप्त परिणामों को सत्य नहीं माना जाएगा।

अनुमापों के विभिन्न प्रकार
(Different types of Scales)

सामाजिक तथ्यों के अनुमापन के लिए कुछ पैमानों का विकास किया गया है। सामाजिक घटनाओं के गुणात्मक माप के लिए समाजमितीय अनुमापों का निर्माण किया गया है। जिन समाजशास्त्रीय अनुमापों का उपयोग किया जाता है वे निम्नांकित हैं—

(1) अंक पैमाने (Point Scale)

यह पैमाना सबसे सरल है। इस पैमाने के अन्तर्गत कुछ शब्द या स्थितियाँ ली जाती हैं जिनमें प्रत्येक को अंक प्रदान किया जाता है। तत्पश्चात् इन शब्दों या स्थितियों को उत्तरदाता के समक्ष रख दिया जाता है। जिस स्थिति का वह समर्थन करना चाहता है उसके आगे क्रास (×) या सही का चिह्न (✓) लगाना होता है। इस विधि से समस्त सूचनादाताओं के मत को जाना जा सकता है।

(2) सामाजिक दूरी पैमाना (Social Distance Scale)

सामाजिक दूरी पैमाने का प्रयोग विभिन्न व्यक्तियों अथवा समूहों के मध्य पायी जाने वाली निकटता अथवा दूरी की विभिन्न मात्राओं को मापने के लिए किया जाता है। समाज में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति या समूह के साथ हमारी निकटता या दूरी समान नहीं हो सकती। किसी व्यक्ति के साथ हमारी निकटता इतनी अधिक होती है कि हम अपने ही रक्त सम्बन्धी तक को नहीं चाहते हैं। कभी-कभी ऐसा भी देखने में आया है कि हम किसी को इतनी घृणा की दृष्टि से देखते हैं कि यदि वश चले तो उसकी जीवन-लीला ही समाप्त कर दें। इसी निकटता और दूरी को मापने के लिए दो प्रकार के पैमानों का प्रयोग किया जाता है—

(1) बोगार्डस का सामाजिक दूरी का पैमाना (Bogardus Social Distance Scale)

(2) समाजमितीय पैमाना (Sociometric Measurement)

(1) बोगार्डस का सामाजिक दूरी का पैमाना (Bogardus Social Distance Scale)—सामाजिक दूरी के पैमाने का निर्माण सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री

एमरी एस० बोगार्डस (*Emery S Bogardus*) ने किया था । उन्होंने उन परिस्थितियो का चयन किया जो सामाजिक दूरी का सही एव स्पष्ट ज्ञान करवा सकें । इसके लिए सौ व्यक्तियो से कहा गया कि वे उन परिस्थितियो को सात ऐसे वर्गों मे रखें जो क्रमश बढती हुई सामाजिक दूरी को प्रकट करते हो । बोगार्डस ने सात वर्गों के प्राधार पर विभिन्न समूहो के प्रति लोगो की मनोवृत्ति का पता लगाया कि वे कितना निकट या दूर का सम्बन्ध रखना चाहते हैं। बोगाडस के पैमाने को हम निम्नवत् प्रस्तुत करते हैं ।

वर्ग	अग्रज	स्वेड	पोल	कोरियन
1 विवाह करने की स्वीकृति				
2 क्लब मे साथी बनाने की स्वीकृति				
3 पडोस मे रहने की स्वीकृति				
4 एक ही दफ्तर मे एक साथ कार्य करने की स्वीकृति				
5 अपने देश मे नागरिक के रूप में स्वीकार करने को तैयार				
6 देश मे केवल यात्री के रूप मे आने की अनुमति देने को तैयार				
7 अपने देश के बाहर निकाल देने की इच्छा				

उपर्युक्त अनुसूची विभिन्न व्यक्तियो को दी गई और उन्हें निम्नलिखित निर्देश भी दिए गए—

1 *प्रत्येक अवस्था मे अपनी प्रारम्भिक प्रतिक्रिया ही दीजिए ।*

2 अपनी प्रतिक्रिया समस्त वर्गों के लिए दें । अपनी प्रतिक्रिया को व्यक्त करते समय उस समय के किसी अच्छे या बुरे व्यक्ति का जिससे तुम परिचित हो, ध्यान मत रखो ।

3 प्रत्येक जाति के सामने मे सात वर्गों मे से उन वर्गों के सामने निशान लगायें जिनसे आप सहमत हैं । यह अनुसूची 1725 अमेरिकन नागरिको को दी गई तथा प्रत्येक वर्ग एव प्रत्येक जाति का योग निकाला गया । योग निकालने के पश्चात् उन्हें प्रतिशत म बदल दिया गया । कुल 1725 उत्तरो को 100 के समकक्ष मान लिया गया । इस आधार पर जो उत्तर पक्ष मे मिले उनका प्रतिशत निकाल लिया गया ।

इसे निम्नलिखित सारणी द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है—

वर्ग	विभिन्न वर्गों में पृथक् प्रश्नों के उत्तरों का प्रतिशत						
	1	2	3	4	5	6	7
अंग्रेज	93·7	96 7	93 3	95 4	95·9	1·7	1 0
स्वेडिश	45 3	62 1	75 6	78 0	86 3	5 4	1 0
पोल	11 0	11·6	28 3	44 3	58·3	19·7	4·7
कोरियन	1·1	6·8	13 0	21 4	23 7	47·1	19 1

आलोचना (*Criticism*)

1 पैमाने में एक वर्ग एवं दूसरे वर्ग के मध्य जो समान दूरी मानी गई है, व्यावहारिक रूप से ऐसा सिद्ध नहीं हो सका है।

2. इस पैमाने की विश्वसनीयता के परीक्षण के लिए बहुत कष्ट उठाना पड़ता है एवं अत्यधिक समय खर्च करना पड़ता है। अत यह प्रणाली पूर्ण नहीं है।

3. ऐसा निश्चित रूप से एवं विश्वास के साथ नहीं कहा जा सकता कि उत्तरदाताओं के उत्तर विभिन्न समाजों के प्रति उनकी भावना को स्पष्ट व्यक्त करते हैं।

समाजमितीय पैमाना
(Sociometric Scale)

समाजमितीय पैमाने का सर्वप्रथम प्रयोग जे० एल० मोरेनो (J. L. Moreno) तथा हेलन हॉल जेनिंग्स (Helen Hall Jennings) ने किया था। बोगार्डस (Bogardus) ने सामाजिक दूरी पैमाने का प्रयोग किया था। इस पैमाने द्वारा हम विभिन्न व्यक्तियों और समूहों के बीच निकटता अथवा दूरी की विभिन्न मात्राओं को ज्ञात कर सकते हैं। कुछ व्यक्तियों के प्रति हमारी इतनी घृणा होती है कि हम उनसे दूर रहना चाहते हैं और कभी-कभी घृणा इतनी भी बढ़ सकती है कि उनका केवल नाम लेने से ही उल्टी हो जाती है जबकि कुछ व्यक्तियों या समूहों के प्रति हमारा इतना झुकाव या आकर्षण होता है कि हमारी घनिष्ठता में निरन्तर वृद्धि होती जाती है। इस सामाजिक दूरी पैमाने द्वारा लोगों की विभिन्न समूहों के प्रति

मनोवृत्ति अर्थात् निकटता या दूरी के सम्बन्धो का पता लगाया जाता है। बोगार्डस के करीब 15 वर्ष बाद जे० एल० मोरेनो और हेलन हॉल जेनिंग्स सामाजिक दूरी का जो पैमाना प्रयोग मे लाए, वह बोगार्डस के सामाजिक दूरी पैमाने से मौलिक रूप मे भिन्न है। हेलन जेनिंग्स ने इसको निम्न रूप मे परिभाषित किया है—

"यह साधारण रूप से तथा ग्राफ (Graph) द्वारा किसी विशेष अवसर पर किसी समूह के सदस्यो के पारस्परिक सम्बन्धो को प्रगट करने की पद्धति है। पारस्परिक रुचि, गुटबाजी, सर्वप्रिय नेता, अप्रत्यक्ष नेता एव सहयोग इत्यादि की जानकारी के लिए ऐसे पैमाने को प्रयोग मे लाया जाता है।"[1]

इस प्रविधि का प्रयोग समुदायो, विद्यालय कक्षाओ, जेलो, सुधार गृहो एव कई अन्य सगठनो मे किया गया है। इस पद्धति द्वारा सदस्यो एव समूह व्यवहार को मापा जाता है। इस पैमाने का प्रयोग अधिकाशत समाज की उन घटनाओ को नापने मे किया जाता है जो निरीक्षण योग्य हो।

समाजमितीय अनुमापों के निर्माण के सामान्य सिद्धान्त एवं प्रविधियाँ
(General Principles and Techniques in the Construction of Sociometric Scales)

समाजमितीय अनुमाप के निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि कुछ अच्छे सिद्धान्तो एव नियमो पर कड़ा (Strict) ध्यान दिया जाए। पी० वी० यग के अनुसार कुछ मुख्य सिद्धान्त निम्नलिखित हैं—

1. कार्यारम्भ करते समय जहाँ तक सम्भव हो, यह निर्धारित करना आवश्यक है कि क्या नापना है। अनुमाप के निर्माण के पूर्व उन लक्षणो व शर्तों का विश्लेषण कर लेना चाहिए जिनको नापना है।

2 उन तत्त्वो या मापदण्डो (Criteria) का चयन करते समय अत्यधिक सावधानी बरतनी चाहिए जो माप (Measurement) के आधार होगे।

3 प्रत्येक चयनित तत्त्व या मापदण्ड (Criterion) को वैषयिक प्रविधि (Objective technique) द्वारा तोल कर लेना चाहिए अर्थात् उसके सभी पक्षो पर पूर्णत मनन या ध्यान करना चाहिए।

4 जहाँ तक सम्भव हो सरल अनुमाप निर्माण का प्रयत्न करना चाहिए। अधिक जटिल अनुमाप महँगा (Costly) व व्यर्थ सिद्ध हो सकता है।

5 अनुमाप मे यह अधिकाधिक प्रामाणिकता का गुण होना चाहिए।

6. अनुमाप विश्वसनीय होना चाहिए जिससे न्यायसगत परिणाम दे सकें।

1 "Stated briefly, sociometric method may be described as a means of presenting simply and graphically the entire structure of relations existing at a given time among members of a given group The major lines of communication or the patterns of attraction and rejection in its full scope are made readily comprehensive at a glance.'

—*Helen Hall Jennings* Sociometry in Group Relations, p. 11

7. अनुमाप ऐसा होना चाहिये जिसका सुगमतापूर्वक प्रयोग किया जा सके। इसमे ऐसे उचित निर्देश होने चाहिएँ, जिन्हें आसानी से समझा जा सकता हो।

8. अनुमाप ऐसा होना चाहिए जिसको वर्णनात्मक रूप मे व्यक्त किया जा सकता हो।

9. अनुमाप की विविध परिस्थितियो मे परीक्षा की जानी चाहिए और जहाँ आवश्यक हो पुन सशोधन कर लेना चाहिए।

समाजमितीय अनुमाप की कुछ स्वीकृत परिभाषाएँ और इसकी विशेषताएँ तथा महत्ता (Some accepted Definitions of Sociometric Scaling and Its Characteristics and Importance)

परिभाषाएँ

जेनिंस ने समाजमितीय को समूह के पारस्परिक सम्बन्धो को प्रकट करने की विधि कहा है।' अन्य परिभाषाएँ इस प्रकार है—

'एक ऐसी पद्धति जिसके द्वारा सामाजिक स्तर, ढाँचा और विकास की खोज, वर्णन और मूल्याकन किया जा सकता है ।'[1]

"समाजमितीय परीक्षण मे समुदाय का प्रत्येक सदस्य अन्य सदस्यो मे से उन सदस्यो का चयन करता है जिन्हे वह विशेष परिस्थितियो मे साथ रखना चाहता है।"[2]

"समाजमितीय अनुमापन एक ऐसी विधि है जिसका प्रयोग समुदाय मे व्यक्तियो के आकर्षण और विकर्ष को मापकर सामाजिक आकृति की खोज और व्यवस्था करना है।"[3]

विशेषताएँ (Characteristics)

उक्त परिभाषाओ के आधार पर हम समाजमितीय अनुमाप की विशेषताओं को निम्नांकित रूप मे स्पष्ट कर सकते हैं—

(1) यह पारस्परिक सम्बधो को प्रकट करने की विधि है।

1 "A method for discovering describing and evaluation soc al status, structure, and development through measuring the extent of acceptance or rejection between individuals in groups'
—*Urie Bronfenbrenner* A Constant Frame of Reference for Sociometric Research, Sociometry, VI, p 363–372

2 "The 'Soc ometric test consists in having each member of a group choose from all other members those with whom he prefers to associate in specific situations" —*Easter B Frankel and Reva Potashin*

3 The Sociometric Scale a method used for the discovery and manipulation of social configurations by measuring the attractions and repulations between individuals in a group."
—*J G. Franz*. Survey of Sociometric Techniques with an Annotated Bibliography, Sociometry II, p 76–90

(ii) इसे सामान्य रूप से या आरेख (Graph) द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है।

(iii) यह सामुदायिक विशेषताओं (Characteristics) को अधिक स्पष्ट करने और निश्चित बनाने मे सहायक है।

(iv) इस पद्धति द्वारा व्यक्तिगत अधिमान्य (Preference) का स्पष्ट रूप से पता लगाया जा सकता है जिसके फलस्वरूप व्यक्तिगत लक्षणो और मनोवृत्तियो तथा अभिरुचियो का विश्लेषण सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

(v) समूहो मे व्यक्ति के स्थान या सम्मान का सुगमतापूर्वक पता लगाया जा सकता है।

समाजमितीय परीक्षण आधुनिक अनुसधानो मे काफी लोकप्रिय हो रहे हैं। इनका प्रयोग विद्यालयो, क्लबो, समुदायो व निजी सस्थाओ मे काफी प्रचलित है। समाजमितीय प्रणाली द्वारा एक व्यक्ति के अधिमान्य (Preference) का पता लगाया जाता है और इस प्रकार अन्य सभी लोगो की रुचि का पता लगाया जा सकता है। यह पद्धति आसानी से प्रयोग मे लाई जा सकती है। जटिल न होने के कारण, इसका प्रयोग शैक्षणिक सस्थाओ मे भी किया जा रहा है।

कभी-कभी समाजमितीय परीक्षणो के परिणाम व्यक्तिगत साक्षात्कार द्वारा भी आवर्धित (Augment) किए जाते हैं। इस प्रणाली का प्रयोग मूलतः मोरेनो (Moreno) ने लडकियो के प्रशिक्षण विद्यालय के अध्ययन मे किया था। इस साक्षात्कार मे प्रत्येक लडकी के रुख का पता लगाने के लिए कि क्या उसने उसे पसद किया है या नही, ये प्रश्न पूछे गए। साक्षात्कार द्वारा स्पष्ट पता चल गया कि समुदाय या विद्यालय की जिन लडकियो ने उसे प्रथम अधिमान्य (First preference) दिया और जिसने उसे कोई अधिमान्य नही दिया तो उसका उनके प्रति क्या रुख रहा, क्या प्रतिक्रियाएँ हुई एव उनके मस्तिष्क पर क्या प्रभाव पडा। सामाजिक ढाँचे मे प्रत्येक लडकी की स्थिति का स्पष्ट चित्र ज्ञात करने के लिए साक्षात्कार द्वारा उनके आकर्षण और विकर्षण (Attraction & Repulsion) का समन्वेषण (Investigation) किया गया।

'मनो-नाटक' (Psycho-drama) प्रविधि द्वारा माने और पता लगाया गया कि विभिन्न लडकियों के पारस्परिक किस प्रकार के सम्बन्ध है। इसमें प्रत्येक लडकी

ने वास्तविक जीवन की भूमिका निभाने जैसा अभिनय किया और उसके हाव-भाव, चेहरे पर प्रदर्शित अभिव्यक्ति एवं संवाद (Dialogue) और सामान्य भावदशा (Mood) आदि का पता लगाकर उसके व्यक्तित्व के बारे में व उसके दूसरे के साथ सौहार्दपूर्ण या असौहार्दपूर्ण सम्बन्धों के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त हुई। पी० वी० यंग का मत है कि मनो-नाटक (Psycho-drama) प्रविधि बहुत महत्वपूर्ण है परन्तु समाजमिति में विस्तृत रूप से प्रयोग में लाने के लिए एक जटिल प्रविधि है।[1]

इस समाजमितीय प्रविधि (Sociometry technique) को अत्याधिक सावधानी से प्रयोग में लाना चाहिए, तभी यह उपयोगी और विश्वसनीय हो सकती है, अन्यथा इसके परिणाम आशा के बिलकुल ही विपरीत निकलते हैं। यह अनुसंधानकर्ता निजी कुशलता पर भी निर्भर करता है।

समाजमितीय मापन द्वारा किस प्रकार पारस्परिक सम्बन्धों का पता लगाया जा सकता है, इसका एक सरल उदाहरण यहाँ दिया जाता है। माना कि एक कक्षा में 40 विद्यार्थी हैं और यह ज्ञात करना है कि इनमें कौन से दो विद्यार्थी अधिक लोकप्रिय हैं। सर्वप्रथम प्रत्येक विद्यार्थी को हम 40 विद्यार्थियों की एक सूची दे देंगे। प्रत्येक से यह कहा जायेगा कि वह जिसको सबसे अधिक पसंद करता है उसके आगे एक क्रास (Cross) लगा दे। चालीस विद्यार्थी जिसको अधिक चाहते हैं नाम के आगे क्रास लगा कर सूचियों को बंद कर देंगे। अब सभी विद्यार्थी क्रास लगा चुके होंगे, उसके बाद एक-एक क्रास को उन सूचियों में से देखा जाएगा, जिसके आगे सबसे ज्यादा क्रास लगे होंगे वह सर्वाधिक लोकप्रिय और फिर जिसके पहले वाले से क्रास कम होंगे वह उसके बाद वाला लोकप्रिय कहलायेगा। इस प्रकार पता लग सकता है कि वे 40 विद्यार्थियों में से किन दो को अधिक पसंद करते हैं। वे ही दो लोकप्रिय विद्यार्थी कहलायेंगे।

उपर्युक्त उदाहरण से सरलतापूर्वक पता लग सकता है कि किसका कितना सम्मान है, कौन कितना प्रभावशाली है या कौन कितना लोकप्रिय है।

1 "Psycho-drama has been found very fruitful in the field of psychiatry and sociatary, but is too complicated a technique to be used extensively in *Sociometry proper*"

—*P. V. Young* Scientific Social Surveys and Research, p 384

निम्न सारणी द्वारा भी आपसी सम्बन्धो का पता लग सकता है—

Chosen

Choosers	A	B	C	D	E	F	G	H	I	J	K	L	Total
A													
B													
C													
D													
E													
F													
G													
H													
I													
J													
K													
L													
Total													

इस सारणी मे पसदगियो को क्रास (×) या सही (✓) के निशान द्वारा दिखाया जा सकता है। कौन किसको कितना चाहता है या नापसद करता है उनका ब्योरा सारणी मे स्पष्टतः क्रास (×) या सही (✓) चिह्न द्वारा आ जावेगा। सारणी द्वारा हम पारस्परिक रुचि का पता लगा सकते हैं। यदि A और B दोनों एक दूसरे को चुनते हैं तो यह स्पष्ट है कि दोनो मे पारस्परिक रुचि है। यह भी सभव है कि A, C को चुन लेता है, परन्तु C, A को न चुने। इस सारणी में यदि इन सबको प्रथम पसद, दूसरी पसद, तीसरी पसद, चौथी पसद आदि के लिए कहा जावे और इनमे यदि चार या पाँच एक दूसरे का ही चुनाव करें तो पता लग जाता

है कि वे एक ही गुट के सदस्य हैं। यदि अधिमान्यों (Preferences) मे जिसको प्रथम अधिमान्य के अधिक नम्बर मिलें तो वह सर्वाधिक लोकप्रिय माना जाएगा तथा जिसको कोई भी नही चुने तब उसके बारे मे आभास होगा कि उसका स्वभाव ठीक नही है, उसका व्यवहार मधुर नही है, स्वार्थी है एकान्तवासी है, प्रभावहीन है इत्यादि। ऐसे लोग समाज मे समस्या ही पैदा करते हैं।

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि समाजमिति मनुमान के द्वारा अन्तर्सम्बन्धो का पता लगाया जाता है। पारस्परिक सम्बन्धो की जानकारी के लिए यह विधि बडी ही उपयोगी एव व्यावहारिक है। लोगो के गुण आदत एव स्वभाव स्पष्ट जाने जा सकते है। इस विधि का प्रयोग 'नेतृत्व' मे चार्ल्स एल हॉवल ने, Morale मे एल डी जेलेनी (L D Zeleny) ने, 'Leadership Social Adjustment' मे Nahum E Shoobs ने, 'Race Relations' मे John H Criswell ने, 'Political Cleavages' (राजनीतिक मतभेद) मे Charles P Loomis ने, Public Opinion Polling मे Stuart C Dodd ने किया है। इसके अलावा समाजमिति का चिकित्सीय प्रविधियो (Therapeutic techniques) मे और विशेष रूप से मनोविकार विज्ञान (Psychiatry) मे भी अत्यधिक महत्त्व है।

यद्यपि यह पद्धति बडी रोचक एव उपयोगी है तथापि पूर्णरूपेण दोषों से मुक्त नही है। सर्वप्रथम जो इस प्रविधि को प्रयोग मे लाता है, उसे इसका प्रयोग बडी सावधानी से करना चाहिए, अन्यथा थोडी-सी गलती के कारण सम्पूर्ण निष्कर्ष गलत निकलेंगे। दूसरी बात यह है कि इस ससार मे रहने वाले विविध समूह, व्यक्ति और सस्याएँ हैं, उनमे विविधताएँ भी स्वाभाविक हैं। कुछ तो बहुत धूर्त होते हैं और उनको यदि यह पता लग गया कि अनुसधान कार्य के लिए सब कुछ किया जा रहा है तो वे जानकारी (जैसे पसदगी को दिखाना) जान बूझकर गलत देंगे। तीसरी बात समस्त गुणात्मक पहलुओ का अध्ययन करना सरल नही है।

समाजमितीय अनुमाप की कठिनाइयाँ
(Difficulties of Sociometry Scaling)

सामाजिक तथ्यो को मापने के लिए पैमाने का निर्माण करना अत्यन्त ही कठिन कार्य है। सामाजिक घटनाओ की प्रकृति प्राकृतिक विज्ञानो से भिन्न होने के कारण यह कठिनाई विशेष रूप से सामाजिक विज्ञानो के साथ है। समाजमितीय अनुमाप के निर्माण मे निम्नाकित कठिनाइयाँ आती हैं—

(1) चूँकि सामाजिक घटनाएँ जटिल होती हैं, अत उनके तथ्यो को मापने मे कठिनाई आती है। सामाजिक तथ्यो मे विभिन्न कारको का समावेश होने के कारण पैमाने के निर्माण मे यह कठिनाई आ जाती है कि किस कारक को अधिक महत्त्व दिया जाए।

(2) इसके अतिरिक्त इन तथ्यो मे इतनी अन्तर्निर्भरता पाई जाती है कि इनको पृथक्-पृथक् नही मापा जा सकता।

(3) सामाजिक तथ्यो का कोई निश्चित एव ठोस स्वरूप नही होता जिससे उनको सुगमतापूर्वक मापा जा सके। तथ्यो की अनिश्चितता के कारण उनके लिए पैमाने का निर्धारण करना अत्यधिक कठिन कार्य हो जाता है।

(4) सामाजिक परिस्थितियो व अन्य तत्त्वो के प्रभाव के कारण मानवीय स्वभाव मे सदैव परिवर्तन होता रहता है। एक समय मे सोचे गए विचार दूसरे समय मे बिलकुल बदल जाते हैं अत एक समय मे तैयार किया गया पैमाना दूसरे समय मे लागू नही हो सकता। इसलिए पैमाना-निर्माण मे कठिनाई स्वाभाविक है।

(5) सामाजिक घटनाओ मे असमानता पाये जाने के कारण विश्वसनीय पैमाने का निर्माण एक चुनौती बन जाती है। समाज मे जो विभिन्न समूह पाये जाते हैं और उनके उतने ही विभिन्न सांस्कृतिक, धार्मिक व साहित्यिक मूल्य होते हैं, अत एक ही पैमाना उन सभी पर समान रूप से लागू नही हो सकता।

(6) सामाजिक मूल्यो को मापने के लिए सर्वमान्य माप का अभाव है।

(7) सामाजिक घटनाओ की विशेषताओ का पता लगाने के लिए प्रायोगिक विधि का उपयोग नही किया जा सकता।

इन सीमाओ के बावजूद भी सामाजिक तथ्यो, गुणो एव घटनाओ को मापने के लिए कई पैमानो का निर्माण किया गया है। इस क्षेत्र मे प्रगति निरन्तर जारी है। प्रत्येक वर्ष नई प्रगति लाता है, नई आशाएँ और उमगें उत्पन्न करता है।

तीव्रतामापक पैमाने
(Rating Scales)

इन पैमानो का प्रयोग प्रवृत्तियो, मनोभावो एव रुचियो की तीव्रता मापने के लिए किया जाता है। यह पैमाना तभी लाभकारी सिद्ध हो सकता है जब केवल दो द्वन्द्वात्मक विचार न होकर विकल्प भी होता है। उदाहरण के लिए समाजवाद के प्रति विश्वास को लीजिए। कुछ व्यक्ति समाजवाद के पूर्ण पक्ष मे हो सकते हैं तो कुछ आंशिक पक्ष मे। इसके अतिरिक्त कुछ इसके प्रति तटस्थ भी हो सकते हैं और कुछ इसके विरोध मे। अत इसके पक्ष या विपक्ष की मात्रा को इन पैमानो द्वारा ज्ञात किया जा सकता है।

गुडे तथा हाट्ट के मतानुसार तीव्रतामापक प्रविधि के अभिकल्प (The design of the rating techn que) मे तीन तत्त्वो के अस्तित्व को ध्यान म रखना चाहिए—

(i) पच या न्यायकर्त्ता (Judges) जो Rating करते है।

(ii) घटनाओ (Phenomena) का, जिनका Rating किया जाना है।

(iii) उस क्रम को, जिनके अन्तर्गत उनका Rating किया जाएगा।

अभिकल्प या अभिरचना (Design) इन तीनो को (i) न्यायकर्त्ता (Judges), (ii) घटनाओ या विषयो, (iii) क्रम को जब तक ठीक ढग स परिभाषित नही करती

और न यह आश्वासन देती है कि ये तीनो तार्किक रूप मे एक दूसरे से सम्बन्धित है तब तक विश्वसनीय और सामाजिक परिणामो की मात्रा नही की जा सकती ।

न्यायकर्त्ता (The judges)

सामान्यत अधिक लोगो द्वारा दिए गए निर्णय से तीव्रतामापक पैमाने की शुद्धता मे अभिवृद्धि होती है। कितने न्यायकर्त्ताओ की आवश्यकता होगी, यह तीव्रता नामक परिस्थिति' (Rating Situation) पर निर्भर करता है। कुछ परिस्थितियो मे एक न्यायाधीश से भी काम चल सकता है। यह अध्यापक-विद्यार्थी वर्ग (Grade) की स्थिति के बारे मे सही है, चूँकि Pooled निर्णय अधिक शुद्ध होते हैं, अत एक विद्यार्थी की योग्यता का सही पता लगाने के लिए कई अध्यापको द्वारा विभिन्न विषयो मे उसे जो श्रेणी (Grades) दी गयी है उन पर निर्भर करना होगा। कई विषयो मे प्राप्त श्रेणी से उनकी योग्यता का सही प्रतिबिम्ब मिलता है।

इस प्रकार तीव्रता मापक पैमाने की विश्वसनीयता बढाने के लिए जिन पक्षो को प्रयोग मे लाया जाता है, उनके बारे मे कुछ सन्देह उत्पन्न होते हैं। क्योकि न्यायाधीश स्वय सम्पूर्ण जनसख्या के प्रतिनिधि नही है और न वे विशेषज्ञ हैं।

इस समस्या का समाधान न्यायाधीशो का चयन अनुक्रम (Continuum) के सम्बन्ध मे विशेषज्ञता (Expertness) के आधार पर किये जाने द्वारा ही सम्भव है। इस सम्बन्ध मे कठिनाई यह है कि विशेषज्ञो का पता कैसे लगाया जाये और उनकी विशेषज्ञता का प्रदर्शन कैसे हो। लेकिन कई अनुक्रमो (Continuum) मे विशेषज्ञता का कोई महत्त्व नही है। न्यायाधीशो के चयन सम्बन्धी कठिनाई को इस प्रकार भी दूर किया जा सकता है कि उन चयनित न्यायाधीशो का उपयोग जनसख्या के निदर्शन के रूप मे किया जाना चाहिए।

अनुक्रम और कर्त्ता (Continuum and Subjects)

तीव्रता मापक पैमाना प्राय दो भागो से बना होता है—(i) निर्देशन-जिसके अन्तर्गत कर्त्ताओ के बारे मे बताया जाता है और जो अनुक्रम को परिभाषित करते ´ (ii) एक पैमाना, जो पैमाना-विन्दुओ को, जिन्हे तीव्रतामापक पैमाने मे प्रयुक्त करता है, परिभाषित करता है। दूसरे भाग की दो पद्धतियाँ हैं—

(A) रेखाचित्रीय प्रविधि (B) वर्णनात्मक प्रविधि।

(A) रेखाचित्रीय प्रविधि (Graphic Technique)—इस प्रविधि का उपयोग किसी अध्यापक, नेता इत्यादि की लोकप्रियता का पता लगाने के लिए किया जा सकता है। तीव्रता प्रकट करने के लिए विभिन्न शब्दो का प्रयोग किया जाता है। प्रत्येक पंक्ति के स्थान पर सही का निशान (✓) लगाने को कहा जाता है जिसको वह अपने दृष्टिकोण से उचित समझता है।

उदाहरण के लिए—आप (विद्यार्थी) अपने अध्यापक द्वारा पढाने की विधि से कहाँ तक सतुष्ट हैं—

अत्यधिक सतुष्ट	सतुष्ट	पर्याप्त रूप से कहा नही जा सकता	असतुष्ट	पूर्णत असतुष्ट

उपर्युक्त बिन्दुओ के आधार पर विद्यार्थियो की अध्यापक के पाठन विधि के बारे मे प्रतिक्रियाओ का पता लगाया जा सकता है।

इस प्रविधि का उपयोग बहुत सावधानीपूर्वक करना चाहिए, अन्यथा भ्रामक परिणाम निकल सकते हैं।

गिल्फर्ड (Guilford) ने इस सम्बन्ध मे निम्न सिद्धान्तो के सावधानीपूर्वक पालनार्थ कुछ सुझाव दिए हैं—

1. जब कई व्यक्तियो को आँकना होता है तो अच्छा यही रहता है कि उन सबको एक ही लक्षण या गुण (Traits) मे आँका जाय। तदन्तर अगले बिंदु की ओर बढना चाहिए।

2. रेखा पाँच इन्च लम्बी होनी चाहिए, ताकि इसको आसानी से रेखाचित्र किया जा सके।

3. रेखा कही टूटी हुई नही होनी चाहिए। टूटी हुई रेखा असतत चर (Discontinuous variable) को सुझा सकती है।

4. अच्छे और खराब सिरो (Ends) को दैव रूप क्रम मे परस्पर बदलना चाहिए अर्थात् एक के बाद दूसरा लेना चाहिए (The 'good' and 'poor' ends should be alternated in random order)।

5. प्रत्येक गुण या लक्षण (Traits) को एक प्रश्न के साथ प्रारम्भ करना चाहिए।

6. तीन या चार वर्णनात्मक विशेषण प्रयोग मे लाए जाने चाहिएँ।

7. वर्णनात्मक वाक्य (Descriptive Phases) छोटे होने चाहिएँ और उनके बीच पर्याप्त सफेद स्थान (Gaps) होने चाहिए।

8 सार्वभौमिक रूप से समझे जाने योग्य वर्णनात्मक शब्दो (Descriptive terms) का प्रयोग किया जाना चाहिए।

9. योग्यता की सम्भावित अति-सीमाओ (Extremes) के बारे मे पहले से ही निश्चय कर लिया जाना चाहिए।

10. अन्तिम वाक्य इतने Extreme नही होने चाहिए कि वे अकनकर्ता (Rater) द्वारा छोड ही दिए जाएँ।

11. औसत या तटस्थ वाक्य पक्ति के केन्द्र मे होने चाहिएँ।

12. मध्यस्थ वाक्य (Intermediate Phases) बीच के वाक्यों (Middle ones) के पास होने चाहिए न कि अन्तिम सिरे (Ends) पर।

(B) वर्णनात्मक प्रविधि—गुडे तथा हाट्ट के अनुसार इस प्रविधि के अन्तर्गत अनुक्रम को परिभाषित करने और बिन्दुओं का पता लगाने (Locating the Points) के लिए निम्नलिखित सामान्य Approaches हैं

(i) स्मिथ द्वारा व्यावसायिक पैमाने (Occupational scale) को स्पष्ट किया गया है। इसके अन्तर्गत न्यायाधीशों को सौ बिन्दुओं के एक स्केल पर प्रत्येक व्यवसाय को आंकने के लिए कहा जाता है। इसके अन्तर्गत केवल अन्तिम बिन्दुओं (End Points) को दिया जाता है जिसको 0 और 100 के रूप में वर्णित किया जाता है। अन्य स्थितियों को बीच में रखा जाता है। यह पद्धति भी रेखाचित्रीय पद्धति के समान ही है परन्तु इसमें 100 अंश (Graduations) होते हैं। इस पद्धति में प्रतिशतों के प्रयोग की सुविधा है। स्मिथ (Smith) सारणी को निम्नांकित रूप में प्रदर्शित किया जाता है।[1]

Rank order		Mean	Standard error
1	U S Supreme Court Justice	99 02	0 120
2	U S Ambassador to Foreign Country	97 56	0 146
3	U S Cabinet Secretary	97 08	0 161
4	U S Senator	96 21	0 145
5	Governor of State	95 25	0 170
6	College President or Chancellor, 3000 Students	92 30	0 229
7	Banker, large city	89 41	0 360
8	Mayor of city of over 500,000 population	88 76	0 423
9	Medical doctor, city of over 500 000 population	88 19	0 368
10	State Prosecuting Attorney	85 36	0 588

वर्णनात्मक प्रविधि में एक अन्य Approach पहली से कुछ भिन्न है। इसके प्रतिपादक नोर्थ और हाट्ट (North and Hatt) हैं। इनके सम्बन्ध (Case) में न्यायाधीश अमेरिका के प्रतिनिधित्वात्मक निदर्शन (Representative Sample) थे न कि कॉलेज के विद्यार्थी। इसके अन्तर्गत उत्तरदाता को अंकन पत्र (Rating card) दिया गया व उत्तरदाताओं को प्रत्येक व्यवसाय की सामान्य स्थिति (Standing) के बारे में व्यक्तिगत राय देने के लिए कहा गया, जैसे—

(i) सर्वोत्तम स्थान (Standing)

(ii) अच्छा स्थान

(iii) मध्य स्थान

1 Quoted by *Goode and Hatt* Op cit, p 259

(iv) मध्य से निम्न स्थान

(v) निम्न स्थान

(vi) जानकारी नही है

इसके दो मुख्य दोष है—(i) प्रत्येक वर्णन के बीच बराबर दूरी है, (ii) पसदगी की स्पष्टता को सीमित करती है।

लेकिन इन दोषो को रेखाचित्रिम पैमाने और स्मिथ की सौ प्रतिशत विधि द्वारा दूर किया जा सकता है।

विश्वसनीयता (Reliability)

विश्वसनीयता दो बातो पर निर्भर करती है—

(i) कितने न्यायाधीशो को सम्मिलित किया गया है

(ii) विभेदो की सख्या (Number of discriminations)

गुडे तथा हाट्ट के अनुसार, सामान्यत 8 से 10 न्यायाधीशो से अधिक को स्थान नही दिया जाना चाहिए और 7 विभेदो से अधिक विभेदो की आवश्यकता है। विश्वसनीयता को परीक्षा-पुन परीक्षा (Test retest) विधि द्वारा मापा जा सकता है। इसकी विश्वसनीयता की जाँच के लिए बहुरूपीय विधि (Multiform method) को भी प्रयुक्त किया जा सकता है।

इस पद्धति की सबसे बडी सीमा यह है कि इसमे न्यायाधीशो पर अधिक निर्भर रहना पड़ता है। यदि वे किसी व्यवसाय या व्यक्ति के प्रति पहले से ही पक्षपातपूर्ण हो तो उनका निर्णय भी दोषपूर्ण होगा यद्यपि ऐसा कोई स्वतन्त्र मापदण्ड (Criterion) नही है जिससे परिणाम पूर्णत शुद्ध निकल सकें तथापि इस पद्धति का सबसे बडा गुण इसकी सरलता और लचीलापन है।

मनोवृत्तियो की माप
(Measurement of Attitudes)

मनोवृत्तियो के अध्ययन का सामाजिक अनुसधान मे अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है। मनोवृत्तियो के मापे जाने की सम्भावना ने इन्हें समाजशास्त्र और मनोविज्ञान का मुख्य अध्ययन विषय बना दिया है। मनोवृत्तियो की माप द्वारा हम किसी व्यक्ति अथवा समूह का सामाजिक समस्याओ, विभिन्न वर्गों एव सामाजिक सस्थाओं के प्रति दृष्टिकोण, आस्था या अनास्था का पता सुगमतापूर्वक लगा सकते हैं। लोगो की मनोवृत्तियो के यथार्थ ज्ञान द्वारा हम समस्या का समाधान कर, किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुच सकते हैं। यदि इस ज्ञान के बारे मे हम अनभिज्ञ है तो इनके भयकर परिणाम निकल सकते हैं, अत. जीवन के विभिन्न क्षेत्रो मे इनको नापने एव उन्हें उपयोग मे लाने का प्रयास किया जाता है। यदि किसी व्यक्ति अथवा समूह की किसी समस्या या किसी परिवर्तनो के सम्बन्ध मे मनोवृत्ति का सही-सही ज्ञान प्राप्त हो पाता है तो कई सकटमय एव विघटनकारी स्थितियो से बचाव सम्भव है।

मनोवृत्ति की परिभाषाएं और विशेषताएँ
(Definition and Characteristics of Attitude)

केम्पबैल के अनुसार, "एक व्यक्ति की सामाजिक मनोवृत्ति सामाजिक विषयों के सम्बन्ध में प्रत्युत्तर का प्रतीक है।"[1]

ऑलपोर्ट के शब्दों में, ' मनोवृत्ति मानसिक तथा स्नायुविक तत्परता की एक स्थिति है, जो अनुभव द्वारा निर्धारित होती है और उन समस्त वस्तुओं तथा परिस्थितियों के प्रति हमारी प्रतिक्रियाओं को प्रेरित व निदेशित करती है, जिनसे वह मनोवृत्ति सम्बन्धित है।"

"वह व्यवहार जिसे हम मनोवृत्यात्मक या मनोवृत्ति के रूप में परिभाषित करते हैं, किसी प्राणी का अवलोकन समूह है अथवा और अधिक पूर्ण समायोजन के पूर्व उसको प्रकट करने वाली क्रिया है।" —बर्नार्ड

"व्यक्ति की विश्व के किसी पक्ष से सम्बन्धित प्रेरणात्मक, संवेगात्मक, प्रत्यक्षात्मक और ज्ञानात्मक प्रक्रियाओं के एक सुस्थिर संगठन को मनोवृत्ति कहकर परिभाषित किया जा सकता है।"[2]

अकोलकर के मतानुसार, "एक वस्तु या व्यक्ति के विषय में सोचने व अनुभव करने तथा उसके प्रति एक विशेष ढंग से कार्य करने की तत्परता की स्थिति को मनोवृत्ति कहते हैं।"[3]

विशेषताएँ (Characteristics)

मनोवृत्ति की सामान्यतः निम्नांकित विशेषताएँ होती है—

1. मनोवृत्ति प्रेरणात्मक, संवेगात्मक प्रक्रियाओं का एक प्रमुख संगठन है।
2. यह मानसिक और स्नायुविक तत्परता की स्थिति है।
3. मनोवृत्ति का निर्माण विशेष परिस्थिति में होता है।
4. मनोवृत्तियों द्वारा व्यक्ति के व्यक्तित्व का प्रत्यक्ष पता लगाया जा सकता है।
5. यह प्रत्यक्षात्मक भी हो सकती है।
6. अनुभव एवं ज्ञान में परिवर्तन के साथ-साथ मनोवृत्ति में भी परिवर्तन हो सकता है।
7. यह एक सम्भावित प्रक्रिया है जो काल्पनिक परिस्थितियों में व्यक्ति के व्यवहार का पता लगा सकती है।

1. *Campbell* : 'The Indirect Assessment of Social Attitudes' Psychological Bulletin 47, Jan. 1956, p 15-30
2. *Kretch and Cruchfield* Theory and Problems of Social Psychology, p 162.
3. *Akolkar* : Social Psychology, p 231

प्रवृत्तियों की उपयोगिताएँ
(Utilities of Attitudes)

1 सामाजिक नियन्त्रण में इनकी भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। मानवीय प्रवृत्तियों का ज्ञान सामाजिक नियन्त्रण के लिए परमावश्यक है।

2 मनुष्यों को वर्गों एवं आदर्श प्रतिरूपों में वर्गीकृत करने के लिए प्रवृत्तियाँ बहुत सहायक हैं। यदि हम किसी को अनुदारवादी (Conservative) कहते हैं तो उसके सामाजिक सुधारों के प्रति दृष्टिकोण को जानना आवश्यक है।

3. लोगों के व्यवहार के पूर्वानुमान का पता लगाने के लिए प्रवृत्तियों की सहायता ली जा सकती है।

4 मनोवृत्तियों के ज्ञान द्वारा सही एवं विश्वसनीय सूत्रों को एकत्रित किया जा सकता है।

5. अनुसंधान कार्य संचालन में लाभप्रद है।

6 हमारे दैनिक जीवन में उत्पन्न होने वाले संघर्षों को मनोवृत्ति के ज्ञान द्वारा टाला जा सकता है।

7. आज के राजनीतिक युग में जहाँ मतों (Votes) का ही महत्त्व है, लोगों की मनोवृत्तियों का पता लगाकर उनके मतों को प्राप्त किया जा सकता है।

मनोवृत्तियों की माप में कठिनाइयाँ
(Difficulties in Measurement of Attitudes)

वास्तव में व्यावहारिक जीवन में मनोवृत्तियाँ अत्यधिक उपयोगी हैं। इनके ज्ञान द्वारा पूर्वानुमान व भविष्यवाणियाँ की जा सकती हैं। मानव जीवन के विभिन्न पक्षों का अध्ययन भी मनोवृत्तियों की पूर्ण जानकारी द्वारा ही किया जा सकता है, परन्तु जहाँ तक इनके मापने का प्रश्न है यह बड़ा कठिन कार्य है। इनके माप में आने वाली प्रमुख कठिनाइयाँ इस प्रकार हैं—

(i) अमूर्त होने के कारण मनोवृत्तियों को मापना अत्यन्त कठिन कार्य है। कोई व्यक्ति क्या चिन्तन कर रहा है व क्या अनुभव कर रहा है, इसका पता लगाना अत्यन्त कठिन है। केवल उसके बारे में अनुमान ही लगाया जा सकता है किन्तु इस अनुमान पर विश्वास नहीं किया जा सकता।

(ii) मनोवृत्तियों में पाई जाने वाली व्यक्तिगत भिन्नताओं के कारण विश्वसनीय व यथार्थ माप अत्यन्त कठिन है।

(iii) मनोवृत्तियों की जटिलता भी मापन में बाधक है, प्रत्येक व्यक्ति समान परिस्थिति में समान रूप से नहीं सोचता है। यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि वह एक विशेष परिस्थिति में एक विशेष मनोवृत्ति को ही अपनाएगा। किसी परिस्थिति के प्रति विभिन्न मनोवृत्तियाँ होने के कारण हम सही रूप से

भविष्यवाणियाँ भी नहीं कर सकते। इसके अतिरिक्त व्यक्तियों की मनोवृत्तियाँ अनेक कारणों से प्रभावित भी होती रहती हैं फलस्वरूप उनमें परिवर्तन की पूर्ण सम्भावना है।

(iv) मनोवृत्तियों की माप में सार्वभौमिक (*Universal*) पैमाने का अभाव है। भौतिक विज्ञानों में निश्चित पैमानों की सहायता से भौतिक घटनाओं को मापा जा सकता है। उदाहरणार्थ दूध की शुद्धता का पता लगाने के लिए लैक्टोमीटर है वायु मण्डल में दबाव को ज्ञात करने के लिए बैरोमीटर है, तापमान को मापने के लिए थर्मामीटर है लेकिन सामाजिक मनोवृत्तियों को मापने के लिए ऐसे कोई यन्त्र या साधन नहीं हैं।

(v) मनोवृत्तियों के अनिश्चित होने के कारण, एक सरल और सार्वभौमिक पैमाने को आविष्कृत नहीं किया जा सकता। आयु और अनुभव के साथ-साथ मनोवृत्तियों में भी परिवर्तन आता रहता है। नवयुवकों में जो उत्साह व साहस दृष्टिगोचर होता है बुढ़ापे में वह नहीं होता। नवयुवक समाज की व्यवस्था में आमूल परिवर्तन लाने के लिए क्रान्तिकारी साधनों का सहारा लिया जा सकता है क्योंकि व्याप्त अव्यवस्था व भ्रष्टाचार के प्रति उसकी मनोवृत्ति क्रान्तिकारी है। परन्तु प्रौढ़ आयु वाले युवकों में इसकी मात्रा कम होगी और कुछ लोगों में तो बहुत ही कम होगी। इन कठिनाइयों से हमें यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि मनोवृत्तियों को मापा ही नहीं जा सकता। विज्ञान के बढ़ते हुए चरणों में नवीन यन्त्रों एवं साधनों का विकास हो रहा है। जितने आविष्कार हो रहे हैं उनके फलस्वरूप साधनों को अधिक वैज्ञानिक रूप प्रदान किया जा रहा है। अमेरिका जैसे विकासशील और प्रगतिशील देश में सूक्ष्मतम साधनों का आविष्कार हुआ है और होता जा रहा है जिनकी सहायता से मनोवृत्तियों को वैज्ञानिक रूप में मापा जा सकता है। मनोवृत्तियों की माप के आलोचकों के लिए थर्स्टन महोदय का यह कथन बहुत उचित है—

"मनोवृत्तियों की माप के सम्बन्ध में इस प्रकार के मत की तुलना इस कथन से की जा सकती है कि एक मेज एक बड़ी जटिल वस्तु होती है तथा उसकी कोई एक *संख्यात्मक माप सम्भव नहीं है। फिर भी हम बिना किसी हिचकिचाहट के कह* सकते हैं कि हम मेज को माप सकते हैं।"

मनोवृत्ति-मापन की प्रणालियाँ
(Methods of Measuring Attitudes)

मनोवृत्तियों को मापने के लिए कुछ निश्चित प्रणालियाँ विकसित की गई हैं। जिन मुख्य प्रणालियों को प्रयुक्त किया जाता है, वे निम्न हैं—

मत-मापक पैमाना (Opinion Scale)—मत-मापक पैमाने के अन्तर्गत कुछ कथनों को क्रम में व्यवस्थित कर दिया जाता है। इसके पश्चात् किसी व्यक्ति के मत को जानने के लिए उसे स्वीकृति या अस्वीकृति प्रदान की जाती है। इस पैमाने में मनोवृत्ति को चरम स्थिति से मापना प्रारम्भ किया जाता है और क्रमशः विपरीत

दिशा की ओर अग्रसर होना होना है अथवा यों कहिए कि पैमाने मे मनोवृत्ति के अनुकूल से प्रतिकूल स्वरूप तक एक क्रमिक सविस्तार होना है तत्पश्चात् व्यक्तियों के मतों के आधार पर औसत निकाल दिया जाता है और उसी परिणाम द्वारा मनोवृत्ति को मापा जाता है। यदि हम गरीबों के प्रति मनोवृत्ति को मापना चाहे तो निम्न प्रकार से पैमाने का निर्माण कर सकते हैं—

1. आप गरीबो से घृणा करते हैं।
2. आप गरीबो के प्रति उदासीन हैं।
3 आपको गरीबो के प्रति थोडा प्रेम है।
4 आपको गरीब अच्छे या प्रिय लगते हैं।
5 आप गरीबो से घनिष्ठ प्रेम करना चाहते हैं।

इस पैमाने का प्रारम्भ घृणा से होता है और अन्त घनिष्ठ प्रेम मे, लेकिन इनका उद्देश्य समान होने के कारण व्यक्ति को ऐसा स्थान प्रदान करने का प्रयत्न किया गया है ताकि हम उसकी मनोवृत्ति का पता लगा सके।

इस पद्धति के अन्तर्गत मनोवृत्तियो की माप प्रत्यक्ष रूप से नही होती है। केवल कथनो के आधार पर प्रतिक्रियाओ को मानकर हम मनोवृत्ति का पता लगा सकते हैं। व्यक्तियो के मत, मनोवृत्तियो के प्रतिबिम्ब होते हैं। इस पैमाने मे निम्न-लिखित विशेषताएँ होनी चाहिएँ।

1. पैमाना विश्वसनीय होना चाहिए।

2. यह प्रामाणिक होना चाहिए। प्रामाणिकता से तात्पर्य ऐसे कथनो का चयन करने से है जो यथार्थ रूप से मनोवृत्तियो पर प्रकाश डालें।

3 पैमाने से सम्बन्धित कथनो का व्यक्ति की मनोवृत्तियो से पर्याप्त सम्बन्ध होना चाहिए।

4. पैमाने के चरणो मे पारस्परिक विभेद आवश्यक है।

5 केवल ऐसे ही कथनो को चुना जाना चाहिए जो भिन्न-भिन्न मात्रा मे मनोवृत्ति रखने वाले लोगो को भिन्न-भिन्न श्रेणियो मे बाँट सकें।

थर्सटन की सम विस्तार प्रविधि
(Thurston's Technique of Equal-appearing Intervals)

थर्सटन की सम विस्तार प्रविधि मनोवृत्ति-मापन की अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रविधि है। यह प्रविधि या प्रणाली किसी विषय पर समूहवर्ग मनोवृत्तियो को आवृत्ति-वितरण के रूप मे प्रकट करती है। इसमे एक आधार-रेखा पर मनोवृत्तियो के सम्पूर्ण विस्तार और स्तरो को अंकित कर दिया जाता है। इन स्तरो को क्रम से व्यवस्थित करने के लिए एक सिरे पर अधिक मे अधिक अनुकूल मनोवृत्ति को और दूसरे सिरे पर कम से कम अनुकूल मनोवृत्ति को रखा जाता है। तटस्थ मनोवृत्ति इन दोनो के मध्य होती है। उसने अग्रलिखित बातो पर बल दिया—

थर्सटन ने इस पैमाने का निर्माण लोगों की चर्च के प्रति मनोवृत्ति को मापने के लिए किया था।

1. सर्वप्रथम उन कथनों विचारों एवं उदाहरणों का संकलन किया गया जिनका चर्च के प्रति लोगों की अनुकूल का प्रतिकूल मनोवृत्ति से सम्बन्ध था। इसमें इस बात पर ध्यान दिया गया कि वाक्यांशों एवं कथनों में लोगों का चर्च के प्रति अत्यधिक अनुकूल मनोवृत्ति से लगाकर अत्यधिक प्रतिकूल मनोवृत्ति तक के समस्त विस्तार और उससे सम्बन्ध रखने वाले सभी स्तरों को स्थान दिया जाना चाहिए। साथ में इस बात पर भी ध्यान दिया गया कि कथन या वाक्यांश जटिल, अस्पष्ट तथा असंगत नहीं होने चाहिये। कथनों को अधिक से अधिक वैज्ञानिक बनाया जाए व ऐसे दोहरे कथनों से बचा जाए जिनमें ऐसा प्रतीत न हो कि वे एक साथ ही पक्ष एवं विपक्ष की मनोवृत्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं। थरस्टन ने पैमाने में इस बात पर भी बल दिया कि कथनों को प्राथमिकता के अनुसार क्रम में रखना चाहिए।

2 दूसरे स्तर में कथनों के सम्पादन के पश्चात् उनको अलग अलग संकेत नम्बर प्रदान कर दिए जाते हैं। संकेत नम्बर देने से कथन का जल्दी आभास हो जाता है। थरस्टन ने जिन 130 कथनों को चुना था उनको 130 संकेत नम्बर दिए गए। इन 130 कथनों के लिए 130 चिह्न काट कर तैयार किए गए। प्रत्येक चिह्न एक कथन से सम्बन्धित था। इस प्रकार 130 चिह्न का एक सेट बन गया। ये सेट एक एक करके कई निर्णायकों को दिए गये। अत्यधिक अनुकूल मनोवृत्ति से अत्यधिक प्रतिकूल मनोवृत्ति तक के विस्तार को 9 या 11 श्रेणियों में सजा दिया गया समस्त श्रेणियों को 11 अक्षरों का नाम दे दिए गये। इसके पश्चात् निर्णायकों से कहा गया कि वे निश्चित करें कि प्रत्येक कथन इन 11 वर्गों में से किस वर्ग में आता है। जो कथन अत्यधिक अनुकूल हैं उन्हें प्रथम श्रेणी में रख दिया जावे और जो अत्यधिक प्रतिकूल हों उन्हें अन्तिम 11वीं श्रेणी में रख दिया जावे और उन कथनों को बिल्कुल मध्य में रख दिया जावे जो तटस्थ हों। इस प्रकार समस्त 130 कथनों को 11 वर्ग समूहों में व्यवस्थित किया गया।

3 निर्णायकों द्वारा कथनों की छँटनी करने के पश्चात् समस्त छँटनी किए वर्ग समूहों के आधार पर सारणी तैयार की जाती है। इस सारणी के आधार पर यह निर्धारित किया जाता है कि प्रत्येक कथन के सम्बन्ध में कितनी आवृत्तियाँ आई। इस प्रकार कथनों के सम्बन्ध में आवृत्तियाँ ज्ञात कर ली जाती हैं।

4. आवृत्ति मालूम होने के उपरान्त उन्हें सचयी आवृत्तियाँ (Cumulative frequencies) में परिवर्तित किया जाता है।

5 सचयी आवृत्ति का पता लगाने के पश्चात् सचयी अनुपात का पता लगाया जाता है। इसके लिए निम्न सूत्र अपनाया जाता है—

$$\text{सचयी अनुपात} = \frac{\text{सचयी आवृत्ति}}{\text{कुल संख्या}}$$

6. प्रत्येक कथन का पैमाना मूल्य रेखाचित्र द्वारा ज्ञात कर लिया जाता है।

मनोवृत्ति के अनुकूल से प्रतिकूल तक विभिन्न स्तरों को प्रकट करने वाले इस पैमाने को उन सम्बन्धित कथनो सहित व्यक्तियो को दिया जाता है और उन्हे इस कथन पर सही निशान (✓) लगाने के लिए कहा जाता है जिसे वे सर्वाधिक सही समझते हैं। कथन का पैमाना शून्य, जिस पर व्यक्ति ने निशान लगाया है, उस व्यक्ति की अनुकूल और प्रतिकूल मनोवृत्ति के बारे मे पूर्ण ज्ञान करवा देता है।

इस पैमाने के निर्माण मे निम्नलिखित सावधानियाँ बरती जानी चाहिएँ—

(i) जिस कथन को पैमाने मे रखा जाता है। उसकी भाषा सुस्पष्ट, सरल और सगतपूर्ण होनी चाहिए।

(ii) प्रत्येक कथन का संबंध व्यक्ति के विश्वासो, मतो और मनोवृत्तियो से प्रत्यक्ष होना चाहिए।

(iii) अस्पष्ट या अनेकार्थक कथनो को प्रयोग मे नही लाना चाहिए।

(iv) निर्णायको की संख्या पर्याप्त होनी चाहिए।

(v) निर्णायको को निजी विश्वास या मनोवृत्ति से प्रभावित नही होना चाहिए अन्यथा किसी कथन को गलत स्थान मिलने की सम्भावना है। फिर भी थर्सटन की यह प्रविधि इसकी सग्राह्यता के कारण प्रशसनीय है।[1]

आन्तरिक स्थिरता पैमाने
(Internal Consistency Scales)

थर्सटन की सम-विस्तार प्रणाली में पैमाने मूल्यो को निर्णायको की संख्या एव उनकी निष्पक्षता पर निर्भर होना पडता है अत इस प्रणाली में सुधार के लिए दूसरी प्रणाली का सुझाव दिया गया है। थर्सटन का निम्न कथन इस सम्बन्ध मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है—

"आदर्श रूप मे पैमाने की रक्षा मतो द्वारा ही होनी चाहिए। यह सम्भव हो सकता है कि समस्या का निर्माण इस तरीके से किया जाए कि विवरण के पैमाने सम्बन्धी मूल्य वास्तविक मतो (Votes) से ही ज्ञात किए जाएँ। यदि ऐसा सम्भव है तो छाँटकर पैमाने मूल्य निकालने वाली वर्तमान प्रक्रिया का त्याग किया जा सकता है।" कहने का तात्पर्य यह है कि उत्तरदाताओ के स्वय के उत्तरो से स्केल की माप को ज्ञात करना है। इस प्रणाली को 'असगति की वैषयिक माप' (Objective Criterion of Irrelevance) की सज्ञा दी जाती है।

थर्सटन ने कथनों को स्पष्ट करने के लिए उनकी परस्पर सम्बद्धता पर बल दिया। कोई कथन सम्बन्धित है अथवा नहीं, इसका पता लगाने के लिए थर्सटन

1. *Goode and Hatt* · op. cit, p. 270.

प्रत्येक पद और उसके प्रत्युत्तर की दूसरे पद और उसके प्रत्युत्तर से तुलना करता है। आन्तरिक असम्बद्धता का ज्ञान इस प्रकार किया जा सकता है कि एक व्यक्ति एक समय मे एकसाथ उन दो पदो को नही चुन सकता जिनमे एक का पैमाना मूल्य कम हो और दूसरे का अधिक। इसको विभिन्न पदो की परस्पर तुलना से ज्ञात किया जा सकता है। सामान्यतः उत्तरदाताओं के विभिन्न पदों के बारे में उत्तर एक दूसरे से सम्बन्धित होते हैं। यदि उनमे ऐसा नही पाया जाता है तो हम कहेंगे कि प्रश्नो मे असम्बद्धता है। थर्सटन की चर्च के प्रति मनोवृत्ति के सम्बन्ध मे यदि कोई व्यक्ति एक कथन मे बहुत ही अधिक अनुकूल दृष्टिकोण प्रदर्शित करता है जिसका पैमाना मूल्य भी बहुत उच्च है और दूसरी ओर वह उस कथन को भी सही मानता है जिसका पैमाना मूल्य अत्यधिक न्यून है तो हमे यह समझना चाहिए कि पद मे भी असम्बद्धता है।

अतः यदि पदो का मूल्य ज्ञात हो तो उस आधार पर तैयार किए पैमाने से असम्बद्धता का पता लगाया जा सकता है। इस प्रकार थर्सटन ने प्रत्येक इकाई की प्रत्येक दूसरी इकाई से तुलना कर यह ज्ञात किया कि पैमाने-मूल्यो मे कोई क्षति तो नही है। थर्सटन की इस विधि मे मर्फी तथाल, इकर्ट, स्लेटो (Sletto) आदि ने सुधार किये हैं। इस प्रकार के पैमाने मे अर्द्धक-विधि (Split-Half Method) द्वारा विश्वसनीयता का पता लगाया जा सकता है।

लिकर्ट की तीव्रता योगमापक पद्धति
(Likert Technique of Summated Ratings)

सन् 1932 मे थर्सटन ने सरल और भिन्न पैमाने का निर्माण किया। इस पैमाने द्वारा अन्तर्राष्ट्रीयता और नीग्रो के प्रति मनोवृत्तियो को जानने का प्रयत्न किया गया। इस पद्धति के अन्तर्गत पैमाना मूल्यो के निर्धारण हेतु कथनो को व्यवस्थित एवं छँटनी के लिए बडी संख्या मे निर्णायको की आवश्यकता नही रहती है, अतः यह प्रविधि कम जटिल और कम श्रम वाली है। इस पद्धति मे व्यक्तिगत अभिनति (Bias) के प्रभाव से छुटकारा मिल जाता है।

इस पैमाने को निम्नलिखित विभिन्न अवस्थाओं से होकर गुजरना पड़ता है—

1. सर्वप्रथम पक्ष और विपक्ष को बनाने वाले समस्त विचारो का संकलन कर दिया जाता है और उन्हें कथन के रूप में लिख दिया जाता है। इसके अन्तर्गत पक्ष और विपक्ष की राय की समस्त तीव्रताएँ सम्मिलित हो जाती हैं।

2. प्रत्येक कथन हेतु मनोवृत्ति को पाँच श्रेणियो मे विभक्त किया जाता है—(i) पूर्ण सहमति, (ii) सहमति, (iii) अनिश्चित, (iv) असहमति एवं (v) पूर्ण असहमति। उत्तरदाता को यह स्वतन्त्रता है कि वह अपने दृष्टिकोण के अनुसार इन पाँचो श्रेणियों मे से एक पर निशान लगा दे। ये श्रेणियाँ कथनो के

प्रति मनोवृत्ति नापने की पैमाना बिंदु हैं। इन पाँचो पैमाने बिंदुओं मे निरन्तरता होना अनिवार्य है। इन श्रेणियो को महत्त्व के अनुसार भी भार दिया जा सकता है। भार देने की इस व्यवस्था मे सहमति या असहमति के अनेको स्तरो का निरन्तर क्रम का पता लगाया जा सकता है।

3. लिकर्ट ने पैमाना बिंदुओ सहित वाक्यो को 500 चयनित व्यक्तियो को दिया। उन्हे यह निर्देश दिया गया कि वे अपने दृष्टिकोण के अनुसार प्रत्येक कथन की श्रेणी निश्चित करें कि वह इन श्रेणियो मे से किस वर्ग मे आता है।

4 प्रत्येक व्यक्ति के समस्त कथनो मे सम्बन्धित भार अको का कुल योग मालूम कर लिया जाता है।

5 प्रत्येक व्यक्ति के कुल भार अक मालूम कर लिए जाने के पश्चात् अको को मात्रा और विस्तार के अनुसार क्रम मे व्यवस्थित कर दिया जाता है। इन समस्त भार अको की सख्या को चार समान भागो में विभक्त कर देने के पश्चात् उसमे से प्रथम और अन्तिम चतुर्थक पदो को पैमाना मूल्य ज्ञात करने के लिए चुन लिया जाता है। ये दोनो चतुर्थक, अधिकतम और न्यूनतम सहमति के स्तर के प्रतीक हैं।

6 तत्पश्चात् व्यक्तियो के औसत भार अको की गणना की जाती है। मनोवृत्ति के पैमाने बिन्दुओ को माप मानकर चतुर्थक समूहो की इकाइयो को उनकी आवृत्ति के रूप मे व्यवस्थित कर दिया जाता है जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि कितने पूर्ण सहमत हैं कितने सहमत, तटस्थ, असहमत और पूर्ण असहमत हैं। अब मनोवृत्ति की श्रेणियो को माप के रूप मे लिखकर चतुर्थक समूहो की इकाइयो को आवृत्ति के रूप मे लिख देने से दोनो समूहो का समान्तर मध्यक मालूम कर लिया जाता है। इन्हीं दोनो के मध्यक-मूल्यो के अन्तर को ही कथन का पैमाना मूल्य की सज्ञा दी जाती है।

लिकर्ट पद्धति मे अक प्रदान करने के लिए जिस अन्य विधि का प्रयोग किया जाता उसे सिगमा विधि' कहते हैं। विभिन्न विवरणो को अनेक लोगो को दे दिया जाता है और वे पाच खण्डो में से एक खण्ड पर निशान लगा देते हैं। इस प्रकार सब विवरण एकत्र कर लिए जाते हैं। प्रत्येक खण्ड के समस्त अको को प्रतिशत मे बदला जाता है। इसके पश्चात् थार्नडाइक (Thorndike) सारणी द्वारा प्रत्येक प्रतिशत का सिगमा मूल्य ज्ञात कर लिया जाता है।

लिकर्ट पद्धति का अधिकांशत प्रयोग मोरेल (Morale) के अध्ययन में, नीग्रो के प्रति मनोवृत्तियो के अध्ययन मे, अन्तर्राष्ट्रीयवाद के प्रति मनोवृत्तियो के अध्ययन में किया गया है।

गुण (Merits)—1 इसमे उन पदो को उपयोग में लाया जा सकता है जो स्पष्ट रूप से उस मनोवृत्ति से सम्बन्धित हो।

2 इस पैमाने का निर्माण सुगमतापूर्वक किया जा सकता है।

3 यह पद्धति थर्सटन पद्धति से अपेक्षाकृत अधिक विश्वसनीय है क्योंकि किसी भी पैमाने की विश्वसनीयता मे तब ही वृद्धि होती है जब वैकल्पिक प्रत्युत्तरो की सख्या बढ जाती है। लिकर्ट पैमाना स्वीकृति अस्वीकृति के सम्बन्ध मे कई प्रशो को अभिव्यक्ति की आज्ञा प्रदान करता है जबकि थर्सटन पैमाने मे Choice केवल दो ही वैकल्पिक प्रत्युत्तरो (Alternative responses) मे है।

4 'प्रत्युत्तरो के फैलाव (Range of responses) व्यक्ति की राय के सम्बन्ध मे अधिक विशुद्ध सूचना प्रदान करते हैं।

दोष (Demerits)—1 यह क्रमसूचक (Ordinal) पैमाने से अधिक नही है। लिकर्ट पद्धति यह जानकारी नही देती कि कौन किसके पक्ष मे अन्य से कितना अधिक है।

2 व्यक्ति के सम्पूर्ण स्कोर (Score) का कोई स्पष्ट अर्थ नही है क्योंकि प्रत्युत्तर के कई ढांचे (Patterns of response) समान स्कोर दे सकते हैं।

इन दोषो के बावजूद भी लिकर्ट प्रणाली अन्य प्रणालियो से अधिक वैषयिक और विश्वसनीय है।

अक पैमाने
(Point Scales)

इस पैमाने के अन्तर्गत अनेक शब्दो या परिस्थितियों को लिया जाता है। प्रत्येक शब्द या परिस्थिति को एक अक (Point) प्रदान किया जाता है। उत्तरदाता को यह निर्देश दिया जाता है कि वह जिन शब्दो से असहमत हो उनके आगे क्रास (×) का निशान लगा दे तथा जिनसे सहमत हो उन्हे छोड दे। जिस शब्द को उसने नही काटा है उसे एक अक प्रदान किया जाता है। इस प्रकार व्यक्ति की मनोवृत्ति का पता शब्दो के आगे क्रास (×) लगाने या न लगाने से हो सकता है।

उदाहरण—आप किन बातो से सहमत हैं और किन बातों से असहमत। जिनसे असहमत हो उसके आगे क्रॉस लगाएँ, जिनसे सहमत हो, उसे छोड दें।

1 लडके और लडकियो मे फैशन की ओर पागलपन बढता जा रहा है।
2. फैशन के लिए उन्हे स्वय उत्तरदायी ठहराया जाता है।
3 फैशन के लिए सिनेमा के अभिनेता और अभिनेत्रियाँ उत्तरदायी हैं।
4 देश मे नैतिक स्तर गिरता जा रहा है।
5 आधुनिक लडकियाँ दिखावे म अधिक विश्वास करती हैं। उनके बाह्य व्यवहार की सद्‌शिष्टाचारिता और वास्तविक शिष्टाचारिता मे बहुत अन्तर है।
6 आजकल अन्तर्जातीय विवाह काफी लोकप्रिय हो रहे हैं।
7 आधुनिक विवाह का आधार वास्तविक प्रेम नही, बल्कि भौतिक साधनों से सम्पन्न लोगो का बाह्य ढोंग है।

3. इसका प्रयोग सामान्यीकरणों के लिए किया जा सकता है।
4. इसमे वस्तुनिष्ठा (Objectivity) होती है।
5. इसका प्रयोग भाषा शब्द के आधार पर भी किया जा सकता है।
6. इसमे क्रमबद्धता होती है।

अधिकांशत चरो (Variables) को मापने के लिए सामग्री विश्लेषण पद्धति प्रयुक्त नही की गई है। इसका प्रयोग विभिन्न सचार घटनाओं की सापेक्षिक आवृत्ति (Frequency) के लिए किया गया है। कर्लिगर के मतानुसार यह एक अवलोकन एव मापन की विधि है। सामग्री विश्लेषण निश्चित रूप से विश्लेषण की पद्धति से कुछ अधिक है। इसके अन्तर्गत अनुसधानकर्त्ता लोगो के व्यवहार का प्रत्यक्ष निरीक्षण न करके या साक्षात्कार करके, बल्कि उनके सचारो को प्राप्त करता है और उन्ही सचारों (Communications) के प्रश्नो को पूछता है। यद्यपि एक तरीके से हम अवलोकन, साक्षात्कार कर रहे हैं परन्तु इस ढग से करते हैं कि लोगो का व्यवहार स्वय तक ही सीमित है। इस पद्धति द्वारा हम चरो (Variables) का निरीक्षण एव मापन करते हैं। आधुनिक युग मे कम्प्यूटरो की सेवाएँ आसानी से उपलब्ध होने के कारण हम इस पद्धति का प्रयोग और भी सुगमतापूर्वक कर सकते हैं। प्रक्षेपी प्रविधियाँ द्वारा उसी सामग्री को प्रस्तुत किया जा सकता है जो अनुसधान की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है जिसके द्वारा हम लोगो द्वारा दिये गए उत्तरो का विश्लेषण कर, उनके व्यवहार का पता लगा सकते हैं।

सामग्री विश्लेषण की इकाइयाँ
(Units of Content Analysis)

सामग्री विश्लेषण की इकाइयाँ अनेक प्रकार की होती हैं। ये इकाइयाँ प्रसग, पात्र शब्द वाक्य, पैराग्राफ, स्थान आदि हैं। आजकल इन इकाइयों को काफी महत्त्व दिया जा रहा है। किसी विचारधारा के महत्त्व का विश्लेषण शब्दो के आधार पर किया जाता है। एक लेख मे प्रयुक्त शब्दो को अलग-अलग गिना जा सकता है और उसके आधार पर बतलाया जा सकता है कि कौनसी विचारधारा कितनी महत्त्वपूर्ण है, उसका क्या औचित्य है और भविष्य मे उसका क्या महत्त्व रहेगा। आजकल चुनाव-भाषणो या शब्दो के आधार पर ही विश्लेषण किया जाता है। पत्र-पत्रिकाओं मे किस अश को महत्त्व दिया जाता है इसका अध्ययन शब्दो को इकाई मानकर किया जा सकता है।

वाक्यो के आधार पर किसी भाषण या लेख आदि का विश्लेषण किया जा सकता है। वाक्यो के आधार पर बतलाया जा सकता है कि लेखक ने किसको अधिक महत्त्व दिया है। उदाहरणार्थ—"प्रजातन्त्र न केवल जनसहमति पर आधारित विचारधारा है बल्कि मूलत एक आध्यात्मिक भावना पर आधारित विचारधारा है।" 'समाजवाद' एक टोपी के समान है जिसकी आकृति बिगड गई है क्योकि

प्रत्येक व्यक्ति इसे पढ़ता है। ये वाक्य विश्लेषण इकाई के रूप में बहुत महत्वपूर्ण हैं। इसी प्रकार पात्रों को, जो अक्सर नाटक, उपन्यास, सिनेमा व रेडियो कार्यक्रम में आते रहते हैं, सामग्री विश्लेषण की इकाइयों में सम्मिलित किया जा सकता है। शेक्सपीयर के नाटकों में फालस्टाफ जैसे दिलचस्प पात्र आते हैं।

आजकल मदों का इकाइयों के रूप में बहुत महत्वपूर्ण स्थान दिया जा रहा है। उदाहरणार्थ, समाचार (News) रेडियो का नियमित भाग बन गया है जिसे निश्चित समय प्रसारित किया जाता है।

सामग्री विश्लेषण की विभिन्न श्रेणियाँ
(Categories of Content Analysis)

1. मूल्य भेद—आध्यात्मिक, भौतिक व सामाजिक स्थिति के सम्बन्ध में मूल्य।
2. स्तर भेद—नैतिक व अनैतिक, हर्ष व कष्ट, साहसी व डरपोक इत्यादि।
3. सामग्री स्रोत—चुनाव घोषणाएँ, पार्टी बुलेटिन, रचनाएँ, साहित्य हिन्दी, अंग्रेजी, इत्यादि।
4. कथन—काल्पनिक, वास्तविक तथ्यहीन, सार्थक।
5. भाषण—अध्यापकों को दिया गया भाषण, अधिकारियों, मजदूरों, अल्पमत समुदाय, उद्योगपतियों को दिए गए भाषण।
6. विभिन्न प्रसंग—प्रकृति, साहित्य, कला, समुदाय, वर्ग आदि।
7. व्यक्तित्व सम्बन्धी विशेषताएँ—अन्तर्मुखी व बहिर्मुखी व्यक्तित्व।
8. सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक वातावरण व स्थिति से सम्बन्धित वर्गीकरण।

इस सामग्री विश्लेषण पद्धति द्वारा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक क्षेत्रों के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन सुगमतापूर्वक किया जा सकता है। सेलटिज, जहोदा, ड्यूस और कुक के अनुसार विश्लेषण (Analysis) को 'निश्चित नियन्त्रणों' (Certain Controls) के अन्तर्गत संचालित किया जाता है ताकि यह व्यवस्थित और वैषयिक हो—(i) विश्लेषण की श्रेणियों को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाता है ताकि दूसरे अनुसंधानकर्ता या व्यक्ति उनको निष्कर्षों के प्रमाणीकरण के लिए प्रयुक्त कर सकें, (ii) विश्लेषणकर्ता सामग्री के चयन और रिपोर्ट करने में ऐसे स्वतन्त्र नहीं है कि जो उसको रुचिपूर्ण लगे उसको ही चुने, परन्तु अपने निदर्शन में समस्त संगतपूर्ण सामग्री को व्यवस्थित रूप से वर्गीकृत करना चाहिए, (iii) मात्रात्मक प्रणाली को प्रयुक्त किया जाता है। उदाहरणार्थ, यदि हम पत्रों के सम्पादकीय लेखों के व्यवस्थित निदर्शन को लें और सम्पादकीय लेखों की सापेक्षिक संख्या को गिनें कि क्या वे एक विदेशी राष्ट्र के प्रति उदार (Favourable), अनुदार (Unfavourable) या तटस्थ (Neutral) दृष्टिकोण रखते थे। इस प्रकार की जो प्रणाली हम अपना रहे हैं वह मात्रीकरण (Quantification) का एक सरल रूप है जो पर्याप्त रूप में व्यावहारिक एवं विश्वसनीय है।

सामग्री-विश्लेषण द्वारा गुणात्मक तथ्यों को वैषयिक तथ्यों में परिवर्तित किया जाता है, परन्तु इस बात की क्या गारन्टी है कि वे तथ्य प्रामाणिक हैं। इनकी सत्यता की जाँच कैसे की जाए ?

यह समस्या सामाजिक विज्ञानों में है परन्तु इसके समाधान के लिए यह सुझाया जा सकता है कि विश्लेषण की व्याख्या स्पष्ट हो, तथ्यों के वर्गीकरण के लिए श्रेणियों को स्थापित किया जाए, तथ्यों का व्यवस्थित रूप से सारणीयन हो, इत्यादि। इसके अतिरिक्त विश्लेषण के जिन आधारों को निर्मित किया जाए वे अनुसंधानकर्त्ताओं की सहमति पर हो ताकि प्रामाणिकता पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।

एक अन्य समस्या, सामान्यीकरण (Generalization) की है। क्या सामान्यीकरण समग्र के अध्ययन पर प्रयुक्त हो सकते हैं ? क्या तथ्यों के आधार पर समग्र के विषय में सामान्यीकरण सम्भव होगा ?

इस समस्या के समाधान के लिए यह हल सुझाया जा सकता है कि जिस सामग्री का विश्लेषण किया गया है उसमें समग्र (Universe) के गुण विद्यमान होने चाहिएं ताकि समग्र के विषय में सामान्यीकरण करने में कठिनाई उत्पन्न न हो। इसके अतिरिक्त जिन परिस्थितियों में अध्ययन किया जा रहा है उनका स्पष्ट वर्णन भी सामान्यीकरण के समय अनिवार्य है।

सामग्री-विश्लेषण की रूपरेखा-निर्माण के मुख्य चरण
(Main Steps in the Construction of the Outlines of Content Analysis)

(i) **उपयोगी तथ्यों का संकलन (Collection of Useful Data)**—सर्वप्रथम समस्या से सम्बन्धित तथ्यों का संकलन किया जाना चाहिए ताकि उनकी उपयोगी सारणी बनायी जा सके एवं व्यर्थ तथ्यों के संकलन से बचा जा सके।

(ii) **अध्ययन की इकाइयों का चयन (Selection of the Units of Study)**—उपयोगी तथ्यों के संकलन के पश्चात् यह निर्णय लेना होता है कि किसको इकाई माना जाए। इकाई में अखबारों के सम्पादकीय लेख, पूर्ण पृष्ठ, पैराग्राफ, स्तम्भ या इंच इत्यादि हो सकते हैं।

(iii) **सारणीयन का निर्माण (Construction of Tables)**—सामग्री विश्लेषण में सारणीयन का निर्माण पहले ही कर दिया जाना चाहिए ताकि तथ्यों के सारणीयन में किसी प्रकार की कठिनाई उत्पन्न न हो।

(iv) **अध्ययन के स्वरूप की रूपरेखा (The Outline of the form of the Study)**—अध्ययन के स्वरूप की रूपरेखा तैयार करने में चरों (Variables) का महत्वपूर्ण स्थान है। चरों की सूची तैयार कर ली जानी चाहिए जिनके आधार पर ही सर्वेक्षण का कार्य सम्पादित किया जाता है। अब इनके आधार पर अध्ययन का प्रारूप तैयार किया जाता है।

(v) श्रेणियों का निर्माण (Construction of Categories)—श्रेणियों का निर्माण, चरों (Variables) को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। श्रेणियाँ कितनी होनी चाहिएँ, इसके लिए यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि क्या उन श्रेणियों में तथ्यों को सुगमतापूर्वक रखा जा सकता है। जितने चर हैं उनको पृथक्-पृथक् श्रेणी में रखना चाहिए।

(vi) श्रेणियों की परीक्षा (Verification of Categories)—सामग्री विश्लेषण को वैषयिक (Objective) बनाने के लिए यह अत्यावश्यक है कि श्रेणियों की परीक्षा की जाए ताकि उनकी सार्थकता का पता लग सके।

(vii) सामग्री का विश्लेषणात्मक वर्णन (Analytical description of Content)—विभिन्न श्रेणियों में रखी गई सामग्री का विश्लेषणात्मक वर्णन किया जाना चाहिए।

(viii) प्रतिवेदन निर्माण (Preparation of the Report)—प्रतिवेदन निर्माण में सभी चरणों का वर्णन किया जाता है। प्रतिवेदन निर्माण में इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि उसमें सारणियाँ हों ताकि पक्षपात का आरोप न लगाया जा सके। इसके अतिरिक्त कुछ महत्त्वपूर्ण कथन उदाहरण या नमूनों का वर्णन भी इसमें किया जा सकता है। साथ ही, अध्ययन की सीमाओं एवं कठिनाइयों का भी उल्लेख किया जाना चाहिए। इसमें 'भविष्य की ओर संकेत' का भी समावेश किया जाए जिससे अन्य अनुसंधानकर्त्ताओं की कई कठिनाइयाँ स्वतः ही कम हो सकें।

जहाँ तक राजनीति विज्ञान में वस्तु विश्लेषण की उपयोगिता का प्रश्न है, इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस पद्धति द्वारा अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्यों को प्रकाश में लाया गया है। हेरॉल्ड डी. लासवेल (Harold D Lasswell) ने 'प्रतीक विश्लेषण' (Symbol Analysis) का विकास कर राजनीति के जटिल प्रश्नों को खोज निकालने में सहायता प्रदान की है। अखबारों की सामग्री में कुछ प्रतीक जैसे, 'इंग्लैण्ड 'अमेरिकी प्रजातन्त्र', 'साम्यवाद की आवृत्तियों का पता लगाकर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि इन प्रतीकों का प्रस्तुतीकरण उदार (Favourable), अनुदार (Unfavourable) या तटस्थ (Neutral) है इत्यादि। इसी प्रकार डेवीसन (Davison) ने भी इस विश्लेषण का प्रयोग किया था। प्रत्येक सन्दर्भ के Favourable, Unfavourable व Neutral के गुण को नोट किया गया। डेवीसन की विश्लेषण-पद्धति में विश्लेषणकर्त्ता स्वयं को सामग्री (Material) में उँडेल देता है। जो मुख्य सामग्री बार बार दोहराई जाती है उसके आधार पर उस देश की नीतियों का पता लगाया जा सकता है कि वह साम्राज्यवादी है या समाजवादी या शान्तिवादी या आक्रान्तावादी जैसाकि सेलटिज, जहोदा, कुक ने डेवीसन द्वारा समाचार मद (News item) को Quote किया है, वह इस प्रकार है: "The United States is torn by economic unrest and industrial strife,

the United States is in the grip of reactionaries, the United States is pursuing policies of militarism, imperialism and dollar diplomacy."

जहाँ तक राजनीति विज्ञान या सामाजिक विज्ञानो मे इस पद्धति के विश्वसनीय होने का प्रश्न है, यह कई बातो पर निर्भर करता है। मुख्यत अनुसधानकर्त्ता स्वय के व्यक्तिगत गुणो, निष्पक्षता, योग्यता एव सूझ बूझ पर निर्भर करता है। अखबारो के चयन मे उसे यह देखना होगा कि कौनसा अखबार राष्ट्रीय-स्तर का है, कौनसा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का तथा किस अखबार की प्रसिद्धि (Reputation) है तथा किसका अधिक प्रचार (Circulation) है किस विचारधारा का समर्थन देता है, किस दल विशेष से है, इत्यादि। इसके अतिरिक्त सामग्री-विश्लेषण मे परिभाषाओ के Refinement मे धैर्य से परीक्षण करना है एव तथ्यो के वर्गीकरण करने मे उन लोगो को पर्याप्त प्रशिक्षण भी देना होता है जिनको यह कार्य सौंपा गया है।

जन-सचार
(Mass Communications)

आधुनिक सामाजिक अनुसधानो मे जन-सचार साधनो को तथ्य-सामग्री का स्रोत माना गया है। इनकी सहायता से उपयोगी एव महत्त्वपूर्ण आँकडो (Datas) को अनुसधान कार्य के लिए एकत्र किया जाता है। जन-सचार प्रलेखों मे जो सामग्री प्राप्त होती है वह अनुसधानकर्त्ता के व्यक्तिगत अभिनति से प्रभावित नहीं हो सकती, अत. इसे वैषयिक, विश्वसनीय और लाभप्रद स्रोत माना गया है। इनके माध्यम से ऐतिहासिक भूत और समकालीन समाज को समझा जा सकता है। अनुसधानों में पद्धति सम्बन्धी कठिनाइयों उत्पन्न होने के कारण, इनका महत्त्व और भी बढ जाता है। जन-सचार के प्रलेख सामाजिक वातावरण के विस्तृत पहलुओ को प्रतिबिम्बित करते हैं।[1]

विश्लेषण के उद्देश्य
(Aims of Analysis)

अनुसधान समस्याओं के अन्वेषण के लिए जन-सचार तथ्य-सामग्री (Data) का विपुल स्रोत है। इनका प्रयोग किसी व्यक्ति, समुदाय, बिरादरी या जाति की सस्कृति के पहलुओ पर प्रकाश डालने के लिए किया जाता है। यदि हमे किसी समुदाय की सस्कृति का पता लगाना है तो हम प्रलेखो द्वारा उस समुदाय का समूचा इतिहास जान सकते हैं। यदि हमे क्रान्ति (Revolution) के विभिन्न पहलुओं का ज्ञान करना है तो प्राचीन प्रलेखो द्वारा क्रान्ति का स्वरूप, कारण प्रवर्तक, परिणाम एवं प्रभावों का पता लगाया जा सकता है। इस सम्बन्ध में जन-सचार के जो भी

1. *Cook, Jahoda and Others - op. cit., p 330*

सामग्री स्रोत उपलब्ध हो, जैसे—साहित्य, अखबार, पत्र एवं पुस्तकें उनका प्रयोग क्रान्ति के विभिन्न पहलुओं को समझने के लिए किया जा सकता है। यदि हमें किसी समाज में 'सांस्कृतिक परिवर्तन (Cultural Change) का पता लगाना हो, जैसे लॉवेनथल (Lowenthal) ने सन् 1943 में इस प्रविधि द्वारा अमेरिकन समाज में ऐसे ही परिवर्तनों का पता लगाया था, तो हमें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छपी जीवन कथाओं (Biographies) का विश्लेषण करना होगा। यह विश्लेषण शताब्दी के प्रारम्भ से लेकर वर्तमान तक करना होगा। मनोरंजन के क्षेत्र में विश्लेषण करके, लॉवेनथल ने बतलाया कि उसके अध्ययन में, 1901-1911 तक 77 प्रतिशत लोग Fine Arts से लगे हुए थे और वही प्रतिशत 1940-41 में केवल 9 प्रतिशत ही रहा। इस प्रकार लॉवेनथल के अध्ययन में 'संचार सामग्री' (Communication Content) का विश्लेषण सांस्कृतिक परिवर्तनों की जानकारी के लिए किया गया।

जन संचार के विश्लेषण द्वारा एक अन्य प्रकार के प्रश्न का उत्तर दिया जा सकता है जिसका सम्बन्ध जनता को सूचना उपलब्ध कराना है।[1] उदाहरणार्थ, डेविसन (Davison) ने 1947 में सोवियत रूस अमेरिका और बर्लिन के फ्रेंच क्षेत्रों के अखबारों के निदर्शन (Samples) लिए। उसने मुखपृष्ठ से समाचार मदों (News-items) का विश्लेषण यह जानने के लिए किया कि 'अमेरिका', 'ग्रेट ब्रिटेन', 'रूस' 'फ्रांस', 'संयुक्त राष्ट्र', 'साम्यवादी दल', 'ग्रीस', और 'ईरान' के सम्बन्ध में जो Remarks दिए गए थे, क्या वे पक्ष, विपक्ष या तटस्थ प्रकृति के थे। यदि कुल मिलाकर समाचार मद अमेरिका के पक्ष में आते हैं तो अमेरिका के लिए सकारात्मक गणना करेंगे अन्यथा नकारात्मक। डेविसन के परिणामों से रूस भी स्पष्ट हो गया कि सोवियत नियन्त्रित बर्लिन प्रेस दूसरी जो सोवियत भय द्वारा नियन्त्रित नहीं थी, उन दोनों के विश्लेषण में बहुत अन्तर पाया गया। इन समाचारों से पता चल गया कि कौन क्या विचार रखता था।

जन-संचार का विश्लेषण 'प्रसार प्रविधियों' (Propaganda techniques) को पहचानने के लिए किया गया है। उदाहरण के लिए, व्हाइट (R. K. White) ने अपने अध्ययन में बतलाया है कि किस प्रकार हिटलर और रूजवेल्ट ने द्वितीय महायुद्ध शुरू होने से पूर्व प्रसार प्रविधियों का प्रयोग किया था। सन् 1952 में बेरलसन (Berelson) ने अपने क्षेत्रीय सर्वेक्षण में उन विशेष प्रयोजनों का उल्लेख किया है जिनके लिए संचार-सामग्री का विश्लेषण किया गया है। बेरलसन को उद्धृत करते हुए जहोदा कुक इत्यादि ने लिखा है। ऐसे प्रश्न जिनका सम्बन्ध सामग्री (Content) की विशेषताओं से है—

1 *Jahoda, Cook and Others* op cit, p 333

1 सचार-सामग्री मे प्रवृत्तियो (Trends) का वर्णन करना
2 विद्वता (Scholarship) के विकास का पता लगाना
3. सचार के माध्यमो या स्तरो (Levels) की तुलना करना
4 सचार विश्लेषण का हिसाब लगाना (Auditing)
5 सचार मानदण्डो का निर्माण और उन्हे लागू करना
6 तकनीकी अनुसधान मे सहायता
7 प्रसार प्रविधियो को बतलाना (Expose)
8. सचार सामग्री की विश्वसनीयता (Reliability) को मापना

प्रश्न जिसका सम्बन्ध सामग्री के कारणो से है —

1. सचारदाताओ (Communicators) की इच्छाओ और अन्य विशेषताओ का पता लगाना।
2 व्यक्तियो और समुदायो की मनोवैज्ञानिक स्थिति को निर्धारित करना।
3 प्रोपेगेंडा (Propaganda) प्रसार के अस्तित्व का पता लगाना।
4 राजनीतिक और सैनिक सूचनाओ (Intelligence) को प्राप्त करना।

श्रोतागण से सम्बन्धित प्रश्न या सामग्री के प्रभाव

1. यह जनसख्या समुदाय की मनोवृत्तियाँ हितो और मूल्यो को प्रतिबिम्बित करती है।
2 ध्यान केन्द्र को प्रकट करना (To reveal the focus of attention)
3 सचारो म मनोवृत्तीय और व्यावहारिक प्रत्युत्तरो का वर्णन करना।

विश्लेषण की प्रविधियाँ
(Techniques of Analysis)

सामग्री विश्लेषण की प्रविधि के विकास से पूर्व भी सचार सम्बन्धी प्रलेखो (Records) का उपयोग विभिन्न उद्देश्यो के लिए किया जाता था। अधिकाशत इसका प्रयोग इतिहासकारो ने 'युग के पुनर्निर्माण' के लिए किया जिसम ये प्रलेख पाए जाते थे। साहित्यकारो ने इनका उपयोग सत्यता की जाँच के लिए किया। ऐसे अनेक सन्दर्भ लेखको, कवियो एव कहानीकारो के बारे मे आते हैं जिनके प्रमाणीकरण के लिए जन-सचार सामग्री को उपयुक्त समझा गया। यदि हम कालीदास, सूरदास या शेक्सपीयर को साहित्यिक क्षेत्र म महान् समझते हैं या इन्हें इतना उच्च स्थान प्रदान करते हैं कि शायद उनकी तुलना भी समकालीन विद्वानो से न की जा सके। इन दावो (Claims) का आधार क्या है ? इनके पीछे ऐसे कौन से तथ्य छिपे हुए हैं ? इन सबका आधार वे सदेश (Messages) पुस्तकें एव साहित्य हैं जिनमे इनके कार्य की झलक मिलती है एव अन्य विद्वानो द्वारा उनके बारे मे प्रकट की गई राय है।

सचार सामग्री के Exploitation के लिए आधुनिक सामग्री विश्लेषण ने एक नया विन्दु जोड दिया है, वह है सामग्री के मात्रीकरण (Quantification) के लिए प्रविधियो का विकास। मात्रीकरण (Quantification) को अनुसंधान का एक आवश्यक तत्त्व माना गया है।

सामग्री विश्लेषण के प्रयोग पर बल देने वालो मे राजनीतिक वैज्ञानिक हेरोल्ड लासवेल प्रमुख हैं जिन्होने इसका प्रयोग जनमत व प्रचार अध्ययनो मे किया था। सचार सामग्री के अध्ययन की प्रगति मे लासवेल ने प्रमुख योग दिया। विश्लेषण की प्रक्रिया कुछ नियन्त्रित अवस्थाओ से होकर गुजरती है। सेलिज, जहोदा, ड्यूस और कुक के अनुसार—

(1) विश्लेषण की श्रेणियाँ (Categories of Analysis), जो सामग्री का वर्गीकरण करती है, को स्पष्टत परिभाषित किया जाता है जिससे अन्य लोग उसी सामग्री पर इनको लागू कर सकें। ऐसा करने से निष्कर्षों का प्रमाणीकरण सभव है।

(2) विश्लेषणकर्त्ता को इसमे यह स्वतत्रता नहीं रहती कि वह जो चाहे सामग्री मे से चुन ले या उसे जो रोचक लगे, उसे ही प्रतिवेदित कर दे। उसे अपने निदर्शन मे समस्त सगतपूर्ण सामग्री का व्यवस्थित ढग से वर्गीकरण करना होता है।

(3) विभिन्न महत्त्वपूर्ण विचारो को अनुमापन प्रदान करने के लिए उसे मात्रात्मक पद्धति (Quantitative procedure) को प्रयोग मे लाना होता है। यदि हम अखबारो के सम्पादकीय लेखो (Newspaper editorials) का एक व्यवस्थित निदर्शन लें और सम्पादकीय लेखो की सापेक्ष सख्या की गणना करें जो किसी विदेशी राष्ट्र के बारे मे अनुकूल (Favourable), प्रतिकूल (Unfavourable) और तटस्थ (Neutral) मनोवृत्तियो को व्यक्त करे। यह मात्रीकरण (Quantification) का एक सरल स्वरूप है जो व्यावहारिक और विश्वसनीय है।

लेकिन यदि मात्रीकरण (Quantification) के सिक्के के दूसरे पहलू को देखें तो पता चलता है कि वह इतना प्रभावशील हो गया है कि सचार सामग्री का मानो महत्त्व ही नही रहा है। हमारे समक्ष प्रश्न यह है कि सामग्री विश्लेषण मे क्या इसके बिना काम नहीं चल सकता है ? जो तथ्य सामग्री साक्षात्कारी या निरीक्षण से प्राप्त की जाती है, उसके विश्लेषण मे तो मात्रीकरण (Quantification) को इतना महत्त्व नहीं दिया जाता।

यद्यपि यह कहना आवश्यक है कि मात्रीकरण (Quantification) की पद्धति गुणात्मक वर्णन पद्धति से कहीं अधिक विश्वसनीय, विशुद्ध और उपयोगी है तथापि यह सर्वत्र व्यावहारिक या प्रायोगिक (Feasible) नहीं है, अतः Quantified और Unquantified तथ्यो का अपना अपना न्यायोचित स्थान है।

सचार सामग्री की प्रकृति अन्य सामग्रियों से भिन्न होने के कारण अनुसधान की परम्परागत प्रणालियों मे थोडा सशोधन करना होगा। सामान्यतः सर्वप्रथम अनुसधान समस्या का निरूपण किया जाता है, तत्पश्चात् अभिकल्पो (Designs) का निर्माण किया जाता है, श्रेणियाँ (Categories) तथ्य-सामग्री के वर्गीकरण के लिए बनाई जाती हैं, इसके उपरान्त तथ्य सामग्री का व्यवस्थित सारणीयन किया जाता

है और साराश प्रस्तुत किया जाता है। सचार सामग्री की समस्याएँ विशेष प्रकृति की हैं जिनका वर्णन निम्नांकित प्रकार से किया जाता है—

1 सर्वप्रथम समग्र को परिभाषित करने की समस्या है। यदि 'राष्ट्रीय प्रेस' को समग्र मानें तो इसकी परिभाषा कैसे की जाए, यह अत्यन्त कठिन समस्या है। राष्ट्रीय प्रेस को समग्र मानने से व्यावहारिक एव भावनात्मक कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं।

2. जनसचार साधनो से निदर्शन (Sampling) के लिए अभी तक प्रविधियाँ अच्छी तरह विकसित नहो हुई हैं। अखबार पाठको की राय को Mould करते हैं। अब हम यदि सभी अखबारो मे से 1/10 या 1/30 सामग्री ले और अन्य नियन्त्रण भी लागू करें ताकि प्रत्येक अखबार, समस्त समुदायो, क्षेत्रो, सस्कृति का प्रतिनिधित्व करें तो भी हमारा निदर्शन, दोषपूर्ण ही होगा। इसका कारण यह कि अखबारो के आकार (Size), गुण, प्रभाव, वितरण, उनकी प्रकाशित सख्या आदि मे काफी भिन्नता होती है, अत प्रतिनिध्यात्मक निदर्शन को खोजना अत्यन्त ही कठिन कार्य है।

3 प्रत्येक अखबार का प्रकाशन किसी विशेष उद्देश्य से किया जाता है। कुछ समाचार-पत्र विस्फोटक प्रकृति के होते हैं तो कुछ सरकार समर्थक होते हैं। कुछ कट्टर सरकार विरोधी होते हैं तो कुछ अखबार इसी प्रकृति के होते हैं जिनका उद्देश्य केवल विज्ञापनो द्वारा पैसा कमाना है। कुछ बड़े-बड़े अखबार उद्योगपतियो, पूजीपतियो के नियन्त्रण मे होते हैं जो उनके हितों का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। साम्यवादी देशो मे समाचार-पत्र केवल केन्द्रीय दल द्वारा ही नियन्त्रित होते हैं जो कई महत्वपूर्ण एव दल विरोधी समाचारो की Suppress करते हैं। उपर्युक्त स्थिति मे हम किस प्रकार यह निर्णय करें कि प्राप्त सामग्री वैषयिक और निष्पक्ष है।

4 जनसचार साधनो से निदर्शन की एक और समस्या 'समय की समस्या' (Time problem) है। किसी समाचार पत्र की सामान्य नीति से परिचित होना कठिन कार्य नहीं है। समाचार-पत्र के दैनिक या मासिक प्रकाशन को पढ़कर हम सामान्य नीति का पता लगा सकते हैं। कभी-कभी विशेष घटना घटने से समाचार पत्र की नीति मे अचानक परिवर्तन आ जाता है। यदि अध्ययनकर्ता कई महीनो के समाचार-पत्रो से निदर्शन लेना चाहे तो यह अत्यन्त कठिन कार्य हो जाता है जब तक वह उन घटनाओ का निदर्शन व्यवस्थित रूप से न लेता रहे।

इन समस्याओ को दूर करने के लिए यह आवश्यक है कि विश्लेषणकर्ताओ को विभिन्न इकाइयो, जैसे—कहानियाँ, सम्पादकीय, मुख्य शीर्षक के आधार पर विश्लेषण करना चाहिए। विश्लेषणकर्ता स्वय भी अपनी पढ़ने की आदत में इतना सुधार करें कि वह पढ़ते ही पता लगा सकें कि कौनसी इकाइयाँ उसके निदर्शन का

सही प्रतिनिधित्व कर सकती हैं। ऐसे कार्यों में अध्ययन, धैर्य, चतुरता और अनुभव की आवश्यकता है।

संचार विश्लेषण की श्रेणियों का निर्माण

यदि विश्लेषणकर्ता ने इकाइयों के प्रकार के निदर्शन का निश्चय कर लिया है तो उसका अगला कार्य श्रेणियों का निर्माण करना है जिनमें प्रत्येक इकाई वर्गीकृत हो सके। संचार विश्लेषण (Communication analysis) में विश्लेषणकर्ता श्रेणियों की स्थापना, सामग्री के आधार पर अधिक करता है जबकि अन्यत्र वह उपकल्पना का भी सहारा ले सकता है।

समाचार-पत्रों के सामग्री विश्लेषण में हेरोल्ड लासवेल और उसके मित्रों ने बहुत सराहनीय कार्य किया है। लासवेल ने 'प्रतीक विश्लेषण' (Symbol Analysis) की व्यवस्था को विकसित किया। इस व्यवस्था का प्रयोग अमेरिकी सरकार की विभिन्न शाखाओं में किया गया। इसके अन्तर्गत समाचार-पत्र सामग्री का अध्ययन कुछ प्रतीकों के आधार पर किया जाता है। यदि ये प्रतीक बार-बार समाचार-पत्रों में प्रवेश करते हैं तो हम पता लगा सकते हैं कि मनोवृत्ति अनुकूल (Favourable) है या प्रतिकूल (Unfavourable) या तटस्थ (Neutral)।

राइट और नल्सन ने सन् 1939 में समाचार-पत्रों के सामग्री विश्लेषण के लिए अधिक जटिल पद्धति को अपनाया। इन्होंने प्रत्येक सम्पादकीय से 'प्रतिनिध्यात्मक कथन (Representative Statement) को चुना। विभिन्न समाचार-पत्रों और विभिन्न समयों में कथनों के अंक (Scores) प्रदान किए गए। इनके आधार पर निष्कर्ष निकाले गए।

जहाँ तक विश्वसनीयता का प्रश्न है यह विश्लेषणकर्ता के ज्ञान, प्रशिक्षण एवं अनुभव पर निर्भर करता है।

प्रत्युत्तर विश्लेषण
(Response Analysis)

प्रत्युत्तर विश्लेषण का सामाजिक अनुसंधानों में अपना अनुपम स्थान है। अनुसंधान कार्य की प्रगति, उसके विभिन्न पहलुओं एवं उसके परिणामों की विशुद्धता बहुत कुछ प्रत्युत्तर विश्लेषण प्रविधि पर निर्भर करती है। प्रत्युत्तर की सहायता से उत्तरदाता की भावनाओं, मनोवृत्तियों, विश्वासों एवं दृष्टिकोण का ज्ञान सरलतापूर्वक किया जा सकता है। प्रत्युत्तर द्वारा अभीष्ट तथ्यों को एकत्रित किया जाता है, तत्पश्चात् उनका वर्गीकरण, सारणीयन एवं विश्लेषण किया जाता है।

इसको प्राप्त करने की कई विधियाँ सामाजिक अनुसंधान में प्रचलित हैं। प्रश्नों, साक्षात्कार पद्धति एवं प्रक्षेपी प्रविधियों से उत्तरदाता द्वारा विभिन्न प्रकार की सूचनाएँ प्राप्त की जा सकती हैं। किस प्रकार के उत्तरों को प्राप्त किया जाए, यह सामग्री (Content) की प्रकृति एवं उद्देश्यों पर निर्भर करता है। यदि सामग्री का

मुख्य प्रयोजन किसी व्यक्ति के वर्तमान या भूत के व्यवहार का पता लगाना है तो उस व्यक्ति से स्पष्ट एवं विशिष्ट प्रश्न पूछे जाएँगे। उदाहरण के लिए 'इस समय आपके पास कौन से मार्क की कॉफी है ? क्या मुझे आप दिखला सकते हैं ? यदि प्रश्न इस तरह से पूछा जाए—"सामान्यतः आप कौनसी कॉफी पसंद करते हैं ?" यह प्रश्न विशिष्ट (Specific) नहीं है। इसी प्रकार घृणा, द्वेष या पक्षपात सम्बन्धी विशिष्ट परिस्थितियों में प्रश्नों के उत्तरों के सम्बन्ध में जानकारी कहीं अधिक विशुद्ध और सही प्राप्त होगी। उदाहरणार्थ क्या आपने कांग्रेस के पक्ष में मत दिया ? क्या आप कांग्रेस की नीतियों से भली-भांति परिचित हैं ? क्या आपने कांग्रेस उम्मीदवार को मत धर्म या जाति के आधार पर दिए ? क्या आप दूसरे दलों से घृणा नीति के आधार पर करते हैं ? यदि इन प्रश्नों के स्थान पर यह पूछा जाए कि, क्या आप सामान्यतः मत देते समय जाति और धर्म का ध्यान रखते हैं ? इस प्रश्न से हम व्यक्ति के व्यवहार का पता नहीं लगा सकते क्योंकि प्रश्न सामान्य हैं।

यदि अनुसंधानकर्त्ता का मुख्य उद्देश्य तथ्यों (Facts) को प्राप्त करना है तो सबसे सरल विधि यही है कि प्रत्यक्ष रूप से उस व्यक्ति के पास जाकर प्रश्नों द्वारा विभिन्न तथ्यों की जानकारी हो सकती है। प्रश्न उसके व्यक्तिगत जीवन, जैसे उसकी आयु शिक्षा, धर्म, आय, राष्ट्रीयता, व्यवसाय इत्यादि से सम्बन्धित भी हो सकते हैं। प्रश्न व्यक्ति के व्यवहारों, भावनाओं, इच्छाओं, अभिव्यक्तियों से सम्बन्धित भी हो सकते हैं या घटनाओं, परिस्थितियों एवं नीतियों के सम्बन्ध में हो सकते हैं। इन प्रश्नों के उत्तरों, जिनकी जानकारी की आशा उत्तरदाता से की जाती है, से प्राप्त तथ्यों का हम भली-भांति विश्लेषण कर किसी निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं, लेकिन इसमें पर्याप्त सतर्कता की आवश्यकता है। स्वयं उत्तरदाता को तथ्यों की जानकारी कैसे हुई ? क्या उसके उत्तर व्यक्तिगत अभिनति से प्रभावित नहीं थे ? अथवा उसके उत्तरों में उसके सम्बन्धियों अथवा उसकी पत्नी की क्या भूमिका रही क्योंकि पति या पत्नी एक दूसरे की उपस्थिति में उत्तर देने में संकोच भी कर सकते हैं या उनका छिपाने का भी प्रयास कर सकते हैं। हमारी स्मृति की स्वयं की भी सीमाएं हैं। अनेक बार हम गलत बयान दे देते हैं, उसके बाद पुनः याद करते हैं तो पता चलता है कि हमारे द्वारा दिए गए पहले वाले उत्तर गलत थे। कुछ प्रश्नों के जवाब स्थिति पर भी निर्भर करते हैं। जब हमारे प्रश्न का केन्द्रीय बिन्दु वर्णन पर या घटना, परिस्थिति अथवा समूह पर है तो हम कई उत्तरदाताओं के उत्तरों की तुलना करके उसकी सत्यता की जाँच कर सकते हैं। यदि विश्वसनीय उत्तरदाताओं की सूचनाओं में भी पर्याप्त विरोधाभास है तो हमें और आगे अन्वेषण या जाँच करनी होगी, और इन विरोधाभासों को दूर किया जा सकता है। विरोधी कथनों की तुलना द्वारा भी हम सत्य सूचना प्राप्त कर सकते हैं।

यदि सामग्री का मुख्य प्रयोजन भावनाओं का पता लगाना है तो इस सम्बन्ध में मुख्य रूप से प्रश्न भावनात्मक प्रतिक्रियाओं पर होंगे, जैसे भय, अविश्वास, घृणा,

सहानुभूति, द्वेष, प्रशंसा, आलोचना इत्यादि। उदाहरण के लिए, जब भारत और पाकिस्तान के बीच हॉकी मैच होता है तो एक भारतीय चाहता है कि किसी भी कीमत पर भारत मैच जीते। दूसरा उदाहरण है, एक नीग्रो सफेद अमेरिकन को देखते ही क्रोधित एवं गम्भीर हो जाता है। भावात्मक प्रश्नों में व्यक्ति को उत्तर देने में अधिक स्वतन्त्रता होती है अतः भावनाओं एवं मनोवृत्तियों की अन्वेषणा अच्छे ढंग से हो सकती है।

कुछ ऐसे प्रश्न होते हैं जिनका उद्देश्य उत्तरदाता से उसकी किन्हीं नीतियों में विश्वास के कारणों, और उसके व्यवहार के कारणों का पता लगाना होता है। अध्ययनकर्त्ता की रुचि 'क्यों' का पता लगाने की होती है। 'क्यों' जैसे प्रश्न का उत्तर बहुत ही जटिल है। ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने के लिए स्वयं उत्तरदाता को विषय से सम्बन्धित सम्पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। अनुसंधानकर्त्ता यदि यह पहले निश्चय कर पाता है कि कौन से प्रभाव उसके किसी विशेष प्रश्न से न्यायसंगत होंगे तो वह पहले से ही एक व्यवस्थित योजना तैयार करके अभीष्ट जानकारी प्राप्त कर लेगा।

प्रश्नावलियों के कई प्रकार हो सकते हैं जिनके द्वारा अन्वेषणकर्त्ता अनेक महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ प्राप्त कर उनको अनुसंधान के लिए उपयोगी बना सकता है।

संरचित प्रश्नावली द्वारा जिसकी रचना अनुसंधान प्रारम्भ करने से पूर्व ही करली जाती है विस्तृत रूप में सामाजिक या आर्थिक घटनाओं से सम्बन्धित जानकारी एकत्र की जाती है। चूँकि प्रश्नों का निर्माण पहले से ही किया हुआ होता है, अतः वे क्रमबद्ध होते हैं और सभी उत्तरदाताओं के लिए समान होते हैं इसीलिए प्रामाणिक सूचनाओं को प्राप्त करना सरल हो जाता है।

असंरचित प्रश्नावली में प्रश्नों का निर्माण पहले से ही नहीं किया जाता है। इनमें केवल उन विषयों का जिक्र किया जाता है जिनके सम्बन्ध में उत्तरदाताओं से जानकारी प्राप्त करनी होती है।

प्रतिबन्धित प्रश्नावली में प्रश्न के सामने संभावित उत्तर लिखे होते हैं और उत्तरदाता को उन्हीं में से छाँट कर उत्तर देना होता है। इसमें उत्तरदाता उत्तर देने में स्वतन्त्र नहीं होता।

खुली प्रश्नावली में उत्तरदाताओं को उत्तर देने की छूट होती है, अतः प्रश्नों के आगे कुछ भी नहीं लिखा जाता है। उदाहरणार्थ भारत में समाजवाद की सफलता के कारण दीजिए।

(i) (ii)

(iii)

मिश्रित प्रश्नावली में विभिन्न प्रकार के सामाजिक तथ्यों से सम्बन्धित सूचनाएँ होती हैं जो निश्चित प्रकार के प्रश्नों द्वारा सम्भव नहीं होतीं, अतः मिश्रित प्रश्नावली को स्थान दिया गया है।

इन विभिन्न प्रकार की प्रश्नावलियों द्वारा उत्तरदाता से विश्वसनीय प्रत्युत्तर प्राप्त करना विभिन्न बातों पर निर्भर करता है, उत्तरदाता का शिक्षित होना अनिवार्य है अन्यथा वह इनका उत्तर नहीं दे सकता। चूँकि विश्लेषणकर्त्ता स्वयं उत्तर प्राप्त करने के लिए नहीं जाता, अतः उसे सूचनादाता के अध्ययन विषय की प्रकृति, क्षेत्र और उद्देश्य के बारे में जानकारी नहीं होती है, अतः यह आवश्यक है कि स्वयं उत्तरदाता को विषय सम्बन्धी जानकारी हो, तभी वह ठीक ढंग से उत्तर दे पाएगा। प्रश्नावली की उपयोगिता इस तथ्य पर निर्भर करती है कि इससे सम्बन्धित सहायक सूचनाएँ कहाँ तक प्राप्त हो सकती हैं ताकि उत्तरदाता इच्छानुसार प्रश्नों के उत्तर न दे।

कुछ ऐसे भी कारक हैं जिनके कारण प्रश्नावलियों के उत्तर प्राप्त नहीं होते।

यदि प्रश्नावली स्वयं सूचनादाता से सम्बन्धित है तो उन प्रश्नावलियों के उत्तर नहीं आते। कुछ प्रश्नावलियाँ विशेष वर्ग से सम्बन्धित होती हैं। उच्च आय एवं निम्न आय वाले वर्गों में प्रश्नावलियों को लौटाने की प्रवृत्ति बहुत कम पाई जाती है जिसका कारण संकीर्णता, गर्व, अशिक्षा व सन्देहशीलता है।

अध्ययन विषय या समस्या की प्रकृति पर भी प्रश्नावलियों के प्रत्युत्तरों का पाना निर्भर करता है। यदि अध्ययन विषय जनता के दृष्टिकोण से अधिक महत्त्वपूर्ण या रोचक है तो ऐसी प्रश्नावलियों के उत्तर अधिक संख्या में आएँगे। इसके अतिरिक्त प्रश्नावली सरल, स्पष्ट, दोषरहित होनी चाहिए, प्रश्न कम होने चाहिए एवं विशिष्ट प्रश्नों, जैसे गुप्त या रहस्यात्मक सूचनाएँ प्राप्त करने में बचना चाहिए ताकि उत्तरदाताओं से प्रत्युत्तर अधिक संख्या में सन्तोषजनक आएं।

इन प्रश्नावलियों के अतिरिक्त साक्षात्कार पद्धति द्वारा भी उत्तरों को प्राप्त किया जा सकता है। इस पद्धति द्वारा व्यक्तिगत एवं आन्तरिक तथ्यों का अध्ययन किया जा सकता है। कई गुणात्मक तथ्य जैसे-मनोभाव, विचार, उद्वेग, लोक-विश्वास और प्रवृत्तियाँ आदि को साक्षात्कार पद्धति द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। साक्षात्कारों का वर्गीकरण विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति के आधार पर किया जाता है।

उपचार साक्षात्कार का उद्देश्य उत्तरदाता से समस्या को दूर करने के उपचार से सम्बन्धित सुझावों को प्राप्त करना होता है।

व्यक्तिगत साक्षात्कार में केवल एक ही व्यक्ति से साक्षात्कार किया जाता है। यद्यपि इस विधि से सत्य सूचनाएँ प्राप्त करने की सम्भावनाएँ अधिक हैं क्योंकि साक्षात्कारकर्त्ता स्वयं बीच-बीच में उत्तरदाता को उत्तर देने में सहायता दे सकता है।

सामूहिक साक्षात्कार में यद्यपि एक से अधिक व्यक्तियों का साक्षात्कार किया जाता है तथापि ऐसे साक्षात्कार में व्यक्तिगत अभिनति की बहुत कम सम्भावना रहती है क्योंकि समूह के कुछ या सभी व्यक्ति उसी का उत्तर देते हैं।

केन्द्रित साक्षात्कार (Focused interview) का उद्देश्य सार्वजनिक सन्देशवाहन के साधनों का उत्तरदाता पर प्रभाव जानना होता है। साक्षात्कारकर्ता घटना द्वारा उत्पन्न विचारों, मानसिक द्वन्द्वों व भावनाओं का अध्ययन करता है।

अनिर्देशित साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्त्ता उत्तरदाता के समक्ष कोई समस्या रखता है। साक्षात्कारदाता उसका उत्तर देता चला जाता है। इस प्रकार के साक्षात्कार में प्रश्न पूर्व निर्धारित नहीं होते बल्कि बीच में भी मनगढ़त प्रश्नों को पूछा जा सकता है। अन्त में साक्षात्कारकर्ता अभीष्ट जानकारी हेतु कुछ पूर्व-निर्धारित प्रश्न पूछ लेता है।

यदि साक्षात्कारकर्ता चाहे तो साक्षात्कार-निर्देशिका का निर्माण कर सकता है। इसमें साक्षात्कार की पद्धति, समस्या के विभिन्न पहलुओं एवं कुछ महत्त्वपूर्ण निर्देश होते हैं। इससे सबसे बड़ा लाभ यह है कि समस्या क्रमबद्ध होती है एवं पूर्ण रचना के कारण अध्ययन में एकरूपता आती है।

साक्षात्कार पद्धति द्वारा सभी प्रकार की सूचनाओं का सकलन सम्भव हो जाता है। अमूर्त घटनाओं के अध्ययन में यह पद्धति सर्वाधिक उपयोगी है। इसके द्वारा सूचनाओं का प्रमाणीकरण भी सम्भव हो जाता है। उत्तरदाता स्वतन्त्र होकर प्रश्नों के उत्तर देता है, अत बार-बार स्पष्टीकरण से पता चल जाता है कि उसके द्वारा दी गई सूचना सत्य है या गलत।

अनेक बार प्रत्युत्तर पाने के लिए साक्षात्कार में Visual aids, जैसे—फोटोग्राफ, ड्राइंग, गुड़िया आदि का प्रयोग किया जाता है। Visual सामग्री का प्रयोग जातीय मनोवृत्तियों या 'जातीय सजगता' का पता लगाने के लिए किया गया है। ई एल होरोविज (E L Horowitz) ने इसका सर्वप्रथम प्रयोग सन् 1936 में किया। चित्र परीक्षा (Picture test) का प्रयोग हेलगरसन (Helgerson) ने सन् 1943 में यह जानने के लिए किया था कि क्या जाति या अन्य लक्षण जैसे सेक्स, आयु, सामाजिक व आर्थिक स्तर, चेहरे के भाव, व्यक्ति की पसन्दगियों को निर्धारित करने में अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। इसके अन्तर्गत चित्रों को जोड़ो (Pairs) में प्रदर्शित किया जाता है जैसे-नीग्रो लड़का श्वेत लड़की, नीग्रो लड़की नीग्रो लड़का श्वेत लड़का श्वेत लड़की। इन प्रत्येक चित्रों के जोड़ो (Pairs) में यह प्रश्न पूछा जाता है कि वह किनके साथ खेलना पसन्द करेगा। इस प्रकार से उसकी मनोवृत्तियों या जाति के प्रति भावनाओं का पता लगाया जा सकता है।

इसी भाँति हम उत्तरदाताओं से प्रश्नों की श्रृंखला द्वारा उनकी मनोवृत्तियों को जान सकते हैं। उदाहरणार्थ हम उत्तरदाताओं की युद्ध के प्रति मनोवृत्ति को जानना चाहते हैं और आगे विश्लेषण करने के लिए हम Cross tabulation प्रश्नों, जैसे आयु, सेक्स, आर्थिक स्तर, शहरी-ग्रामीण निवास, अभ्यासवृद्ध स्तर (Veteran Status) को पूछ सकते हैं। प्रत्येक प्रश्न के उत्तरों को वर्गीकृत किया जाता है। आर्थिक श्रेणी सूचक (Economic ranking) प्रश्न दिए गए उत्तरों को

हम A, B, C, और D वर्गों मे रखते हैं। 3–5 तक आयु वाले Groupings और दो सेक्स ग्रुपिंग (आदमी और औरत) को प्रयोग मे लाया जा सकता है। इन सबको वर्गीकृत और तथ्यो को सकेतीकृत करके इन्हे छेदक कार्डों मे स्थानान्तरित कर दिया जाता है। फिर हम सुगमतापूर्वक पता लगा सकते हैं कि क्या पुराने लोग नवयुवकों की तुलना मे युद्ध का विरोध अधिक करते हैं या स्त्रियाँ युद्ध को आदमियों की अपेक्षा अधिक नापसन्द करती हैं या विभिन्न आर्थिक श्रेणी वाले किस प्रकार युद्ध के प्रति अपनी मनोवृत्ति (Attitudes) की तुलना करते हैं।

प्रत्येक प्रश्न का उत्तर प्रथम समुदाय मे कार्डों को छाँटकर प्राप्त किया जाता है। छेदक से तथ्यो का, जिन्हे पूर्व-निर्धारित सकेतन (Coding) के अनुसार सग्रह कार्ड पर स्थायी रूप से किया जाता है। छेदक के प्रयोग से हम प्रत्येक व्यक्ति के तथ्यो के लक्षणो के बारे मे जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार युद्ध से सम्बन्धित प्रश्नो के प्रत्युत्तर सारणीबद्ध कर लिए जाते हैं।

इस Cross tabulation मे केवल लक्षणो को दिखाया गया है। प्रत्येक कार्ड पर अन्य लक्षणो की उपेक्षा (Traits) की गई है। यहाँ पर प्रश्नो की सकीर्णता का प्रश्न नही है बल्कि अनुसधान तो केवल उत्तरदाता के जीवन के एक छोटे टुकडे का ही प्रतिनिधित्व करता है। व्यक्ति जो उन लक्षणो के सम्पूर्णत्व (Wholeness) का प्रतिनिधित्व करता है, उनको इन विश्लेषणों मे स्थान नही दिया जाता।

हम प्रत्युत्तर विभिन्न स्रोतो, जैसे-प्रश्नावलियाँ, प्रत्यक्ष प्रश्न, साक्षात्कार इत्यादि द्वारा प्राप्त करते हैं। यदि इनके विश्लेषण की सही प्रविधि अपनाई जाए तो प्रत्युत्तर लाभप्रद सिद्ध हो सकते हैं। आधुनिक अनुसन्धानो मे कई कमियो होने के कारण प्रत्युत्तर सामग्री का सही ढग से विश्लेषण नही किया जाता। यदि प्रत्युत्तर सामग्री को भली-भाँति एकत्र करके उनकी विश्वसनीयता की जाँच की जाए तो अन्तिम परिणामो के लिए यह चरण बड़ा उपयोगी होगा।

विभिन्न श्रेणियो मे विषय-सामग्री को वर्गीकृत कर देना चाहिए। उचित सारणीयन के बाद हम तुरन्त उनके लक्षणो का पता लगा सकते हैं। प्रत्युत्तर विश्लेषण के तथ्यो को स्थायी रूप देने के लिए उनके कार्ड पर छेदन (Punching) किया जा सकता है। प्रत्युत्तर विश्लेषण म यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि इसमे कही अभिनति (Bias) का प्रवेश न हो। हमारे पास जो भी आधुनिक साधन उपलब्ध हो, उनका प्रयोग इसमे अवश्य किया जाए, लेकिन साथ ही यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि कार्यभार के कारण कार्य को तुरन्त समाप्त न किया जाए। यद्यपि समय एव धन दोनो पर्याप्त मात्रा मे व्यय होता है, तथापि धैर्य, कुशलता, अनुभव एव ईमानदारी से यदि कार्य को किया जाए तो परिणाम न केवल उत्साहवर्द्धक होंगे बल्कि अनुसन्धानो के आधार बनकर बहुत लाभप्रद भी सिद्ध होंगे।

प्रश्नावली

(UNIVERSITY QUESTIONS)

Chapter 1

1 सिद्धान्त क्या है ? सिद्धान्त प्रतिपादन मे अवधारणाओ के योगदान की व्याख्या कीजिए। (1978)
What is Theory? Discuss the role of concepts in the construction of a Theory

2 सिद्धान्त से आप क्या समझते हैं ? सिद्धान्त का निर्माण किस प्रकार से होता है ? (1978)
What do you mean by Theory? How is theory formulated?

3 तथ्यो एव सिद्धान्त के सम्बन्ध की व्याख्या कीजिए। (1978)
Discuss the relationship between Facts and Theory

4 आधुनिक विज्ञान के मूल मे सिद्धान्त एव तथ्य के मध्य जटिल सम्बन्ध हैं। तथ्य एव सिद्धान्त के मध्य सम्बन्धों की विवेचना कीजिए। (1977)
Basic to modern science is an intricate relation between theory and fact Discuss the relationship between theory and fact

5 "विज्ञान वास्तव मे सिद्धान्तो के द्वारा तथ्यों के, तथा तथ्यो के द्वारा सिद्धान्तो के प्रोत्साहन पर निर्भर रहता है।"
इस कथन के आधार पर सिद्धान्त एव तथ्य के पारस्परिक सम्बन्ध स्पष्ट कीजिए। (1976)
"Science actually depends upon a continuous stimulation of fact by theory and of theory by fact" In the light of this statement clarify the relation ship between fact and theory

6 समाज-शास्त्रीय सिद्धान्त मे तथ्यो की भूमिका की विवेचना कीजिए। (1976)
Discuss the role of data in sociological theory

7 तथ्यों की खोज मे सिद्धान्त की भूमिका की विवेचना कीजिए। (1976)
Discuss the role of theory in discovering facts

8 सामाजिक तथ्य एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के मध्य क्या सम्बन्ध है ? (1976)
What is the relationship between social fact and sociological theory?

9 वैज्ञानिक पद्धति की परिभाषा कीजिए और यह बतलाइए कि सामाजिक घटनाओं के अध्ययन मे वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग कहाँ तक किया जा सकता है। (1977)
Define scientific method How far is scientific method applicable to the study of social phenoment?

10 वैज्ञानिक पद्धति के आधारभूत सिद्धान्तो की विवेचना कीजिए। (1976)
Discuss the basic principles of scientific procedure

11 वैज्ञानिक पद्धति के मूल तत्वो के रूप मे अवधारणाओ तथा उपकल्पनाओं के महत्त्व की विवेचना कीजिए। (1973)
Discuss the importance of concepts and hypotheses as basic elements of scientific method

12 सर्वेक्षण के आयोजन मे एक विद्यार्थी को वैज्ञानिक पद्धति के किन मूल सिद्धान्तो को ध्यान मे रखना पडता है ? आयोजन मे काम-चलाऊ उपकल्पनाओ का महत्त्व बताइए। (1978)
What are the basic principles of scientific procedure a student has to bear in mind in planning a survey ? Explain the usefulness of working hypotheses in such planning

13 आप एक अच्छी उपकल्पना कैसे बनाएँगे ? (1976)
How will you formulate a good hypothesis ?

14 अवधारणाओ, उपकल्पना तथा सिद्धान्त के सम्बन्ध को समझा कर लिखिए। (1976)
Explain the relationship between concepts, hypothesis and theory.

15 सामाजिक अनुसन्धान में अवधारणा की महत्ता का विश्लेषण कीजिए। (1978)
Discuss the importance of Concept in Social Research

16 सामाजिक अनुसन्धान मे उपकल्पना के महत्त्व की विवेचना कीजिए। (1978)
Discuss significance of Hypothesis in social research

17 अवधारणा की परिभाषा कीजिए। सामाजिक अनुसन्धान मे अवधारणाओ की भूमिका की विवेचना कीजिए। (1978)
Define concept Discuss the role of concepts in social research

18 उपकल्पना की परिभाषा लिखिए और उपकल्पना के विभिन्न स्रोतो की व्याख्या कीजिए। (1978)
Define Hypothesis and discuss various sources of hypothesis

19 अवधारणा को परिभाषित कीजिए तब इसके परिभाषित करने एव सचार से सम्बन्धित समस्याओ की व्याख्या कीजिए। (1977)
Define concept and discuss the problems arising in its definition and communication

20 अनुसन्धान प्रारूप मे उपकल्पना की भूमिका की विवेचना कीजिए। (1977)
Discuss the role of hypothesis in research design

21 उपकल्पना अन्य प्रकार की उक्तियो से किस प्रकार भिन्न है ? व्याख्या कीजिए।
How is hypothesis different from other types of statements ? Discuss

22 उपयोगी उपकल्पना के स्रोतो तथा उसके मुख्य लक्षण की विवेचना कीजिए।
Discuss sources and characteristics of useable hypothesis

23 विभिन्न प्रकार की परिचित उपकल्पनाओ का उल्लेख कीजिए। उपकल्पनाओ के विभिन्न स्रोतो की विवेचना कीजिए।
Mention known kinds of hypothesis Discuss various source of hypothesis

24 कुछ उन प्रमुख आधारों का विश्लेषण कीजिए जिन्हें किसी सामाजिक अनुसन्धान करते समय ध्यान मे रखा जाता है।
Describe some important considerations that are taken while designing a social research

25 उपकल्पना के प्रकार्य एव उसकी रचना सम्बन्धी समस्याओ की व्याख्या कीजिए। (1976)
Explain the functions of hypothesis and the problems in formulating a hypothesis

Chapter 2

26 सामाजिक अनुसंधान में सामग्री के संकलन की विधि के रूप में अवलोकन की व्याख्या कीजिए। (1978)
Discuss observation as a technique of data collection in social research

27 सहभागी अवलोकन की परिभाषा लिखिए और सामाजिक अनुसंधान में इसकी उपयोगिता बताइए (1978)
Define participant observation and discuss its utility in social research

28 'विज्ञान का प्रारम्भ एवं अन्त अवलोकन से होता है।' विवेचना कीजिए। (1977)
'Science begins and ends with observation' Comment

29 सामाजिक अनुसंधान के एक यंत्र के रूप में 'सहभागी अवलोकन' की व्याख्या कीजिए। (1978)
Discuss 'participant observation' as a tool of social research

30 तथ्य संकलन की प्रविधि के रूप में अवलोकन की सीमाएँ बताइए। (1976)
Discuss the limitations of observation as a data collection technique

31 नियन्त्रित अवलोकन किसे कहते हैं? इसके गुणों तथा अवगुणों की विवेचना कीजिए।(1976)
What is controlled observation? Discuss its merits and demerits.

32 सामाजिक अनुसंधान में अवलोकन के महत्व का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए। (1976)
Examine critically the significance of observation in social research

33 सूचना एकत्र करने की विभिन्न विधियाँ बताइए। तथ्य एकत्रित करने के एक यंत्र के रूप में सहभागी अवलोकन की व्याख्या कीजिए। (1977)
Discuss briefly the various techniques of data collection Evaluate participant observation as a tool of collecting data

34 सामग्री संकलन की एक विधि के रूप में संरचित अवलोकन का मूल्यांकन कीजिए।
Evaluate structured observation as a technique of data collection

35 सामग्री संकलन में सहभागिक अवलोकन पद्धति की उपयोगिताओं तथा परिसीमाओं का परीक्षण कीजिए।
Examine utility and limitations of participant observation in data collection

36 'सहभागिक अवलोकन' की योग्यताओं और निर्योग्यताओं की विवेचना कीजिए।
Discuss merits and demerits of 'Participant Observation'

37 आँकड़ संकलन करने की विधि के रूप में साक्षात्कार पद्धति की विवेचना कीजिए।
Discuss the significance of interview method as tools of data collection

38 'केन्द्रित साक्षात्कार' को परिभाषित कीजिए। सामाजिक अनुसंधान में इसकी उपयोगिता की विवेचना कीजिए। (1978)
Define Focussed Interview Discuss its utility in social research

39 अन्वेषण के अवलोकन पद्धति के गुणों एवं दोषों की उपयुक्त उदाहरणों सहित संक्षेप में विवेचना कीजिए। (1976)
Discuss briefly with suitable illustrations the advantages and disadvantages of the observation method in investigation

40 साक्षात्कार द्वारा आप सर्वोत्तम परिणाम तक किस प्रकार पहुँचेंगे यह आप कैसे पक्का करेंगे? (1976)
How would you ensure that you get the best results through an interview?

41 सामाजिक शोध में साक्षात्कार का महत्त्व आलोचनात्मक दृष्टिकोण से निर्धारित कीजिए। (1976)
Examine critically the value of interview in social research.

42 ग्रामीण परिस्थितियों के समाजशास्त्रीय अध्ययन के लिए आप साक्षात्कार विधि का कैसे उपयोग करेंगे ? (1976)
How would you use interview as a technique for sociological studies of village situations ?

43 प्रश्नावली की रचना म प्रमुख स्तरों का विवरण कीजिए। (1977)
Describe the various steps in formulating a questionnaire

44 सामग्री संकलन में प्रश्नावली के मूल्य एवं सीमाओं को स्पष्ट कीजिए। (1978)
Explain the value and limitations of Questionnaire as a tool of data collection

45 एक प्रविधि के रूप में प्रश्नावली की सीमाओं की विवेचना कीजिए। इन पर कहाँ तक काबू पाया जा सकता है ? (1976)
Discuss the limitations of questionnaire technique How far can they be overcome ?

46 सामग्री संकलन के यन्त्र के रूप में साक्षात्कार तथा प्रश्नावली की तुलना कीजिए।
Compare interview and questionnaire as tools of data collection

47 'एकल विषय अध्ययन पद्धति में आँकड़े संकलन के विचार से योग्यताओं की अपेक्षाकृत कमियाँ अधिक हैं।" विवेचना कीजिए।
'Case study method has more limitations than advantages as tool of data collection " Discuss.

48 स्पाइसर की पुस्तक में दिए गए एकल-विषय अध्ययनों की सहायता से एकल-विषय अध्ययन पद्धति की महत्ता वैज्ञानिक अध्ययन पद्धति के रूप में सिद्ध कीजिए।
With the help of case studies from Spicer s book establish the significance of case study method as a scientific method of study ?

49 एकल अध्ययन की परिभाषा दीजिए एवं आपके पाठ्यक्रम म निर्धारित एकल अध्ययनों में से किसी एक का उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए। (1976)
Define case study and illustrate it with any case study prescribed in your course

50 केस-स्टडी (एकल अध्ययन) पद्धति की व्याख्या कीजिए। (1976)
Explain case study method

51 केस स्टडी (एकल अध्ययन) पद्धति की कमजोरियों का विश्लेषण कीजिए। (1976)
Analyse the weaknesses of case study method

52 एकल अध्ययन पद्धति क्या है ? सामाजिक शोध क्षेत्र में इसके महत्त्व एवं सीमाओं का विवेचन कीजिए। (1976)
What is case study method ? Explain its value and limitation in the field of social research

53 एकल अध्ययन पद्धति की प्रयोग विधि एवं महत्त्व को स्पष्ट कीजिए। (1977)
Explain the technique and importance of Case Study method

54 सामाजिक अनुसन्धान में एकल अध्ययन पद्धति के महत्त्व पर प्रकाश डालिए। (1978)
Explain the relevance of case-study' method in social research.

55 क्या केस-स्टडी सम्बन्धी स्पेंसियर की अध्ययन विधि ठीक है ? उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।
Is Spicer's approach to case study method sound ? Discuss with examples.

56 क्या आप यह मानते हैं कि अनुसूची एवं प्रश्नसूची रचना प्रतिमान समाजशास्त्रीय विश्लेषण में पक्षपात को जन्म देता है ? विवेचना कीजिए। (1977)
Do you think that the pattern of framing schedule and questionnaire leads to biases in sociological analysis ? Comment.

57 एक अच्छी अनुसूची की रचना करते समय आप किन-किन बातों का ध्यान रखेंगे। (1976)
What precautions would you take in farming a good schedule

58 अपने कक्षा के सहपाठियों की समाजशास्त्र के अध्ययन में रुचि के अध्ययनार्थ लगभग 20 प्रश्नों की एक प्रश्नावली बनाइए।
Make a questionnaire of about 20 questions to study your class fellows' interest in the study of sociology

Chapter 3

59 प्रयोगात्मक शोध प्रारूप की मुख्य विशेषताओं का उल्लेख कीजिए। (1978)
Explain the main features of Experimental Research Design

60 प्रयोगात्मक अनुसंधान अभिकल्प किसे कहते हैं ? उदाहरण दीजिए। (1976)
What is experimental research design ? Give examples

61 सामाजिक अनुसंधान में अन्वेषणात्मक शोध प्रारूप के प्रमुख पहलुओं पर प्रकाश डालिए। (1978)
Discuss chief features of Exploratory Research Design in social research

62 शोध प्रारूप की विवेचना कीजिए। समाजशास्त्रीय शोध में हमें एक शोध प्रारूप की क्यों आवश्यकता होती है ? (1976)
Explain a research design Why do we need a research design in Sociological research ?

63 प्रयोगात्मक शोध प्रारूप का अर्थ एवं महत्त्व स्पष्ट कीजिए। (1977)
Explain the meaning and importance of experimental design

64 आप सर्वेक्षण-अनुसंधान अभिकल्प के बारे में क्या जानते हैं ? (1976)
What do you know about survey research design ?

65 किसी अनुसंधान अभिकल्प से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं की विवेचना कीजिए। कल्पित उदाहरणों का प्रयोग कीजिए।
Discuss various consideration relevant to the design of a research Use hypothetical example

66 एक्स पोस्ट फैक्टो शोध प्रारूप की प्रकृति की व्याख्या कीजिए एवं इसका महत्त्व भी स्पष्ट कीजिए।
Discuss the nature of ex-post-facto research design and point out its importance

67 साक्षात्कारों के विभिन्न प्रकारों की व्याख्या कीजिए। साक्षात्कार में विश्वसनीयता आप किस प्रकार निश्चित करेंगे ?
Discuss the main types of interviews How will you determine reliability in interviewing ?

68 'विश्वसनीयता' तथा प्रामाण्यता की परिभाषाएँ दीजिए तथा एक मापन यन्त्र की विश्वसनीयता एवं प्रामाण्यता के निष्कर्षों की विवेचना कीजिए।
Define Reliability' and 'Valid ty' Discuss criteria of reliability and validity of a measuring instrument

69 शुद्ध और व्यावहारिक शोध में अन्तर्भेद करना कहाँ तक उचित है ? (1978)
Explain how far is the distinction between pure and applied research relevant ?

70 दल-अनुसंधान' और इसकी समस्याओं पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए (1978)
Wr te a short essay on 'team research' and its problems

71 जनसंख्या सम्बन्धी अध्ययनों में दल अनुसंधान पद्धति की उपयोगिता की विवेचना कीजिए। सीमाओं/निर्योग्यताओं का भी उल्लेख कीजिए।
Discuss the relevance of Team Research to the area of 'Population Studies' Mention limitations.

72 'विशुद्ध तथा व्यावहारिक अनुसन्धान परस्पर अलग नहीं है। उनमें आपसी अन्योन्याश्रयता अच्छा है। अच्छा सैद्धान्तिक अनुसन्धान व्यावहारिक समस्याओं पर लागू हो सकता है तथा व्यावहारिक अनुसन्धान सैद्धान्तिक समाजशास्त्र को महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।' (गुडे तथा हाट)। विवेचना कीजिए।
Pure and applied research are not mutually exclusive There is inter play between them Good Theoretical research may be applicable to practical problems and applied research can contribute to theoretical sociology' (Goode and Hatt) Discuss

73 समाज विज्ञानों में विशुद्ध' तथा 'व्यावहारिक' अनुसन्धान के स्वरूप की विवेचना कीजिए।
Discuss the nature of pure' and applied research in social sciences

74 टीम अनुसन्धान से आप क्या समझते हैं ? इसकी समस्याओं का विवरण दीजिए। (1977)
What is 'team research' ? Discuss its problems

Chapter 4

75 विभिन्न प्रकार के माध्यों की व्याख्या कीजिए तथा तथ्यों के विश्लेषण में उनका उपयोग समझाइए। (1978)
Discuss different types of averages and explain their use in the analysis of data

76 समान्तर माध्य का उद्देश्य क्या है ? अन्य प्रकार के माध्यों की अपेक्षा इसके गुण एवं दोष अभिव्यक्त कीजिए। (1976)
What is the purpose of arithmetic average ? State its merits and demerits over other types of averages

77 समाजशास्त्रीय अध्ययनों में प्रतिनिधि निदर्शन के चुनाव की प्रणालियों का उल्लेख कीजिए। (1978)
Explain various methods used for selecting a representative sample in sociological studies

78 निदर्शन की परिभाषा दीजिए एवं निदर्शन के विभिन्न प्रकारों का स्पष्ट कीजिए। (1976)
Define sampling and explain the different kinds of sampling

79 दैव प्रवरण निदर्शन का अर्थ समझाइए तथा सामाजिक अनुसन्धान में इसके उपयोग का स्पष्टीकरण कीजिए। (1977)
Explain the meaning of random sampling and discuss its uses in social research

80 प्रतिदर्श ग्रहण पद्धति की व्याख्या कीजिए एवं 'स्तरित यदृच्छ प्रतिदर्श ग्रहण' के पद्धति प्रमुख लक्षणों की व्याख्या कीजिए।
Define sampling and discuss the main features of stratified random sampling

81 'प्रतिदर्श' को परिभाषित कीजिए। क्षेत्रीय प्रतिदर्श के प्रमुख तत्त्वों की विवेचना कीजिए।
Define sampling Discuss the main features of area sampling

82 आँकड़ों के विश्लेषण से आप क्या समझते हैं ? इसके मुख्य स्वरूपों की व्याख्या कीजिए। (1977)
What do you understand by analysis of data ? Bring out its major forms

Chapter 5

83 अनुमाप क्या है ? किन्हीं दो अनुमाप प्रविधियों की विवेचना कीजिए। (1978)
What is scaling ? Describe any two scaling methods

84 सामाजिक तथ्यों के सही तथा विश्वसनीय माप के लिए पैमानों का निर्माण किस प्रकार किया जाता है ? (1977)
How are the various scales determined for the correct and reliable measurement of social facts ?

85 समाजशास्त्रीय अध्ययनों में स्केलिंग एवं रेटिंग नामक मापदण्डों का अर्थ एवं महत्त्व समझाइये।
Discuss the meaning and importance of scaling and rating scales in sociological studies

86 सामाजिक शोध कार्यों में अनुमापन प्रविधियों के योगदान का मूल्यांकन कीजिए।
Evaluate the role of scaling techniques in social research

87 लिकर्ट प्रकार के प्रमापन के निर्माण में निहित तर्क तथा क्रियाविधि का विवेचन कीजिए।
Discuss the procedure and logic involved in the construction of Likert type of scales

88 सामाजिक शोध में स्केलिंग टेक्निक के महत्त्व की व्याख्या कीजिए।
Discuss the role of scaling techniques in social research

89 समाजशास्त्रीय अनुसंधान में प्रक्षेपी प्रविधियों की भूमिका की व्याख्या कीजिए। (1978)
Analyse the role of projective techniques in sociological research

90 अन्तर्वस्तु तथा उत्तर विश्लेषण का अर्थ एवं महत्त्व समझाइए। (1976)
Explain the meaning and importance of content and response analysis

91 सामाजिक शोध कार्यों में प्रोजेक्टिव प्रविधियों की मुख्य कमियों का विश्लेषण कीजिए।
Analyse the main limitations of projective techniques in social research

92 जनसंचार-साधन में अन्तर्वस्तु विश्लेषण की कुछ प्रमुख समस्याओं का विवेचन कीजिए।
Discuss some basic problems of Content Analysis of mass-media of communication

Other Important Questions and Brief Notes

93 वैरियेबल क्या है ? टेबुलेशन में यह किस प्रकार सहायक होता है ? व्याख्या कीजिए।
What is a Variable ? How does it help in tabulation ? Discuss

94 निदर्शन में bias से आप क्या समझते हैं ? उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।
What do you understand by bias in sampling ? Discuss with examples

95 सकेन्द्रण साक्षात्कार की परिभाषा दीजिए तथा एक विशिष्ट प्रकार की साक्षात्कार विधि के रूप मे उसकी योग्यताओ का विवेचन कीजिए।

Define Focussed Interview' and discuss its merits as a special types of interviewing technique

96 आन्तरिक विन्यास पैमाने क्या हैं ? थर्सटन प्रकार के पैमानो का विधिवत वर्णन कीजिए।

What are Internal Consistency Scales ? Describe Thurston type of Scales in detail

97 प्रतिदर्श ग्रहण पद्धति की परिभाषा दीजिए तथा स्तरित यदृच्छ प्रतिदर्श ग्रहण पद्धति के प्रमुख लक्षणों की विवेचना कीजिए।

Define Sampling and discuss the main features of stratified Random Sampling

98 प्रक्षपी तकनीक को परिभाषित कीजिए। समाज मनोवैज्ञानिक अनुसंधानो मे उसके महत्त्व की विवेचना कीजिए। भारतीय उदाहरण दीजिए।

Define Projective techniques Discuss their significance in social psychological researches Use Indian examples

99 सिद्धान्त विज्ञान का एक उपकरण है।' इस कथन को सविस्तार समझाइए

Theory in a tool of science' Elaborate the statement

100 साक्षात्कार के विभिन्न प्रकारो की विवेचना कीजिए। साक्षात्कार मे विश्वसनीयता आप किस प्रकार निश्चित करगे ?

Discuss the main types of interviews How will you determine reliability in interviewing ?

101 किन्ही दो पर टिप्पणी लिखिए—

(अ) औसत (ब) वैज्ञानिक पद्धति के मुख्य सिद्धान्त (स) सूचकांक (द) अन्तर्वस्तु विश्लेषण तथा सामूहिक प्रचार साधन (इ) वैयक्तिक अध्ययन (फ) समाजमिति।

Write short notes on any two—

(a) Averages (b) Basic Principles of Scientific Procedure (c) Index Number (d) Content Analysis and Mass Media (e) Case Study (f) Sociometry

102 निम्नलिखित म से किन्हीं दो पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए—

(अ) अन्तर्वस्तु विश्लेषण (ब) टीम अनुसंधान (स) सूचकांक
(द) विश्वसनीयता तथा वैधता।

Write short notes on any two of the following—

(a) Content Analysis (b) Team Research (c) Index Number
(d) Reliability and Validity

103 निम्नांकित मे से किन्हीं दो पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए—

(क) क्षेत्रीय प्रतिदर्श ग्रहण (ख) भूयिष्ठक (ग) अवधारणा,
(घ) दल अनुसंधान (च) सारिणीकरण।

Write short notes on any two of the following—

(a) Area Sampling (b) Mode (c) Concept
(d) Team Research (e) Tabulation

104 किन्हीं दो पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए—

(क) अन्तर्वस्तु विश्लेषण (ख) साक्षात्कार अनुसूची (ग) स्टाउफर के एकल विषय अध्ययन,
(घ) विश्वसनीयता एवं वैधता के अभिलक्षण (च) सहसंबंध।

Write short notes on any two—
(a) Content analysis (b) Interview schedule, (c) Spicer s case,
(d) Criteria of reliability and validity, (e) Coding

105 किन्हीं दो पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए—
(क) व्यक्तिगत दस्तावेज (ख) अवलोकन अनुसूची, (ग) गवेषणात्मक अनुसन्धान अभिकल्प (घ) अवधारणाएँ।
Write short notes on any two—
(a) Personal documents (b) Observational schedule, (c) Exploratory research design, (d) Concepts

106 सामाजिक अनुसन्धान में अवधारणा का अर्थ एवं प्रकारों की व्याख्या कीजिए। (1976)
D scuss the meaning and types of concept in Social research

107 नियन्त्रण समूह किसे कहते हैं ? इसके महत्त्व का विवेचना कीजिए। (1976)
What is a control group ? Discuss its importance

108 गहन प्रश्न का अर्थ बताइए। एक साक्षात्कारकर्ता अपने उत्तरदाता से उचित उत्तर प्राप्त करने हेतु किस प्रकार व्यवहार करे ? (1977)
Give the meaning of a probe question How should an interviewer deal with his subject for getting good response ?

109 निम्नलिखित में से किन्हीं दो पर संक्षेप में नोट लिखिए—
(क) एकल अध्ययन पद्धति (ख) नियन्त्रित अवलोकन, (ग) प्रयोगात्मक शोध प्रारूप, (घ) तथ्य।
Write short notes on any two of the following—
(i) Case Study Method (ii) Controlled Observation (iii) Experimental Research Design (iv) Facts

110 किन्हीं दो पर संक्षिप्त नोट लिखें— (1978)
(क) साक्षात्कार सारणी (ख) प्रश्नावली, (ग) वर्णनात्मक-अनुसन्धान प्रारूप।
Write short notes on any two of the following—
(i) Interview Schedule, (ii) Questionnaire (iii) Descriptive Research Design

111 निम्नांकित में से किन्हीं दो पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए— (1976)
(क) उपकल्पना (ख) समग्र (ग) संकेतन, (घ) निर्देशांक संख्या,
(च) विश्वसनीयता के आधार।
Write short notes on any two of the following—
(a) Hypothesis (b) Universe (c) Coding (d) Index Numbers,
(e) Criteria of reliability

—